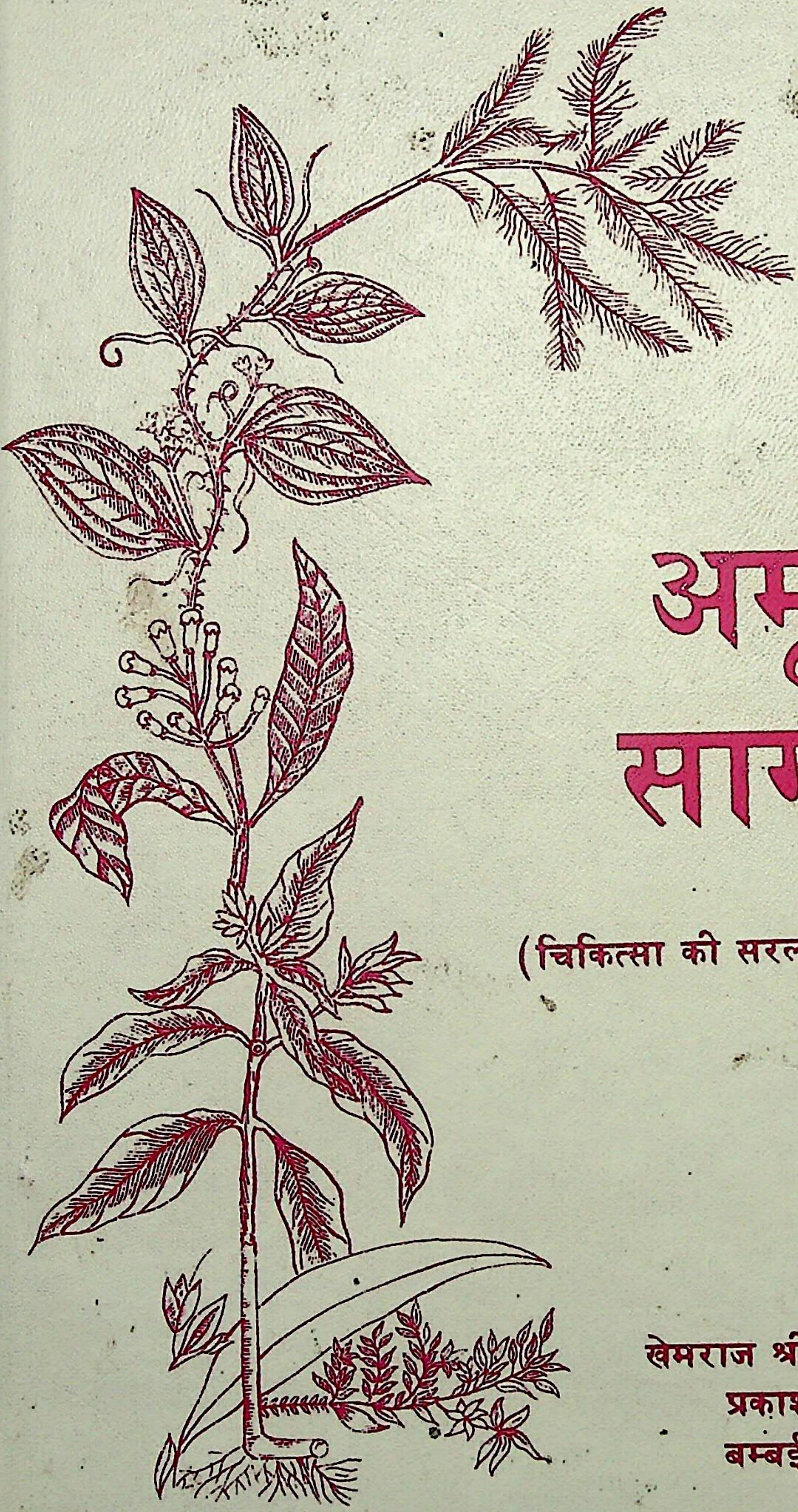


अमृत सागर

(चिकित्सा की सरल पुस्तक)

खेमराज श्रीकृष्णदास
प्रकाशन
बम्बई-४

॥ श्रीः ॥

अमृतसागर

हिन्दीभाषामें

श्रीमन्महाराजाधिराज राजेन्द्रमहाराजाजी
श्री श्रीसवाईप्रतापसिंहजीमहाराजकारित

ज्योतिर्विद् श्रीयुत बलदेवजीके पुत्र
पण्डित ज्ञारसरामजीद्वारा सरलहिन्दीमें अनुवादित

★

मुद्रक एवं प्रकाशकः
खेमराज श्रीकृष्णदास,
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : जनवरी २०१९, संवत् २०७५

मूल्य : ४५० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशकः
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers
Khemraj Shrikrishnadass
Prop: Shri Venkateshwar Press
Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.khe-shri.com
E-mail : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj for M/s Khemraj Shrikrishnadass
Prop. Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate,
Pune -411 013.

भूमिका

विदित हो कि श्रीमद्राजाधिराज जयपुराधीश श्री १२१ श्रीसवाई प्रतापसिंहजी महाराजने सर्व प्रजाहितार्थ सद्वैद्यों द्वारा अनेकानेक वैद्यक ग्रन्थानुसार "प्रतापसागर" (जो कि अमृतसागर नामसे लोकमें प्रसिद्ध है) अत्युत्तम वैद्यक ग्रन्थ बनवाके प्रसिद्ध किया, परन्तु उक्त ग्रन्थ मारवाड़ी भाषामें होनेके कारण सर्वसाधारण पुरुषोंको यथार्थ रूपसे ग्रन्थाशय ज्ञात नहीं होता था, अतएव हमारे मित्रवर श्रीयुत कृष्णलालजीकी आज्ञानुसार इस ग्रन्थका अनुवाद शुद्ध नागरी भाषामें किया गया। अब यह ग्रन्थ पूर्व रूपमें ही नहीं बरन् इसका समग्र कलेवर ही नूतन ढङ्ग पर हो गया है और इसके अवयवोंकी शोभा भी १ उत्पत्तिखण्ड, २ विचारखण्ड, ३ निदान खण्ड, ४ चिकित्साखण्ड इन चार खण्डोंसे अद्भुत प्रकारकी हो गई है और ये खण्ड भी आयुर्वेदीय अनेक आर्षग्रन्थोंके सारभूत कई नूतन विषयोंसे इस डौलपर विभूषित किये गये हैं कि, जिनके अवलोकनसे ग्रन्थदर्शक लोगोंका वांछिताशय तत्क्षण पूर्ण होगा तथा खण्ड खण्डके प्रत्येक तरङ्गकी आदिमें श्लोक भी दिये गये हैं जिनसे सम्पूर्ण तरङ्गका मुख्याशय पहिले ही प्रगट हो जाता है।

विशेषतः-प्रत्येक खण्डका वृत्तान्त तत्तत्खण्डकी सूचनासे विदित होगा. समस्त विद्वज्जनों तथा वैद्य महाशयोंसे प्रार्थना है कि इस ग्रन्थमें यदि कुछ उचितानुचित हुआ हो तो उसे क्षमा करें "प्राज्ञेषु लेखेनाल-मेतावता"।

भवदीय आरोग्याकांक्षीः—

पं० ज्ञारसरामशर्मा वैद्य,

कामठा

श्रीः

अथामृतसागरस्य विषयानुक्रमणिका

द्वात्रिंशस्तरङ्गः ३२.

त्रयस्त्रिंशस्तरङ्गः ३३.

विषय.	पृष्ठ.

विषय.	पृष्ठ.
द्विचत्वारिंशस्तरंगः ४२.	

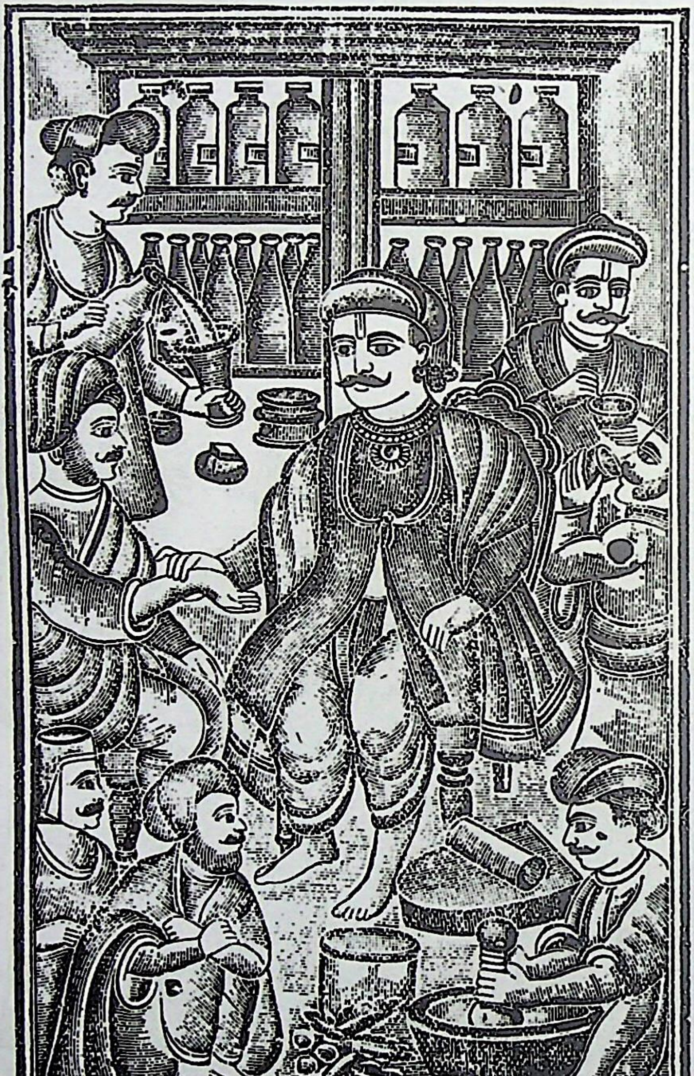
| **त्रित्चवारिंशस्तरंगः ४३.** | |

| **चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ४४.** | |

इति श्रीअमृतसागर-विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।




शंकर
पार्वती



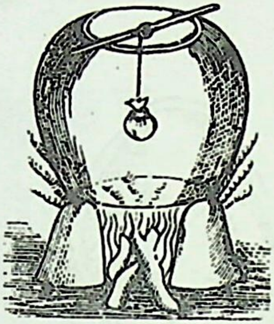
मूढगर्भ प्रदर्शक चित्र.



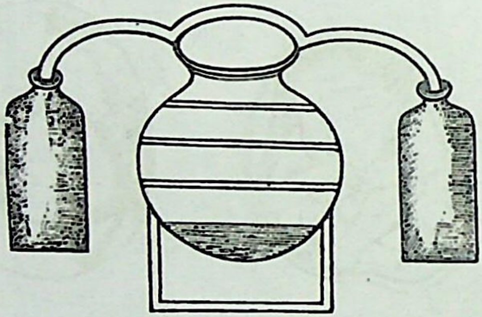
ऊर्ध्व नालिका यन्त्र



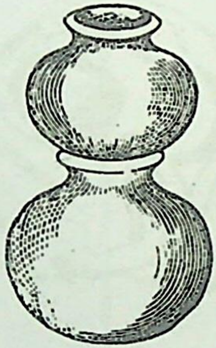
दोला यन्त्र



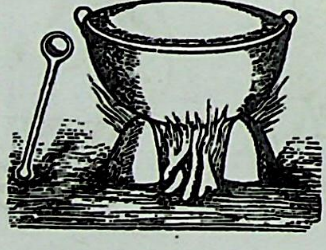
डबल नालिका यन्त्र



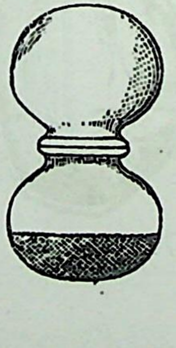
जल यन्त्र



कड़ाई



डमरू यन्त्र



श्रीगणेशाय नमः । ॐ धन्वन्तरये नमः

अथ अमृतसागर

तत्रोत्पत्तिखण्ड १.

गजमुखममरप्रवरं सिद्धिकरं विघ्नहर्त्तारम् ।
गुरुमवगमनयनप्रदमिष्टकरीमिष्टदेवतां वन्दे ॥ १ ॥

देवताओंमें श्रेष्ठ, सिद्धिके देनहारे, विघ्नोंको दूर करनेहारे जो गजानन तथा वाञ्छाकी सिद्धकरनेहारे जो इष्टदेवता और ज्ञान-दाता जो गुरु हैं तिनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

आयुर्वेदागमनं क्रमेण येनाभवद् भूमौ ।
प्रथमं लिखामि तमहं नानातंत्राणि संदृश्य ॥ २ ॥

भावप्रकाश

इस पृथ्वीपर जिस प्रकारसे आयुर्वेदका आगमन हुआ उसे मैं कई ग्रन्थोंको देखके इस ग्रन्थके आदिमें यथाक्रमसे लिखता हूँ ॥ २ ॥

आयुर्वेदस्य लक्षणमाह

आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा ।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥ ३ ॥

जिसमें आयुके हित, अहित और व्याधिके निदान और शमन इत्यादि हों उसे आयुर्वेद कहते है ॥ ३ ॥

आयुर्वेदस्य निरुक्तिमाह

अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विन्दति वेत्ति च ।
तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः ॥ ४ ॥

भावप्रकाश

शरीर और जीवका जो संयोग हो उसे जीवन कहते हैं वह जीवनयुक्त जो समय उसे आयु कहते हैं और शरीरसे जीवका वियोग

होना उसे मृत्यु कहते हैं, जिसके द्वारा पुरुष आयुको पूर्णरूपसे प्राप्त हो तथा दूसरेकी आयुको भी जान लेवे उसे मुनिराज आयुर्वेद कहते हैं, क्योंकि इसके द्वारा सेवन, सेवन अयोग्य पदार्थोंके गुण कर्मका ज्ञान होनेसे सेवन योग्यका सेवन, अयोग्यका त्याग होता है जिससे आयु निश्चय की जाती है ॥ ४ ॥

तत्रादौ ब्रह्मणः प्रादुर्भावः

विधाताऽथर्वसर्वस्वमायुर्वेदं प्रकाशयन् ।
स्वनाम्ना संहितां चक्रे लक्षश्लोकमयीमृजुम् ॥ ५ ॥
ततः प्रजापतिं दक्षं दक्षं सकलकर्मसु ।
विधिर्धीनीरधिं सांगमायुर्वेदमुपादिशत् ॥ ६ ॥

भावप्रकाश

प्रथम ब्रह्माजीने अपनी प्रजाके हितार्थ आयुर्वेदको प्रकाश करनेके लिये एक लाख श्लोकोंमें ब्रह्मसंहिता बनाकर सर्वकार्यकुशल बुद्धिसागर अपने पुत्र दक्षको पढाई ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ दक्षप्रादुर्भावः

अथ दक्षः क्रियादक्षः स्ववैद्यो वेदमायुषः ।
वेदयामास विद्वांसौ सूर्यांशौ सुरसत्तमौ ॥ ७ ॥

भावप्रकाश

तत्पश्चात् क्रियाकुशल दक्षने आयुर्वेद सूर्यपुत्र देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमारजीको पढाया ॥ ७ ॥

अथाश्विनीकुमारप्रादुर्भावः

दक्षादधीत्य दस्रौ वितनुतः संहितां स्वीयाम् ।
सकलचिकित्सकलोकप्रतिपत्तिविवृद्धये धन्याम् ॥ ८ ॥

भावप्रकाश

अश्विनीकुमारोंने दक्षसे आयुर्वेद पढ़कर संसारमें आयुर्वेदकी वृद्धिके हेतु अपने नामकी "अश्विनीकुमारसंहिता" बनायी और भैरवसे कटे हुए ब्रह्माजीके शिरको जोडा तब यज्ञके विभागी हुए। देवदानव संग्राममें जिन देवताओंके अंग भंग होगये थे उन्हें पूर्ववत्

किये, इन्द्रके भुजास्तम्भको आरोग्य किया, चन्द्रमाका क्षयरोग दूर किया, पूषादेवताके दांत जोडे, भगदेवताके नेत्र सुधारे और वृद्ध च्यवन ऋषिको तरुण बनाया इत्यादि अनेक करके देवपूज्य और वैद्यशिरोमणि हुए ॥ ८ ॥

अथेन्द्रप्रादुर्भावः

नासत्यौ सत्यसन्धेन शक्रेण किल याचितौ ।
आयुर्वेदं यथाधीतं ददतुः शतमन्यवे ॥ ९ ॥

भावप्रकाश

इन्द्रने अश्विनीकुमारोंका पूर्वोक्त कर्म देखके उनसे आयुर्वेदके लिये याचना की, तब उन्होंने इन्द्रको आयुर्वेद पढाया (और इन्द्रने अत्रि आदि अनेक मुनियोंको पढ़ाया) ॥ ९ ॥

अथात्रेयप्रादुर्भावः

आयुर्वेदोपदेशं मे कुरु कारुण्यतो नृणाम् ।
तथेत्युक्त्वा सहस्राक्षोऽध्यापयामास तं मुनिम् ॥ १० ॥

भावप्रकाश

किसी समय आत्रेयमुनि प्राणियोंको रोगयुक्त देखकर उनकी रोगनिवृत्तिके हेतु इन्द्रलोकको गये। इन्द्रने ऋषिकी पूजाकर आगमनका कारण पूछा, उन्होंने सब कारण (वृत्तांत) कहा और आयुर्वेद पढ़नेका आशय दरशाया, तब इन्द्रने उन्हें आयुर्वेद पढ़ाया, तब मुनिने पढ़के अपने नामकी (आत्रेय नामक) संहिता बनाकर अग्निवेश, भेड, जातूकर्ण, पराशर, क्षीरपाणि और हारीत इन ऋषियोंको पढ़ायी, तब इन सबोंने अपने अपने नामकी पृथक् २ संहिता बनायी ॥ १० ॥

अथ भारद्वाजप्रादुर्भावः

तमुवाच मुनिं सांगमायुर्वेदं शतक्रतुः ।
जीवेद्वर्षसहस्राणि देही नीरुङ् निशम्य यम् ॥ ११ ॥

भावप्रकाश

एक समय हिमाचलके समीप सब देवता और मुनि एकत्र हुए, जिनमें सबसे प्रथम भारद्वाजजी आये, तदनंतर अंगिरा, गर्ग, मरीचि, भृगु, भार्गव, पौलस्त्य, अगस्त्य, असित, वसिष्ठ, पराशर,

हारीत, गौतम, सांख्य, मैत्रेय, च्यवन, जमदग्नि, गार्ग्य, काश्यप, कश्यप, नारद, वामदेव, मार्कंडेय, कपिंजल, शांडिल्य, कौंडिन्य, शाकुनी, शौनक, आश्वलायन, सांकृत, विश्वामित्र, परीक्षित, देवल, गालव, धौम्य, काम्य, कात्यायन, वैजपाय, कुशिक, बादारायण, हिरण्याक्ष, लौगाक्षी, शरलोमा, गोभिल, वैखानस और बालखिल्य इत्यादि ज्ञाननिधि तपस्वी परस्पर कहने लगे कि-धर्म, अर्थ, काम, मोक्षका कारण यह कलेवर हैं, यदि यह नीरोग रहे तो सर्व कार्य सिद्ध होते हैं। इसलिये हे भारद्वाजजी ! आप इन्द्रसे आयुर्वेद संहिता लाओ। तब भारद्वाजजी इंद्रसे आयुर्वेद पढ़ आये और सर्व ऋषि-मण्डलीमें प्रचार किया, उससे द्रव्य गुण कर्मादिको जानके रोगरहित होके आयुर्वेदको लोकमें प्रसिद्ध किया ॥ ११ ॥

अथ चरकप्रादुर्भावः

यदा मत्स्यावतारेण हरिणा वेद उद्धृतः ।
तदा शेषश्च तत्रैव वेदं सांगमवाप्तवान् ॥ १२ ॥
अथर्वान्तर्गतं सम्यगायुर्वेदं प्रलब्धवान् ।
एकदा स महीवृत्तं द्रष्टुं चर इवागतः ॥
तस्माच्चरकनामाऽसौ विख्यातः क्षितिमण्डले ॥ १३ ॥

भावप्रकाश

जब नारायणने मत्स्यावतार लेकर वेदोंकोनिकाला उस समय शेषजी वेद वेदाङ्गोंको प्राप्त होकर अथर्वणवेदके अंगभूत आयुर्वेदको प्राप्त हुए और पृथ्वीमें गुप्तरूपसे विचरते हुए लोगोंको रोगग्रस्त देखके मुनि-पुत्रका रूप बनाय चर (गूढ सेवक) के सदृश विचरने लगे सो चरका-चार्य प्रसिद्ध हुए और रोगियोंको आरोग्य करते हुए चरकसंहिता बनायी ॥१२॥१३॥

अथ धन्वन्तरिप्रादुर्भावः

अधीत्य चायुषो वेदमिन्द्राद्धन्वन्तरिः पुरा ॥ १४ ॥
आगत्य पृथिवीं काश्यां जातो बाहुजवेश्मनि ।
नाम्ना तु सोऽभवत्ख्यातो दिवोदास इति क्षितौ ॥१५॥

भावप्रकाश

एकवार देवराजकी दृष्टि भूलोकपर पड़ी तो बहुतसे मनुष्य रोगसे पीडित दृष्टि आये। तब इन्द्रने धन्वन्तरिजीसे कहा कि तुम लोकोपकारके हेतु पृथ्वीपर काशीपुरीमें जाओ और काशीनरेश होकर रोगको दूर करने हेतु आयुर्वेदका प्रकाश करो, तब धन्वंतरिजी इन्द्रसे आयुर्वेद पढ़कर काशीमें जन्म लेकर दिवोदास नामक राजा हुए, वही महात्मा लोकहितार्थ अपने नामकी (धन्वन्तरि) संहिता बनाकर प्रसिद्ध की ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

अथ सुश्रुतप्रादुर्भावः

पितुर्वचनमाकर्ण्य सुश्रुतः काशिकां गतः ।
तेन सार्द्धं समध्येतुं मुनीनां तु शतं ययौ ॥ १६ ॥

आयुर्वेदं भवानस्मानध्यापयतु यत्नतः ।
अंगीकृत्य वचस्तेषां नृपतिस्तानुपादिशत् ॥ १७ ॥

प्रथमं सुश्रुतस्तेषु स्वतंत्रं कृतवान् स्फुटम् ।
सुश्रुतस्य सखायोऽपि पृथक्तंत्राणि तेनिरे ॥ १८ ॥

भावप्रकाश

एक समय विश्वामित्र ऋषिने अपनी ज्ञानदृष्टिसे देखा कि काशीमें दिवोदास राजा धन्वंतरिका अवतार है. तब अपने पुत्र सुश्रुतको आज्ञा दी कि, तुम काशीमें जाओ और दिवोदास राजासे आयुर्वेद पढ़कर लोकका हित करो, क्योंकि इसके समान यज्ञादि कोई सत्कर्म पुण्यप्रद नहीं है; पिताकी आज्ञानुसार सुश्रुत काशीमें आये और उनके साथ पढ़नेके लिये १०० मुनि और भी आये तथा दिवोदास राजाने अपने आनेका कारण प्रकाशित किया. तब दिवोदास राजाने सुश्रुतादि मुनियोंको आयुर्वेद पढ़ाया; तब सबसे प्रथम सुश्रुतने अपने नामकी "सुश्रुत" संहिता बनायी और उसके पश्चात् अन्यान्य ऋषियोंने भी अपनी २ संहिता बनायी. इस प्रकार आयुर्वेदवक्ता ऋषियोंका प्रादुर्भाव विस्तीर्णरूपसे भावप्रकाशके पूर्वखण्डमें लिखा है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

इति अमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे आयुर्वेदप्रवक्तॄणां प्रादुर्भावनिरूपणे प्रथमस्तरंगः ॥१॥

अथ सृष्टिक्रमः

आत्मा ज्योतिश्चिदानंदरूपो नित्यश्च निस्पृहः ।
निर्गुणः प्रकृतेर्योगात् सगुणः कुरुते जगत् ॥ १ ॥

ज्योतिः स्वरूप, चिदानंद, नित्य, निस्पृह, निर्गुण जो ब्रह्म परमात्मा सो प्रकृतिके योगसे सगुण होकर जगतको उत्पन्न करता है ॥ १ ॥

अब हम अमृतसागरके २५ वें तरंगमें लिखे अनुसार "सृष्टिक्रम" प्रारंभ करते हैं. क्योंकि भावप्रकाशादि वैद्यकग्रन्थोंमें उक्त विषय प्रथम ही रक्खा गया है, इसलिये इस "अमृतसागर" में सृष्टिक्रम पूर्व ही होना चाहिये, उस परमेश्वरको प्रकृति अर्थात् मायाने इस अनित्य संसारको 'नटकौतुक' सदृश बनाकर इच्छारूप महत्तत्त्वको बनाया, उस महत्तत्त्वसे अहंकार उत्पन्न हुआ सो ३ प्रकारका है (अर्थात् १ सतोगुण २ रजोगुण ३ तमोगुण) पश्चात् तमोगुणरूपी अहंकारने सतोगुण और रजोगुणसे मिलकर १०इंद्रियां और मनको उत्पन्न किया। वे ये हैं:--

ज्ञानेन्द्रियां--१ कर्ण २ त्वचा ३ नेत्र ४ जिह्वा ५ नासिका ।

कर्मेन्द्रियां--१ वाणी २ हस्त ३ पाद ४ लिंग ५ गुदा ।

तमोगुणसे अधिक सतोगुणयुक्त अहंकारसे पंचतन्मात्राएँ ।

१ शब्द २ स्पर्श ३ रूप ४ रस ५ गन्ध उत्पन्न कीं ।

तन्मात्रासे पञ्चमहाभूत (१ शब्दसे आकाश २ स्पर्शसे वायु, ३ रूपसे अग्नि, ४ रससे जल, ५ गन्धसे पृथ्वी) उत्पन्न हुए ।

सो १ कानका विषय शब्द, २ त्वचाका स्पर्श, ३ नेत्रका रूप, ४ जिह्वाका स्वाद और ५ नासिकाका गन्ध ये ज्ञानेन्द्रियोंके ५ विषय हैं. इसी प्रकार १ वाणीका भाषण, २ हस्तका ग्रहण. ३ पादका चलना, ४ लिंगका मैथुन और ५ गुदाका मलत्याग ये कर्मेन्द्रियोंके ५ विषय जानो.

१ प्रधान २ प्रकृति ३ शक्ति ४ नित्या और ५ विकृति ये प्रकृतिके नाम हैं सो ये प्रकृतियां शिवसे मिली हुई रहती हैं ।

उक्त क्रमानुसार ये २४ तत्त्व उत्पन्न हुए (अर्थात् १ महत्तत्त्व १ अहंकार ५ तन्मात्रा १ प्रकृति १० इन्द्रियां १ मन और ५ महाभूत) इतने मिलके १ शरीररूप घर बनाया । तब उस घरमें जीवात्मा शुभाशुभ कर्मोंके स्वाधीन होके प्रवेश हुआ और मनरूपी दूतके वशमें हो निवास करने लगा । इस जीवयुक्त शरीरको बुद्धिमान देही कहते हैं ।

यह देह पाप पुण्य, सुख दुःखोंसे व्याप्त होकर और मनसे जीवात्मा बँधकर स्वकृत कर्म बँधनोंसे बँधता है और काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, दशों इन्द्रियें और बुद्धि ये सब अज्ञानदशामें जीवात्माके बँधनके लिये हैं और जीवात्मा आत्मज्ञानी होनेसे मुक्त होता है.

इति श्रीअमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे सृष्टिक्रमो नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

अथ गर्भोत्पत्तिक्रमः

द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वमापंचाशत्समाः स्त्रियाः ।
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्रवेत् ॥ १ ॥
आर्तवस्रावदिवसादृतुः षोडशरात्रयः ।
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः ॥ २ ॥

भावप्रकाश

१२ वर्षके उपरांत ५० वर्षपर्यंत स्त्रियोंकी योनिद्वारा प्रतिमास स्वाभाविक रजोधर्म प्राप्त होता है, रजोधर्मके दिनसे सोलह रात्रितक स्त्रियोंको गर्भधारण करने योग्य समय है. (उनमें प्रथमकी ३ रात्रि छोडके शेष रात्रियोंमें ऋतुदान दे) ॥ १ ॥ २ ॥

इसके आगे अमृतसागरके २६ वें तरंगोक्त गर्भोत्पत्ति लिखते हैं-

किया हुआ आहार वायुकी प्रेरणासे आमाशयमें पहुँचता है, फिर वह आहार मधुरताको प्राप्त होता है, फिर वही आहार पाचक पित्तके प्रभावसे कुछ पककर खट्टा होजाता है, अनंतर नाभिस्थित समानवायुसे प्रेरित होके छठवीं ग्रहणी कलामें प्राप्त होता है. तदनंतर वहां पकके कोठेकी अग्निसे कडुवा होता है फिर कोठेकी अग्निसे पकके उत्तम रसरूप होजाता है, यदि उत्तम प्रकारसे न पककर कच्चा रहजाय तो वही आहार आँव बन जाता है, यदि कोठेकी अग्नि बलाढ्य हो तो आहारका रस मधुर होकर चिकना होता है, भलीभाँति पका हुआ रस इस शरीरकी सर्वधातुओंको पुष्ट करके अमृतकी तुल्यताको प्राप्त होता है और उस आहारका रस यदि मंदाग्निसे दग्ध होजावे तो उदरमें कडुवा अथवा खट्टा होके विषरूप हो जाता है और शरीरमें रोगसमूहको उत्पन्न करता है ।

आहार रस सारयुक्त होनेसे बलकारक और असार होनेसे द्रवमल अर्थात् पतला हो जाता है सो वह ठीक नहीं और पिये हुए जलका सार जो वायु नसोंद्वारा शरीरमें पहुँचा देता है और जलके असारको उदरमें प्राप्त करके मूत्र बनाता है वही लिंगद्वारा बाहर निकलता है और जो आहारका कीट अर्थात् मल होता है वह पक्वाशयमें रहता है सो गुदाके अपानवायुके बलसे नीचेको आकर्षण होके गुदाद्वारा बाहर निकलता है और जो आहारका रस है सो नाभिके समानवायुके बलसे प्रेरित होके मनुष्यके हृदयमें प्राप्त होता है और वहां पित्तसे पककर रुधिर बन जाता है, जो सब शरीरमात्रमें रहता है इसीका जीवको पूर्णाधार हैं, रुधिर चिकना, भारी बलवान् और मीठा होता है, यह रुधिर दग्ध होनेसे पित्तके समान हो जाता है एवं एक एक धातु सवा चार चार दिनमें उत्पन्न होती है, इस प्रकार भोजन किये हुए आहारका एक महीनेमें मनुष्योंका वीर्य उत्पन्न होता है और इसी प्रकार स्त्रियोंको एक मासमें स्त्रीधर्मद्वारा रज (रक्त) होता है।

गर्भाधान समयमें स्त्री और पुरुषके संयोगसे स्त्रीका शुद्ध रुधिर और पुरुषका शुद्ध वीर्य दोनों मिलके स्त्रीके गर्भाशयमें गर्भ उत्पन्न करते हैं तब वह गर्भ अंग उपांग युक्त होके नवमास पश्चात् प्रसूतिवायुकी प्रेरणासे बाहर निकलता है, तब " बालक उत्पन्न हुआ " ऐसा कहते हैं, यदि गर्भाधानके समय स्त्रीका रज अधिक हो तो कन्या और पुरुषका वीर्य अधिक हो तो पुत्र। यदि दोनोंका समान हो तो नपुंसक बालक उत्पन्न हो अथवा गर्भ न रहे। ऐसा आयुर्वेदका नियम है तथापि ईश्वरकी लीला अपार है इसलिये परमात्मा जो करै सो हो।

इति श्रीअमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे गर्भोत्पत्तिक्रमनिरूपणे तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

अथ शारीरकविधानम्

कालेन वार्धितो गर्भो यद्यंगोपांगसंयुतः।
भवेत्तदा स मुनिभिः शरीरीति निगद्यते ॥१॥

जो गर्भ समयानुसार बढ़ता हुआ अंग उपांगसंयुक्त होके प्रगट होता है उसे शरीरी कहते हैं और शरीरीमें जो २ वस्तु हैं उनका वर्णन जिसमें हो उसे शारीरक विधान कहते हैं सो अमृतसागरके २२ वें

तरंगमें लिखे अनुसार हम यहां लिखते हैं क्योंके जबतक शरीरकको वैद्य पूर्णतया न जानेगा तबतक निदान और चिकित्सा क्या करेगा. इसलिये निदान आदिके पूर्व शरीरक लिखना योग्य है. इस शरीरमें इतनी वस्तुएँ हैं—

७ कला ७ आशय ७ धातु ८ उपधातु ७ धातुओंके मल ७ त्वचा ३ दोष (इस शरीरकी अस्थि (हड्डी) आदिको बांधनेके लिये) ८००नसें २१० हड्डियां (कोई कोई आचार्य ३०० भी लिखते हैं) १०७ मर्मस्थान ७०० नसें (रसको सर्वत्र पहुँचानेके लिये) २४ धमनी (नाड़ी) ५०० मांसपिंडियां (स्त्रियोंके ५२० होती है) १३ कंडरा (सबसे बड़ी नाडियां जो कि शरीरमें सर्वत्र व्याप्त हैं) मनुष्यके शरीरमें १० छिद्र हैं परंतु स्त्रियोंके १३ होते हैं।

अब शास्त्रानुसार हृदयका स्वरूप यथाक्रमसे स्पष्टकर दिखाते हैं—धातु और आशयके बीचमें जो झिल्ली है (जिसमें बालक रहता है) उसे 'कला' कहते हैं, रुधिर, मांस और मेद इन तीनोंको पृथक् २ रखनेके लिये तीनोंके बीचमें एक एक झिल्ली (कला) है और यकृत तथा प्लीहके बीचमें एक झिल्ली है, एवं अंतड़ियोंके बीचमें १ झिल्ली जल तथा अग्निको धारणकर रही है, १ झिल्ली (कला) वीर्यको धारण किये है एवं ७ कला हैं।

अब सात आशयोंको दर्शाते हैं—

आशय नाम स्थानका है. हृदयमें कफका स्थान उसके नीचे आम (आंव) का स्थान, नाभिके ऊपर बाईओर अग्निका स्थान अग्निके ऊपर तिल है, नाभिके नीचे पवनका स्थान उसके नीचे पेडूमें मलका स्थान और उससे मिलता हुआ कुछ नीचे मूत्रका स्थान (जिसे वस्ती कहते हैं) हृदयसे कुछ ऊपर जीव और रुधिरका स्थान है. ये सात आशय पुरुष स्त्रियोंके समानही रहते हैं परंतु इनसे व्यतिरिक्त स्त्रियोंके (१गर्भ--स्थान, २ दुग्धस्थान ३ स्तन) ये आशय अधिक हैं ।

अब ७ धातुओंको दर्शाते हैं—१ रस २ रक्त ३ मांस ४ मेद ५ हड्डी ६ मज्जा और ७ वीर्य ये सात धातु हैं, ये सातों धातुएँ जिस प्रकार उत्पन्न होती हैं सो तीसरे तरंगमें लिख चुके हैं अब उपधातुओंके विषयमे लिखते हैं—

१ जिह्वाका मल, २ नेत्रोंका मल, ३ गालोंका मल ये तीनों रसकी उपधातु हैं. २ रंजन (अर्थात् पित्त) रक्तकी उपधातु हैं, ३ कानोंका मल मांसकी उपधातु है, ४ जिह्वा, दांत, कांख और लिंगेद्रियसे जो मल निकलता है सो मेदकी उपधातु है. ५ बीस २० नख, हाड़ोंकी उपधातु हैं ६ नेत्रोंका कीचर (कीचड़) मज्जाकी उपधातु हैं, ७ मुखपर जो चिकनापन तथा कीलें निकलती हैं तथा स्त्रियोंके स्तनोंमें "दूध" और "स्त्रीधर्म" ये दो धातु पुरुषोंसे अधिक हैं सो समय समयपर ही होती हैं और समयपर ही मिट जाती हैं।

सातों धातुओंसे और भी वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं. जैसे--१ शुद्ध मांससे शरीरमें घृत उत्पन्न होता है. जिसे "वसा" कहते हैं. २ पसीना ३ दांत ४ केश ५ ओज ये सब सत धातुओंसे ही उत्पन्न होते हैं, ओज सब शरीरमें रहता है, वह चिकना, शीतल और बल तथा पुष्टिकारक है।

अब सात त्वचाओंको दर्शाते हैं---

पहिली त्वचा अवभासिनी नामकी है, यह चिकनी और विभूति नामका स्थान हैं, दूसरी त्वचा लाल है जिसमें तिल नील आदि उत्पन्न होते हैं, तीसरी श्वेत है जिसमें चर्मदलनामक रोग उत्पन्न होता है, चौथी त्वचा (ताम्रवर्ण) तांबेके सदृश रंगवाली हैं. उसमें श्वेत प्रकारके कुष्ठ उत्पन्न होते हैं, पांचवी त्वचा छेदनी कहाती है जिसमें सब कुष्ठ उत्पन्न होते हैं, छठवीं त्वचा रोहिणी कहाती है उसमें गंडमाला, फोडे आदि रोग उत्पन्न होते हैं, सातवीं त्वचा स्थूल कहाती है जिसमें विद्रधिरोग उत्पन्न होता है, इन सातों त्वचाओंकी मुटाई यवप्रमाण है।

अब तीन दोष लिखते हैं:—

१ वात २ पित्त ३ कफ ये तीन दोष हैं, और कोई २ इन्हें मल भी कहते हैं, इन तीनोंमें वायु प्रबल है, पित्त कफ पंगु हैं, इसलिये वायु सब वस्तुओंका विभाग कर नसोंद्वारा सर्वत्र शरीरमें पहुँचा देती है ये प्रत्येक (वात पित्त कफ) पांच पांच प्रकारके हैं, और न्यारे न्यारे स्थानमें रहते हैं।

१ अथ वायुस्थानादि प्रारम्भः

वायु- रजोगुणमयी, शीतलसूक्ष्म, हलकी और चञ्चल हैं यह मलके स्थानमें, कोठेमें अग्निस्थानमें, हृदयमें और कण्ठमें इन पांचों स्थानोंमें

रहती है, ये तो वायुके ५ स्थान हैं और साधारण प्रकारसे वायु सर्व देहमात्रमें ही रहती है जिसके पांच जुदे जुदे नाम हैं अर्थात्--१ गुदामें अपानवायु, २ नाभिमें समानवायु, ३ हृदयमें प्राणवायु, ४ कण्ठमें उदान-वायु और ५ सब शरीरमें व्यानवायु रहती है।

२ अब पित्तस्वरूपादिप्रारंभः

पित्त--उष्ण (गरम) पतला, पीला, सतोगुणमयी--कडुआ, तीखा और दग्ध होनेसे खट्टा होता है, अग्निस्थानमें तिलप्रमाण अग्निरूप होके रहता है, त्वचामें रहके कांतिकारक हैं, नेत्रोंमें रहके सबको दिखलाता हैं प्रकृतिमें रहके सबको पाचन करता हैं व रसका लोहू बनाता हैं हृदयमें रहके बुद्धि आदि उत्पन्न करता है ये पित्तके पांच स्थान हैं. १ पाचक २ भ्राजक ३ रंजक ४ आलोचक ५ साधक ये पांच नाम हैं।

३ अथ कफस्वरूपादिप्रारंभः

कफ--चिकना, भारी, श्वेत पिच्छिल (चावलोंके गाढे मांडसमान) ठंढा। तमोगुणयुक्त--मीठा और दग्ध होनेसे कटु होजाता है, यह १ आमाशय २ मस्तक ३ कण्ठ ४ हृदय और ५ संधियोंमें रहता है. ये कफके मुख्य स्थान हैं और साधारण भावसे शरीरमात्रमें रहता हुआ देहको स्थिर और सब अङ्गोंको कोमल करता है, १ क्लेदन, २ स्नेहन, ३ रसन, ४ अवलंबन, ५ श्लेष्मा ये पांच कफके नाम हैं।

स्नायु नसें--शरीरमें मांस हाड मेद इनको बांधनेवाली स्नायु नसें कहाती हैं।

मर्मस्थान--जीवको धारण करनेवाले जो स्थान सो मर्मस्थान कहाते हैं।

नसें- जो संधिको बांधनेवाली, त्रिदोष और सप्त धातुओंको बहाने-वाली हैं सो नसें कहाती हैं।

धमनी (नाडी) जिसके द्वारा रस और पवनका बहाव हो सो धमनी (नाडी) कहाती हैं।

मांसपिंडी--इस शरीरमें जो मांसकी गठाने हैं, सो मांसपिंडी कहाती हैं।

कंडरा--सबसे बड़ी नसें जो सब अंगको फैलने और सिकुड़ने देती हैं सो कंडरा कहाती हैं।

छिद्र—२ नाकके, २ नेत्रके, २ कानके, १ मुख, १ लिंग, १ गुदा और १ मस्तक ये दश छिद्र हैं एवं इस शरीरमें रोम और १ गर्भाशयमें ऐसे तेरह छिद्र हैं परन्तु स्त्रियोंके २ स्तन असंख्यात छिद्र हैं ।

नाभिके बाईं ओर फुफ्फुस और प्लीहा (फिया) है तथा दाहिनी ओर यकृत् है ।

फुफ्फुस—उदानवायुके आधारको फुफ्फुस कहते हैं ।

प्लीहा—रक्तको बहानेवाली नसोंके मूलको प्लीहा कहते हैं ।

यकृत्—रंजक (पित्तका स्थान) के पास जो रक्तस्थान उसे यकृत् कहते हैं ।

नाभिके वामभागमें अग्न्याशयपर जो तिल है वह जल बहानेवाली नसोंका मूल है यही तिल प्यासको रोकता है ।

कुक्षिमें दो गोले हैं जिनको वृक कहते हैं ये दोनों पेटके मेदको पुष्ट करते हैं ।

वृषण (पोते) ये वीर्यको बहानेवाली नसोंके आधार हैं-ये पराक्रम देनेवाले, गर्भको उत्पन्न करनेवाले, वीर्यमूत्रके घर और हृदय, मन, चित्त अहंकार और बुद्धिके स्थान हैं ।

नाभि—धमनी आदि (नाड़ी) नसोंका स्थान है, नाभिका समान-वायु सब धातुओंके संयोगसे संपूर्ण शरीरको पुष्ट करता है तथा नाभिका पवन हृदयकमलको स्पर्श करके कंठद्वारा नाकसे बाहर निकलता और आकाशमें विष्णुपदके अमृतसे युक्त हो मुख नासिकाद्वारा पुनः शरीरमें प्रवेश करता है सो इसी पवनसे सर्व शरीर तथा जीवको प्रबलता पहुँचती है ।

इति श्रीअमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे शारीरकनिरूपणे चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

अथ अवस्थादिक्रमः

वयस्तु त्रिविधं बाल्यं मध्यमं वार्धकं तथा ।
ऊनषोडशवर्षस्तु नरो बालो निगद्यते ॥ १ ॥
मध्ये षोडशसप्तत्योर्मध्यमं कथितं बुधैः ।
ततस्तु सप्ततेरूर्ध्वं वृद्धो भवति मानवः ॥ २ ॥

भावप्रकाश

कौमारं पञ्चमाब्दांतं पौगंडं दशमावधि ।
कैशोरमापंचदशाद्यौवनं तु ततः परम् ॥ ३ ॥

अ० अ०

अवस्था तीन प्रकारकी होती है—१ बाल्यावस्था, २ मध्यावस्था, ३ वृद्धावस्था. जन्मसे १६ वर्षपर्यन्त बाल्यावस्था, १६ से ७० वर्षतक मध्यावस्था और ७० से पश्चात् सर्व वृद्धावस्था जानो ।

बाल्यावस्थामें भी–जन्मसे ५ वर्ष पर्यंत कौमारसंज्ञा, ५ से १० वर्ष तक पौगंड संज्ञा, १० से १५ वर्षतक कैशोर संज्ञा और १५ के पश्चात यौवनादि संज्ञा ग्रन्थान्तरमें लिखी है इसी प्रकार स्त्रियोंके जन्मसे ८ वर्षपर्यंत कन्या संज्ञा, ८ से ११ पर्यंत गौरीसंज्ञा ११ से १६ वर्षपर्यंत बाला संज्ञा, १६ से ३० वर्षपर्यंत तरुणी संज्ञा. ३० से ५५ वर्षपर्यंत प्रौढा संज्ञा और ५५ के पश्चात् वृद्धा संज्ञा लिखी है ।

अब हम इसके आगे शरीरकी गति आदिका क्रम अमृतसागर के २५ वें तरंगके लेखानुसार यहां लिखते हैंः—

जन्मसे १० वर्षपर्यंत कोमलता, २० वर्षपर्यंत वृद्धिपन, ३० वर्षपर्यंत शरीरकी मुटाई, ४० वर्षपर्यंत बुद्ध्यागमन (बुद्धि आना), ५० वर्षपर्यंत त्वचाकी दृढता रहती है, ६० वर्षपर्यंत नेत्रोंमें ज्योति रहती है, ७० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य रहता है, तत्पश्चात् ८० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य क्रमशः न्यून होता हुआ नष्ट हो जाता है। ९० वर्षतक ज्ञान रहता है, १०० वर्षतक भाषण, हस्तपादादिमें कुछ बल और मल मूत्रादि त्यागनेका ज्ञान रहता है. ११० वर्षपर्यंत कुछ स्मरणमात्र ज्ञान रहता है और १२० पर्षपर्यंत शरीरमें प्राणमात्र रहता है. जो शरीर नीरोगी रहे तो उक्त क्रम रहता है. परन्तु रोगयुक्त होनेसे १० वर्षमें उक्त प्रमाणानुसार किंचित घटना होती जाती है एवं शास्त्रप्रमाणानुकूल मनुष्यकी आयु (१२०) एकसौ बीस वर्षकी है ।

और भी-शुभ कर्म करना, सत्य बोलना, देवब्राह्मण वेदादिकी निंदा न करना, ब्रह्मचर्यपूर्वक वीर्य धारण करना, परोपकार करना, वृद्धपुरुषोंको सर्वदा नमन करना, सच्छास्त्रावलोकन (उत्तमशास्त्रोंके अवलोकन) से आयुर्वेदोक्ता (ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्या) अनुसार रहना और पथ्यापथ्य आहार विहारादि परिपूर्ण ध्यान रखनेसे

मनुष्य पूर्ण आयुको प्राप्त होता है तथा उक्त आचरणोंसे विरुद्ध कर्म करनेसे मनुष्यकी अल्पायु हो जाती है; क्योंकि विरुद्ध आहार विहारसे मनुष्यको रोग उत्पन्न होते हैं और उसमें पथ्यापथ्यका परिपूर्ण ध्यान न रखनेसे वे रोग साध्यसे याप्य और याप्यसे असाध्य होके इस शरीरको नाशकर देते हैं इसलिये मनुष्यको अपने शरीरकी रक्षाके लिये आयुर्वेदोक्त रीत्यनुसार अवश्य चलना चाहिये, क्योंकि धन्वन्तरि महाराजने सुश्रुतमें १०१ प्रकारकी मृत्यु लिखी हैं जिनमें १०० आगंतुक मृत्यु हैं जोकि प्रयत्न करनेसे दूर हो जाती हैं और एक कालसंज्ञक मृत्यु है जो कि ब्रह्मादि देवताओंको भी आयुष्यके अन्तमें नष्ट कर देती है, इसपर कोई प्रयत्न नहीं चलता, अतएव प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि जहांतक यह शरीर रोगरहित रहे, जहांतक वृद्धावस्था प्राप्त न होवे, जहांतक इन्द्रियोंमें शक्ति न्यून न होवे और जबतक आयुका क्षय न होवे तबतक अपनी आत्माके कल्याणार्थ तपश्चरण योगाराधनादि सत्कर्मोंको करले, क्योंकि योगाराधन तपश्चरणादि सत्कर्मोंमें आगे हमारे मार्कण्डेय आदि महर्षियोंकी भी आयु वृद्धिको प्राप्त हुई है, इस लिये मनुष्यदेहको प्राप्त होके अवश्य धर्मका संग्रह करना चाहिये। कारण कि इस देहके साथ केवल धर्मके अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु नहीं जाती, इसलिये स्वधर्मका त्याग कदापि न करना चाहिये।

एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षत।
तत्रैकः कालसंयुक्तः शेषास्त्वागंतवः स्मृताः ॥ १ ॥
तथा सत्यपि तैलादौ दीपं निर्वापयेन्मरुत्।
एवमायुष्यहीनेऽपि हिंसन्त्यागंतुमृत्यवेः ॥ २ ॥

अथ वातप्रकृतिवाले पुरुषके लक्षण. इत्युक्तं सुश्रुते।

छोटे बाल, कृश (दुबला) और रूखा शरीर, वाचाल, चंचलमन हो और आकाशीय स्वप्न आवे उसे वातप्रकृति जानो।

अथ पित्तप्रकृति—तरुणावस्थामें श्वेत बाल हो जावें, बुद्धिमान् होवे, पसीना अधिक आवे, क्रोधी होवे और स्वप्नमें तेज दीखे सो पित्तप्रकृति है।

अथ कफप्रकृति-गम्भीर बुद्धि, स्थूल अङ्ग, चिकने बाल बलवान् होवे और स्वप्नमें जलस्थान देखे सो कफप्रकृति है।

अथ निद्रालक्षण-जिस मनुष्यको कफ और तमोगुण अधिक हो उसे मूर्छा और निद्रा आती है, यदि वात पित्त और रजोगुण अधिक हों तो चक्र और संदेह हो, कफ, वात और तमोगुण अधिक होय तो तन्द्रा (अधमिची आँखें) होती हैं; यदि बल नष्ट हो गया हो तो ग्लानि होती है तथा दुःख अजीर्ण और थकावटसे भी ग्लानि होती है और निर्बलतासे उत्साह न होवे तथा आलस्य आता है।

इति श्रीअमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे अवस्थादिक्रमनिरूपणे पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥

इति उत्पत्तिखण्डः १

सूचना

श्लोकः

शुद्धां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां
वंदे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ १ ॥

इस विचारखण्डमें अनेक वैद्यकग्रंथोंसे विचार विचारके "अमृत-सागर" के उपयोगी ऐसे साररूपी बिचार लिखे गये है कि जिनसे विचार पूर्वक जो वैद्यगण चिकित्साका प्रचार करेंगे तो अवश्यही रोगियोंका सुधार होकर सर्व सुखागार आरोग्यताका प्रसार होगा ।

इसकी इक्कीस तरंगें हैं जिनमेंसे प्रथम तरंगमें वैद्यसे शकुन पर्यंत ९ विचार हैं, द्वितीयमें नाडीसे रोगी पर्यंत १३ विचार हैं तृयीयमें यन्त्र-विचार, चतुर्थमें धात्वादि शोधन विचार, पञ्चममें मानविचार, षष्ठमें युक्तायुक्त विचार, सप्तममें औषधक्रियाविचार, अष्टममें दीपनादि विचार और नवमसे एकविंशतिपर्यंत लघुनिघण्टु, जिसमें मुख्यौषध नाम गुण विचार वर्णन किया है ।

यद्यपि हमने इसे लघुनिघण्टु नाम दिया है, परन्तु यह बृहन्निघण्टुके सदृश काम देनेवाला है, क्योंकि वर्तमानकालमें औषधादि वस्तुओंका विशेष उपचार हो रहा है उनके मुख्य नाम, गुण तथा उपकार उत्तम प्रकारसे निर्धारित करके प्रदर्शित किये गये हैं, विशेषकर आशा है कि यह विचारखण्ड भी केवल इसी ग्रन्थको नहीं किन्तु अन्य वैद्यकग्रन्थोंको भी विशेषतः उपकारी होगा ।

श्रीः

अथ विचारखण्डः २.

वैद्यविचारः

तत्रादौ वैद्यलक्षणम्

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः पीयूषपाणिः कुशलः क्रियासु ।
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालुः शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशः स्यात् ॥ १ ॥

वैद्यजीवन

अब वैद्यके लक्षण लिखते हैं—" सत्यवक्ता " गुरुसे निघण्टु निदान चिकित्सा आदि समग्र वैद्यविद्या पढाहुआ, अमृतके समान हाथवाला (अर्थात जहां औषधी दे वहां यशकोही प्राप्त), दवा देनेमें पूर्ण चतुर, निर्लोभी धैर्यवान् दयावान् सदा पवित्रतासे रहनेवाला, निष्कपटी और आलस्यरहित इन लक्षणोंसे जो युक्त हो वही सद्वैद्य कहाता है । सो उक्त वैद्यसे ही औषधि लेना चाहिये अन्यसे नहीं ॥ १ ॥ यह वैद्यजीवन में लिखा है ।

निषिद्धो वैद्यः

कुचैलः कर्कशः स्तब्धः कुग्रामी स्वयमागतः ।
पंच वैद्या न पूज्यंते धन्वंतरिसमा अपि ॥ २ ॥

भावप्रकाश

जिसके मैले तथा फटे वस्त्र और आचरण भी निंद्य हो १, जिसका स्वभाव अत्यंत क्रोधयुक्त ही रहे २, जो अति गर्वी हो ३, जो छोटे तुच्छ गांवमें रहनेवाला हो ४, जो विना बुलाये आप ही आवे ५ ये पांच वैद्य यदि धन्वन्तरिजीके समान हों तो भी पूज्य तथा अङ्गीकार करनेके योग्य नहीं है ॥ २ ॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है ।

मूर्खवैद्यादौषधं नांगीकरणीयमित्युक्तं च वैद्यजीवने ।

औषधं मूढवैद्यानां त्यजन्तु ज्वरपीडिताः ।
परसंसर्गसंसक्तं कलत्रमिव साधवः ॥ ३ ॥

रोगीको चाहिये कि, चाहे जैसे ज्वर आदि रोगसे पीडित हो परन्तु मूर्खवैद्यके हाथसे कदापि भूलके भी औषध न खावे क्योंकि मूर्खकी औषधसे आरोग्य होना दूर है परंतु रोग वृद्धि तथा प्राणहानि होना कोई आश्चर्य नहीं, इस लिये जैसे उत्तम पुरुष व्यभिचारिणी स्त्रीको त्यागन कर देते हैं ऐसे ही मूर्खवैद्यको रोगी भी त्यागन कर देवे ॥ ३ ॥ यह वैद्यजीवनमें लिखा।

राजदण्डयोग्यवैद्यः

औषधं केवलं कर्तुं यो जानाति न चामयम्।
वैद्यकर्म स चेत्कुर्याद्वधमर्हति राजतः ॥४॥

भावप्रकाश

जो वैद्य केवल औषध ही करना जानता हो और रोगको निदानपूर्वक न पहिचानता हो तो राजाको चाहिये कि, अपने राजभरमें उसे औषध न देने देवे, यदि देवे तो यथोचित पूर्णदंड देवे ॥ ४ ॥

इति वैद्यविचारः समाप्तः

अथ वैद्यमुख्यकर्मविचारः

तत्र चिकित्साफलमाह

क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री क्वचिद्धर्मः क्वचिद्यशः।
कर्माभ्यासः क्वचिच्चेति चिकित्सानास्तिनिष्फला ॥५॥

अब वैद्यको जिन मुख्य कर्मोंका विचार करना चाहिये सो लिखते हैं. प्रथम तो वैद्य इस बातपर पूर्ण ध्यान देवे कि, चिकित्सा की हुई कभी निष्फल नहीं होती, क्योंकि कहीं तो औषध देनेसे धन मिलता है कहीं मित्रता ही होती है, कहीं धर्म होता है, कहीं केवल यश ही प्राप्त होता है. और यदि कुछ भी न हो तो वैद्यकर्मका अभ्यास तो बना ही रहता है इसलिये वैद्य चिकित्सा करनेसे कभी न हटे ॥ ५ ॥

चिकित्स्यस्य रोगिणो लक्षणमाह

निजप्रकृतिवर्णाभ्यां युक्तः सत्त्वेन चक्षुषा।
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यभक्तो जितेंद्रियः ॥६॥

आयुष्मान्सत्त्ववान्साध्यो द्रव्यवान्मित्रवानपि ।
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥७॥

अब वैद्य कैसे रोगीको औषधि देवे और कैसेको न देवे सो लिखते हैं--अपनी प्रकृति और वर्णसे युक्त हो, नेत्रादि कर्मेंद्रियशक्तियुक्त हो, वैद्यको ईश्वरभाव मानता हो जितेंद्रिय हो (अर्थात् मिथ्या आहार विहार न करै) ऐसे रोगीको वैद्य औषधि देवे ॥ ६ ॥ एवं जो रोगी आयुयुक्त, बलयुक्त, द्रव्ययुक्त, मित्रयुक्त, आज्ञाकारी (वैद्यके कहनेके अनुसार चलनेवाला) विश्वासी (वैद्यका पूर्ण विश्वास रखनेवाला) और साध्य रोगयुक्त हो तो औषधि दे अन्यथा नहीं देवे ॥ ७ ॥

चण्डः साहसिको भीरुः कृतघ्नो व्यग्र एव च ।
शोकाकुलो मुमूर्षुश्च विहीनः करणैश्च यः ॥८॥
वैरी वैद्यविदग्धश्च श्रद्धाहीनश्च शंकितः ।
भिषजामविधेयाः स्युर्नोपक्रम्या भिषग्विदा ॥९॥

भावप्रकाश

जो रोगी क्रोधी, हठी, कृतघ्न (किये उपकारका न माननेवाला) टेढ़ीप्रकृतिवाला, शोकित, किसी प्रकार (कारण) से मरनेकी इच्छा करनेवाला, निर्बल (इन्द्रियोंके बलसे हीन), वैद्यविरोधी, अर्द्धवैद्य, संशययुक्त और श्रद्धाहीन हो, वैद्यको चाहिये कि ऐसे रोगीको कदापि औषध न देवे ॥ ८ ॥९॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है।

दर्शनस्पर्शनप्रश्नै रोगिणो रोगनिश्चयम् ।
आदौ ज्ञात्वा ततः कुर्याच्चिकित्सां भिषजांवरः ॥१०॥

रोगीको देखके स्पर्श करके (छूके) और सब वृत्तान्त पूछके रोगको निश्चय करनेके पश्चात् श्रेष्ठ वैद्यको चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १० ॥

देशं बलं वयः कालं गुर्विणीं गदमौषधम् ।
वृद्धवैद्यमतं ज्ञात्वा चिकित्सामारभेत्ततः ॥११॥

इसी प्रकार १ देशविचार २ बलविचार ३ अवस्थाविचार ४ पुरुष तथा गर्भिणी स्त्रीका रोगविचार ५ कालविचार ६ दूतविचार ७ शकुनविचार ८ नाड़ीविचार ९ नेत्रविचार १० जिह्वाविचार ११

मूत्रविचार १२ स्वप्नविचार १३ औषधविचार १४ अर्थविचार १५ कर्मविचार १६ अग्निबलविचार १७ (रोगी) साध्यासाध्यविचार १८ पथ्यापथ्य--विचार १९ औषधि अनुपान विचार इत्यादिको सोचके वृद्धवैद्य अर्थात् सुश्रुत, चरक आदि प्राचीन मुनियोंके मतको विचार (कर) के वैद्य चिकित्सा करे ॥ ११ ॥

अथ देश विचारः

भूमिदेशस्त्रिधाऽनूपो जांगलो मिश्रलक्षणः ॥ १ ॥

इस भूमिपर तीन प्रकारके देश हैं--१ अनूपदेश २ जांगल देश ३ मिश्रदेश (साधारण देश) अब इनके पृथक् पृथक् लक्षण लिखते हैं।

१ अनूपदेश जहां सदैव बहुत जल बहता रहे, पर्वत हो, कफ तथा बादीके रोग विशेष उत्पन्न होते हों उसे अनूपदेश जानो।

२ जांगलदेश--जहां थोडा जल तथा वृक्षभी हों और बादीकी विशेषता हो उसे जांगलदेश जानना चाहिये।

३ मिश्रदेश--जहां शीत उष्ण और वर्षा समान होनेसे बात पित्त और कफ तुल्य ही हों उसे मिश्रदेश कहते हैं।

जो मनुष्य जिस देशमें उत्पन्न होता है उसकी प्रकृति उसी देशके अनुसार होती है. इसलिये वैद्य प्रथम देशविचार करके जिसको जिस देशमें जो जो हितकारी ओषधि हैं उन्हींका प्रचार करे अन्यथा नहीं। ऐसा भावप्रकाश और वृद्ध वाग्भटमें लिखा है ॥ इति देशविचारः ॥

अथ कालविचारः

काल अर्थात् समय भी तीन प्रकारका है--१ शीतकाल, २ उष्णकाल, ३ वर्षाकाल इन तीनों कालोंका विचार इस प्रकार है कि--

१ यदि शीतकालमें यथोचित ठण्ढसे न्यूनाधिक ठंढ पड़े अथवा गर्मी होने लगे तो रोग उत्पन्न होंगे। २ उष्णकालमें समयकी मिति (प्रमाण) से न्यूनाधिक उष्णता हो अथवा शीत पड़ने लगे तो रोग उत्पन्न होंगे। ३ इसी प्रकार वर्षाकालमें उस समयकी योग्यतासे न्यूनाधिक (कम-बढ) वर्षा हो अथवा बिल्कुल वर्षा न हो तो भी रोग उत्पन्न होंगे, वैद्यको इस बातका पूर्ण विचार करना चाहिये ॥ इति कालविचारः ॥

अथावस्थाविचारः

अवस्थाके कई भेद हैं परन्तु मुख्य अवस्था तीनही प्रकारकी हैं--१ बाल्यावस्था, २ तरुणावस्था, ३ वृद्धावस्था, १ बाल्यावस्थामें कफ, २ तरुणावस्थामें पित्त और ३ वृद्धावस्थामें वायुकी वृद्धि रहती है इसलिये वैद्यको अवस्थाका विचार करके उपचार करना चाहिये ॥इति अवस्थाविचारः॥

अथ रोगविचारः

रोगीविचार ३ प्रकारसे किया जाता है- १ देखकर २ छूकर ३ पूछकर

१. जैसे कामलारोग जिसे कमल तथा पीलियाका रोग कहते हैं ऐसे ही अनेक रोग जो देखनेसे ही ज्ञात हो जाते हैं।

२. ज्वर आदि कई रोग रोगीके शरीरस्पर्शसे ज्ञात होते हैं।

३. और उदरशूल (पेट दूखना), पार्श्वशूल (पसली दूखना), मस्तकपीडा, बवासीर, उपदंश (गर्मी), प्रमेह (परमा) चित्तभ्रम (हौलदिल) और भूतादि बाधा इत्यादि अनेक रोग पूछनेसे ही यथार्थ ज्ञात होते हैं।

इसलिये वैद्य उक्त तीन प्रकारोंसे जिस रोगका जिस प्रकारसे निश्चय हो सके करै। तत्पश्चात् उस रोगका निदान करे कि, यह रोग कितने प्रकारका है, उनमेंसे इसमें किसके लक्षण मिलते हैं इसका विचार करके पश्चात् औषधका उपचार करे ॥ इति रोगविचारः ॥

अथ कालज्ञानविचारः

कालज्ञानविचार--उसे कहते हैं जिससे रोगीके मरण जीवनका निश्चय हो जाता है।

१. जिस रोगीको रात्रिमें दाह हो और दिनको शीत (जाड़ा) लगे और कंठमें कफका घराटा हो तो वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्तहो।

२. जिस रोगीकी नाककी नोक ठंढी हो और शरीरमें शूल चले वह रोगी निश्चय मरे।

३. जिस रोगीकी कांति,लज्जा आदि नष्ट होजावे तथा स्वभाव क्रोधी-कासा हो जावे वह रोगी ६ मासकी अवधिमें मरजावे।

४. जिस रोगीकी गति भंग होजावे, शरीरका रंग पलट (बदल) जावे और सुगंधि दुर्गंधिका ज्ञान न रहे, वह रोगी भी मृत्युको प्राप्त होजाय।

५. जिस रोगीको वृक्षकी जड तथा डालियोंमें अग्निके सूक्ष्म विभाग (चिनगारियां) दिखाई देवें वह ६ मासमें मरजावे ।

६. जिस रोगीको पसीसा किंचित् कभी न निकले और कामदेवसे हीन हो जावे वह ३ मासमें मृत्युको प्राप्त होवे ।

७. जिस रोगीको कानके छिद्र मूँदनेपर सुनाई नहीं देवे वह अवश्य मरे ।

८. जिस रोगीके नेत्र देह और मुखका वर्ण बदल जावे सो निश्चय मरे

९. जिस रोगीको अपनी जीभ और नाककी अनी तथा दोनों भौंहोंका मध्य भाग दृष्टि न पडे वह रोगी निश्चय मृत्युवश होजावे ।

१०. जिस रोगीके नेत्र लाल और मुखवर्ण कुछका कुछ ही हो जावे वह निश्चय मरे ।

११. जिस रोगीकी इंद्रियां अपने विषयको ग्रहण न करैं (जैसे-नेत्र रूप देखना न चाहे, कान शब्द न सुने, जीभ रसको न जाने इत्यादि) तो वह अवश्य मरे ।

१२. जिस रोगीकी वाणी बोलनेसे थकित हो जावे और शक्तिहीन हो जावे, वह निश्चय मरे ।

१३. जिस रोगीको कांच तथा जलमें अपनी परछाई (छाया) न दीखे वह भी मरे ।

१४. जिस रोगीका मुख लाल कमलकी नाई हो जावे जिह्वा (जीभ) काली हो जावे और शरीरमें पीडा उत्पन्न हो वह निश्चय मरे ।

१५. जिस रोगीको आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी ये नक्षत्र, रवि, शनि, मङ्गल ये वार तथा चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी द्वादशी इन तिथियोंमें रोग उत्पन्न हो वह अवश्य मृत्युवश होवे ।

१६. जिस रोगीके कांधे कँपने लगे वह भी अवश्य मरे ।

१७. जिस रोगीको दूसरे मनुष्यकी पुतली (आंखका) चमकता हुआ तारा में अपना स्वरूप न दीखे वह निश्चय मरे ।

१८. जिस रोगीका सूर्योदयके समय दाहिना तथा सूर्यास्तके समय वाम स्वर सर्वदा चले वह रोगी अवश्य मृत्युकोप्राप्तहोवेगा. इत्यादि वैद्यको कालज्ञानका विचार भी अवश्य करना चाहिये ।

इति कालज्ञानविचारः

अथ दूतविचारः

वैद्यको बुलानेके लिये काना, लँगड़ा, नकटा और मूर्ख दूतको न भेजना चाहिये, बरन् चतुर, उत्तम वर्णवाला, उत्तम चेष्टावाला, सुखी और निर्मल वस्त्रादि धारण किये हो ऐसे दूतको रथादिक यान (सवारी) पर बैठाकर तथा कुछ सुन्दर फल वैद्यके भेंटको देकर भेजना चाहिये. इस बातपर रोगी तथा उसके घरके लोगोंको पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

वह दूत जब वैद्यके घर पहुँचे तब अपनी नासिकाके स्वरको देखे, जिस ओरका स्वर चलता हो वैद्यके उसी ओर जाके खड़ा होवे, और वह फल भेंटकर देवे, वैद्य भी उस दूतको देखकर विचार करे, यदि काना लँगड़ा आदि निषिद्ध लक्षणवाला हो तो समझ लेवे कि रोगीका आरोग्य होना दुस्तर है तथा श्रेष्ठगुण शुभ लक्षणवाला हो तो रोगी आरोग्य हो जावेगा ऐसा निस्संदेह विचारकर उसके साथ रोगीके गृह जावे ॥ इति दूतविचारः ॥

अथ शकुनविचारः

जिस समय वैद्यको बुलानेके लिये दूत जावे उस समय इस बातपर पूर्ण ध्यान देवे, जो सामने जल आदि शीतल पदार्थ मिलें तो उसका फल अच्छा है, जो सामने अग्नि आदि उष्ण पदार्थ मिलें तो उसका फल अच्छा नहीं है, जब वैद्यके घर पहुँचे तो वैद्य दूतसे पूँछ ले कि, आते समय तुझे क्या (उष्ण अथवा शीत) पदार्थ मिला था, इसी प्रकार वैद्य जब रोगीके घर जावे तब भी विचार करे, जो जल आदि शीतल पदार्थ सन्मुख मिलें तो फल उत्तम है और अग्नि आदि उष्ण पदार्थ मिलें तो शकुन फल नष्ट जाने ॥ इति शकुनविचारः ॥

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे वैद्यविचारादिनिरूपणं
नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

अथ नाडीविचारः

पुंसो दक्षिणहस्तस्य स्त्रियो वामकरस्य तु ।
अंगुष्ठमूलगां नाडीं परीक्षेत भिषग्वरः ॥१॥
अंगुलीभिस्तु तिसृभिर्नाडीमवहितः स्पृशन् ॥
तच्चेष्टया सुखं दुःखं जानीयात्कुशलोऽखिलम् ॥२॥

इति भावप्रकाशे ह्युक्तम्

पुरुषके दक्षिण हस्तकी और स्त्रीके वामहस्तकी नाड़ी (जो कि अँगूठेके नीचे जीवकी साक्षीरूपा चलती हैं) वैद्यवरको देखना चाहिये । अब नाड़ी देखनेकी रीति दर्शाते हैं--वैद्य एकाग्र चित्तसे सावधान होके रोगीके अँगूठेके नीचेकी नाड़ीपर अपनी तर्जनी आदि तीनों अंगुलियोंको संधिरहित रखे, रोगीके हाथको किञ्चित भी न हिलने दे, पश्चात उस नाड़ीकी चेष्टा, दशा, गति (चाल) से जीवके सर्व दुःख सुख जाने ॥ १ ॥ २ ॥

जिस प्रकार वीणाका तार संगीतकर्ता (राग जाननेवाले) को सब राग प्रदर्शित करता है तिसी प्रकार नाड़ी भी सद्वैद्योंको सुख दुःखादि शरीरके समग्र वृत्तान्त भाषित कर देती हैं ।

प्रश्न--क्या कारण है कि, पुरुषके दक्षिण और स्त्रीके वामहस्तकी नाड़ी देखते हैं ।

उत्तर--कूर्मो वै देहिनामस्ति नाभिस्थाने सदा स्थितः ।
स्त्रीणामूर्ध्वमुखः पुंसामधोवक्त्रः प्रकीर्तितः ॥१॥
तस्यैव दक्षिणे भागे नाडी ज्ञेया भिषग्वरैः ।
अनेन कारणेनैव नारीपुंसोर्व्यतिक्रमः ॥२॥ इति ॥

देहधारी मात्रके नाभिस्थानमें एक कूर्म (कच्छपकछुआ) रहता है सो वह स्त्रियोंके ऊर्ध्वमुख (ऊपरको मुख) करके रहता है, परंतु पुरुषोंके शरीरमें (उससे विरुद्ध) अधोमुख (नीचेको मुख) करके रहता है सो उस कच्छपके दक्षिण भागमें नाड़ी देखनी चाहिये ॥ १ ॥ इसका क्या सिद्धांत हुआ कि; स्त्रियोंका जो बायाँ हाथ है वही उस (कच्छप) का दाहिना अंग रहेगा, क्योंकि उसकी स्थिति

स्त्रियोंके पेटमें ऊर्ध्वमुख है और पुरुषका जो दाहिना हाथ है वही उसका भी दाहिना अंगही रहेगा, क्योंकि वह पुरुषोंके नाभिस्थलमें अधोमुख है; इसलिये "कच्छपके दक्षिणभाग" अर्थात् पुरुषके दक्षिण और स्त्रियोंके वामहस्तकी नाडी सदैव देखनी चाहिये ॥ २ ॥

प्र०--कैसे पुरुष अथवा स्त्रीकी नाडी देखना और कैसेकी नहीं देखना चाहिये ?

उ०--तत्काल स्नान किये हुए , तत्काल भोजन किये हुए शरीरमें तेल मलवाये हुए, सोते हुए, दौडते हुए, भूखे, प्यासे, कामातुर और मलमूत्रके वेगयुक्त पुरुष तथा स्त्रियोंकी नाड़ी नहीं देखनी चाहिये, क्योंकि उक्त कारणकी बाधासे रोगका यथार्थ ज्ञान नहीं होता. इसलिये इनसे व्यतिरिक्त शांति और स्वच्छ दशावालेकी नाड़ी देखनी चाहिये।

जिस प्रकार वैद्य हाथकी नाडी देखे उसी प्रकार शास्त्रानुसार पाँवनाडी भी देखनी चाहिये क्योंकि जैसे रत्नपरीक्षक (जौहरी) अपनी बुद्धिके प्रभाव तथा अभ्यासके बलसे सच्चे झूठे हीरा आदि रत्नोंकी परीक्षा कर लेता है, वैसेही वैद्यकशास्त्रके अभ्याससे अपनी बुद्धिबलके विचारपूर्वक नाडीद्वारा रोगीके रोग सुख दुःखादिकी परीक्षा वैद्यको भी करनी चाहिये ।

प्र०--नाडी किस प्रकार देखनी चाहिये ?

उ०--अँगूठेके नीचे जीवकी साक्षीरूपा नाडीपर धरी हुई ३ अंगुलियोंमेंसे पाहिली अंगुलीके नीचे वायुकी, दूसरी अंगुलीके नीचे पित्तकी और तीसरी अंगुलीके नीचे कफकी नाडी चलती है जिनमेंसे--

१–जो नाड़ी सर्प तथा जोंककी गतिके समान टेढ़ी चलती हो उसे वायुकी जानो ।

२—काक तथा मेंडकके समान कूदती हुई शीघ्र चले तो उसे पित्त की जानो ।

३–राजहंस, बतक, मोर, परेवा (कबूतर) कमेड़ी, कांवरजंगली, मैना, यद्वा मुर्गेकी भांति मंद चलती है वह कफकी नाड़ी जानो ।

१ अर्थात् वह पक्षी जो काठमें छेद करता है सो जैसे छेद करते समय चोंचको वेगसे कूटता फिर बन्द होता, फिर कूटता है इसी प्रकार नाडी भी चलते चलते बन्द हो जावे और फिर वेगसे चलने लगै।
२ यह नाड़ी सूक्ष्म होती हुई मनुष्यको मार डालती है ।

४-सर्प और हंसके समान गतिसे चले उसे वातकफकी (मिली हुई) जानो।

५-बंदर, मेंडक और हंसकी गतिसे चलै उसे पित्तकफकी जानो।

६--कंठकाल पक्षीके समान ठोकर देवै, उसे सन्निपातकी जानो।

७--मंद टेढ़ी, व्याकुल और ठहरके चलै उसे भी सन्निपातकी जानो।

८--जिस मनुष्यके शरीरमें ज्वरका कोप हो उसकी नाड़ी उष्णतासे शीघ्र चलती है।

९--जिस रोगीकी नाड़ी एकसी समान भावसे स्थानपर चले वह रोगी नहीं मरे।

१०--कामातुर और क्रोधी पुरुषकी नाड़ी शीघ्रतासे चलती है।

११-चिंतावाले पुरुषकी नाडी क्षीण चलती है।

१२--भयातुर (किसी प्रकारसे डरा हुआ) पुरुषकी नाडी अत्यंत ही क्षीण चलती है।

१३--मन्दाग्नि और धातुक्षीण पुरुषकी नाडी अतिमंद चलती है।

१४--रुधिरके विकारवाले पुरुषकी नाडी उष्णतायुक्त भारी चलती है

१५-जिसके पेटमें आमांश (आंव) हो उसकी नाडी अति भारी चलती है।

१६-भूखे मनुष्यकी नाडी हलकी और शीघ्रतासे चलती है।

१७-भोजन करनेपर मनुष्यकी नाडी धीरे चलती है।

१८-मल गिरनेपर मनुष्यकी नाडी अत्यंत शीघ्र चलती है।

१९-सुखयुक्त पुरुषकी नाडी धीरे और बलपूर्वक चलती है।

इसी प्रकार नाडी--परीक्षाके अनेक भेद हैं बुद्धिमान् सद्वैद्यको अपनी बुद्धिसे शास्त्रोक्त प्रमाणानुसार स्त्री-पुरुषकी नाडीपरीक्षा करनी चाहिये, जैसे योगाभ्यासी योगमार्गसे ब्रह्मको जानलेते हैं वैसेही श्रेष्ठ वैद्यको भी नाडीके अभ्याससे शरीरका समग्र वृत्तान्त जान लेना चाहिये॥ इति नाडीविचार॥

अथ नेत्र विचार

१- जिस रोगीके नेत्र रूखे; धूम्रवर्ण (काला और लाल मिला हुआ) अथवा कुछ ललाई लिये हुए हों; भीतर कुछ जलकी झलक मारते हों और वह रोगी उन्मत्तके समान देखता हो तो उसपर बादीका अधिक वेग जानना चाहिये अर्थात् ऐसे नेत्र बादीवालेके होते हैं।

२-जिस रोगीके नेत्र हलदीके समान पीले, लाल तथा हरे हों, दीपक न देखसके और जलते हों तो पित्तका अधिक वेग जानो अर्थात् पित्तवालेके नेत्र ऐसे लक्षणयुक्त होते हैं ।

३-जिस रोगीके नेत्र चिकने, जलसे भरे हुए, श्वेत, ज्योति हीन और बालयुक्त हों तो कफका वेग अधिक जानो ।

४--जिन नेत्रोंमें उपरोक्त नियमानुसार दो दोषोंके लक्षण मिलतेहों उन्हें दो दोषयुक्त और तीन दोषोंके मिलते हों उन्हें त्रिदोषीय जानो ।

५-त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) के कोपमें रोगीके नेत्र भीतरको घुस जाते हैं उनसे पानी बहने लगता है, अथवा बीचमें मिचे हुए किंवा कोरोंपर खुले हुए रहते हैं. त्रिदोषके लक्षणयुक्त नेत्ररोगीको नष्ट करने (मारने) में कुछ न्यूनता (शेष) नहीं रखते हैं ।

इसलिये वैद्यको अवश्य चाहिये कि, "रोगीकी परीक्षा नेत्रद्वारा करे" ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है ॥ इति नेत्रविचार ॥

अथ जिह्वापरीक्षा

१--जिस रोगीकी जीभ नीली, कुछ हरेपनेको लिये हुए तथा खरखरी और रूखी हो तो वातका कोप जानो ।

२--जिस रोगीकी जीभ लाल या कुछ कुछ श्यामतायुक्त लाल हो तो पित्तका कोप जानना चाहिये ।

३--जिस रोगीकी चिकनी, गीली और श्वेत जीभ हो तो कफका कोप जानो ।

४--यदि दो आदि दोषोंके लक्षण मिले तो दो दोषयुक्त जानो ।

५--जिस रोगीकी जिह्वा चारों ओरसे जली हुईसी तथा काली और टेढी पड़गई हो तो त्रिदोषका कोप जानना चाहिये, उक्त नियमानुसार वैद्य जिह्वाका विचार करे ॥ इति जिह्वापरीक्षा ॥

अथ मूत्रपरीक्षा

चार घडी रात्रि अवशेष रहे (अंग्रेजी घंटासे (प्रातःकालके ४ या ४॥ साढे चार बजेके मध्य कालमें रोगीको कांच तथा कांसे (फूल)के पात्रमें मुताके उस मूत्रको ढाकके रख देवे सूर्योदय होनेपर श्वेत काँचके पात्रमें डालकर वैद्य परीक्षा करे ।

१--यदि मूत्र जलके समान पतला, रूखा, अधिक और नील वर्णका हो तो रोगीको बादीका विकार जानो ।

२-यदि लाल कुसुमके समान, अथवा टेसूके फूलोंके समान पीला और थोड़ा हो तो पित्त किंवा गर्मीके विकारयुक्त मूत्र जानना चाहिये।

३-यदि गाढ़ा श्वेत और चिकना हो तो कफके विकार युक्त जानो।

४-जिसका मूत्र सरसोंके तेल सदृश हो उसे वातपित्त से युक्त रोगी जानो।

५-जिसका काला और बुद्बुदयुक्त मूत्र होतो सन्निपात रोग जानो।

६-लघुशंका करते समय जिस रोगीके मूत्रकी लाल धार उतरे दीर्घ-रोगी जानो।

७-लघुशंकाके समय जिसकी काली धाराहो वह रोगी मर जावेगा।

८-जिसके मूत्रमें बकरीके मूत्रसदृश गंध आवे उसे अजीर्ण रोग जानो।

९-जिसका मूत्र उष्ण (गरम) लाल तथा पीला हो उसे ज्वररोग जानो।

१०-जिसका मूत्र कुएँके जल सदृश स्वच्छ हो उसे उत्तम आरोग्य जानो, उक्त नियमानुसार मूत्रपरीक्षा करनेके पश्चात् उसी मूत्रको ४ घड़ी १॥ डेढ़ घंटाके लगभग धूपमें रक्खो, फिर उसपर कपड़े तथा रुईसे तेलकी बूँद टपकाकर निम्न नियमोल्लिखित परीक्षा करो।

१-यदि वह तेलकी बूँद मूत्रमें डालते ही फैल जावे तो रोगीको साध्य जानो, वह रोगी शीघ्र ही आरोग्य होगा।

२-यदि बूँद (तेलकी) मूत्रमें फैले नहीं और वैसी ही स्थिर हो रहे तो रोगीको कष्टसाध्य जानो, कठिनाईसे अच्छा होगा।

३-यदि बूँद मूत्रमें डूब जावे अथवा चक्रवत् चारों ओर फिरने लगे तो वह रोगी असाध्य है निश्चय मर जावेगा।

४-यदि तेलकी बूँदमें छिद्र पड़ जावे अथवा खड्ग व दण्ड या धनुषाकार बन जावे तो वह रोगी निश्चय मरेगा।

५-यदि रोगीके मूत्रपर तेलकी बूँद डालनेसे तालाब, हंस, कमल हाथी, छत्र, चामर अथवा तोरणका आकार बन जावे तो वह रोगी आरोग्य हो जावेगा इन युक्तयोंसे वैद्य मूत्रपरीक्षा करे॥ इति मूत्रपरीक्षा॥

अथ स्वप्नपरीक्षा

रोगीको चाहिये कि, सद्वैद्यके अतिरिक्त (सिवाय) अपने अशुभ स्वप्नका वर्णन किसी अन्यके प्रति न करे और प्रातःकाल उठते ही

स्वशक्त्यनुसार हवन, अन्न, वस्त्र, पुस्तक,, छत्र, पात्र स्वर्ण, भूमि आदिका दान करे तथा उत्तम वेदमंत्र या महामृत्युञ्जयादिक जप करावे तो खोटे स्वप्नका फल शान्त हो जावे।

१--यदि रोगी स्वप्नमें नग्न, शीशमुंड, लाल या काले वस्त्रधारी नकटे, कनफटे, काले, आयुध तथा फांसी हाथमें लिये, मरते हुए मनुष्योंको देखे तो वह अच्छा न होगा।

२- यदि रोगी स्वप्नमें भैंसा, गधा या ऊँटकी सवारी करके दक्षिण-दिशाको गमन करे तो वह भी अच्छा न होगा।

३--यदि रोगी अपनेको स्वप्नमें जलमें डूबता हुआ; अग्निमें जलता हुआ, सिंहादिसे अपना भक्षण, दीपक बुझाना, तेल तथा मदिरापान, लोहधारण, पक्वान्न भक्षण और कुएँमें गिरता हुआ ऐसे लक्षणीय दशा-युक्त देखे तो अपना रोग असाध्य समझे।

४- यदि रोगी स्वप्नमें राजा, याचक, मित्र, ब्राह्मण, गौ, अग्नि, तीर्थादिको देखे तो शीघ्र आरोग्य हो जावेगा।

५--यदि रोगी स्वप्नमें कीचड़से बाहर निकल जावे, शत्रुओंको जीते, महल या रथपर चढ़े, मांस-मीन फल खावे, अगम्या स्त्रीसे मैथुन करे अपने शरीरमें विष्ठाका लेप करे, रोवे, अपनी मृत्यु देखे तथा कच्चा मांस खावे तो वह रोगी शीघ्र ही अच्छा होगा।

६--जिस रोगीको स्वप्नमें जोंक, भ्रमर और मच्छर काटें तो शीघ्र आरोग्य हो, उसी प्रकार अच्छे मनुष्यको भी ये स्वप्न आवें तो फल यथोचित जानना चाहिये। वैद्य उक्त नियमोंसे रोगीको स्वप्न पूछकर विचार करे॥ इति स्वप्नपरीक्षा॥

अथ औषधविचार

वैद्यको चाहिये कि औषधके गुणागुणको विचारके रोगीको उक्त रोगानुसार औषध देवे, यदि रोग अधिक हो तो औषध अधिक देवे और थोडा हो तो औषध अधिक न देवे, औषधोंका हीन, मिथ्या, अति योग न होने देवे, क्योंकि ऐसा होनेसे रोगकी अधिकता हो जाती है, इसलिये औषधिको यथार्थ करके देना चाहिये।

१-हीन योग--वैद्यक-ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणानुसार नहीं, बरन् उस प्रमाणसे अति न्यून करके औषध मिलना यह हीन योग है।

२--मिथ्या योग--वैद्यक ग्रंथोंमें कुछ लिखा और वैद्यने कुछ अन्य ही औषधका उपयोग किया यह मिथ्या योग है ।

३--अति योग-वैद्यक ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणसे अत्यन्त अधिक औषध मिला देना यह अति योग है ॥ इति औषध विचार ॥

अथ अर्थ विचार

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, ये पांचों पांच इंद्रियोंसे सम्बन्ध रखते हैं अर्थात्--शब्द कानोंसे, २ स्पर्श त्वचासे, ३ रूप नेत्रोंसे, ४ रस जिह्वासे और ५ गन्ध नासिकासे सम्बन्ध रखते हैं उक्त विषयोंका ज्ञान उक्तेन्द्रियोंसे ही होता है, सो उनको यथार्थ प्रमाणानुसार रखनेसे यह शरीर ठीक रहता है यदि हीन या मिथ्या किंवा अति योग हुआ तो शरीर रोग युक्त हो जाता है, जैसे--

१--कानोंको सुननेकी सामर्थ्य होके थोड़ा या अधिक अथवा कुछका कुछ ही सुने ।

२--स्पर्श करनेकी सामर्थ्य होके थोड़ा या अधिक अथवा कुछका कुछ ही स्पर्श करे ।

३--दर्शन करनेकी सामर्थ्य होके थोड़ा या अधिक अथवा कुछका कुछ ही देखे ।

४—स्वाद लेनेमें सामर्थ्य होके थोड़ा या अधिक अथवा कुछ अन्य ही स्वाद लेवे ।

५—सुगन्ध लेनेमें सामर्थ्य होके थोडी या अधिक अथवा कुछ अन्य ही सुगंध लेवे तो उक्त कारणसे पुरुष रोग युक्त हो जाता है, वैद्य इस पर ध्यान दे कि रोगी इन पांचोंका यथार्थ रीतिसे वर्त्ताव रक्खे तथा अन्य सर्व जनोंको उक्त नियम पूर्वक अपना वर्त्ताव रखना चाहिये ॥ इति अर्थ विचार ॥

कर्म विचार

कर्म तीन प्रकारके हैं, १ कायिक, २ वाचिक, ३ मानसिक

१—कायिक—जो काया (शरीर) से किये जावें वे कायिक हैं ।

२—वाचिक-जो वाचा (वाणी) से किये जावें वे वाचिक।

३—मानसिक—जो मन (अन्तःकरण) से किये जावें वे मानसिक ।

उक्त कर्मोंका भी हीन, मिथ्या और अति योग न होना चाहिये, क्योंकि ऐसा होनेसे रोग ग्रस्त हो जावेगा. जैसे—

१--कायिक कर्म--अपनी काया (देह) की शक्तिसे न्यूनाधिक तथा अन्यही करे।

२--वाचिक कर्म--अपनी वाणीकी शक्तिसे न्यूनाधिक अथवा अन्य ही करे।

३--मानसिक--अपने मनकी शक्तिसे न्यूनाधिक अथवा अन्यही करे तो ऐसा करनेसे रोगी होगा और उक्त कर्म तत्तत् (अपनी अपनी) शक्ति अनुसार करे तो मनुष्य सर्वदा रोग रहित रहेगा, वैद्यको रोगीके कर्मविचारपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। इति कर्मविचार।

अथ अग्निबलविचार

अग्नि पांच प्रकारकी होती है--अर्थात्--१ मन्दाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि, ४ समाग्नि, ५ भस्माग्नि ।

१--मन्दाग्नि--कफ प्रकृतिवालेकी मन्दाग्नि रहती है वह कफ रोगोंको उत्पन्न करती है वह ठीक नहीं है।

२--तीक्ष्णाग्नि--पित्तप्रकृतिवालेकी तीक्ष्णाग्नि होती रहती है, वह खाये हुए पदार्थोंका पाचन करती है, परन्तु गर्मी (उष्णता) के रोगों को उत्पन्न करनेवाली है ।

३--विषमाग्नि--वातप्रकृतिवालेकी विषमाग्नि होती है, मानो यह कभी अन्नको पाचन करती है और कभी नहीं करती इस प्रकार वादी के रोगोंको भी उत्पन्न करती है।

४-समाग्नि--सब खाये हुए पदार्थको उत्तम प्रकारसे यथायोग्य पचा देती है जिस मनुष्यकी समाग्नि होती है वह सर्वदा सुखयुक्त रहता है यह श्रेष्ठ है।

५-भस्माग्नि--इससे भस्मक रोग उत्पन्न होता है, किसी औषधादिसे शरीरका भीतरी कफ अत्यन्त न्यून हो जावे और पित्त अग्निरूप बढता जावें तो वायुकी प्रेरणासे महातीव्र अग्नि होकर भस्माग्नि हो जाती है, सो यह अच्छी नहीं (हानिकारक) है क्योंकि भस्माग्नि पुरुषको नियत कालपर भोजन, प न प्राप्त न हुआ तो वह प्यास, पसीना, दाह, मूर्च्छा आदि उत्पन्न करके मनुष्यको निधन (नष्ट) कर देती है. इस लिये वैद्य अग्निबल विचारके चिकित्सा करे. अन्यथा की हुई चिकित्सा निष्फल हो जाती है. इति अग्निबल विचार ।

अथ साध्यासाध्यविचार

साध्यलक्षण--जिस रोगीकी प्रकृति ठिकाने हो, अग्नि तीव्र हो, उपद्रवयुक्त रोग न हो, रोग एकही दोपसे उत्पन्न हो, इत्यादि लक्षण-युक्त रोगीको वैद्य साध्य जाने और औषध दे।

असाध्यलक्षण जिस रोगीको रात्रिमें नींद न आवे, कण्ठमें कफ खर्रावे, शरीरमें दाह हो, नाडी मन्द चले, वाणी (बोलनेसे) थकित हो जावे, नेत्रादि समग्र इंद्रियां अपने अपने विषयसे रहित हो जावें (उद्योग छोड़ देवें), अग्नि मन्द पड़जावे, प्रकृति बिगड़ जावे, नेत्र लाल हो जावें, श्वास बढ़े, हृदयमें शूल चले तन्द्रा हो (अधमिची आँख अर्थात् उनींदासा होना), हिचकी उठे, निर्लज्ज हो जावे, प्यास अधिक लगे, अधिक सोवे और चिकनापन लिये हुए पसीना निकले इत्यादि लक्षणयुक्त रोगीको वैद्य असाध्य समझे ऐसे रोगीका बचना कठिन है, इस लिये वैद्य ऐसे रोगीको औषध न दे यदि दे तो पूर्ण सोच विचारके नहीं तो व्यर्थही अपयशका भागी होगा। इति साध्यासाध्यविचार।

पथ्यापथ्यविचार

रोगी को जिस रोगपर जैसे पथ्य योग्य समझे वैसेही करावे, कुपथ्य न होने दे क्योंकि पथ्यसे रोगीका रोग निरौषध भी शांत हो जाता है और कुपथ्यसे औषध सेवनपर भी कुछ नहीं होता, देखिये कि, वैद्य जीवनमें लिखा है।

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥
पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥

वै० वि० ह्युक्तम्

इति पथ्यापथ्यविचारः

अथ अनुपानविचारः

वैद्यको चाहिये कि — चूर्ण, गुटिका, अवलेह, हिम, क्वाथ, घृत, तेलः आसव और भस्म आदि जिस अनुपानसे जिस रोगपर वैद्यक शास्त्रोंमें लिखा हो उसी प्रकार देना, जिससे रोगी शीघ्र शांत हो जावे और

विना विचारे ऐसा न करे कि चाहे जिस वृक्षकी जड़ चाहे जिस वस्तुके साथ पीसके चाहे जिस रोगपर देनेसे ही काम रक्खे फिर आगे जो होगा सो होगा (इच्छित कार्य करे) ऐसा विना पढ़े लिखे और गुरुकी शिक्षा न पाये जो वैद्य बनके औषधि करने लगते हैं वे महाब्रह्मघाती हैं, इस लोकमें अपकीर्ति प्राप्त कर मरनेपर कुम्भीपाक नरकमें पड़ते हैं, इस लिये सर्व जनोंको इस बातपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये ॥ इति अनुपान विचारः ॥

अथ रोगी विचारः

१—उत्तम लक्षण युक्त वैद्य देखके औषध ले, २ जिस समय और जिस अनुपानके साथ वैद्य औषध दे यथोचित ले, ३ पथ्यसे रहे ४ परिचारक (सेवक) भी चतुर रक्खे, क्योंकि १ सद्वैद्य, २ योग्य औषध, ३ चतुर सेवक, ४ जितेन्द्रिय तथा पथ्यसे चलनेवाला रोगी ये चार बातें यदि पूर्ण रूपसे यथोचित मिल जावें तो कष्ट साध्य रोगी भी साध्य होकर शीघ्र आरोग्य हो जाता है ॥ इति रोगी विचारः ॥

इति श्रीअमृतसागरे विचार खण्डे नाडी विचारादिनिरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

यंत्रविचारः

तत्रादौ वालुकायंत्रम्

भाण्डे वितस्तिगम्भीरे मध्ये निहतकूपिके ।
कूपिकाकण्ठपर्यंतं वालुकाभिश्च पूरितम् ॥ १ ॥
भेषजं कूपिकासंस्थं बह्नितो यत्र पच्यते ।
वालुकायंत्रमेतद्धि यंत्रं तत्र बुधैः स्मृतम् ॥ २ ॥

रत्नप्रभाकर

१ एक बीता गहरी मट्टीकी काली हंडीमें दृढ़ कांचकी शीशी रखके उस शीशीके गलेतक हंडीमें रेत भरदे और जिस औषधको

---

१ यस्य यस्य तरोमूलं येन केन च पेषणम्। यस्मै कस्मै प्रदातव्यं यद्वा तद्वा भविष्यति ॥१॥

२ प्रायश्चितं चिकित्सां च ज्योतिषं धर्म निर्णयम् ॥ विना शास्त्रेण यो ब्रूयात् तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ॥२॥

३ बहुधा साधारण आंच लगतेही कांच फूट जाता है; परन्तु उक्तकार्यके लिये एकजुदेही प्रकारका कांच बनाया जाता है; जिसकी शीशी आंचसे नहीं तड़कती और समय पर्यंत आंच सहन करती है ।

आंच देना हो वह पहिलेही उस शीशीमें भर धरे, तदनंतर उस हंडीको भट्टीपर चढ़ाके लिखे प्रमाण समय पर्यंत आंच दे, इसे वालुकायन्त्र कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

दोलायन्त्रम्

निबद्धमौषधं सूत भूर्जे तत् त्रिगुणाम्बरे ।
रसपोटलिकां काष्ठे दृढं बद्ध्वा गुणेन हि ॥ १ ॥
संधाय पूर्णकुम्भान्तः स्वावलम्बितसंस्थिताम्
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं तत्तदुक्तक्रमेण हि ।
दोलायन्त्रमिदं प्रोक्तं स्वेदनाख्यं तदेव हि ॥ २ ॥

रत्नप्रभाकर

जो औषध शुद्ध करना हो उससे तिगुना बोझका कपडा उस पर लपेटकर (अथवा) उस वस्तुको वस्त्रके तीन लपेटे लगावे) इसकी पोटली बनाकर एक लकडीके मध्यमें इस युक्तिसे लटकावे कि जिसमें वह घडे (जिस पात्रमें कांजी आदि पदार्थ उस वस्तुके शोधनके लिये भरा रहता है) बीचोंबीच अधरमें लटकती रहे और जिस पदार्थसे शुद्ध करना हो वह उस घडेके मुँहसे कुछ कम भरके उस घडेको भट्टी पर रख, लिखे प्रमाण आंच दे, इसे दोलायंत्र कहते हैं ॥ १ २ ॥

स्वेदनयन्त्रम्

साम्बुस्थालीमुखे बद्धे वस्त्रं स्वेद्यं निधाय च ।
पिधाय पच्यते यंत्र तद्यत्रं स्वेदनं स्मृतम् ॥ १ ॥

रत्नप्रभाकर

जलयुक्त घटके मुखपर वस्त्र बांधकर उसमें (जो शुद्ध करना हो सो) औषध रखके ऊपर दूसरा पात्र रख दो, एवं उस घडेका मुँह बंद करके उस यन्त्रको लिखे प्रमाणानुसार भट्टीपर आंच दे। इसे स्वेदन यन्त्र कहते हैं ॥ १ ॥

रत्नप्रभाकर

विद्याधरयन्त्रम्

अथ स्थाल्यां रसं क्षिप्त्वा निदध्यात्तन्मुखोपरि ।
स्थालीमूर्ध्वामुखीं सम्यङ्निरुध्यमृदुमृत्स्नया ॥ १ ॥

ऊर्ध्वस्थाल्यां जलं क्षिप्त्वा चुल्ल्यामारोप्य यत्नतः ।
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं यावत्प्रहरपंचकम् ॥ २ ॥
स्वाङ्गशीतात्ततो यंत्राद् गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ।
विद्याधराभिधं यन्त्रमेतत्तज्ज्ञैरुदाहृतम् ॥ ३

एक घडेमें रस (अथवा जो वस्तु रखनी हो सो) धरके उसके मुँह-पर दूसरे घडेका पेंदा जमाओ और दोनोंको चिकनी मिट्टीमें लपेटी हुई कपडेकी पट्टीसे भलीभांति बन्द करे, तदनन्तर ऊपरवाले घडेमें पानी भरके भट्टीपर चढ़ा दो, वैद्यकशास्त्रानुसार उसे ५ पांच प्रहर (पन्द्रह घंटे, पर्यन्त लगातार आंच दें, जब वह स्वतः सर्वशीतल हो जावे तब घडेमें रक्खी हुई वस्तुको निकाल लेवे इसे विद्याधर यंत्र कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

भूधरयन्त्रम्

वालुकाभिः समस्तांगं गर्तें मूषा रसान्विता ।
दीप्तोपलैः संवृणुयाद्यंत्रं भूधरनामकम् ॥१॥

भूमिमें गढ़ा खोदकर उसमें एक शीशी धरके उसे गलेतक बालूसे पूरित करदे जिसमें वह दृढ़ होजावे, बाद दूसरी शीशीमें रस (अथवा जो वस्तु शोधन करना हो सो) रखकर उसके मुखपर वस्त्र अथवा धातुका डाट (जिसमें) सूक्ष्म सूक्ष्म अनेक छिद्र हो) लगावे, फिर इस दूसरे शीशीको पहिले गढ़ेमें धरे हुए) शीशीमें मुँहसे मुँह मिलाकर मिट्टी आदिसे दृढ़ करके उसी गढ़ेमें धरके और ऊपरकी शीशीपर ईंधन (कंडा, गोबरी, उपली) रचके ऊपर तक दाब (ढाँक दे पश्चात् लिखे प्रमाणानुसार आंच दे जब स्वांग (स्वतः) शीतल हो जावे तब नीचेके शीशेमें जो कुछ पदार्थ द्रव (पतला, बहता हुआ) होकर गिरा हो उसे निकाल ले, इसे भूधरयन्त्र कहते हैं ॥ १ ॥

डमरुयन्त्रम्

यंत्रं डमरुसंज्ञं स्यात्तत्स्थाल्योर्मुद्रिते मुखे ।

दो मिट्टीके घड़ोंका मुख परस्पर जोडके कपड़मिट्टीसे बंद करदे, नीचेके घडेमें जो वस्तु धरना हो सो धरके आंच लगावे और ऊपरके

घड़ेके पेंदे (तली) पर पानी भरा चपटा बर्तन धरै अथवा मिट्टीकी किनारी ऊपरके वर्तनकी नलीपर बनाके उसपर कपडा धरके और कपडेपर पानी छोडता जावे इसयंत्रके द्वारा ऊपरके पात्रमें नली लगाकर रस (अर्क) भी उतार सकते हैं. इसे डमरुयंत्र कहते हैं।

गजपुटम्

सपादहस्तमानेन कुण्ड निम्न तथाऽऽयते ।
वनोपलसहस्रेण पूर्णं मध्ये विधारयेत् ॥ १ ॥
पुटनद्रव्यसंयुक्तां कोष्ठिकां मुद्रितांमुखे ।
अथार्धानि करण्डानि चार्द्धान्युपरि निक्षिपेत् ।
एतद्गजपुटं प्रोक्तं ख्यातं सर्वपुटोत्तमम् ॥ २ ॥

रसप्रदीपे

सवा हाथ ३० अंगुलका एक शंकु बनाके उसीके प्रमाण लम्बा चौडा गहरा हाथ ($1\frac{1}{4}\times1\frac{1}{4}\times1$ अर्थात् $1\frac{9}{16}$ घनात्मक हाथ) कुण्ड (गढा) खोदके उसमें १००० जंगली गोवरी (आरने=कंडा) मेंसे आधे नीचेके अर्धकुंडमें भर दो और जो वस्तु जलाना हो उसे संपुट करके उसमें धरो, फिर आधी उपली ऊपरसे ढाँकके अग्नि लगा दो, जब स्वांगशीतल हो जावे तब वह संपुट निकाल लो, इसी प्रकार जिस भस्ममें जितनी आँच देना होवे उतनी बार उक्तवत् करते जावो. इसे सर्वोत्तम गजपुट कहते हैं. यह सर्व रसप्रदीप भावप्रकाशमें लिखा है ॥ १ ॥ २ ॥

इतिश्रीअमृतसागरे विचारखण्डे यंत्रविचारनिरूपणं नामतृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

अथ धात्वादिसंशोधिनविचारः

तत्र सप्त धातवः

स्वर्णं तारं प्रिये ताम्र नाग वंगं मनोहरे ॥
स्वर्णांगि जसदं लोहं सप्तैते धातवः स्मृताः ॥१॥

अथोपधातवः

मासिकं तुत्थकं ताल नीलांजनमथाभ्रकम् ।
मनःसिला च रसकं प्राहुः सप्तोपधातवः ॥ २ ॥

अनुपानदर्पणे

१ सोना, २ चांदी, ३ ताँबा, ४ सीसा, ५ राँगा, ६ जसद (जस्ता) और ७ लोहा ये मुख्य सात धातु हैं और (तांबा×जस्ता = पीतल, तांबा×राँगा=काँसा) तांबेमें जस्ता मिलानेसे पीतल, और राँगा मिलानेसे कांसा ये संयुक्त धातु भी बनती हैं. १ सोनामक्खी, २ नीला थूथा (हरियाथूथा), ३ हरताल, ४ सुरमा, ५ अभ्रक, ६ मनशिल और ७ खपरिया ये सात उपधातुयें कहाती हैं ॥ १२ ॥

अब उक्त धातुओंके शोधनेकी विधि लिखते हैं–

जो धातु शोधना हो उसके बारीक बारीक पत्र करके तैयार कर उन्हें ' १ तेल, २ छाछ (मट्ठा=मही), ३ गोमूत्र (गुमातर) "४ कुलथीका काढ़ा और ५ काँजी" इन पाँचों वस्तुओंमें क्रमशः प्रति सात सात अथवा तीन तीन बार बुझाओ इनमेंसे " १ रांगा, २ सीसा, ३ जस्ता" इन तीनोंको गलाके तेल आदि उक्त पाँचों पदार्थोंमें बुझाके पुनः तीन बार आक (अकाव) के दूधमें बुझानेसे ही शुद्ध होजाते हैं।

सूचना-- इन्हें गलाके बड़ी युक्तिसे बुझाना चाहिये, क्योंकि ये उड़कर शरीरको जला देते हैं यह शुद्ध शार्ङ्गधर तथा अनुपानमञ्जरी में लिखी है।

तांबेका विशेष शोधन--उक्त पांचों वस्तुओंमें तांबेको सात सात बार बुझाके " १ सेहुंड (थूहर) का दूध, २ गायका दूध, ३ इमलीका पानी, ४ नींबूका रस, ५ दाखका पानी, ६ मधु (शहत) और ७ भूकन्द (जिसे जमीकन्द भी कहते हैं) का रस " पुनः इन सातों पदार्थोंमें सात बार बुझाओ तो तांबा पूर्ण शुद्ध हो जावेगा।

सीसेका विशेष शोधन-पूर्वोक्त (तेल, छाँछ आदि) वस्तुओंसे शुद्ध करके " घीकुमारीपाठे (ग्वारपाठे) का रस और २ त्रिफलाका क्वाथ" पुनः इन दोनों वस्तुओंमें गलाके ७ सात बार बुझाओ तो सीसा पूर्ण शुद्ध तैयार होगा।

३ रांगेका विशेष शोधन–सीसेके शोधनके अनुसार जानो।

४ जस्ताका विशेष शोधन--सीसेकी रीतिपर ही है।

५ लोहेका विशेष शोधन--लोहेको तांबेकी रीतिपर शुद्धकरके पुनः त्रिफलाके क्वाथमें सात बार बुझाओ तो पूर्ण शुद्ध हो जावेगा।

६ सोनेका विशेष } शोधन--इन दोनों धातुओंका शोधन
७ चांदीका विशेष } प्रथम तेल छांछ आदि वस्तुओंमें बुझा देनेसे ही हो जाता है, ये स्वतः विशेष शोधित हैं इसलिये इनको अधिक शोधनेकी आवश्यकता नहीं ॥ इति धातुशोधनविचारः ॥

अब उप धातुओंके शोधननेकी रीति देखो ।

१ सोनामक्खी शोधन--तीन भाग सोनामक्खी, १ एक भाग सेन्धानमक डालकर जँभीरी (अथवा बिजौरे) के रसके साथ कड़ाहीमें रखके आंच दो और लोहेकी करछुलीसे घोटते जाओ जब कड़ाही अग्निकी आंचसे लाल हो जावे तब उतारके शीतल हो जानेपर निकाल लो ।

रूपामक्खी शोधन--१ ककेड़ा तथा २ मेंढासिंगी अथवा ३ जँभीरीके रसमें घोटके सूर्यकी तीक्ष्ण तापमें राखो, रूपामक्खी शुद्ध हो जावेगी ।

२ नीलाथोथा शोधन--नीलेथोथेके बराबर बिल्लीकी विष्ठा और ४ भाग सुहागा लेकर तीनों वस्तु मधुमे खरल करे अनंतर सम्पुट करके जंगली गोबरीकी आंच देवो इस प्रकार तीन बार करनेसे नीलाथोथा शुद्ध हो जावेगा ।

३ हरतालशोधन--हरतालको " १ त्रिफला क्वाथ, २ कांजी, ३ भूरे कुम्हडेका रस और ४ तेल" इन प्रत्येक पदार्थोंमें पृथक् २ दोलायंत्रसे एक प्रहरकी आंच दो अथवा चूनेके जलमें ४ प्रहर पर्यंत दोलायंत्रसे स्वेदन करो तो हरताल शुद्ध हो जावेगा ।

४ सुरमा शोधन--सुरमाको जम्भीरीके रसका पुट देके १ दिनभर धूपमें सुखा दे तो सुरमा शुद्ध हो जावेगा ।

५ अभ्रक शोधन--अभ्रकको अग्निमें तपाके गौके दूधमें बुझाओ, फिर "चौलाईका रस तथा इमलीकी खटाईमें" आठ प्रहर (एक दिन रात) भिगोय रक्खे तो अभ्रक शुद्ध हो जावेगा ।

६ मनशिलशोधन--मनशिलको बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रसे तीन दिन पकाकर गर्म खपरा (मिट्टीके बर्तनका टुकडा) या करछुली या तवापर कुछ समयतक रक्खे तो शुद्ध हो जावेगा ।

७ खपरिया शोधन--खपरियाको मनुष्यके मूत्र (अथवा गोमूत्र) में दोलायंत्रसे ७ दिनतक पकावो तो शुद्ध हो जावेगा।

॥ इति उपधातुशोधनविधि ॥

रत्नशोधन--१ सूर्यकांत आदि मणि, मोती तथा मूँगेको जाईके रसमें दोलायन्त्रसे एक प्रहर तक आंच दो अथवा सम्पूर्ण वैक्रांतादि रत्नमात्रको भटकटैयाकी जड़की लुगदी (गोली = ढेला) में बाँधकर कोदो तथा कुलथीके काढेमें दोलायन्त्रसे तीन दिन तक पकावे तो सब रत्न शुद्ध हो जाते हैं।

पारदशोधन--पारेके १८ अठारह संस्कार होते हैं परन्तु उन संस्कारोंसे शुद्ध किये हुए पारेके समान ही हिंगुलसे निकला हुआ पारा भी शुद्ध होता है, इसलिये हिंगुल अर्थात् शिंगरफ जिसमें पारा अधिक हो नींबूके रसमें दिनभर मर्दन करके डमरूयन्त्रसे ३ प्रहरतक आँच दो, अनन्तर पूर्ण शीतल होनेपर ऊपरके पात्रके पेंदेमें लगा हुआ पारा निकालकर नींबू अथवा नीमके रसमें १ प्रहरभर मर्दन करे तो पारा शुद्ध हो जावेगा. इस क्रियासे निकाले हुए पारेमें उतने ही गुण हैं जितने १८ अठारह संस्कारोंसे शुद्ध हुये पारेमें हैं।

गन्धकशोधन—गन्धक और घृत समान मिलाकर लोहेके पात्रमें मन्दाग्निसे उष्ण करो जब पतला होजावे तब गौके दूधमें बुझा दो तो गन्धक शुद्ध हो जावेगा।

शिलाजीत शोधन-शिलाजीतको गौके दूध, त्रिफलाके काढा और भृंगराजके रसमें एक २ दिन खरल करके धूपमें रखते जाओ तो शुद्ध हो जावेगा।

हिंगुलशोधन--हिंगुल (शिंगरफ) को खलमें डालकर ७ पुट भेडीके दूध और ७ पुट नींबूके रसकी दे तो निश्चय शुद्ध हो।

जमालगोटाशोधन--जमालगोटेके ऊपरका छिलका और उसके बीजोंके भीतरकी हरी पत्ती निकालकर बारीक कपडेमें पोटली बांधके भैंसके गोबरमें ४ दिन तक रक्खो, फिर निकालकर उष्ण जलसे धोकर बारीक वस्त्रोंमें पोटली बांधो, तदनन्तर उसे वस्त्रसहित खरल करके नये खपरेपर उसका लेप चढा दो और सूखजानेपर

खपरेसे छीलकर पुनः नींबूके रसमें २ दो पुट दो तो अत्युत्तम हो जावेगा ।

वत्सनाग (वच्छनाग) शोधन--वच्छनागके बारीक टुकडोंको एक वस्त्रमें बाँधके बकरी तथा गौके दूधमें दोलायन्त्रसे १ एक प्रहरतक पकावे तो वच्छनाग शुद्ध हो जावेगा ।

भिलावां शोधन--भिलावेंके बीजोंको ईंट या कबेलू (खपरा) के कपड़छान किये हुए चूरेमें मिलाकर कपड़ेकी थैलीमें भरके ८ प्रहर (१ दिन रात) पड़ा रहने दो दूसरे दिन उष्ण जलसे धोकर दूधमें दोलायन्त्रसे शुद्ध करलो ॥ इति शोधन विधि समाप्त ॥

हमने उपरोक्त विषयमें अनेक धातूपधातुओंकी शोधनविधि कही है अब थोडा भस्मबिधिकी ओर ध्यान दो ।

सातों धातुओंकी भस्म करनेकी अनेक विधि हैं परन्तु सर्वसाधारण पुरुषोंके सुगमताके लिये हम ऐसी क्रिया बताते हैं कि जिस एकही क्रियासे सब धातुओंकी भस्म हो जावे ।

क्रिया--मनशिल और गन्धक इन दोनोंको अर्कदुग्ध (अकावके दूध) में पीसके (जिस धातुको भस्म करना हो उस धातुपर इसका लेप कर दो) और इसे गजपुटमें १२ बारह बार क्रमशः फूंको तो प्रत्येक धातुकी भस्महो जावेगी । जैसे सद्गुरुके वचन झूंठे नहीं होते त्योंही यह क्रिया भी कदापि झूँठी नहीं होती ऐसा शार्ङ्गधरमें लिखा है । हमने आवश्यकतानुसार तुम्हें धातुओंकी शोधनादि विधिका बोध कराया । यदि इस विषयको अधिक देखना चाहो तो " रसरत्नाकर " नाम ग्रन्थ देखो ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे धात्वादिवस्तुशोधननिरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

---

१ क्योंकि वस्त्रसहित खरल करनेसे उसका तेल वस्त्रमें लगाकर वह निर्दोष हो जाता है । २ शिलागंधार्कदुग्धाक्ताः स्वर्णं वा सर्वधातवः । म्रियंते द्वादशपुटैः सत्यं गुरवचो यथा ॥ शार्ङ्गधरे द्वितीयखण्डे उक्तम् ।

मानविचारः

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित् ।
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ १ ॥

भावप्रकाश

मान (तोल) के जाने विना औषधादि पदार्थोंके बनानेकी युक्ति सिद्ध नहीं हो सकती इसलिये अब हम कई प्रकारके मान लिखते हैं ॥

भावप्रकाश

प्रथम मान जो कि अमृतसागरके औषध प्रयोगमें माना गया है।

८ आठ रत्तीका = १ मासा

३ तीन मासे = १ टांक

४ चार टांक = १ तोला

३ तीन तोले = १ टका = २ पैसे १८ अठारह टके = १ सेर जिसके ५४ तोले और स्थूल रीतिसे ५६ रुपये होते है।

४० चालीस सेर = १ मन यह मन कच्चा कहलाता है क्योंकि १८ टकेके सेरसे है प्राचीन अमृतसागरके ग्रन्थकर्ता महाराज श्रीप्रताप सिंहजीने यही (१८ टकेका) कच्चा मन माना है और आधुनिक प्रमाणसे २८ टकेका पक्का सेर मानकर ४० सेरका मन माना इसलिये यह पक्का मन कहलाता है।

॥ इति प्रथममानम् ॥

अथ द्वितीयं मागधं मानम्

चरकस्य मतं वैद्यैराद्यैर्यस्मान्मतं ततः ।
विहाय सर्वमानानि मागधं मानमुच्यते ॥ १ ॥

शेषजीके अवतार रूप चरकमुनिराजने मागधी मानको मुख्य माना है इसलिये सर्व प्राचीन सद्वैद्योंने भी इसीको स्वीकार किया है अतएव हम भी सब मानोंको छोडकर मागधी मानको ही लेते हैं। भावप्रकाश तथा शार्ङ्गधरमें भी यही लिखा गया है।

दूसरा मागधीय मान

३० तीस परमाणु = त्रसरेणु इसे वंशी भी कहते हैं।

६ छःवंशीकी = १ मरीचि जो अतिसूक्ष्म होती है।

६ मरीचि = १ राई

३ राई = १ सर्षप अर्थात् सरसों

८ आठसरसोंका = १ यव (जौ)

४ यव = १ गुंजा (गुमची, चिरमू) ६ छः गुंजा = १ मासा

(हेम = मासा)

४ चार मासे = १ शाण जिसके व्यवहारमें ३ मासे होते हैं इसीको "निष्य, धारण और टंक भी कहते हैं।

२ टंक = कोल जिसके व्यवहारमें छः मासे होते हैं।

कोलके "क्षुद्रम, बटक और द्रंक्षण" ये नाम भी हैं।

कोलका = १ कर्ष, यह कर्ष मागधीय मानसे १६ मासे और व्यवहारी मानसे १ तोले का होता है इसके "१ पाणिमानिका, २ अक्ष, ३ पिचु ४ पाणितल, ५ किंचित्पाणि, ६ तिंदुक ७ बिडालपदक, ८ षोडशिका, ९ करमध्य, १० हंसपद, ११ सुवर्ण, १२ कवलग्रह और १२, उदुम्बर" ये नाम भी हैं।

१ कर्ष = १ अर्द्धपल; जिसे "शुद्धि और अष्टमिका" भी कहते हैं।

२ शुक्ति = १ पल, यह पल मागधीय मानसे ९ तोले और व्यवहारी मानसे ४ चार तोलेका होता है, इसके "१ मुष्टी २ आम्र, ३ चतुर्थिका, ४ प्रकुच, ५ षोडशी, ६ बिल्व" ये नाम भी हैं।

२ पल = १ प्रसृति (प्रसृत भी कहते हैं) मागधीय मानसे १० तोले और व्यवहारी मानसे ८ तोलेकी होती है।

२ प्रसृति = अञ्जली इसे-१ कुडव, २ अर्धशराव और ३ मान भी कहते हैं, मागधीय मानसे २० तोले और व्यवहारी मानसे १६ तोलेकी होती है, इसलिये इसको एक पाव जानो।

२ कुडव = १ मानिका, इसे शराव और अष्टपल भी कहते हैं इसलिये उसे ऽ॥ (आधासेर की समझना चाहिये।

२ शराव = १ प्रस्थ, इसे एक सेर जानो।

४ प्रस्थ = १ आढक, जिसे भाजन और कंसपात्र भी कहते हैं, इसमें ६४ पल होते हैं इसे ४ चार सेरका जानो।

४ आढ़क = १ द्रोण, इसके "१ कलश, नल्वण, ३ उन्मान और ४ घटराशि" ये नाम भी हैं।

२ द्रोण = १ शूर्प (कुंभ, जिसके ६४ शराव तथा ३२ सेर होते हैं ।

२ शूर्प = १द्रोणी (वाहगोणी), इसमें १२८ शराव तथा ६४ सेर हैं ।

४ द्रोणी = १ खारी जिसमें ४०९६ चार हजार छ्यानवे पल तथा २५६ सेर होते हैं ।

२००० दो हजार पल = एक भार होता है ।

१०० शत पल = १ तुला होती है, हम ऊपर ४ तोले (व्यवहारी)का एक पल लिख आये हैं (इसलिये पल तोला तोला तोला छटांक छटांक सेर
१००×४= ४०० =५= ८० = १६ = ५)

५ सेर (पक्के जो आज कल चलते हैं) की तुला हुई और २००० पलका एक भार और १०० पलकी एक तुला (२०० + १०० = २०) इसलिये २० तुलाका एक भार हुआ; अब उक्त (तुला सेर सेर सेर मन
२०+५= १००=४०-२॥) गणनानुसार २॥ ढाई मन पक्का (जो आज कल अंग्रेजी तौल तथा व्यवहारमें चलता है) का १ भार जानो ।

इति द्वितीयमागधीयमानम् ॥

अथ तृतीयकलिंगमानम्

यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्त्वा नराः कलौ ।
अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते सुज्ञसंमता ॥ १ ॥

भावप्रकाश

कलियुगी मनुष्य ह्रस्वाङ्ग, मदाग्नि तथा निर्बल होते हैं अतएव उनके योग्य मात्राकी योजना करनेके लिये कलिङ्गमान लिखते हैं, इस मानानुसार मात्राकी योजना सर्व सद्वैद्योंको मान्य है ।

तीसरा कलिंगमान.

१२ श्वेत सरसोंका = १ यव
२ यव = १ गुञ्जा
३ गुञ्जा = १ वल्ल
७ या ८ गुञ्ज = एक मासा ।
४ मासे = १ टंक (शाण) ।
६ मासे = गद्याण ।
१० मासे = २ कर्ष ।
४ कर्ष = पल, जिसमें १० शाण या टंक होते हैं ।
४ पल = कुडव होता है ।
इसके आगे प्रस्थादिका मान पूर्वोक्त मागधीय रीतिके अनुसार (जहाँ काम पड़े तहां) ही लेना चाहिये ।

इति श्री अमृतसागरे विचारखण्डे मानविचारनिरूपणं नामपञ्चमस्तरंगः ॥ ५ ॥

औषधयुक्तायुक्त विचारः

नवान्येव हि योज्यानि द्रव्याण्यखिलकर्मसु ।
विनाविडंगकृष्णाभ्यां गुडधान्याज्यमाक्षिकैः ॥ १ ॥

अब औषधियोंके युक्त तथा अयुक्त विचारोंको लिखना अवश्य है क्योंकि युक्तायुक्तविचारके विना कोई औषधि यथार्थ फलदायिनी नहीं होती है । सब कार्योंमें औषधि नई ही डालनी चाहिये; परंतु (१) '१ वायविडङ्ग २ पिप्पली, ३ धनियां, ४ गुड़, ५ मधु और ६ घृत' ये छः पदार्थ सब वस्तुओंमें एकवर्षसे पुराने ही डाले जाते हैं ॥ १ ॥

२-"१ गुडवेल" २ कुडेकी छाल, ३ अडूसा, ४ कोहला, ५ शतावरी ६ असगंध, ७ खिरैंटी, ८ बड़ी सौंफ और ९ प्रसारणी (अर्थात् चांद-वेल जिसे पूर्वकी ओर गंधमदाली भी कहते हैं)" पदार्थोंका जिस औषधिमें उपयोग करो उसमें सर्वदा गीलेही औषधि डालो; गीले जानकर दूनेमत डालो इनके यही नियम हैं ।

३-उक्त औषधियोंके अतिरिक्त अन्य ओषधियाँ समस्त कार्योंमें नवीन तथा सूखी डालनी चाहिये, यदि गीली हों तो सूखोंके लिखित प्रमाणसे दूनी डालो ।

४-जहाँ औषधि भक्षणके लिये समय न लिखा हो वहाँ औषधिभक्ष-णकाल प्रातःकालही जानो, तथा जिस औषधिका अंग स्पष्ट न लिखा हो वहाँ उसकी जड़ लेना और जिस प्रसंगमें औषधिका प्रमाण न लिखा हो वहाँ सब औषधि समानभागसे लेना, इसी प्रकार जहाँ पात्रका नियम न लिखा हो तो वहाँ मृत्तिकापात्र (मिट्टीके वर्तन) ही जानो ।

५-यदि किसी प्रयोगमें एकही औषध दो बार लिखी हो तो वहाँ लिखितदूनी प्रमाणसे लेनी चाहिये ।

६-जहां "चंदन" मात्र लिखा तो जातिका निर्देश न हो तो आसव, अवलेह, घृतादि स्नेहमें प्रायः श्वेत चंदन डालो, परंतु क्वाथ तथा लेपमें रक्तचंदन ही डालना चाहिये ।

७-अत्यंत बड़े वृक्षों (जैसे नीमादि) के जड़की छाल लेना चाहिये, परंतु छोटे कोमल वृक्षों (जैसे कटियाली, गोखरू आदि) की जड़ अथवा पंचांग लो ।

८--बड़ आदि वृक्षोंकी छाल लो तथा खैर आदि वृक्षोंका सार लो और महुवा, बबूल आदिकी अन्तर छाल लेनी चाहिये।

९-"तालीश तेजपात, तांबूल (पान), तुलसी, सोनामक्खी और भङ्ग" इत्यादिके पत्र लो तथा त्रिफला, सुपारी आदिके फलही लेना चाहिये और पलाश, गुलाब, सेवती आदि अनेक वृक्षोंके पुष्प ही लेना योग्य है।

१०--"कवँच, अरीठा, कमलगट्टा, जायफल, काली मिर्च" इत्यादिके बीज लो, 'अर्क थूहर बड़ और गूलर' इत्यादिका दूध ही उपयोगी होता है।

११--यदि किसी स्थानमें कोई औषधि न मिले तो तुल्य गुणवाली दूसरी औषधी भी युक्तकरके निस्तार कर लेना चाहिये. जैसे अतिसकी अप्राप्तिमें नागरमोथा, अमलवेतके अभावमें चूका अथवा चनाखार, मृगमद (कस्तूरी) के अभावमें जायपत्री, ऋद्धिके अभावमें बला और बला न मिलनेपर नागबलाका उपयोग कर सकते हैं।

१२--इसी भाँति--मेदाके अभावमें असगंध, महामेदाकी अप्राप्तिमें प्रसारणी, काकोली तथा क्षीरकाकोली न हो तो शतावरी, जीवकके अभावमें गिलोय और ऋषभके न मिलनेपर वंशलोचनका उपयोग करके काम चला सकते हैं।

१३--इस प्रकारसे जायपत्रीके अभाववें लौंग, तगरके स्थानमें कूठ, मौलसिरी न हो कमलकंद चित्रककी अप्राप्तिमें दंतीमूल, मधुके अभावमें पुराना गुड़ स्वर्णभस्मके न मिलनेपर लोहसर, केशर न हो तो कुसुम्भा और मोतीकी भस्मके अभावमें सीपीका चूना, इसी प्रकार और भी औषधियोंका विचार करके (अपनी बुद्धि तथा शास्त्रमर्यादानुसार) वस्तु न मिले तो अन्य वस्तुकी योजनासे काम कर सकते हैं, इसका विशेष विस्तार देखना हो तो "निघंटुप्रकाश' देखो।

१४-इसी प्रकार विचारपूर्वक जो वस्तु युक्त करनेके योग्य हो उसेही युक्त करो, परन्तु अयुक्तकी योजना कदापि न करो।

१५-और भी इस बातपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये कि, काष्ठादि औषधि १२ मास (वर्ष भर) के पश्चात् वीर्यहीन 'निकम्मी' हो जाती हैं जिनमेंसे चूर्ण दो २ मास, घृत तथा तैल ४ चार मास और गुटिका,

अवलेह तथा पाकादि १ वर्षके पश्चात् निरुपयोगी हो जाते हैं परन्तु आसव तथा स्वर्णादि भस्म और रसायन ये जितने पुराने होते हैं उतनेही अधिक गुणदायक होते जाते हैं ॥ इति युक्तायुक्तविचार ॥

अथौषधभक्षणकालविचारः

भैषज्यमभ्यवहरेत्प्रभाते प्रायशो बुधः ।
कषायांश्च विशेषेण तत्र भेदस्तु दर्शितः ॥ १ ॥
ज्ञेयः पंचविधः कालो भैषज्यग्रहणे नृणाम् ।
किञ्चित्सूर्योदये जाते तथा दिवसभोजने ॥ २ ॥

शार्ङ्गधरे

१ वैद्य विशेषकर रोगीको प्रातःकाल ही औषध भक्षण करावे तिसमभी औषधका अंगरस, कल्क, क्वाथ, फांट और हिम ये तो प्रायः प्रातःकालही भक्षण करने चाहिये ॥ १ ॥

२-मनुष्योंको औषध भक्षणके लिये ५ काल हैं अर्थात् १ सूर्योदय होनेपर, २ दिनको भोजन करनेके समय, ३ सायंकालको भोजन करनेके समय, ४ वारंवार, ५ रात्रिमें ये पांच जानो ॥ २ ॥

३-१ पित्त या कफके कोपकर, २ पित्तपर विरेचन करानेके लिये, ३ कफपर वमनके लिये और ४ वातादि दोषको स्नेहादि योगसे पतला करनेके लिये रोगीको विना भोजन किये प्रातःकालही औषध सेवन कराना चाहिये ।

४-यदि गुदासंबन्धी अपानवायु कुपित हुआ हो तो भोजन करनेसे कुछही पहिले औषध भक्षण करना ।

५-यदि अरुचि रोग हुआ हो तो अनेक प्रकारके रुचिकारक अन्नादि और उत्तमोत्तम भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य पदार्थोंके साथही औषध दो ।

६-यदि नाभिका समानवायु कुपित हुआ हो अथवा मंदाग्नि हुई हो तो अग्नि प्रदीप्तकी औषधि भोजनके साथ मिलायके खिलादो ।

७-जिसका समस्त शरीरव्यापक-व्यानवायु कुपित हुआ हो उसे भोजन करनेके पश्चात् औषध भक्षण करना चाहिये ।

८-हिचकी तथा आक्षेप रोगमें और वायु कफके कोपमें भोजनके पूर्व और अन्त दोनों समयमें औषध देना चाहिये ।

---

१ क्योंकि ऐसा भोजन करनेसे वह औषध भोजनके साथ उत्तम प्रकारसे मिल जाता है ।

९--कंठ सम्बन्धी उदानवायुके कोपसे स्वरभंग आदि रोग उत्पन्न हों तो सायंकालके भोजन करनेके समय (घृतादिसे युक्त करके) औषध प्रत्येक ग्रासपर चटनीके समान अवश्य खिलाना चाहिये।

१०-यदि हृदयस्थित प्राणवायुका कोप होतो विशेषकर सायंकालके भोजनके बाद औषध भक्षण कराई जावे।

११--तृषा, वमन, हिचकी, श्वास और विषदोष इत्यादि रोगोंमें अन्न सहित अथवा अन्नरहित बारंबार औषध दो।

१२-ठोड़ी (दाढी के ऊपरी अंगके रोगोंमें जैसे कर्णरोग, नेत्ररोग, मुखरोग, नासिकारोग इत्यादि) तथा बढ़े हुए वातादि दोषोंको न्यून करनेके लिये और अतिक्षीण रोगोंको घटानेके लिये रात्रिके समय पाचन व शमनरूप औषध अन्नरहितही भक्षण करना चाहिये।

इन नियमोंसे औषध भक्षण करनेके पांच जुदे जुदे काल हैं वैद्यको चाहिये कि रोगका निश्चय कर समयके विचारसे औषध देवे।

रोग औषध और समयके विवेकसे रहित कल्पितप्रमाणसेही चिकित्सा करना उचित नहीं है। इति औषध भक्षण काल विचार॥

इति श्रीअमृत० विचार० युक्तयुक्तविचा० षष्ठस्तरंगः॥ ६॥

अथ औषदाक्रियाविचारः

अथातः स्वरसः कल्कः क्वाथश्च हिमफांटकौ॥
ज्ञेयाः कषायाः पंचैते लघवः स्युर्यथोत्तरम्॥ १॥

१ स्वरस, २ कल्क, ३ क्वाथ, ४ हिम, ५ फांट ये पांचों क्वाथके सदृशही हैं इनमें एकसे एक उत्तरोत्तर हलके हैं॥ १॥

१--क्रिया-जो वनस्पति अग्नि तथा कीट आदिसे दूषित न हो उसको लाके तत्क्षण कूटो और वस्त्रसे निचोड़के रस निकालो यह स्वरस (अथवा अंगरस कहलाता है।

२-क्रिया--४ चार पल सूखी औषध लेके चूर्ण करो, उस चूर्णको मृत्तिकाके पात्रमें ८ पल पानीके साथ डालकर ८ प्रहर (रात) भीगने दो, तदनन्तर वस्त्रसे निचोड़ लो. यह दूसरे प्रकारका स्वरस है।

३--क्रिया--सूखी औषधिसे अष्टगुण पानी लो ये दोनों मृत्तिकाके पात्रमें डालके आंचसे औटाओ चतुर्थांश रहनेपर छान लो यह भी स्वरसका तीसरा प्रकार है।

मात्रा--प्रथय प्रकारसे बने हुए स्वरसकी मात्रा दो तोलेकी उचित है क्योंकि यह भारी होती है, दूसरे प्रकारसे बने हुए स्वरसकी मात्रा ४ तोलेकी, तीसरे प्रकारसे बने हुए स्वरसकी मात्रा भी ४ तोलेकी जानो।

युक्त करनेके पदार्थोंका प्रमाण--मधु, शक्कर, गुड, जवाखार, जीरा नमक, घृत, तेल और चूर्णादि पदार्थ ६ मासे मिलाना चाहिये।

२ अथ कल्कविधि

२ क्रिया—गीली औषधको चटनीके सदृश बारीक पीसो तथा सूखी औषधको जलके संयोगसे चटनीके समान बारीक पीसो उसे कल्क प्रक्षेप और आवाप भी कहते हैं।

मात्रा--कल्ककी मात्राका प्रमाण १ तोलेका है।

युक्त पदार्थ प्रमाण- कल्कमें मधु, घृत, तैल मिलाना हो तो मात्रासे द्विगुण मिलाओ, शक्कर, गुड़ मिलाना हो तो तुल्य और दूध पानी आदि द्रव पदार्थ मिलाना हो तो मात्रासे चौगुना मिलाना चाहिये।

३ अथ क्वाथविधि

१--क्रिया पल (व्यवहारी चार तोले) औषधको कुछ कुछ कूटके उससे १६ गुणा जलके साथ मृत्तिकाके घटमें डालो, उसे आंचपर चढ़ाके मंद मंद आंच दो इस घटका मुख बन्द मत करो नहीं तो वह क्वाथ यथार्थ गुणदायक न होगा, जब वह औटाते औटाते अष्टमांश रहजावे तब उतार कर चीनी या कांच तथा चांदी किंवा पाषाण और नहीं तो मृत्तिकाके पात्रमें छान लो इसे क्वाथ (शृतकषाय) और निर्यूह भी कहते हैं।

मात्रा-क्वाथकी मात्रा १ पल प्रमाण उत्तम, तीन अक्ष प्रमाण मध्यम और अर्द्धपल प्रमाणकी निकृष्ट कहलाती है।

---

१ तोलेसे चार तोले तक औषध हो तो १६ गुणा जल लो. ४ तोलेसे कुडव प्रमाणतक औषध हो तो अष्टगुण जल लो और कुड़वेसे उपरान्त प्रस्थप्रमाण तक औषध हो तो चतुर्गुण जल लेना ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--क्वाथमें शक्कर डालना हो तो क्वाथके प्रमाणसे वातरोगमें चतुर्थांश, पित्तरोगमें अष्टमांश और कफरोगमें षोडशांश डालो, यदि मधु मिलाना हो तो उक्त प्रमाणसे विपरीत डालो और जीरा, गूगल, जवाखार, सैंधव, शिलाजीत, हींग, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल) आदिक पदार्थ क्वाथमें डालना हो तो ४ मासे डालो।

रोगीको चाहिये कि, प्रसन्न चित्तपूर्वक काचादिके पात्रमें क्वाथ लेके कुछ कुछ उष्णको ही पीके पात्रको भूमिपर उलटा रख देवे यदि वैद्यकी आज्ञा हो तो ऊपरसे तांबूलादि खावे।

४ अथ हिमविधि

क्रिया--चार तोले औषध कूटके २४ चौबीस तोले पानीके साथ मृत्तिकाके पात्रमें रातभर भीजने दो प्रातःकाल छान लो इसे हिम-ठंडा क्वाथ कहते हैं।

मात्रा--हिमकी मात्रा ८ तोले प्रमाणकी है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--हिममें जो वस्तुएँ मिलानी हों उनकी मात्रा क्वाथ प्रमाणके अनुसार होती है।

५ अथ फाँटविधि

क्रिया--१ पल औषधका महीन चूर्ण बनावे, मृत्तिकाके घड़ेमें १ कुडव (जो व्यवहारी मानसे पावभरका होता है) पानीमें डालकर चूल्हेपर चढ़ावे, जब वह औटाने लगे तबऔषधका चूर्ण डालकेकुछ काल पश्चात् कपडेसे छान लेवे इसे फांट तथा चूर्णद्रव भी कहते हैं।

मात्रा -फाँटकी मात्रा ८ तोलेकी होती है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--फांटमें मधु, शक्कर और गुड़ आदि पदार्थ मिलाना हो तो क्वाथ विधिमे लिखे प्रमाणानुसार मिलाओ।

६ अथ चूर्णविधि

क्रिया--अत्यन्त सूखी औषधको कूटके कपड़छान करो उसेही चूर्ण (रज, क्षोद भी) कहते हैं।

मात्रा--चूर्णकी मात्रा १ तोलेकी होनी चाहिये।

युक्तपदार्थ प्रमाण--चूर्णमें गुड़ मिलाना हो तो समान, मिश्री चूर्णसे दूनी, पकाई हुई हींग अनुमान माफिक और मधु अथवा कोई अन्य

चिकना पदार्थ मिलाना हो तो भी दूनाही मिलाओ दूध, गोमूत्र, पानी आदि द्रव पदार्थ मिलना हो तो चूर्णसे चतुर्गुण मिलाओ, यदि नींबूके-रसादिका पुट देना हो तो रसमें चूर्णको पूर्णरूपसे भिगोना चाहिये।

७ अथ अवलेहविधि

क्रिया--औषधियोंके क्काथादिको पुनः पात्रमें डालके औटाते औटाते दृढ़ हो जाने दे अर्थात् वह पदार्थ चाटनेके योग्य हो जावे तो उसे अव-लेह (लेह भी) कहते हैं।

मात्रा—अवलेहकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--अवलेहमें शक्कर डालना हो तो औषधके चूर्णसे चौगुनी मिलाना, गुड़ डालना हो तो द्विगुणी और दूध, गोमूत्र, जल आदि द्रवपदार्थ डालना हो तो चूर्णसे चौगुने डालना चाहिये।

८ अथ गुटिकाविधि

क्रिया—गुड़ या शक्कर अथवा गूगरकी चासनी लेके, या बिना चासनी लियेही किंवा पानी दूध अथवा मधुमें वैसेही चूर्ण डालकर गोली बांध लेना; इसे गुटिका कहते हैं।

१ गुटिका, २ वटी, ३ मोदक, ४ वटिका, ५ पिंडी, ६ गुड़ और ७ वर्ति ये सात नाम गुटिकाके पर्याय बाचक हैं।

मात्रा--जिस प्रकरणमें जैसी लिखीहो वैसीजानो, परंतुसामान्य रीतिसे काष्ठादि चूर्णकी बनी हुई गोलीकी १ तोले की मात्रा होतीहै।

युक्तपदार्थ प्रमाण--शक्करमें गोलियां बनाना हो तो चूर्णसे चतुर्गुण शक्कर लो, यदि गुड़में बनाना हो तो चूर्णसे दूना गुड़ लो, मधु या गूगल मिलाना हो तो चूर्णके तुल्य लो और दूध आदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो चूर्णसे दूना मिलाना चाहिये।

९ अथ घृत-तैल विधि

क्रिया—जिन पदार्थोंका घृत या तैल बनाना हो प्रथम उसका कल्क (ऊपरकी विधिमें देखो) बनाके उससे चौगुना घृत या तैलके साथ दोनों पदार्थोंको (कल्क और तैल या घी) को मिट्टीके चिकने पात्रमें या कडाहीमें डाल दो और उसीमें दूध गोमूत्रादि पदार्थ (जो लिखे हों) डालकर वह पात्र चूल्हेपर चढ़ा दो, जब आंच देते २ केवल घृत या तैल शेष रहजावे (कल्क दूध आदि पदार्थ जलजावें) तब उतारकेछान लो यही तैल प्रस्तुत होगा।

मात्रा--इसकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--इसमें दूध, दही, गोमूत्रादि पदार्थ डालना हो तो घृत तैलसे चतुर्गुना डालना चाहिये।

इस विषयका विशेष विस्तार देखना हो तो शार्ङ्गधर तथा चरक सुश्रुतादि प्राचीन ग्रन्थोंमें देखो।

१० आसव तथा अरिष्टविधि

क्रिया--जल तथा अन्य द्रवपदार्थोंके साथ पात्रमें औषधियां डालकर उसका मुँह बन्दकर दो और भूमिमें गाड़के पक्ष तथा मासके बाद निकालो यह आसव या अरिष्ट कहलाता है आसव बनानेकी क्रिया अलग भी है--इनकी मात्रा १ पलकी होती है।

युक्तपदार्थ प्रमाण--इन दोनोंमें जहां जलादि द्रवका प्रमाण नहीं लिखा हो तो १ द्रोण द्रवके साथ १ तुला प्रमाण गुड़ डालो उसीमें गुड़से आधा मधु और गुड़से दशमांश औषधियोंका चूर्ण डालना चाहिये और यदि सब वस्तुओंका प्रमाण लिखा हो तो लेखानुसार ही लेना योग्य है।

आसव और अरिष्टकी भिन्नता--जिसमें औषधियां अलग और केवल स्वच्छ जल अलग डालकर उक्तरीतिके अनुसार सिद्धक्रिया हो तो वह "आसव" कहलाता है और जिसमें प्रथम जलके साथ औषधियोंका क्वाथ बनाकर डाला हो वह "अरिष्ट" कहलाता है. इसके विशेष भेद शार्ङ्गधरादि वैद्यक ग्रन्थोंमें देखो।

११ अथ पुटपाकविधि

क्रिया--जिस औषधिका पुटपाक करके रस निकालना हो प्रथम उसके ऊपर बड़ या जामुनके पत्ते लपेटकर ऊपरसे काली मिट्टीका दो अंगुल मोटा लेप चढ़ा दो फिर इस पिंडको तीक्ष्णअग्निमें दबा दो, जब यह अंगारके समान लाल हो जावे तब निकालकर (ठंढा होनेपर) मिट्टी पत्रादि अलग करो और औषध निकाल कर रस निकाल लो।

मात्रा--पुटपाक विधिसे निकाले हुए रसकी मात्रा १ पलकी है,

युक्तपदार्थप्रमाण--पुटपाकविधिसे निकले हुए रसमें मधु आदि पदार्थ एक कर्ष प्रमाण डालना चाहिये।

१२ अथ मंथविधि

क्रिया--४ पल प्रमाण ठंढे जलमें औषधका एक पल चूरा डालके मृत्तिकाके पात्रमें उसका मंथन (जैसा मक्खन निकालनेके लिये दही मथा जाता है) करो इसको मंथनजल कहते हैं।

मात्रा--इसकी मात्रा २ पल प्रमाणकी होती है।

१३ अथ क्षीरपाकविधि

क्रिया--औषधके प्रमाणसे अष्टगुण दुग्ध और चतुर्गुण जल इन तीनोंको एकत्रित कर औटाओ, औटाते २ जब पानी जलकर दूध रहजावे तब उतार लो इसे क्षीरपाक कहते हैं।

उपयोग--यह आमांश शूलको नष्ट करता है।

१४ अथ तण्डुलजलविधि

क्रिया--१ पल कूटे हुए चावल अष्टगुण जलके साथ बर्तनमें डालकर आंच दे पश्चात् छानलो, अथवा कुछ कालपर्यंत भीगने दो और छानलो, इसे तण्डुलजल कहते हैं पूर्वोक्त मुख्य और यह गौण है।

१५ अथ उष्णोदकविधि

क्रिया--सेरभर जल तपावे, जब कुछ तप जावे या आधा रहजावे अथवा चौथाई रहे किंवा अष्टमांश बचरहे तब उतार लेवे ये एकसे एक उत्तरोत्तर गुणी होंगे।

उपयोग--यह जल कफ, आमवात, मेदोवृद्धि, कास, श्वास और ज्वरको दूर करता है और वस्तिका शोधन करनेवाला है।

क्रिया--मृत्तिकाके नवीन पात्रमें सरसोंका तेल चुपड़कर इस पात्रमें निर्मल उष्ण जल, राई, जीरा, सैंधव, हींग, सोंठ, (थोड़ीसी छांछ और कुछ बडे पक्वान्नविशेष) डाल दो और इस पात्रका मुँह बंद करके ३ तीन दिन पर्यन्त रहने दो, जब वह उबल आवे तब कांजी कहावेगी।

मात्राविचार--हम उपरोक्त लेखमें १ स्वरस, २ कल्क, ३ क्राथ, ४ हिम, ५ फाट, ६ चूर्ण, ७ अवलेह, ८ गुटिका, ९ घृत, १० तेल--आसव, ११ पुटपाक, १२ मंथ, १३ क्षीरपाक, १४ तण्डुल, १५ उष्णोदक और कांजी इत्यादिका वर्णन करके प्रत्येककी मात्राका प्रमाण भी ग्रंथानुसार दर्शित करचुके हैं, तथापि सद्वैद्य--काल, जठराग्नि, अवस्था, बल,प्रकृति, देश और विकार इत्यादिका अपने बुद्धि बल तथा शास्त्रोक्त

आधारोंसे विचारकर औषधकी मात्रा देवे । इस लिये शार्ङ्गधरमें लिखा हैः—

स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो बलम् ॥
प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रां प्रयोजयेत् ॥

शा० अ० १ श्लो० ३७

यह सब औषधि क्रिया विचार भावप्रकाश तथा शार्ङ्गधरादि वैद्यक ग्रंथोंमें विस्तारपूर्वक लिखा है । इति औषधिक्रिया विचार ॥

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे औषध क्रिया विचार निरूपणंनाम सप्तमस्तरंगः ॥७॥

औषधदीपनपाचनादिविचारः

पचेन्नामं वह्निकृच्चदीपनं तद्यथा मिशिः ।
पचत्यामं न वह्निं च कुर्याद्यत्तद्धि पाचनम् ॥
नागकेशरवद्विद्याच्चित्रो दीपनपाचनः ॥ १ ॥

अब हम दीपन-पाचन आदि औषधियोंका विचार उदाहरण सहित दर्शित करते हैं—

१ दीपनपाचन--जो औषध आमको न पचावे और अग्निको प्रदीप्त करे वह दीपन कहलाती है जैसे "बडी सौंफ" तथा आमको पचावे और अग्निको प्रदीप्त न करे सो पाचन कहलाती है जैसे "नागकेशर" और जो औषध आमको भी पचावे और अग्निको भी प्रदीप्त करे सो दीपन पाचन कहलाती है जैसे "चित्रक"

२ सशमन—जो औषध शरीरके वातादि दोषोंको न बिगाडे और न उनका शोधन करे किन्तु अपनी पूर्व दशापर ही यथा स्थित रखे और शरीरमें बिगडे हुए दोषको शमन कर दे वह संशमन औषध हैं जैसे "नीम = गिलोय" (अर्थात् गुरुच = अमृता)

३ अनुलोमन--जो औषध वातादि दोषोंको पचाके परस्पर बंधे हुओंको पृथक् करके मलद्वारसे बाहर निकाल दे अथवा मल मूत्रकी रुकावटको पचाके गुदाद्वारा कोठेको शुद्ध कर दे वह अनुलोमन कहलाती है जैसे "हरीतकी" हरैं ।

४ स्रंसन- जो औषध कोठेके वातादि दोष तथा मूत्रको (जो कि अपने नियत कालपर ही पाचन होनेवाले हैं) जबरदस्तीसे पाक न होनेपर भी गुदाद्वारा बाहर निकाल देवे सो स्रंसन औषध कहलाती है, जैसे "किरमाले" (किरवारा) की गिरी।

५ भेदन--जो औषध वातादि दोषसे बद्धाबद्ध (बँधे हुए तथा न बँधे हुए) मल मूत्रको खण्ड २ कर गुदाद्वारा बाहर कर दे वह भेदन कहलाती हैं जैसे "कुटकी"

६ रेचन--जो औषध पेटमेंके पक्वापक्व (पके हों चाहे नहीं) अन्नादि तथा वातादि दोषोंको पतले कर गुदाद्वारा बाहर निकाल दे वह रेचन कहलाती है जैसे "निसोत"

७ वमन--जो औषध विना पकेहुए ही वात तथा पित्तको बलात्कारसे मुखद्वारा (उलटी करके) बाहर निकाल दे वह वमनसंज्ञक औषध कहलाती जैसे है "मैनफल" जिसे मैनर भी कहते हैं।

८ संशोधन--जो औषध अपने स्थानमें वातादि दोष तथा मलसञ्चयको ऊपरकी ओर खींचकर मुख नाक कान इत्यादिके द्वारा अथवा नीचेकी ओर खींचकर गुदा या मूत्रद्वारा बाहर निकाल दे वह संशोधन कहलाती है जैसे देवदाली "जिसे कूकड़बेल और देवडोंगरी भी कहते हैं।

९ छेदन--जो औषध परस्पर (एकसे एक) मिले हुए कफादिको अपनी प्रबलतासे भिन्न २ कर दे वह छेदन कहलाती है जैसे "यवक्षार तथा मिर्च; पिप्पली, शिलाजीत" इत्यादि।

१० लेखन--जो औषध रसादि ७ धातु तथा वातादि दोष किंवा वमनको शोषण करके पतला कर देती है वह लेखन कहलाती है जैसे "मधु, उष्ण जल, वच" आदि।

११ ग्राही--जो औषध अग्निको प्रदीप्त करे, आमादिको पाचन करे और स्वयं उष्ण वीर्य होनेके कारण जलरूप कफादि दोष तथा धातु मलका आकर्षण करे वह ग्राही कहलाती हैं जैसे "सोंठ जीरा, गजपिप्पली" इत्यादि।

१२ स्तम्भन-जो औषध रूखापन, शीतलता, कटुता, हलकापन और पाचन इन गुणोंसे वायूत्पादक (वात उत्पन्न करने-

वाली) हो वह स्तम्भन कहलाती है जैसे "नागरमोथा, बेलकी कोमल गिरी, मोचरस, कुडाछाल" इत्यादि ।

१३ रसायन–जो औषध शरीरकी जरा व रोगोंको दूर करनेवाली हो वह रसायन कहलाती है, जैसे "नीम गिलोय, हर्रे, गूगल" इत्यादि ।

१४ वाजीकरण--जो औषध धातुवृद्धि करके स्त्रीसे प्रीति बढ़ावे वह वाजीकरण कहलाती है, जैसे शतावरी, केवांचबीज, दूध, मिश्री" इत्यादि ।

१५ धातुवार्द्धिनी--जो औषध धातु (वीर्य) को बढ़ानेवाली हो वह धातुवर्द्धिनी कहलाती है, जैसे "असगन्ध, मुसली, शक्कर, शतावरी" इत्यादि ।

१६ धातुचैतन्य--जो औषध धातुको चैतन्य तथा उत्पन्न करनेवाली है उसे धातुचेतनी कहते हैं, जैसे "दूध, उर्द, आंवला, भिलावेकी बीजी" इत्यादि ।

१७ वाजीकरण विशेषता--धातुचैतन्यकारिणी स्त्री, धातुरेचक बडी, कटियालीके फल, धातुस्तम्भक जायफल, धातुशोषणकारिणी हरीतकी (हर्रे) और धातुक्षय कलिंग (तरबूज) है, सो वाजीकरणमें भी उक्त बातोंकी विशेषता पर वैद्य पूर्ण ध्यान देवे ।

१८ सूक्ष्म--जो औषध शरीरमें रंध्रोंद्वारा प्रवेश हो सके उसे सूक्ष्म-कहते हैं, जैसे "सैंधव, मधु, नीम तैल" इत्यादि ।

१९ व्यवायी-जो औषध पेटमें पहुँचतेही (पचनेके पूर्व) सर्वत्र व्यापक हो जावे पश्चात पचे वह व्यवायी कहलाती है, जैसे "भांग, आफू (अफीम)" आदि ।

२० विकाशी–जो औषध शरीरकी संधियोंके सब बंधनोंको शिथिल करदे वह विकासी कहलाती है जैसे "सुपारी, कोदव" इत्यादि ।

२१ मादक--जो औषध तमोगुण प्रधान होके बुद्धिको बिगाड़ दे वह मादक कहलाती है, जैसे "मदिरा (मद्य. दारू, शराब, ब्रांडी)" इत्यादि ।

२२ प्राणहारक--जो एकही औषध पूर्वोक्त (१ व्यवायी २ विकाशी ३ सूक्ष्म ४ छेदन ५ मादक और ६ अग्निदीपक. इन छहों औषधियोंके

गुणयुक्त) हो वह प्राणहारक कहलाती है जैसे "वत्सनागविष" इत्यादि ।

२३ प्रमाथी--जो औषध अपने प्रभावसे मुख, नाक, कानादि छिद्रोंके कफादि दोषोंके संचयको दूर करदे वह प्रमाथी कहलाती है. जैसे काली मिर्च, वच" इत्यादि ।

२४ अभिष्यंदि--जो पदार्थ अपने पिच्छिलपन अथवा जड़ताके कारणसे रस बहानेवाली नाड़ियोंको रोकके जकड़ा देवे वह अभिष्यंदि कहलाती है, जैसे "दही इत्यादि ।

यदि इस विषयको दीर्घ विस्तारपूर्वक देखना हो तो शार्ङ्गधरके प्रथम खण्डमें चौथा अध्याय देखो वहां विस्तीर्ण रूपसे लिखा है ।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे औषधीनां दीपनपाचनादिनिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

अथ लघुनिघण्टुः

अर्थात्--मुख्यौषधनाम गुणविचारः

सर्वं कायेन संसाध्यं तस्यायुः स्थितिधारणम् ।
आयुर्वेदोपदेशस्तु कस्य न स्यात्सुखावहः ॥ १ ॥
तत्रापि पूर्वं ज्ञातव्या द्रव्यनामगुणागुणाः ।
अतस्त एव वक्ष्यन्ते तज्ज्ञाने हि क्रियाक्रमः ॥ २ ॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सब कायासेही सिद्ध होते हैं और कायाकी स्थितिका मुख्य कारण आयु है अर्थात् जबतक आयु है तबतक काया रहती है. मनुष्य आयुर्वेदके अनुसार चलनेसे पूर्णायु होता है. इसलिये आयुर्वेदोपदेश किसको सुखपात्र नहीं है ? उस आयुर्वेदकी

---

१ जिसे योगवाही भी कहते हैं परंतु यही (प्राणनाशक) विष सुयोगी औषधियोंके अनुपानादिसे सम्बंधित होकर अमृततुल्य गुणदाता हो जाता है परंतु सद्गुरुकी शिक्षा विना विषको बना लेना अशक्यही है इसलिये सद्गुरुकी शिक्षा लेनी आवश्यक है ।

२ जो पदार्थ कुछ बुद्बुदयुक्त, चिकना, खट्टा, कोमल, फूला हुआ और कफकारी हो वह "पिच्छिल" कहलाता है ।

शिक्षायें १ निघण्टु २ निदान, ३ चिकित्सा मुख्य तीन हैं. जिसमें प्रथम निघण्टु है क्योंकि जबतक वैद्यको वस्तुओंके नाम और गुणादिका परिज्ञान न होगा तबतक वह चिकित्सा क्या कर सकेगा ? इसी लिये हम इस विचारखण्डके अन्दर मुख्य मुख्य औषधियोंके नाम, गुण संक्षेपसे दर्शित करते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

१ हर्रै--इसे हर्ड भी कहते हैं, इसके शिवा आदि भी अनेक नाम हैं. यह सात प्रकारकी होती है, परन्तु बड़ी और छोटी जिसको फारसीमें हलेलः जर्दः और हलेलः जंगी कहते हैं,यह एक वृक्षका फल है,जो सर्द मुल्कमें होता है जिसमेंसे सर्वोत्तम तथा सर्व कार्यमें ग्रहण करने योग्य "विजया" नामकी हर्रै होती है जो नवीन चिकनी दृढ़ और विशेष गुरु हो (जो पानीमें डालते ही डूब जावे) वह अत्यन्त गुणकारी होती है.

हर्रै--रूखी, उष्ण, हलकी और रसीली है यह श्वास, काम, प्रमेह, अर्श (बवासीर), उदररोग, कृमिरोग, संग्रहणी, स्तम्भकत्व (कब्जी), विषमज्वर, गोला, पेटका अफरा, फोड़े, वमन (उलटी), हिचकी, खाज, हृद्रोग, कामला, कमलरोग = पीलिया, शूल औ प्लीहा (तापतिल्ली) इत्यादि रोगोंको दूर करती है, इसमें खट्टा और मीठा रस है वह बादीको, कसैला रस है वह पित्तको और कड़ुवा तथा तीखा रस है वह कफको नष्ट करता है. हर्रोंमें उक्त पांचों रस हैं।

२ आँवला--इसके "धात्रीफलादि" अनेक नाम हैं यह पुष्ट करता है इसमें लगभग हर्रेके समान ही गुण हैं, परन्तु विशेष करके रक्त पित्तको जीतनेवाला हैं, यह अपने खट्टे रससे बादी मीठे तथा ठंढे रससे पित्त और रूखे तथा कसैले रससे कफको नष्ट करता है. उक्त पांचों रस आँवलेमें होते हैं।

३ बहेड़ा--इसके "विभीतकादि" अनेक नाम हैं यह खानेमें उष्ण और लगानेमें शीतल हैं. कास श्वासको दूर करता है, रूखा है, नेत्रोंको आरोग्यप्रद हैं, बालोंको बढ़ाता है, इसकी बीजी कुछ मादक है, पानीमें पीसकर लगानेसे दाहको मिटाती है।

४ अडूसा--इसके "वासा" आदि अनेक नाम हैं, बादीको उत्पन्न करता है, कटु है, कफ, पित्त, रुधिर, श्वास, कास, ज्वर, उलटी, प्रमेह, कुष्ठ और क्षयी इन सबको दूर करनेवाला है।

५ त्रिफला—३ भाग हर्र, ६ भाग बहेड़ा, १२ भाग आँवल = त्रिफला, उक्त प्रमाणानुसार त्रिफला बनता है इसके "वारा" आदि भी नाम हैं यह कुष्ठ, प्रमेह, रुधिरविकार, कफ और पित्तको दूर करता, नेत्रोंकी ज्योति बढ़ाता और हृदय (मन = दिल) को बल देता है।

६ गिलोय--इसके "गुडूची" आदि नाम हैं यह कड़वी, हलकी पचनेके समय मीठी, रसीली, स्तम्भक (कब्ज करनेवाली),कसैली और उष्ण है, यह बलको बढ़ाती, जठराग्निको प्रदीप्त करती, कामला, कुष्ठ, वादी, रुधिरप्रकोप, ज्वर, पित्त और उलटी इन सबोंको जीतती है।

७ बेल--इसके "लक्ष्मीफल" आदि अनेक नाम हैं, यह ग्राही (मलको रोकनेवाला), कसैला, उष्ण, दीपन, पाचन हलका, चिकना और तीक्ष्ण है, बलको बढ़ाता, हृदयको हितकारक है बेलकी गिरी (भीतरका गूदा) वायु, कफ, त्रिदोष, ज्वर, संग्रहणी, शूल और आमको नष्ट करती है।

८ गोखरू—इसके "त्रिकंटक" आदि अनेक नाम हैं; यह ठंडा, और स्वादिष्ट है, यह वस्तिको शुद्ध करता, प्रमेह, श्वासकासा रुधिरप्रकोप, पथरी हृद्रोग और बादीको दूर करता है।

९ बड़ी कटाई—इसके "भटकटैया, सिंहा" आदि अनेक नाम हैं यह उष्ण, और पाचनी है, हृदयको बल देती, कास, श्वास ज्वर, कुष्ठ, कफ, बादी, शूल और अग्निमांद्य (मंदाग्नी) को दूरकरती है।

१० छोटी कटाई--इसे श्वेत कटाई भी कहते हैं, इसके "लक्ष्मणा" आदि अनेक नाम हैं, यह उष्ण, रूखी, दीपनी और पाचनी है कास, श्वास, ज्वर, कफ, वायु, पीनस, पार्श्वशूल और हृद्रोगको दूर करती है।

११ मुलहठी—इसे मीठी लकड़ीभी कहते हैं इसके "मधुयष्टि" आदि अनेक नाम हैं; यह भारी और ठंढी हैं; यह बल देनेवाली, प्यास उलटी और पित्तको नष्ट करनेवाली है,।

१२ एरंड—इसके "दीर्घदंड" आदि अनेक नाम हैं,यह दो प्रकारका ह, पहला--जिसका झाड़ बडा, फल छोटा होता है. और श्वेत होता हैं दूसरा—जिसका झाड़ छोटा, फल बड़ा और रंग रक्त (लाल) होता

है यह मीठा भारी और उष्ण शूल, सूजन कटिपीड़ा; मूत्राशयपीड़ा, शिरपीड़ा, उदर पीड़ा ज्वर, बढ़ी हुई श्वास, कफ, अफरा (पेट फूलना), कास,कुष्ठ, आम और बादीको दूर करनेवाला है. फल उष्ण,स्वादिष्ठ, भेदन, क्षारयुक्त और बादीको जीतनेवाला है, श्वेत तथा रक्त एरंडा दोनोंके गुण तुल्य ही हैं ।

१३ जवास–इसके "यवासा, दुर्लभा" आदि अनेक नाम हैं मीठा, तीक्ष्ण और पित्त, कफ तथा रुधिरको दूर करनेवाला है ।

१४ मुंडी–जिसे लोकमें बहुधा "गोरखमुंडी" भी कहते हैं इसके "भिक्षु" आदिभी अनेक नाम हैं यह तीक्ष्ण है. बुद्धिको बढ़ाती, उपदंश (गरमी), कृमि और पांडु आदि रोगोंको दूर करती है ।

१५ श्वेत लटजीरा–जिसे "ऊंगा" भी कहते हैं "अपामार्ग" आदि नाम भी हैं यह तीक्ष्ण, दीपन है कफ, वायु, दाह, बवासीर, उदररोग, खाज और अपचनको दूर करता है ।

१६ रक्त लटजीरा–यह रूखा है कफ और रक्तपित्तको नष्ट करता है ।

१७ जयपाल–इसके "दंतिबीज" आदि अनेक नाम हैं, यह चिकना है रेचनकारक (दस्त लानेवाला) है. पित्त और कफको दूर करता है।

१८ निसोत–यह दो प्रकारका होता है " श्वेत और काला" इनके दोनोंके नाम गुणादि पृथक् २ हैं परंतु विरेचन (जुलाब) के लिये विशेष करके काला निसोतही स्वीकार किया जाता है ।

१९ कुटकी–इसके "तिक्ता" आदि नाम भी है. यह पचानेके समय कड़वी हैं, तीखी, रूखी, हलकी और ठंढी है,यह कृमि दाह. पित्त, कफ और ज्वरको दूर करती है ।

२० नीम- इसके "पिचुमंद" आदि अनेक नाम हैं; यह ठंढा, हलका, ग्राही (दस्त रोकनेवाला) और पचनेमें कड़ुवा है. अग्नि वातको उत्पन्न करता तथा व्रण (फोड़ा), पित्त, कफ उलटी, कुष्ठ, प्रमेह और मुंहसे बहते हुए पानीको बंद (दूर) करता है ।

२१ चिरायता–यह दो तीन प्रकारका होता है; इसके 'किराताादि' अनेक नाम हैं. यह बादीको उत्पन्न करता है, सन्निपात, ज्वर, श्वास, कास, पित्त, रुधिरकोप और दाहको दूर करता है, स्वभावमें रूखा (ठंढा), तीखा और हलका है ।

२२ इन्द्रयव—इसके ‘भद्रयव’ आदि भी नाम हैं, यह संग्राही है. बवासीरको दूर करता है ।

२३ मैनफल—इसे ‘मैनर’’ भी कहते हैं, इसके ‘मदनफल’ आदि भी नाम हैं यह उष्ण है. उलटी लाता है. कफ और शोथको दूर करता है ।

२४ मेढाश्रृंगी—इसके ‘श्रृंगी’ आदि भी नाम हैं, यह बादीको उत्पन्न करती. खांसी, पित्त और कफको खोती है ।

२५ पुनार्नवा—जिसे मारवाड़ देशमें ‘सांटी’ भी कहते हैं, इसके दो भेद हैं ‘श्वेत और लाल’ यह उष्ण और मीठा है, शोथ कफ और उदर रोग आदिको दूर करती है ।

२६ असगंध—इसके ‘अश्वगंधादि’ अनेक नाम हैं. यह कसेला, उष्ण और रसायन है, बलको बढ़ाता तथा बादी कफ आदि रोगोंको दूर करता है ।

२७ शतावरी—दो प्रकारकी होती है ‘छोटी और बड़ी’ यह मीठी और ठंढी है वीर्य तथा दूधको बढ़ाती और कई रोगोंको दूर करती है ।

२८ मालकांगुनी—इसके ‘ज्योतिष्मती’ आदि भी नाम हैं,यह कडवी और तीखी है, बादी, कफादि रोगोंको दूर करती है ।

२९ देवदारु—इसके ‘सुरद्रुम’ आदि भी नाम हैं. यह उष्ण, हलका और कडुवा है. अफरा, ज्वर, शोथ, आम, हिचकी, खाज कफ और बादीको दूर करना है ।

३० पुहकरमूल—इसके ‘पुष्कर’ आदि भी अनेक नाम हैं यह कडुवा, तीखा और उष्ण है. यह वायु, कफ ज्वर शोथ अरुचि श्वास और पार्श्वशूलको दूर करता है ।

३१ काकड़ाश्रृंगी—इसके ‘श्रृंगी’ आदि भी नामहैं. यह हिचकी, उलटी, श्वास, कास, कफ, क्षयी और ज्वर आदि रोगोंको दूर करती है।

३२ कायफल—इसके ‘कटुफल’ आदि अनेक नाम हैं. यह बादी, कफ, ज्वर, श्वास और प्रमेहादि रोगोंको दूर करता है ।

३३ भारंगी—इसके ‘भार्गी’ आदि अनेक नाम है, यह उष्ण है. वात, कफ, ज्वर, श्वास आदि रोगोंको दूर करती है ।

३४ नागरमोथा–इसके 'मुस्ता' आदि अनेक नाम हैं यह ठंढा, संग्राही, तीखा, दीपन और पाचन है, ज्वरादि रोगोंको दूर करता है।

३५ हल्दी–इसके 'हरिद्रा' आदि कई नाम हैं. यह उष्ण और श्लेष्मघ्न, पित्त, प्रमेह आदि रोगोंको दूर करती और रंगको सुन्दर बनाती है।

३६ भांगरा–इसके 'भृङ्गराज' आदिक नाम हैं. यह कफ, वात, कुष्ठ, नेत्ररोग, शीशरोग आदि अनेक रोगोंको दूर करता है और उष्ण है।

३७ पित्तपापडा–इसके 'पर्पट' आदि अनेक नाम हैं, यह पित्त रुधिर-कोप, शीशभ्रमण (शिर घूमना), प्यास, कफ, ज्वर और दाहको दूर करता है और बादीको उत्पन्न करता है तथा ठंढा हैं।

३८ अतीस–इसके "अतिविष" आदि अनेक नाम हैं, यह उष्ण और पाचन तथा कफ, पित्त, अतिसारको जीतता है।

३९ लोध–इसके 'लोध्र' आदि अनेक नाम हैं यह ठंढा और रेचक (दस्तावर) है, ज्वर, अतीसार और रुधिरको दूर करता है।

४० मूसली– इसके 'खालिनी' आदि अनेक नाम हैं यह मीठी, भारी, उष्णवीर्य, रसायनी और पुष्टिकारी है, गुदा और वायुके रोगोंको दूर करती है।

४१ केवांचबीज–इसके 'कपिकच्छु' आदि अनेक नाम हैं। यह बहुत पुष्ट, मीठा, बलवर्धक, भारी और वाजीकरण है।

४२ भिलावां–इसके 'भल्लातक' आदि अनेक नाम हैं। यह कसैला और उष्ण है। वीर्य उत्पन्न करता, वायु, कफ, उदररोग, आध्मान, कुष्ठ, मूलव्याधि, संग्रहणी, गुल्मज्वर, कृमि और मन्दाग्निको दूर करता है।

४३ ब्राह्मी–इसके 'सरस्वती' आदि बहुत नाम हैं। यह ठंढी, रेचक (दस्त लानेवाली) और मीठी है। बुद्धि और स्मृतिको बढ़ाती, ज्वर, पांडुरोग तथा कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करती है।

४४ गोभी–इसके 'गोजिह्वा' आदिक नाम हैं। यह ठंढी और संग्राही है, वायुको उत्पन्न करती, हृदयको बल देती, कफ, पित्त, प्रमेह, ज्वर और कास आदि रोगोंको दूर करती है।

४५ चिरमी–इसको 'गुंजा' आदि भी कहते हैं यह बालोंको बढ़ाती, बल बुद्धि करती और पित्त, कफ, नेत्ररोग, खुजली, फोड़े आदि रोगोंको दूर करती है।

४६ तालमखाना–इसके 'इक्षुर' आदि नाम हैं। यह ठंढा भारी और पुष्ट है, वादी और रुधिरके रोगोंको दूर करता है।

४७ आक–इसके दो भेद हैं 'श्वेत और रक्त' इसके 'अकाव, अर्क, आकड़ा' आदि अनेक नाम हैं उष्ण है, प्लीहा (तापतिल्ली) शंखवात, ललाट (मस्तक) की पीड़ा, कुष्ठ, खुजली, व्रण,गुल्म,अर्श (बवासीर), कफ, कृमि और उदरपीड़ा इन सबोंको दूर करता है।

४८ धतूरा–इसके 'धतूर, कितव' आदि नाम हैं यह मादक और उष्ण है, अग्निको बढाता, कुष्ठ आदि रोगोंको करता है।

४९ घीकुमारी–इसके 'ग्वारपाठा, कुमारी' आदि अनेक नाम हैं, यह ठंडी है, यकृत्, प्लीहा, कफज्वर, गठान विस्फोटक, रक्तरोग और चर्मरोगको दूर करती है।

५० भंग–इसके "भांग, गांजा" आदि अनेक नाम हैं, यह उष्ण, ग्राहिणी और मादक है, अग्निको दीप्त करती है।

५१ काशिनी–इसके "कम्बनी, शोण, फलनी" आदि नाम हैं यह दूधको बढ़ाती है, मस्तक पीड़ा और त्रिदोषको दूर करती है।

५२ दूब–इसके 'दुर्वा' आदि नाम हैं यह पित्त, दाह और रुधिरकोप को शान्त करती है दूब दो तीन प्रकारका है परन्तु ये तीनों प्रायः शीतल ही हैं।

५३–बांस–इसके "वंश, वेणु" आदि नाम हैं, यह ठंढा है पित्त, कफ, दाह, शोथ और रुधिरकोपको दूर करता है, वांसकी करील जो कि बांसके डांडमेंसे निकलता है भारी है, कफको उत्पन्न करता और वादी पित्तको दूर करता है बांसकी जड़ उष्ण है, यह बादी कफको दूर करती है।

५४ खशखश–इसके "तिलभेद, उरई, खज, तिल" आदि अनेक नाम हैं यह भारी, शोषक, रूखी और संग्राही है, वादीको जीतती है।

५५ अफीम–इसके 'आफुक, अहिफेन' आदि नाम हैं यह मादक, शोषक और संग्राही है, कफको दूर करती तथा बादी और पित्तको उत्पन्न करती है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे अभयादिनिरूपणं नाम नवमस्तरङ्गः ॥ ९ ॥

५६ सोंठ-इसके " शुंठी, विश्वौषध आदि नाम हैं यह चिकनी, कटु, उष्ण, भोजनमें हलकी, रुचिकर, पाचनी और पुष्ट है। आमवात कफ, बादी, संग्रहणी (कब्जी), वमन (कै), श्वास कास, शूल, हृदयरोग, श्लीपद, शोथ (सूजन), मलव्याधी अफरा और उदररोगोंको दूर करती है।

५७ अदरख-इसे ' आर्द्रक शृंगवेर ' आदि भी कहते हैं यह भेदन, दीपन, भारी और गुणमें सोंठके समान गुणवाली है।

५८ कालीमिर्च-इसके ' गोलमिर्च, मिर्च, मिर्चवल्लिज, आदि नाम हैं। यह कडवी, तीक्ष्ण, दीपन, उष्ण और रूखी है। कफ, वात, श्वास, शूल और कृमिको नष्ट करती और पित्तको उत्पन्न करती है। यह सूखी काली मिर्चके विषयमें कहा गया, हरी (गीली) मिर्चके गुण इनसे भिन्न हैं।

५९ पीपल-इसके ' पिप्पली, कृष्णा कणा ' आदि नाम हैं। यह दीपन, अत्युष्ण चिकनी, कडवी हलकी और रेचक है। पचनेमें स्वादिष्ठ, बल बढ़ाती, पित्त उत्पन्न करती, कफ, वात, श्वास कास, ज्वर और उदरपीडाको दूर करती है।

६० पीपलामूल-इसके ' कणामूल षड्ग्रंथिक ' आदि नाम हैं यह कटु, उष्ण, पाचन, हलका, दीपन और रूखा है। कफ वात और उदर पीडाको शान्त करता है।

६१ चित्रक-इसके 'हुतभुक्, व्याल, आदि नाम हैं यह रूखी उष्ण और पाचन है संग्रहणी, शोथ आदि रोगोंको दूर करती है।

६२ सौंफ-इसके ' शतपुष्पा, घोषा ' आदि नाम हैं यह हलकी, दीपनी और उष्ण है। ज्वर, कफ, वात और शूलादि रोगोंको दूर करती है।

६३ मेथी-इसके ' मेथिका ' आदि नाम हैं यह दीपनी और उष्ण है, हृदयको बल देती, विष्ठाके कृमि, शूल, गोला, कफ और वायुको नष्ट करती है।

६४ अजमोद-इसके ' अत्युग्रगंधा, मोदा ' आदि नाम हैं। यह कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन और उल्टी आदि रोगोंको दूर करती है।

६५ जीरा-इसके तीन भेद हैं शुक्लजीरा, कृष्णजीरा और कालिका जो कि वर्तमानमें ' सफेद जीरा, और स्याहजीरा, कलौंजी, इन

नामोंसे पुकारे जाते हैं। इन तीनोंके गुण समान ही हैं। जीरा रूखा, कड़ुआ, उष्ण, दीपन औरसंग्राही है। पित्तको उत्पन्न करता, वायु, कफ, अफरा, उल्टी मुखसे बहते हुए पानीको बंद करता है। इसके 'जीरण, जीरक' ये नाम भी हैं।

६६ अजवायन-इसके 'यवानी, दीप्यक' आदि नाम हैं। यह तीण्ण, उष्ण कटु, हलकी और पाचनी है रुचिको बढ़ाती, वात, कफ, अफरा, गुल्म शूल और कृमि रोगोंको दूर करती है।

६७ वच-इसके 'उग्रगंधा, षड्ग्रंथा' आदि नाम हैं यह उष्ण, तीखी और कटु है, वमन लाती, स्वरको सुन्दर करती, मिरगी, कफोन्माद, भूतबाधा और बादी इन रोगोंको दूर करती है।

६८ वायविडंग-इसके 'विडंग, जंतुहन' आदि नाम हैं। यह कटु, तीखी, हलकी, रूखी और उष्ण है। अग्निको बढाती शूल, अफरा, उदररोग कृमि, वायु, कफ, और विबंध (दस्त रुकना) को दूर करती है।

६९ धनियां-इसके "धना, धान्यक" आदि नाम हैं। यह कसैली, चियनी और पुष्ट नहीं है, परन्तु पचानेवाली तथा हलकी होती है, मूत्र बढाती है हृदयको बल देना, रेचनको बन्द करना, त्रिदोषको दूर करना, श्वास, कास, रुधिरकोप, प्यास, अर्श और कृमिरोगको दूर करना इसका कर्त्तव्य है।

७० हींग-इसके "हिंगु, बाह्लीक" आदि नाम हैं यह उष्ण, पाचन, तीक्ष्ण और पित्तवर्धक है। कफ, वात, शूल, अफरा और कृमिरोगको जीतता है।

७१ वंशलोचन-इसके 'वंशज, वैष्णवी" आदि नाम हैं। यह ठंढ़ा और मीठा है, प्यास, क्षयी ज्वर, श्वास, पित्त, रुधिरकोप और कामला इन रोगोंको दूर करता है।

७२ सैन्धानमक-इसके "सैन्धव, सिन्धुज" आदि नाम हैं। यह ठंढा, दीपन, पाचन और चिकना है, त्रिदोषको दूर करता है।

७३ सोंचरनमक-इसके "सौवर्चल," आदि नाम हैं। यह उष्ण हसका और अग्निप्रदीपक है। अन्नपर रुचि बढ़ाना शुद्ध डकार लाना, रेचक कराना, अफरा और उदरशूलको नष्ट करना इसका गुण है।

७४ सुहागा-इसके "टंकण" आदि नाम हैं। यह रूखा, उष्ण और अग्निकारक है, कफको दूर करता है और पित्तको उत्पन्न करता है।

७५ सर्वक्षार-जितने क्षार हैं वे सब अग्निसदृश उष्ण हैं, पाचन और भेदन हैं, वीर्य और दृष्टिको नष्ट करते हैं; रक्त पित्तको उत्पन्न करते हैं, रेचन, विबन्ध (दस्त बन्द होना), अफरा, पीनस, यकृत, प्लीहा, कफ, आम, अर्श गुल्म और ग्रहणी इन सब रोगोंको दूर करते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे शुण्ठ्यादिनिरूपणं दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

---

७६ कपूर-इसके "कर्पूर, स्फटिक, चन्द्र" आदि नाम ह। यह शीतल, पुष्ट, लेखन और हलका है, नेत्रोंको गुणकारक है, कफ, दाह दाद, और बिगडे हुए मुखके स्वादको दूर करता है।

७७ कस्तूरी-इसके "मृगमद, वेदमुख्या" आदि नाम हैं, यह दुर्गंध और वादीको दूर करती है।

७८ श्वेतचन्दन-इसके "चन्दन, तिलपर्ण" आदि नाम हैं, यह ठण्डा, रूखा, हलका, तीखा, और कडुआ है, प्रसन्नताको उत्पन्न करनेवाला, बलको बढ़ानेवाला, कफ, प्यास, पित्त, दाह और रुधिरकोपका बिनाशक है।

७९ रक्तचन्दन-इसके "उद्दिष्ट. लोहित" आदि नाम हैं, यह शीतल, भारी, मीठा और पुष्ट है, नेत्रोंको गुणकारक तथा प्यास, रुधिर, पित्त, ज्वर, फोडे और विषको नष्ट करनेवाला है।

८० केशर-इसके 'कुंकुम, चारु' आदि नाम हैं, यह उष्ण और कटु है; शिरके रोग, फोडे और कृमि आदि रोगोंको नष्ट करना, बलको बढाना, और रंगको सुन्दर बनाना इसका गुण है।

८१ जायफल-इसके "जातिफल, जातिसूत" आदि नाम हैं, यह उष्ण, हलका दीपन और पाचन है, हृदयको बल देना, स्वरको उत्तम बनाना; कफ, वात, उल्टी, कृमि, पीनस और खांसीको मिटाना इसका गुण है।

८२ जायपत्री-इसके "जातिपत्र, जातिपर्ण" आदि नाम हैं, यह हलकी और उष्ण है, कफ, कृमि, और बिषको दूर करती है।

८३ लौंग–इसके "लवंग, चंदनपुष्प, शेखर" आदि नाम हैं, यह हलकी, उष्ण दीपन और पाचन हैं। इसके सेवनसे नेत्र तथा हृदयमें शक्ति आती है, शूल, अफरा, कफ श्वास, कास, उल्टी और क्षयको दूर करती है।

८४ छोटी इलायची–इसके "एला, त्रुटि" आदि नाम हैं। यह कफ, श्वास, कास, अर्श और मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंको दूर करती है।

८५ दालचीनी–इसके "त्वच, वरांग" आदि नाम हैं। यह उष्ण, हलकी और स्वादिष्ट है, पितको उत्पन्न करती है, हृदामय, बस्ति (मूत्राशय) रोग, वादी, अर्श, पीनस, कृमि और मूत्ररोगको दूर करती है।

८६ तेजपात–इसके "पत्र, हलाह्व' आदि नाम हैं। यह उष्ण और हलका है। कफ और वातको नष्ट करता है।

८७ नागकेशर–इसके "नाग, आदि नाम हैं। यह उष्ण और हलकी है, आमको पचाती है, दुर्गंध, कुष्ठ, विसर्प, कफ पित्त और विष को मिटाती है।

८८ तालीसपत्र–इसके 'तालीस, धात्रीपत्र' आदि नाम हैं। यह उष्ण है, श्वास, कास कफ और वायु आदि रोगोंको मिटाता है।

८९ खस–इसके "उशीर, उरई" आदि नाम हैं। यह शीतल, पाचन और स्तम्भन है, कफ, पित्त, प्यास, रुधिर, विष, विसर्प दाह, शोथ और फोड़ोंको नष्ट करता है।

९० गूगल–इसके "गुग्गुल, शाल, निर्यास" आदि नाम हैं। यह उष्ण, रेचक, दीपन, रसायन, (नया हो तो) बलकारक और (पुराना) लेखन है। टूटी हुई अस्थि (हड्डी) को जोड़ने एवं हृदयको बल देनेमें अपूर्व शक्तिमान हैं, कफ, वात, फोडे, प्रमेह, लोई, बवासीर, शोथ, गांठ, गंडमाला और कृमिरोगको मिटाता है।

९१ चोक–इसके "चौर" आदि नाम हैं। यह ठंढा है कफादिकको नष्ट करता है।

---

१ यह वही पदार्थ हैं जिसके बहुधा उष्ण ऋतुमें पंखे, पर्दे और टट्टियां आदि बनाई जाती हैं।

९२ कचूर-इसके "शठी, पलाशी" आदि नाम हैं। यह उष्ण और दीपन है, कुष्ठ, अर्श, व्रण, कास, श्वास, गुल्म, वात, कफ और कृमि-रोगको मिटाता है।

९३ पद्माख-इसके "पद्मकाष्ठ, पद्मक" आदि नाम हैं। यह ठंढ़ा है, पित्त, दाह, विस्फोटक, कुष्ठ, श्लेष्मा, रुधिरकोप और पित्तको दूर करता है।

९४ गोलोचन-इसके "गोरोचन, गौरी" आदि नाम हैं। यह ठण्ढा है इस लिये रुधिरकोपको मिटाता है और गिरते हुए गर्भको बचाता है।

९५ कमल-इसके "पद्म, नलिन, अरविंद" आदि नाम हैं। यह ठण्ढा है। कफ, पित्त, दाह और प्यासको दूर करता है।

९६ कमलगट्टा-इसके "पद्माक्ष" आदि नाम हैं। यह ठण्ढा, ग्राही और बलकारक है, गर्भस्थापन करना कफ, वातको बढ़ाना पित्त, रुधिर और दाहको दूर करना इसका गुण है।

९७ सिंघाड़ा-इसके "शृङ्गाटक, जलफल" आदि नाम हैं, यह ठण्ढ़ा, भारी, स्वादिष्ठ, ग्राही और बलकारक है, वीर्य, वादी और कफको उत्पन्न करता है पित्त, रुधिरकोप और दाहको शांत करता है।

९८ गुलाब--इसके "कुंजिका, भद्रतरुणी, कुंजसेवती, पाटल" आदि नाम हैं. यह ठंढ़ा, संग्राही और हलका है. हृदयको बल देता, वीर्य उत्पन्न करना, तीनों दोष, रुधिरको जीतना रंगको सुन्दर करना और दुर्गंधको दूर करना इसका स्वभाव है,

९९ तुलसी—इसके 'तुलसिका, सुरसा' आदि नाम हैं. यह उष्ण, तीक्ष्ण, कड़वी और दीपनी है, दाह और पित्तको उत्पन्न करतीहै, कुष्ठ, कफ, वात और पार्श्वशूल आदिरोगोंको दूर करती है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे सुगंधादिवर्गनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः॥ ११ ॥

---

१०० सोना-इसके 'सुवर्ण, कंचन' आदि नाम हैं, यह ठंढ़ा, पुष्ट, बलकारक; भारी रसायन, मीठा, लेखन, तीक्ष्ण और कसैला है, कांतिको बढ़ाता है विषोन्माद, त्रिदोष,ज्वर और शोक को मिटाता है।

१०१ चांदी-इसके "रूपा' रूप्यक, रजत" आदि नाम हैं,यह ठण्ढ़ी, रेचक, रसायन, लेखन, कसैली, खट्टी, (पचनेके समय) मीठी और

चिकनी है, वातपित्तको हरण करना, धातुको बढ़ाना और तरुणताको स्थिर रखना इसका गुण है।

१०२ अभ्रक--इसके "स्वच्छ" आदि नामहैं, यह ठण्ढा और बलप्रद है, कुष्ठ, प्रमेह और त्रिदोषको दूर करता है।

१०३ गंधक--इसके "गंध सौगन्धिक" आदि नाम हैं, यह उष्ण है, कुष्ठ, क्षयी, कफ और वात आदिको दूर करता है।

१०४ पारा--इसके "पारद" आदि नाम हैं, यह उष्ण हैं-कृमि और कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करता है।

१०५ गेरू-इसके "गरिक, रक्तपाषाण" आदि नाम हैं, यह दाह, पित्त, रुधिरकोप, कफ, हिचकी, विष और उलटीको दूर करते हुए नेत्रोंको गुणकारक है।

१०६ नीलाथोथा--इसके "हरियूथा, तुल्य"आदि नाम हैं, यह नेत्रोंको लेखन और भेदन है, कुष्ठ, खुजली, विष, कृमि और कफ आदिको दूर करता है।

१०७ सुरमा--इसके "सौवीर' आदि नाम हैं, यह ठंढा और नेत्रोंको हितकारी है, कफ, वात और पित्तको शमन करता है।

१०८ शिलाजीत--इसके "शिलाजतु" आदि नाम हैं, उष्ण और कटु है मूत्रघात, प्रमेह बबासीर, कुष्ठ, उदररोग, पांडुरोग, क्षयी और श्वास, कास आदि रोगोंको नष्ट करता है, इसका विधिपूर्वक निकाला हुआ सत्त्व निर्बलताको शीघ्र नाश करके वीर्यको बढ़ाता है।

१०९ रसोत--इसके "रसांजन" आदि नाम हैं यह उष्ण और कटु है, कफ, मुखविकार, नेत्रविकार और फोड़ोंको दूर करता है।

११० फिटकरी--इसके "स्फटिका" आदि नाम है, यह कसैली और पित्त, कफ, विष, फोड़े चित्र और विसर्प इत्यादि रोगोंको नष्ट करती है।

१११ मोती--इसके "मौक्तिक" आदि नाम हैं, यह शीतल मीठी और पुष्ट है, विषादि रोगोंको नष्ट करती है।

११२ शंख--इसके"कम्बु" आदि नाम हैं, यह शीतल है, नेत्रोंको लाभकारी तथा शूल, पित्त, कफ और रुधिरकोपको नष्ट करता है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे सुवर्णादिवर्गनिरूपणं नामद्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

११३ बड़--इसके "बटवृक्ष, वट, रक्तपद" आदि नाम हैं. यह शीतल और ग्राही है. कफ, पित्त और फोड़ेको दूर करता है (इसका दूध वीर्यको दृढ़ करता) और बल बढाता है।

११४ पीपल--इसके "श्यामल, अश्वत्थ" आदि नाम हैं यह ठंडा है, कफ पित्त और रुधिरकोपको दूर करता है।

११५ गूलर--इसके "उदुम्बर, जन्तुवृक्ष" आदि अनेक नाम हैं. यह शीतल और भारी है. रंग को सुन्दर बनाता है, पित्त, कफ और रुधिरकोपको जीतता है; इसका दूध पुष्ट है, शोथ तथा रुधिरजन्यग्रंथिको बैठाता है।

११६ लसोढा--इसके "ल्हेस्वा, श्लेष्मान्तक, कर्बुदार" आदि नाम हैं. यह कुछ उष्ण और पुष्ट है. कफ, छाले, विस्फोटक, ग्रह्म, विसर्प, कुष्ठ, बादी, पित्त क्षयी और रुधिरकोपको जीतता है।

११७ खैर--इसके "खदिर" आदि नाम हैं. यह शीतल है. दांतोंको गुणकारी है, कृमि, प्रमेह, ज्वर, कुष्ठ, शोथ आम, पित्त, रुधिर, पांडु और कफको नष्ट करता है, इसका गोंद मीठा और वीर्य उत्पन्न करता है, इसक सार (जिसे खैरसार कहते हैं) बलप्रद है, बिगड़ा हुआ मुख, कफ और रुधिरको जीतता है।

११८ बम्बूल-इसके "बमूर, बबूल किंकराल" आदि नाम हैं. यह ग्राही है, कफ, कुष्ठ, कृमि विष और रक्तपित्तको जीतता है।

११९ पलाश--इसके "छिवला, किंशुक, किर्मी, खकरा" आदि नाम हैं. यह उष्ण, दीदन और पुष्ट है, व्रण' गुल्म, ग्रहणी, अर्श कृमि इत्यादि रोगोंको शमन करता है और टूटी हुई हड्डीको जोडता है। इसका पुष्प शीतल और ग्राही है, कफ, पित्त और रुधिरजन्य कष्ट दूर करता है, इसका फल हलका और उष्ण है, प्रमेह, अर्श और कृमि रोगको मिटाता है।

१२० धवा--इसके "धावडा, धव और नंदितरु" आदि नाम हैं. यह ठंढा है, प्रमेह, पांडु, रुधिर, पित्त और कफको दूर करता है.

१२१ सेमर--इसके "शाल्मलि" आदि नाम हैं यह ठंढा और पुष्ट है, रुधिर और पित्तको जीतता, यह वृक्ष तीन चार प्रकारका है।

१२२ शमी--इसको मारवाड़ प्रान्तमें "खेजड़ी" कहते हैं इसके तुंगी आदि नाम हैं, यह ठंढी और हलकी है, श्वास, कुष्ठ अर्श और कफको दूर करती है, इसका फल रूखा है, पित्तका उत्पादक और बालों का नाशक है ।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे वटादिवर्गनिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

---

१२३ मुनक्का--इसके "द्राक्षी, मधुफल, गोस्तनी" आदि नाम हैं। यह ठंढ़ा और भारी है, नेत्रोंको गुणकारी, बलका वर्द्धक, रेचन शुद्ध कर्त्ता, प्यास, ज्वर, श्वास, उलटी, वातरक्त, कामला मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त, संमोह, दाह, शोष, मदात्यय और आमदोषका नाशक है।

१२४ अंगूर–यह कच्चा द्राक्षा ही है खट्टा और भारी है, मुनक्का (पक्का द्राक्षा) के गुणके समानही इसके भी गुण हैं परन्तु यह रक्तपित्तको उत्पन्न करता है।

१२५ किशमिश–इसके "अबीजा, लघुद्राक्षा" आदि नाम हैं, यह गोस्तनी (द्राक्षा) के समान ही गुणवाला है परंतु प्रायःइसमें बीज नहीं रहते इसतरह भावप्रकाशमें पूर्वखण्ड प्रथमभागमें लिखा है।

१२६ जंगलीदाख–यह भी द्राक्षाके भेदमें ही है, हलका और कुछ खट्टा रहता है, कफ और अम्लपित्तको उत्पन्न करता है।

१२७ आमवृक्ष–इसके "आम्र, चूत" आदि नाम हैं, यह ग्राही है, प्रमेह, रुधिर पित्त और फोडोंको दूर करता है।

१२८ कैरी–आमका कच्चा फल (आंबिया) यह अत्यन्त खट्टी और रूखी है, त्रिदोष तथा रुधिरकोपको जीतती है।

१२९ आम–आमका पक्का फल मीठा, पुष्ट, चिकना; भारी, ठंडा और रुचिकारक है, यह हृदयको सुखकारी, बलका वर्द्धक, बादीको दूर करनेवाला, वर्णको सुन्दर करनेवाला, पित्तका शामक, मांस और वीर्यका वर्द्धक है।

१३० अमचूर--कच्चे आमको सुखाके जो अमचूर बनाया जाता है वह भेदन है, कफ और बादीको उत्पन्न करता है वृक्षमें पका, घासमें

---

१ अबीजान्या स्वल्पतरागोस्तनीसदृशोगुणः ॥ अबीजा–ईषद्बीजाकिसमिस इतिलोके, इत्युक्तं भावप्रकाशे पूर्वखण्डे प्रथमभागे।

पका, पत्तोंमें पका, अधपका खट्टामीठा युक्त केवल आमका रस दूध शक्कर आदि पदार्थोंसे योजित; इत्यादि प्रकारसे आमके उपयोगमें उसके गुण कुछके कुछही एक दूसरेसे भिन्न हो जाते हैं, यह आमका विषय संक्षिप्ततासे वर्णन किया, यदि पूर्णरूपसे विस्तार देखना हो तो राजनिघंटु या भावप्रकाश देखो ।

१३१ जामुन—इसके "जम्बूफल" आदि नाम हैं. यह स्वादिष्ट विबंधक और भारी है, छोटी जामुन दाहको नाश करती और रुचिको बढ़ाती है, इसके दो भेद हैं, राजजम्बूफल और क्षुद्रजम्बूफल "जिन्हें" राज-जामुन और कठ जामुन" भी कहते हैं राज जामुन बड़ी और कठ जामुन छोटी होती है; गुणमें समान ही हैं,

१३२ नारियल—इसके "नारिकेल, श्रीफल' आदि नाम हैं, यह ठंडा है, विलम्बसे पचनेवाला, मूत्राशयको शुद्ध करनेवाला, रुधिर, दाह, पित्तको दूर करनेवाला है, कच्चे नारियलका दूध ठंडा हलका और दीपन है वीर्यवर्द्धक और बलको उत्पन्न करनेवाला है ।

१३३ केला—इसके "कदलीफल, रम्भाफल आदि नाम हैं । यह शीतल,विबंधक, भारी,चिकना, और कफोत्पादक हैं,पित्त रुधिर, प्यास, दाह, घाव, क्षयी और बादीको जीतता है ।

१३४ अनार--इसके "दाडिम" आदि नाम हैं. यह दीपनहै, भोजनपर रुचि बढानेवाला, बलको उत्पन्न करनेवाला है, यह दो प्रकारका है १ मीठा, २ खट्टा मीठाअनार—त्रिदोषको और खट्टा बादी कफ तथा दूषित रुधिरको दूर करता है।

१३५ बदाम--इसके बादाम, सुफल" आदि नाम हैं, यह उष्ण और चिकना है, बलबर्द्धक वीर्यका उत्पादन करनेवाला और बादीको दूर करनेवाला है ।

१३६ पिस्ता--इसके "निकोचक, चारुपाल" आदि नाम हैं; यह उष्ण, भारी और पुष्ट है, बादीको दूर करता है और पित्तको बढाता है ।

१३७ अञ्जीर -इसके"गजल" आदि नाम हैं. यह शीतल और स्वदिष्ट है, पित्त, रुधिर और बादीको जीतता है ।

१३८ मीठा नींबू--इसके "निम्बुक" आदि नाम हैं, यह स्वादिष्ट और भारी है, बादी, पित्त रक्त, शोष, अरुचि तृष्णा, उलटी विषजन्यरोग और जी मचलाना आदि रोगोंको दूर करता है।

१३९ खट्टा नींबू--यह खट्टा, हलका, पाचन और दीपन है बादीको जीतता है।

१४०इमली-इसके "अम्बिका, चुक्रिका" आदि नाम हैं, कच्ची इमली भारी है, बादीको दूर करती है और पित्त कफ,रुधिर प्रकोपको बढ़ाती है, पक्की इमली-दीपनी, उष्ण रूखी और रेचक है, बादीको दूर करती है, सूखी इमली-बलकारक और हलकी है, श्रम, भ्रांति और प्यास आदिको दूर करती है।

१४१ सुपारी-इसके 'क्रमुक' पूग, पूंगीफल, आदि नाम हैं, यह भारी, ठंढी, रूखी, कसैली दीपनी और रुचिकारक है, कफ पित्तको जीतती है, मूर्छा लाती है और मुखके बिगडे हुए स्वाद को सुधारती है।

१४२ पान-इसके "ताम्बूली, ताम्बूलल्ली, नागिनी और नागवेलपत्र" आदि नाम हैं यह उष्ण, हलका तीक्ष्ण, कसैला रेचक और रुचिकारक है, कामदेव, रुधिर, बल और पित्तको बढ़ाता है, कफ, मुखदुर्गन्ध, मल, बादी और श्रमको दूर करता है।

१४३ चूना-उसे चूर्ण भी कहते हैं, कफ और बादीको नष्ट करता है।

१४४ कत्था-इसके "खदिर, खैर" आदि नाम हैं, यह कफ और पित्तको दूर करता है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे द्राक्षादिवर्गनिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

---

१४५ कुम्हड़ा-इसके "कूष्मांड, कोहला" आदि नाम हैं. यह ठंढा और भारी है, पित्त, वात और रक्तको जीतता है।

१४६ ककड़ी-इसके "कर्कटी, खीरा" आदि नाम हैं यह ठंढी और रूखी है, पित्तको दूर करती है।

१४७ तरबूज- इसके "कलिंग, मतीरा, कलिंदा" आदि नाम हैं. यह ठंढा, भारी और ग्राही है. पित्त और वीर्यका नाश करता है (पका हुआ) कुछ उष्णता लाता है (क्षारयुक्त होनेसे) पित्तको उत्पन्न करता है और कफ, वातको दूर करता है, विशेषकर इसके अधिक खानेसे नपुंसकता प्राप्त होती है।

१४८ घियातुरई--इसके "राजकोशातकी, मिष्ट, गिलकियां, रिसआ" आदि नाम हैं. यह शीतल है. ज्वर कफको दूर करती और बादीको उत्पन्न करती है।

१४९ बड़ी तुरई--इसके "महाकोशातकी" आदि नाम हैं यह पित्त और बादीको दूर करती है।

१५० भांटा--इसके "वृंताक, वार्तिक, बैंगन" आदि नाम हैं, यह उष्ण, तीक्ष्ण, दीपन और हलका है, पित्तको उत्पन्न करनेवाला वीर्यको बढ़ानेवाला हृदयको बल दाता, कफ, और बादीको दूर करता है, श्वेत बैंगन उक्तगुणसे अनुकूल ही है परंतु बवासीरवालेको बड़ा गुणी है।

१५१ कंरेला -इसके "कारवेल्ल, कटिल्ल" आदि नाम हैं. यह ठंढा हलका, भेदी और तीक्ष्ण है, पित्त, रुधिर, कमला, पांडु, कफ प्रमेह और कृमिरोगको करता दूर है।

१५२ ककोडा-इसके"काकोटकी"आदि नाम हैं। यहकरेलाके समान गुणकारी है. कुष्ठ और अरुचिको दूर करता है।

१५३ चौलाई--इसके "तण्डुलिया,, मेघनाद" आदि नाम हैं, यह ठंढी, हलकी और रूखी है पित्त कफ तथा रक्तको बढ़ाती है।

१५४--फोग--इसके "भृंगी, सूक्ष्मपुष्प" आदि नाम हैं, यह रेचन, विबंधक और ढंढा है, रक्तपित्त और कफ दूर करता है, यह मारवाड़ देशमें उत्पन्न होता है।

१५५ परवर--इसके "पटोल, पांडुक" आदि नाम हैं यह चिकना, उष्ण, पाचन और हलका है. हृदयको बलदायक, अग्निउद्दीपक बादी, रुधिरकोप, ज्वर त्रिदोष और कृमिको दूर करता है।

१५६ गाजर--इसके 'गृञ्जन, कटुक' आदि नाम हैं. यह तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, हलका और संग्राही है, रक्तपित्त, बवासीर संग्रहणी, कफ और बादीको दूर करता है।

१५७ मूली- इसके 'मूलक, हस्तिदती' आदि नाम हैं, यह उष्ण हलकी और पाचन है, रुचिको बढ़ाती है बादीको, उत्पन्न करती है, त्रिदोष. श्वास, कास, नेत्ररोग, कण्ठरोग और पीनसको नष्टकरती है।

१५८ मुंगना--इसके 'शोभांजन, शिग्रु, सुर्जना, 'सहँजना' आदि नाम हैं, यह उष्ण और हलका हैं, कफ, बादीको जीतता है, इसकी फली मीठी है, पित्तको दूर करती है।

१५९ लहसन- इसके 'उग्रगन्धा, लसुन' आदि नाम हैं। यह चिकना. उष्ण, पाचन, रेचक और भारी है टूटी हुई हड्डीको जोड़ता है, पित्तरुधिरको उत्पन्न करता है. कफ, श्वास, कास गुल्म, ज्वर, अरुचि, शोथ, प्रमेह, अर्श, कुष्ठ, शूल, और बादीको दूर करता है।

१६० कांदा'--इसके 'पलांडु, दुर्गंध' आदि नाम हैं. प्रसिद्ध नाम 'पियाज' यह भी लहसनके सदृश गुणकारी है पर उतना उष्ण नहीं, कफको उत्पन्न करता है।

१६१ सूरन--इसके 'कंदल, सूरण, भूकंद, जमीकंद' आदि नाम हैं। यह दीपन, रूखा, कसैला, कटु, विषहरा और रुचिकारक है, खुजलीको उत्पन्न करता है, अर्श (बवासीर = गुदारोग) को दूर करता है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे कूष्माण्डादिवर्गनिरूपणं नाम पञ्चदशस्तरंगः ॥ १५ ॥

---

१६२ शीतल जल--इसके "पानी, जीवन, नीर" आदि नाम हैं यह ठंढा है. हृदयको बल देता है. पित्त, विषभ्रम. दाह, अजीर्ण, परिश्रम, उलटी, मद (उन्मत्तता), मूर्च्छा और मदात्ययको दूर करता, है परंतु उदररोग, कंठरोग, नूतनज्वर, संग्रहणी, पीनस, आध्मान, हिचकी, गुल्म, विद्रधि, कास, प्रमेह, अरुचि, श्वास, पांडु, बादी, पार्श्वशूल और स्नेह (घृत खोपरादि जितनी वस्तु खाने पीने) में शीतल जल लाभकारी नहीं, वरन् अति हानिकारक है। वर्षा, तालाब, कूप, नदी, झरना और बावडी आदिके जलका गुण न्यारा न्यारा है। इसका विस्तीर्ण वर्णन राजनिघंटुमें देखो।

१६३--उष्ण जल जो कि अग्निसंस्कारसे उष्ण किया जाता है, यह दीपन, पाचन, हलका और उष्ण है, मूत्राशयको शुद्ध करता है.

पार्श्वशूल (पसलीकी पीडा), पीनस, आध्मान, हिचकी, बादी और कफको दूर करता है, रोगीको उष्ण जल पीनेसे कुछ हानि नहीं क्योंकि पानी प्राणीमात्रका जीवन मूल है। बहुधा वैद्य रोगीको पानी देना वर्जित करते हैं, यह पूर्ण भूल है. प्रत्येक रोगपर किसीमें ठण्ढा, किसीमें उष्ण, किसीमें औषध योजित आदि नानाप्रकारके अनुपानसे प्रति रोगमें रोगीको जल देना ही चाहिये, नहीं तो वह बेहोश होकर मर जायगा।

१६४ दूध–इसके दुग्ध, प्रस्रवण, क्षीर, पयस्' आदि नाम हैं. यह ठण्ढ़ा, मीठा, चिकना, रसायन जीवन और भारी है, बल, बुद्धि, वीर्यको बढ़ाता है, बादी, पित्तको हरता है रक्तविकार, श्वास क्षयी, अर्श और भ्रमको दूर करता, बालक, वृद्ध, दुर्बल और विषयासक्त पुरुषोंके लिये तो अति ही लाभदायक है, उपरोक्त गुण साधारण दशासे वर्णन किये गये हैं, यदि तुमको गौ. भैंस, भेडी, बकरी, हथिनी, ऊँटनी, घोडी आदि पशुजाति तथा स्त्रीके दुग्धका गुण पृथक् २ विचारना हो तो बृहन्निघण्टु देखो।

१६५ दही–इसके 'दधि' आदि नाम हैं। यह उष्ण, दीपन, चिकना, कसैला, ग्राही और पचनेके समय खट्टा है, पित्त, रुधिर, शोथ और कफको उत्पन्न करता है मूत्रकृच्छ्र प्रतिश्याय (सर्दीसे नाक बहना), शीतांग, विषमज्वर, अतीसार, अरुचि और दुर्बलताको दूर करता है। मीठा दही बादी और पित्तको जीतता है. खट्टा दही पित्त रुधिर और कफको उत्पन्न करता है, दही चार प्रकारका है, १ मीठा, २ खट्टा मीठा, ३ खट्टा और ४ अति खट्टा इन सबोंके गुण जुदे जुदे हैं, यह दहीका सामान्य विवरण हमने लिख दिया, यदि विशेष देखना हो तो बृहन्निघण्टु आदि ग्रन्थ देखो।

१६६ मही–इसके "छांछ, मट्ठा, तक्र" आदि नाम हैं। यह ग्राही (दस्त रोकनेवाला): कसैला, खट्टा, मीठा, दीपन, हलका, शीतोष्ण, (मातदिल) बलाढच, रूखा और तृप्तिकारक है, बादी, शोथ, विष उल्टी, पसीना, विषमज्वर, पाण्डु, मेदोरोग, ग्रहणी, अर्श, मूत्रग्रहण, (पथरीका रोग), भगन्दर प्रमेह, गुल्म, अतीसार, शूल, प्लीहा, कफ, कृमि, श्वित्रकुष्ठ और तृष्णा आदि रोगोंके दूर करता है, अनुपान हरएक रोगोंके भिन्न २ होते हैं ।

१६७ मक्खन--इसके "हैयंगबीन, नवनीत, माखन, मसका" आदि नाम हैं. यह हलका ठंढ़ा, मीठा, ग्राही कुछ कसैला तथा खट्टा है और पुष्ट भी है, पित्त, वायुको देनेवाला, अग्निकोबढ़ानेवाला, नेत्रोंको ज्योति देनेवाला और क्षयी, अर्श, फोडे और खांसीको नष्ट करता है, उक्त गुण तत्क्षणो मक्खनके हैं, यही मक्खन अधिककाल बीतनेपर भारी हो जाता है मेदको उत्पन्न करता है और शोथको दूर करता है बालकोंके लिये तो विशेषकर पुष्टि और बल देकर अमृतके सदृश गुण दाता होता है, केवल दूधसे निकाला हुआ मक्खन अतिचिकना, टण्ढ़ा ग्राही, मीठा और बलाढय होता है, नेत्रोंको हित करता है और रक्त-पित्तको जीतता है.

१६८ घी--इसके "आज्य, हविष्, घृत" आदि नाम हैं यह रसायन, मीठा, भारी, ठंढा, दीपन और चिकना है; नेत्रोंको ज्योतिप्रद तथा विषको हरनेवाला, बादी; पित्त, उपावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, अफरा आदिको दूर करता है. कांति, पराक्रमका वर्द्धक और कफको उत्पन्न करनेवाला है.

१६९ तेल--इसके "तैल" आदि नाम हैं. यह उष्ण, भारी, पुष्ट, मीठा और बलवर्द्धक है, रंगको स्वच्छ करता है, कफ, वायु, रक्त, पित्त, कान, योनि, मस्तक और नेत्रोंकी पीडाका हरण करता है।

१७० मदिरा--इसके "मद्य, हाली, सुरा," आदि नाम हैं. यह रेचक (दस्त लानेवाली), रोचक (रुचि बढ़ानेवाली), दीपन, विदाही (दाह उप-जानेवाली), तीक्ष्ण और मादक है. मल मूत्रको उत्पन्न करती है, कफ बादीको दूर करती है. विधिपूर्वक भोजनके साथपीवे तो लाभदायक है, विपरीत क्रियासे पीवे तो रोग पैदा होते हैं और अतिशय पीवे तो विषसदृश हानिकारक होती है।

१७१ गोमूत्र--यह शुद्ध, तीक्ष्ण, रूखा, दीपन, कटु और भेदी है, पित्तको उत्पन्न करनेवाला, हृदयको बल दायक और बादी अर्श गोला, कफ, कृमि, कुष्ठ, पाण्डु, अफरा, विष, शूल और अरुचिको दूर करता है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे जलादिवर्ग निरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

१७२ मिश्री-इसके "सिता" आदि नाम हैं, यह मीठी, ठण्ढ़ी, भारी और ग्रहणी है, बलको बढाती है, पित्त और बादीको दूर करती है।

१७३ मधु-इसके "शहत" आदि नाम हैं, यह ठंढा, हलका और मीठा है, कुष्ठ, अर्श, कास, पित्त, रक्त, कफ, प्रमेह, प्यास, उल्टी, दाह और अतिसार आदि रोगोंको दूर करता है, यह चार प्रकारका होता है, जिसमें प्रत्येकके गुण एक दूसरेसे भिन्न हैं, इस विषयमें अधिक बोध चाहो तो राजनिघंटु देखो।

१७४ नयागुड़-भारी, स्वादिष्ठ, रेचक ह, वात, पित्त, अग्निको बढाता है, पुराना गुड़ हलका पथ्य और पुष्ट है, बलको बढाता है; मूत्र रक्तको शुद्ध करता है।

१७५ शक्कर-इसके "शर्करा, खांड, चीनी, बूरा" आदि नाम हैं यह मीठी, पुष्ट और रुचिकारक है, शुद्ध होने से मिश्रीके समान गुण देती है, बलको बढाती और कफको उत्पन्न करती है

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे तण्डुलादिवर्गनिरूपणंनाम सप्तदशस्तरंगः ॥१७॥

१७६चावल-इसके "तण्डुल, शाली" इत्यादि नाम हैं, यह ठंढा और हलका है, पित्तको दूर करता है, मूत्र और कफको उत्पन्न करता है, ये कई प्रकारके होते हैं, पर साधारण प्रकारसे इसके उक्त गुण हैं।

१७७ गेहूँ-इसके "गोधूम" आदि नाम हैं, यह मीठा, ठंढा और भारी है, वात, पित्तका नाशक और कफ तथा वीर्यका पैदा करनेवाला है।

१७८ दाल-जिन अन्नोंके समान दो दल हो जाते हैं उन्हें "बैदल" कहते हैं जिन अन्नोंकी दाल बनाई जाती है वे बहुधा बादीको उत्पन्न करनेवाले होते हैं, दाल सर्वथा बादीको उत्पन्न करती है, कफ पित्तको हटाती और मलमूत्रको बद्ध करती है।

१७९ मूँग-इसके "मुद्ग" आदि नाम हैं यह ठण्ढा, हलका और ग्राही है कफ पित्तको दूर करता है।

१८० उर्द-इसके "माष" आदि नाम हैं यह उष्ण और पुष्ट है, बादीका विनाशक, पि[illegible] कफका उत्पादक और वीर्यका बढ़ानेवाला है।

१८१ चना-इसके "चनक" आदि नाम हैं यह ठंढा है रक्त, पित्त, कुष्ठ और कफका विनाशक और बादीका उत्पादक है।

१८२ तिल-इसके "तैलफल" आदि नाम हैं, यह ठंढा ग्राही और भारी हैं, बादीका विनाशक तथा कफ पित्तका उत्पादक है।

१८३ जौ-इसके " यव " आदि नाम हैं यह मीठा और ठंढा है, पित्त कफ, और रुधिरको दूर करता है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे तण्डुलादिवर्गनिरूपणं नाम अष्टादशस्तरंगः ॥१८॥

---

१८४ खिचड़ी-इसके "कृशरा" आदि नाम हैं यह भारी पुष्ट, ग्राही है इसका पाक देरमें होता है, कफ, पित्तको उत्पन्न करती हैं और बादीको दूर करती है, चावल और दालके संयोगको खिचड़ी कहते हैं।

१८५ खीर-इसके "क्षीर, क्षिप्रा" आदि नाम हैं यह पुष्ट और भारी है इसका पाक देरमें होता है, खीरसे बलवृद्धि और वीर्यकी उत्पत्ति होती है, यह मल को रोकती है, पित्त, रक्त, प्यास अग्नि और बादीको दूर करती है. दुग्धमें डालकर चावल चुराये जाते हैं वही खीर है,

१८६ घेवर-इसके "घृतपूर" आदि नाम हैं, यह भारी है, हृदयको बलदायक, पित्त और बादीका विनाशक, प्राणका पोषक बलवर्द्धक और घावको भरनेवाला है।

१८७ मालपुआ-इसके "अपूप" आदि नाम हैं,यह भारी है, हृदयको बल देता है, पित्त और बादीको दूर करता है।

१८८ लप्सी-इसे "लप्सिका" भी कहते है, यह भारी है बादी पित्त को नष्ट करती है।

१८९ फेनी-इसके 'फेनिका, पुटिनी' आदि नाम हैं, यह हलकी है, वात पित्तको दूर करती है।

१९० लड्डू-इसके "मोदक" आदि नाम हैं। यह बलकारक है विलंबसे पचनेवाला और पित्तबादीका विनाशक है।

१९१ जलेबी--इसके "कुण्डलिया" आदि नाम हैं। यह पुष्ट है। कांति, बल, हृदयकी प्रौढ़ता, धातुको बढ़ाती है और इन्द्रियों को तृप्त करती है।

१९२ सत्तू--जिस अन्नका हो उसके सदृश गुणकारी है। परन्तु विशेष करके यह प्यास, दाह, उलटीको दूर करता है। विशेष भेद राज निघण्टुमें देखो।

१९३ घूँघरी--यह भारी, रूखी है, बादीको उत्पन्न करती है, गेहूँ, चना आदि अन्नको विना पीसेही उष्ण जलमें चुरालेनेसे घुँघरी बनती है।

१९४ चिवडा--इसके "चूरा, पोहा" आदि नाम हैं यह भारी बलकारक है, बादीको दूर करता है, कफको उत्पन्न करता है, उबले हुए धानेको कूटकर बनाते हैं।

१९५ धानी--यह रूखी, रेचन, विबंधक भारी है। कफको दूर करती है, धान यह आदि अन्नको भूँजवालोग भाडमें भूँजकर धानी बनाते हैं।

१९६ लाही--इसके "लाजी, लाई" आदि नाम हैं। यह हलकी ठण्ढी बलकारक है। पित्त कफ, उलटी अतिसार, दाह, रुधिर, प्रमेह और प्यासको दूर करती है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे कृशरादि वर्गनिरूपणं नामैकोन-विंशस्तरंगः ॥ १९ ॥

---

१९७ द्वयार्क--(दो आंकड़ा) १ श्वेत आंकड़ा, २ लाल आंकड़ा।

१९८ द्विकनेर--(दो कनेर) १ श्वेत कनेर, २ लाल कनेर।

१९९ द्विक्षार--(दो खार) १ सज्जीखार, २ जवाखार।

२०० त्रिफला--(तीन फल) १ हर्रा २ बहेडा, ३ आँवला।

२०१ त्रिकुट--(तीन कटु) १ सोंठ, २ मिर्च (काली); ३ पीपल।

२०२ त्रिजात--(तीन जात) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात।

२०३ त्रिसुगंध-(तीन सुवास) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात।

२०४ त्रिक्षार–(तीन क्षार) १ सज्जी, २ जवाखार, ३ सुहागा ।

२०५ चतुर्जात–(चार जात) १ इलायची, २ दालचीनी ३ तेजपात, ४ नागकेशर ।

२०६ चतुर्बीज–(चार दाने) १ कालीजीरी, २ मेथी, ३ अजवायन, ४ असाला (हाला)

२०७ चतुरुष्ण–(चार उष्ण १ सोंठ,२ मिर्च, ३ पीपल, ४ पीपलामूल ।

२०८ चतुरम्ल–(चार खटाईं) १ अम्लवेत, २ इमली, ३ जंभीरी ४ नींबू ।

२०९ बला चतुष्टय–(चार बला) १ बला, २ नागबाला, ३ अतिबला, ४ महाबला ।

२१० लघुपञ्चमूल–(छोटे पांच) १ सालपर्णी, २ पृष्ठपर्णी, ३ बड़ी कटियाली, ४ छोटी कटियाली, ५ गोखरू ।

२११ बृहत्पञ्चमूल–(बड़े पांच) १ बेलकी गिरी, २ अरणीमूल, ३ पाटली मूल, ४ काश्मीरी मूल, ५ श्योनाक मूल ।

२१२ पञ्च कोल–(पांच कोल) १ पीपल, २ पीपलामूल, ३ चित्रक, ४ सुंठी, ५ चव्य ।

२१३ पंचक्षीरवट–(पांच दूधके वृक्ष) १ न्यग्रोध, २ उदुंबर, ३ अश्वत्थ, ४ पारिस; या ५ प्लक्ष ।

२१४ पंचाम्ल–(पांच खटाई) १ अम्लवेत, २ इमली, ३ जम्भीरी, ४ नींबू, ५ बिजौरा ।

२१५ पंचलवण–(पांच नमक) १ साम्भर, २ सेंधा, ३ सोंचर, ४ समुद्रीय, २ बिड ।

२१६ पंचगव्य–(गौके पांच रस) १ गोमूत्र, २ गोबर ३ गोदुग्ध, ४ गोदधि, ५ गोघृत ।

२१७ पंचामृत–(पांच अमृत) १ गोदुग्ध २ गोदधि, ३ गोघृत, ४ मधु, ५ शर्करा ।

२१८ षडुष्ण–(छः उष्ण) १ पीपल, २ पीपलामूल, ३ चव्य, ४ चित्रक, ५ सोंठ, ६ मिर्च ।

२१९ सप्तोपविष–(सात उपविष) १ अर्कदुग्ध, २ थूहरदुग्ध ३ कलिहारी, ४ दोनों कनेर, ५ धतूर, ६ कुचला. ७ वत्सनाग.

२२० अष्टवर्ग-(आठ वर्ग) १ जीवक, २ ऋषभक, ३ मेदा, ४ महा-मेदा, ५ काकोली, ६ क्षीरकाकोली, ७ ऋद्धि, ८ वृद्धि ।

२२१ क्षाराष्टक-(आठ खार) १ पलाश, २ थूअर, ३ इमली, ४ सज्जी, ५ आंधाझार (अपामार्ग) ६ आकड़ा; ७ तिलनाल, ८ यव ये क्षारवस्तु हैं ।

२२२ नवविष-१ वत्सनाग, २ हारिद्रक, ३ सक्तुक, ४ प्रदीपन ५ सौराष्ट्रिक, ६ शृङ्गक, ७ कालकूट, ८ हलाहल, ब्रह्मपुत्र ।

२२३ नवरत्न-१ हीरा २ पन्ना, ३ माणिक, ४ नीलामणि, ५ पुष्पराग, ६ गोमेद, ७ वैदूर्य, ८ मोती, ९ मूँगा ।

२२४ दशमूल-पंच लघुमूल और पंचबृहन्मूलके योगसे दशमूल बना है ।

२२५ दशांगधूप-५० भाग शिलारस, ५० गूगल, ४ चन्दन, ४ जटा-माँसी, ३ लोबान, ३ राल, ३ उशीर, २ नख, १ भीमसेनी कपूर. और एक भाग कस्तूरी इन सब पदार्थोंको एकत्र होनेपर दशांग कहते हैं, इसी प्रमाणसे चाहे जितना बनाओ ।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे मिश्रकवर्गनिरूपणं नाम विंशस्तरंगः ॥ २० ॥

---

२२६ निद्रा-नींद लेनेसे सुख प्राप्ति, श्रमका विनाश, नेत्रोंको लाभ पहुँचता है. परन्तु ग्रीष्मऋतुके व्यतिरिक्त अन्य कालमें दिनको सोना वर्जित है. कारण कि दिनको सोनेसे प्यास, शूल; हिचकी, अजीर्ण और अतिसारादि रोग उत्पन्न होते हैं, शरीर भारी हो जाता और आलस्यकी वृद्धि होती है, यदि किसी कारणसे रात्रिको जागरण हुआ हो तो दिनको सोनेसे कुछ हानि नहीं, भोजनके पश्चात् सोनेसे कफ और पुष्टताकी वृद्धि होकर बादी दूर होती है ।

२२७ दन्तधावन-दतोन करनेसे मुख शुद्ध होता है. अरुचि, दुर्गंध, मल, कफ, पित्त, नष्ट होते हैं, परन्तु मदातुर, कृश, थकित (दन्त, तालु, हस्तरोग. हिचकी, उलटी; शिर पीडा; मूर्च्छा और मुख-शोथके रोगी) इन पुरुषोंको दातोन नहीं करना चाहिये किन्तु कुल्ले करें ।

२२८ मुखप्रक्षालन-मुखको ठंढे पानीसे धोनेसे रक्त, पित्त; शोष और मुखकी कीलें आदि रोग नष्ट होते हैं ।

२२९ हस्तपादप्रक्षालन-हाथ पांव धोनेसे नेत्रोंकी ज्योति, बल, उत्साह बढ़ता है और श्रमको नाश करता है।

२३० गंडूष-कुल्ले करनेसे मुखशोथ, दन्तरोग, स्वरघात, ओष्ठरोग, जिह्वाका कड़ापन और रक्तवात आदि रोग नष्ट होते हैं।

२३१ अभ्यंग-उबटन करनेसे बालवृद्धि, सुखप्राप्ति और वर्ण स्वच्छ होता है इससे पुष्टता आती है और धातु सम होकर वादीके रोग दूर होते हैं।

२३२ मर्दन-तैल आदि मर्दनसे पुष्टता, बलवृद्धि, श्रमका नाश होता है, बादी दूर होती है और निद्रा आती है।

२३३ क्षौर-बालबनवानेसे नख उत्तम होते हैं. शिर, केश और नेत्रके रोग दूर होते हैं, सुन्दरता, पवित्रता, तथा रुचिकी विशेष वृद्धि होती है।

२३४ शिरोभ्यंग-मस्तकमें तेल लगानेसे केशमें स्वच्छता और शोभा आती है, नेत्रोंमें शक्ति आती है, कर्णरोग, हनुग्रहको दूर करता है. तेल लगानेसे धातुपुष्टि होती है. ज्वर, विरेचन और अजीर्णमें शिरोभ्यंग मत करो।

२३५ स्नान--स्नान करनेसे वात, श्रम, मैल, खुजाल, अपवित्रता नष्ट होती है. बल, रुचि, प्रफुल्लता बढ़ती है, परन्तु अतिसार, ज्वर, कर्णशूल, बादी, आध्मान, रोचक, अजीर्ण और भोजनके पश्चात् कालमें स्नान का निषेध है. शिरपर उष्ण जल पड़नेसे नेत्रोंमें उष्णता होती है।

२३६ चन्दन--तिलक धारणसे प्यास, मूर्च्छा, दुर्गन्ध, श्रम, बादी दूर होकर शोभा, तेज, प्रीति, उत्साह और बलकी वृद्धि होती है।

२३७ पुष्पधारण--से कांति, काम, उत्साह, शोभाकी वृद्धि होती है और दुर्गन्धिजन्यरोग दूर होते हैं. उत्तम वस्त्र आभूषण धारण करने से भी ये ही लाभ होते हैं।

२३८ अञ्जन--लगानेसे नेत्र निर्मल व निरोग रहते हैं; ज्योति व शोभा बढ़ती है. परन्तु रात्रिमें जागनेपर थकनेपर ज्वर, उलटी आने पर और भोजन करने तथा शिर धोनेके पश्चात् अञ्जन (काजल और सुर्मा आदि) लगाना निषिद्ध है।

२३९ उष्णीषधारण--पगडी, दुपट्टा, टोपी आदि धारणसे शीश, केश स्वच्छ रहते हैं बादी और धूपसे रक्षण होता है।

२४० पादत्राण--जूता पहननेसे कंटक वगैरेसे पांवकीरक्षा होती है, शरीरको सुख तथा नेत्रोंको लाभ होता है जीवन बढ़ता है।

२४१ छत्र--छाता लगानेसे बल बढ़ता है, नेत्रोंको सुख होता है, वर्षा तथा ग्रीष्मका त्रास नष्ट होता है।

२४२ व्यजन--पंखेकी हवालेनेसे उत्साह, बल और सुख प्राप्त होता हैं उष्णता और मच्छरादि जीवोंके क्लेशसे रक्षण होता है।

२४३ यष्टि--लकड़ी छड़ी लाठी आदि धारणकरनेस उत्साह स्थिरता, ढिठाई और बलवृद्धि होती है, सर्प, श्वान आदि दुष्ट जीवोंका भय निवृत्त होता है, वृद्ध निर्बल और अन्धोंके लिये तो मानो दूसरा पांव ही है।

२४४ व्यायाम--कसरत अनेक प्रकारकी है जिसमें "१ दंड २ बैठक, ३ कसबल" ये तीन मुख्य हैं, व्यायाम करनेसे शरीरमें आरोग्यता, पाचन, बल, मांसमें दृढ़ता पुष्टना, तीक्ष्णता, उत्साह, तरुणाई. और साहस प्राप्त होता है, व्यायामी पुरुषोंको दुग्ध, घृत, बादाम आदि चिकने पदार्थ भक्षणार्थ मिले तो अतिलाभ हो, वसंत, वर्षा और शीतमें अधिक तथा इनसे व्यतिरिक्त ऋतुओंमें थोड़ा व्यायाम करना चाहिये अधिक व्यायामसे कास; ज्वर और उलटी ये रोग होते हैं. शरीर थक जानेपर कंठ, ग्रीवा ललाट आदिमें, पसीना आनेपर व्यायामसे निवृत्त होजाना चाहिये, भोजन, मैथुन और मार्ग गमन करनेपर तत्क्षण व्यायाम कदापि मत करो, अतिकृश, कास, श्वास, क्षयी, रक्तपित्त और शोषरोगयुक्त पुरुषको व्यायाम करना अतिही वर्जित है. अंग्रेजी व्यायामसे पहिले तो चपलता विशेष रहती है. परन्तु वृद्धावस्थामें हड्डियोंके जोड़ ढीले पड़ जाते हैं।

२४६ बलनाशक- १ दुर्गंधित मांस, २ वृद्धा (३५ वषसे अधिकवय-वाली) स्त्री, ३ बालार्क, ४ नवीन दधि, ५ प्रभातकालिक मैथुन, ६ निशि दिवस निद्रा अथवा भूखे सोना ये छः पदार्थ बल तथा प्राणनाशक हैं।

२४६ बलकारक--१ नवीन मांस, २ नवीन (तत्काल बनाया हुआ उष्ण) अन्न, ३ बाला (१६ से २९ वा अट्ठाईस वर्षतककी वयवाली)

स्त्री, ४ दुग्धपान, ५ घृतयुक्त उत्तम पदार्थ भक्षण, ६ उष्ण जलस्नान ये छः पदार्थ शीघ्र ही शरीरको बलदायक तथा रक्षक होते हैं।

२४७ तुलना--चावलसे आठ गुण अधिक बलदायक आटा आटेसे अष्टगुण अधिक दूध, दूधसे अष्टगुण बलदाता मांस, मांससे अष्टगुण घृत और घृतसे अष्टगुण अधिक बलदाता तैल है, उक्त पदार्थ तो भक्षण करनेसे उपर्युक्त लिखित गुणदाता होते हैं परन्तु तेलके उक्त गुण भक्षणसे नहीं किंतु मर्दनमें हैं, अधिक तेल खाना हानिकारक है।

सूचना--हम अपने लघुनिघण्टुमें मुख्य २ औषधादिके "नाम, गुण और उपयोग" सूक्ष्मतापूर्वक दिखा चुके हैं, यदि इस, विषयका पूर्ण विस्तार देखना चाहो तो राजनिघंटु, सुश्रुत आदि बृहद्ग्रन्थोंको देखो और गुरुशिक्षासे प्राप्त करो, ग्रन्थ बढ़ जानेके भयसे यहां संक्षेपमें ही लिखा है।

इतिश्रीअमृतसागरे विचारखण्डे उपयोगीवर्गनिरूपणं नामैकविंशस्तरंगः ॥ २१ ॥

ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्या.

ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या तथैव च ॥
द्वाविंशप्रमिते भंगे कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

अब--हम इस २२ वें तरंगमें ऋतुचर्या, दिनचर्या और रात्रिचर्याका यथाक्रम वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

षड्ऋतुचर्याविचार--वर्षके बारह महीनोंमें १ मार्ग शीर्ष पौष, हेमन्तऋतु, २ माघ, फाल्गुन शिशिर ऋतु. ३ चैत, वैसाख वसंत ऋतु ४ ज्येष्ठ, आषाढ ग्रीष्मऋतु, ५ श्रावण, भाद्रपद वर्षाऋतु और ६ आश्विन, कार्त्तिक शरदृतु ये छः ऋतुएँ रहती हैं।

षड्ऋतु, त्रिदोष सम्बन्ध १ ग्रीष्मऋतुमें वातका संचय, वर्षामें कोप और शरदऋतुमें शांति रहती है. २ वर्षामें पित्तका संचय, शरदमें कोप और हिमतऋतुमें शांति रहती है. इसी प्रकार शिशिरमें कफका संचय, वसंतमें दोष और ग्रीष्मऋतुमें शांति रहती है. ये वात, पित्त, कफके संचय कोप और शांति आहार विहारसे होते हैं इस लिये इन दोषोंको प्रकोपित करनेवाले बिहारादिकी ओर ध्यान रखना चाहिये इसका निरूपण नीचे किया है।

१ वात प्रकोप--कटु तीक्ष्ण, कसेली, रूखी, हलकी थोड़ी वस्तु और बासी (रात्रिका बचा हुआ) अन्नभक्षण, संध्याकालिक मैथुन, शोक, भय, परिश्रम, मेघाच्छाद, प्रहार, अन्न, जल परित्याग, कामदेव, जागरण, अजीर्ण इन १४ वेगोंके प्रतिरोध और जलमें तैरनेसे वायु कुपित होता है और उसके यत्नोंसे शान्त होता है।

२ पित्तप्रकोप–तिल्ली, कांजी, मद्य, दही, मछली, कटु, तीक्ष्ण नमक, खटाईके भक्षण, शरदृऋतुके धूपमें भ्रमण, क्रोध, मैथुन, विदाही पदार्थ भक्षण, उपवास, तृषा, क्षुधावरोध, और अजीर्णके करनेसे मध्याह्न तथा अर्द्धरात्रिमें शरदृऋतुके समय पित्त कुपित होता है और उसके यत्नोंसे शांत होता है।

३ कफ प्रकोप–दही, दूध, नवीनान्न, शीतल जल, खटाई, नमक, घी, तिल, भारी (मैदा, आदिक गरिष्ठ) वस्तु, मछली और मीठी वस्तुके भक्षण, दिवस निद्रा, अग्निमांद्य और प्रातःकालही भोजन करने आदि कारणोंसे कफ कुपित हो जाता है और उसके यत्नोंसे शमन होता है। इसलिये इन आहारविहारोंपर सबको सदैव पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

१ हिमऋतुमें आहार विहार–गौ तथा भैंसका नवीन घी, गुड सोंठयुक्त हर्रें, मीठा दही, तिल गेहूँ, उर्द और मिश्री आदि मिष्ट पदार्थ भक्षण करना, नमक मिलाकर तेल मर्दन करना निर्वात स्थानमें रहना और नवीन उष्ण (ऊर्ण) वस्त्र पहनना चाहिये।

२ शिशिरऋतुमें आहारविहार–पिप्पलीयुक्त हर्रें, काली मिरच, अदरख, नवीन घी, सेंधा नमक, उत्तम गुड़, दही खाना और पूर्वोक्त हिमऋतु लिखित आहार विहार करना चाहिये।

३ वसंतऋतुमें आहारविहार–इस ऋतुमें कुपित कफ रोगोंको उत्पन्न कर अग्निको मंदाकर देता है। इस लिये ऋतुमें मधुयुक्त हर्रें भ्रमण, चित्रकचूर्ण तथा कफहारी पदार्थ सेवन करना चाहिये।

४ ग्रीष्मऋतुमें आहारविहार–ग्रीष्मऋतुमें सूर्य अपने तेजसे प्राणिमात्रका बल हर लेता है। इसलिये खश आदिके पर्दे लगे हुए शीतल स्थानमें तथा वृक्षोंकी सघन छायामें फुहारे आदिके समीप-निवास करना लाभकर है। गुडसंयुक्त हर्रें, मधुर भोजन, दाख, क्षीर,

श्रीखंड (सिखरण), सत्तू, मिश्री, अनार आदिका रस (शर्बत), चिकने और शीतल पदार्थोंका भक्षण, जलक्रीडा, खशके पंखोंका पवन, चन्दन कपूरादिका लेपन, दिवस निद्रा और सुगंधित पुष्पोंका सेवन करना चाहिये। परन्तु इस ऋतुमें तीक्ष्ण, नमक, खटाई, विदाही, पदार्थ, मद्य, श्रम, धूपमें घूमना ये हानिकारक हैं।

५ वर्षाऋतुमें आहार विहार इस ऋतुमें वायुका कोप होता है, इस लिये सैंधानमक युक्त हर्रै, चिकनी वस्तु, नमक, खटाई, चावल, यव, सोंठ, मिरची, पीपलामूल. चित्रक और सेंधानमक युक्त दहीका मट्ठा भक्षण, उष्ण जल, कूप जल, श्वेत वस्त्र, भ्रमण, हलका भोजन और विरेचन (जुलाब) करना चाहिये, परन्तु दिनको सोना, श्रम, धूप, तालाबका जल, दही वनमें, निवास और विशेष मैथुन ये हानिकारक हैं।

७ शरदऋतुमें आहार विहार-शरदऋतुमें पित्त कुपित होता है, इसलिये मिश्रीयुक्त हर्रै, मिश्री, षष्टिचावल, मूंग, सरोवरका जल और औटे हुए दूधका सेवन करना चाहिये, परन्तु तीक्ष्ण वस्तु, नमक, खटाई, आसव (मद्य) भक्षण धूपमें घूमना, पूर्वदिशाका पवन लेना और दिनको सोना ये व्यवहार हानिकारक है।

विशेषतः-उक्त ऋतुचर्याके नियमानुसार व्यवहार रखनेसे ऋतुजन्य व्याधिका भय नहीं रहता, पुरुषोंको चाहिये कि, इन नियमोंसे ऋतुपर्यंत निर्वाह न कर सकें तो प्रत्येक ऋतुके अंतिम ७ दिन पर्यंत तो अवश्यही नियमको निवाहें और आठवें दिनसे अग्रिम ऋतुचर्याके आहार विहारकी ओर ध्यान देकर वर्ताव करे तो सदैव रोगरहित रहकर ऋतुजन्य व्याधियोंके चक्रसे विमुक्त होवेंगे।

दिनचर्या विचार-इसमें दिनभरके व्यवहारकी विधि लिखेंगे. तुमको चाहिये कि ४ घड़ी रात्रि शेष रहे (४॥ बजे प्रातःकाल) निद्रा त्यागतेही परब्रह्म परमात्माका ध्यान करके पश्चात शय्यासे उठकर मल मूत्र त्याग करो. मल मूत्र त्यागके लिये रात्रिको दक्षिण और दिनको उत्तरकी ओर मुख करके बैठना उत्तम होगा। अनंतर मलद्वार और लिङ्गेन्द्रियको जलसे शुद्ध कर हाथ पाँवको मृत्तिका लगाकर शुद्ध करो और जलके कुल्ले करके मोरछली आदि सीधे वृक्षकी १२ अंगुल

लम्बी तथा हाथकी कनिष्ठ अंगुलि समान मोटी दतोनकी अग्रभागकी कूंचीसे दांत और उसकी चीरण (फाँका) से जिह्वा निर्मल करो और शीतल जलके १२ कुल्ले करके शीतल जलसे ही मुख धोवो, तदनंतर सेंधा नमक कुछ सोंठ और सिंके जीरेके महीन चूर्णको दांतोंमें घिसकर मुँह धोडालो तो ऐसे नियमसे मुखरोग तथा मुखदुर्गन्ध कदापि न होगी, फिर शरीरमें नारायणादि तेलका मर्दन करके इसकी चिकनाई मिटानेके लिये बेसन (चनेके आटे) आदिके उबटनसे शरीरको स्वच्छ करलो और शक्तिके अनुसार व्यायाम (कुस्ती, दण्ड, बैठक, मलखंभ, आदि कसरत) करके इस श्रम हरणके लिये कमरके नीचे तो अधिक उष्ण और कमरके ऊपर गुनगुने (कुछ उष्ण) जलसे शरीरको धोओ और भली भांति स्नान करके शरीर मात्रको निर्मल करलो, पश्चात् सन्ध्योपासन, अग्निहोत्र, गायत्री मन्त्रादिक जप करके देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु, आचार्य, माता पिता, अतिथि आदिका नमन, पूजन क्रमशः करो और शक्तिके अनुकूल अन्न वस्त्र सुवर्ण ग्रंथादिका दान उत्तम विद्वान् ब्राह्मणको श्रद्धा भक्ति समेत देकर मध्याह्न समय बलि वैश्वदेव (अग्निसे बने हुए पकान्नकी आहुती) करो, यदि उस समय भाग्यवश कोई अभ्यागत आ पहुँचे तो उसे सादर भोजन कराके कुटुम्बसहित आप भोजन करो, रसोईका मकान ऐसे स्थानपर होना चाहिये, कि जहां काफी स्वच्छता हो तथा हवा भी खूब पहुँच सकती हो, भोजनपात्रोंको स्वच्छ तथा सुन्दर रखना चाहिये, भोजन करनेके समय माता, पिता, वैद्य, मित्र और पाककर्त्ताके व्यतिरिक्त किसी अन्यको समीप न रहने दो, क्योंकि भोजनपर ऐसे कुटुम्बी जन तथा मोर, चकोर, वानर और मुर्गाकी दृष्टिसे व्यतिरिक्त अन्यका दृष्टिपात योग्य नहीं उससे हानि होती है।

भोजन करनेके समय प्रथम नमकसहित अदरखके दो तीन टुकडे खाओ तदनंतर मधुर, चिकना, हितकारी पदार्थ-मूँग, चावल, घृतयुक्त गेहूंकी रोटी, उत्तम शाकपत्रादिके साथ धैर्यतापूर्वक खाओ और अन्तको रुचिपूर्वक मिश्रीयुक्त दूध पीकर नियमानुसार जल पिओ, क्योंकि भोजनके आदिमें जल पीनेसे मन्दाग्नि तथा भोजनके अंतमें अचानक जलपीनेसे यह जल विषसदृश होता है, इसलिये भोजनके मध्य मध्यमें थोड़ा थोड़ा पानी धीरे धीरे पीना चाहिये; जिससे अन्न-पाचन होकर अजीर्ण और विकारकी निवृत्ति हो जावे, अजीर्ण

दशामें जल पीनेसे अन्न पचता है अन्न पचनेपर जल पीनेसे शरीरमें बल बढ़ता है और रात्रिके अन्तमें जल पीनसे सब विकार दूर होते हैं, इसलिये भोजनके दो घड़ी पश्चात् ठंढ़ा जल पुनः पीना चाहिये, इस प्रकारसे भोजन कर हाथ मुँह धोकर संतुष्ट होवो।

भोजनके पश्चात् १ अगस्ति, २ कुम्भकर्ण, ३ शनैश्चर, ४ वडवानल और ५ भीमसेनका स्मरण करनेसे उत्साह बढकर भक्षितान्न पचकर शरीर हलका होता है, क्योंकि ये ऐसे बलवान् प्रतापी और दीर्घाहारी थे कि जो कुछ भोजन करते थे उसका पाक शीघ्रही होजाता था अतः तुम्हारा अन्न भी पचा देगें।

तदनंतर सुन्दर ऋतु योग्य वस्त्र, सुगंधित माला पहिनकर ताम्बूल खाओ और शीतल व्यजनसे पवन लेकर शीतल छाया में इधर उधर टहलो या सुंदर शय्यापर कुछ काल सीधे चित्त या बायीं करवटपर लेटकर निद्रा लो, क्योंकि चित्त (पीठके भर) सोनेसे बल और बायीं करवटपर सोनेसे आयु बढ़ती है, या १०० कदम चलो क्योंकि भोजन करके किसी कार्यवश बैठे रहनेसे शरीर भारी होता है, सीधे खाटपरही लेटे रहनेसे अन्न नहीं पचता और दौड़नेवालेके साथतो मृत्यु ही दौड़ती है (अर्थात् कालआता है) इसी लिये भोजनके अन्तमें उपरोक्त नियमों-पर ध्यान देकर गौकी छांछ तथा सिखरण आदिका सेवन करो और संध्यासमय १ भोजन, २ अध्ययन, ३ मैथुन और ४ निद्रा ये चार कार्यमत करो, क्योंकि संध्याके भोजनमें रोग, मैथुनसे भयंकर सन्तान अध्ययनसे आयुःक्षय और निद्रासे दरिद्रता प्राप्त होती है,किन्तु संध्या-समय "ईश्वराराधन" यह सर्वोत्तम कार्य सबको करना योग्य है।

रात्रिचर्याविचार--इसम रात्रिके आहार-विहारादिका वर्णन करेंगे,तुम को चाहिये कि अपने सायंकालीन सबकृत्योंसे निपटने पर रात्रिके प्रथम प्रहरमें ऊपरके अनुसार भोजन करके सुन्दर स्थानमें शय्यापर शयन करो, ग्रीष्मऋतुमें बाहर चांदनीमें सोना सुखदायी होता है, क्योंकि चांदनी कामवर्धिनी और दाहहारिणी होती है, पश्चात् यथाशक्ति नवयौ-वना स्त्रीसे सम्भोग करो, हम भोगविधान भी लिखते हैं।

संभोगके कुछ कालपूर्व और पश्चात् गौ तथा भैंसका औटाया हुआ

मिश्रीयुक्त दूध रुचिपूर्वकपीकर मैथुनमेंतत्पर होओ, क्योंकि दुग्ध तत्क्षण बलदाता तथा बलवर्धक है।

हम मैथुनविधान भी लिखते हैं--हिम तथा शिशिरऋतुमें अपनी शक्तिपूर्वक नित्यप्रति वारंवार स्त्रीसंग करनेसेभी हर्ष बढ़कर रोग तथा बलकी हानिनहीं होती परंतु वसन्त और शिशिर ऋतुमें तीसरे दिन यथाशक्ति मैथुन करना चाहिये, क्योंकि अन्यथा करनेसे शरीर रोग, ग्रस्त होकर बल क्षय हो जावेगा, वर्षा तथा ग्रीष्मऋतुमें पन्द्रहवें दिन यथाशक्ति स्त्रीसंग करो नहीं तो बलरहित; रुग्ण होजाओगे, शीतऋतुमें रात्रि; गीष्ममेंदिवस और वर्षाऋतुमें रात्रि या दिनको, मेघ गर्जनके समय स्त्रीसंग करो तो कदापि रोगग्रसित न होओगे।

और भी सुनो--१रजस्वला,२ रोगयुक्त, ३ वृद्धा, ४ जिसे कामवेग न जागता हो. ५ मलीनतायुक्त रहनेवाली, ६ गर्भिणी (सातमासके उपरांत गर्भवाली) और ७ उपदंश रोगग्रस्त इन सात दशाओंमें किसी स्त्रीसे मैथुन मतकरो नहींतो रोगग्रस्तहो जाओगे।

तथा १ भयातुर, २ अधैर्यवान्, ३ क्षुधित,४रोगी, ५तृषित ६ बालक, ७ वृद्ध और ८ मलमूत्रके वेगयुक्त दशामें मैथुन मत करो, बहुत मैथुन मत करो नहीं तो तुमको १ शूल, २ खांसी ३ विषमज्वर, ४ क्षीणता, ५ क्षयी और ६ वातज पक्षाघातादि रोग उत्पन्न होजावेंगे।

मैथुनके पश्चात स्नान करके मिश्रीयुक्त उष्ण दुग्ध, मिष्टरस और आसव पिओ और पंखेसे मंद मंद पवन लेकर शयन करो. दिनको बहुत सोने रात्रिको अधिक जागरणका प्रसंग मत लाओ. ५ घड़ी रात्रि अवशिष्ट रहे (४ बजे प्रातःकाल) ८ अंजली (चल्लू) शीतल मिष्टजल पान करो तो सब रोग दूर होकर पूर्णायुको प्राप्त होओगे. यह सब विधि भावप्रकाश और शार्ङ्गधरसे तुमको सुनाई है, इसका विचार रखकर चलोगे तो सुखपूर्वक आयुष्य व्यतीत करके निरोगी बने रहोगे।

इति श्री अमृतसागरे विचारखण्डे ऋतुचर्या दिनचर्यारात्रिचर्यादि निरूपणं नाम द्वाविंशतितमस्तरंगः ॥ २२ ॥

---

१ " सद्यो बलहरा नारी सद्यो बलकरं पयः। स्त्रियं गच्छेत्पयः पीत्वा भुक्त्वा तां च पुनः पिबेत् " इयुक्तं ग्रन्थान्तरे।

२ सवितुस्समुदयकालेप्रसृतिः सलिलस्यपिबेदष्टौ। रोगजरापरिमुक्तोजीवेद्वर्षाञ्शतसाग्रान्।

स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रेसेवन, बस्तिकर्म, धूम्रपान, रक्तमोचन

स्नेहादिनां विचारश्च मनुजानां हिताय च ।
त्रयोविंशमिते भंगे लिख्यते हि यथाक्रमम् ॥ १ ॥

अब इस २३ वें तरंगमें स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रेसेवन, बस्तिकर्म, धूम्रपान और रक्तमोचन यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

स्नेहविचार--१ घृत, २ तेल, ३ वसा, (चर्बी) और ४ मज्जा ये चारों स्नेह (चिकनाई) पौष्टिक होते हैं।

स्वेदनविचार- १ ताप, उष्ण, ३ उपनाह और ४ द्रवस्वेद ये चारों स्वेद (पसीना) उत्पन्न करनेवाले हैं।

१ तापस्वेद--बालू (रेत), नमक, वस्त्र, हाथ, ढक्कन और अंगीठीकी उष्णतासे सेंककर पसीना उत्पन्न करना इसे तापस्वेद कहते हैं।

२ उष्णस्वेद -लोहा अथवा ईंट आदिको तपाकर उसके सेंकसे जो पसीना उत्पन्न किया जावे उसे उष्णस्वेद कहते हैं, तापस्वेद और उष्णस्वेद इन दोनोंके सेकसे कफजन्य विकार दूर होते हैं।

३ उपनाहस्वेद—ताप और उष्ण दोनोंके योगसे जो पसीना उत्पन्न किया जावे उसे उपनाहस्वेद कहते हैं।

४ द्रवस्वेद--शरीरको वस्त्रसे ढांककर खटाई या वातनाशक औषधीके जलसे सिंचन कर जो पसीना उत्पन्न किया जावे उसे द्रवस्वेद कहते हैं। ये चारों स्वेद वातरोगोंको को दूर करनेवाले हैं।

महाशाल्वस्वेद--कुलथी, उर्द, गेहूं, अलसी, तिल, सरसों, सौंफ, देवदारु, सम्भालू, जीरा, अरंडबीजी, अरंडमूल, रास्ना, सोभाञ्जन-मूल इन सबको नमकयुक्त कांजी या खटाईसे महीन पीसकर उष्ण करलो और शरीरके वातग्रस्त अवयवपर सहता २ लेप करो तो सब वात-रोग दूर होंगे।

वमनविचार--भक्षित अन्न तथा शरीरके मलको मुखद्वारा (उल्टी करके) निकाल देनेको वमन कहते हैं शरद वसंत और वर्षाऋतुमें मनुष्य मात्रको वमन लेना योग्य है। क्योंकि इससे कफरोग, हृदरोग,

विषदोष, मंदाग्नि, श्लीपद, कुष्ठ, विसर्प, प्रमेह, अजीर्ण, भ्रम, कास, श्वास, पीनस, मृगी, उन्माद, अतिसार, तथा नाक, तालू, कान, ओष्ठ, कानका पकाव, जिह्वारोग, पित्त रोग, कफरोग, मेदोवृद्धि शिरोग्रह, पार्श्वशूल, अरुचि और तत्कालिक ज्वर ये सब रोग नष्ट होवेंगे।

वमनवर्जन--तिमिर (रतौंधी), गुल्म, उदररोग, निर्बलता, प्रहार, मेदोरोग, स्थूलरोग, उदावर्त, वातरोग इन रोगोंसे ग्रसित, दुर्बल, वृद्ध, क्षुधित मनुष्य और गर्भिणी स्त्रीको वमन न देना चाहिये।

वमनक्रिया--१--पतली पेज (अर्थात् [1]भेदडी, रावडी) में दूध या छाँछ या दही मिलाकर पेटभर खिला दो और ऊपरसे सेंधानमक या मधु या वच खिलाकर उष्ण जल पिलाके गलेमें अंगुली चलाओ तो वमन हो तथा २—कुटकी, मैनफल, फिटकरी, तमाखू, नीम या किसी अन्य तीक्ष्ण वस्तुका चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो वमन होगा वमन करानेके पश्चात् शुद्ध जलसे कुल्ले कराके जिह्वापर जीरा आदि लगादो और बिजौरा (तुरंज) आदि उत्तम वस्तु खिलाकर सुगन्धित द्रव्य (अतर) सुँघाना चाहिये।

विरेचनविचार–प्रथम विधिपूर्वक वमन कराके कफरोग पकनेतक पाचक औषधि दो तदनंतर शरद या वसंतऋतुमें विरेचन दो तो जीर्णज्वर, मलसंग्रह, वातरक्त, भगंदर, अर्श, पांडु, उदररोग, गुल्म, हृद्रोग, योनिरोग, अरुचि, उपदंश, प्रमेह, व्रण, विशूचिका, नेत्ररोग, कृमि, शूल, कुष्ठ, कर्णरोग, नासिकारोग, शिरोग्रह, शोथ और मूत्राघात ये सब रोग दूर होवेंगे, यदि किसी रोगकी निवृत्ति विरेचनसे ही होसके तो अनियमित कालपर भी विरेचन दे सकते हैं।

विरेचनवर्जन– बालक, वृद्ध, क्षीण, भयातुर, श्रमयुक्त, नवीन ज्वरयुक्त, तृषित, स्थूल, प्रहारयुक्त, मन्दाग्नि, मेदोरोग, बालक तथा चिकने या रूखे शरीरवाले मनुष्य तथा गर्भिणी और प्रसूता स्त्रीको विरेचन मत दो।

विशेषः–वातप्रकृतिवालेको तीक्ष्ण, पित्तप्रकृति वालेको कोमल और कफप्रकृतिवालेको मध्य विरेचन देना चाहिये।

विरेचकपदार्थ--दाख, दूध, हरैं आदि कोमल, निसोत, कुटकी किरमाल आदि मध्यम और थूहरका दूध, चोख, दात्यूणी, जमालगोटा और इच्छाभेदी रस ये तीक्ष्ण पदार्थ हैं।

---

१ इसे मुजिस कहते हैं।

विरेचनक्रिया–विरेचन देनेके पांच सात दिन पहिलेसे २ टंक सोनामक्खी, १ टंक जीरा, २ टंक सौंफ, २ टंक दाख २ टंक गुलाबपुष्प और १० टंकेभर शक्कर ऽ।।- तीन पाव पानीमें औटाकर ऽ। पावभर रह जानेपर छानके ४ दिन पिलाओ तो मल पचकर शुद्ध रेचन होता रहेगा, इसपर घृतयुक्त चावलोंकी खिचड़ीको छोड़ और कुछ मत खिलाओ ॥ तदनंतर पांचवें दिन १० टंक सोनामक्खी,१०टंक निसोत, १० टंक गुलकंद २ टंक जीरा, २ टंक सौंफ, १० टंक शक्कर इन सबको जलमें औटाकर दो चार दिनतक पिलाओ तो विरेचन होगा, जो ३० विरेचन हों तो उत्तम, २० हों तो मध्यम और १० हों तो हीन बिरेचन जानो ।

षडऋतुविरेचन–१वसन्तमें सोनामक्खी, निसोत, गुलाबपुष्प सौंफ और जीरेका विरेचन शक्करके साथ दो. २–ग्रीष्ममें मिश्रीके साथ निसोतका विरेचन दो, ३–वर्षामें मधुके साथ निसोत पिप्पली, द्राक्षा और सोंठका विरेचन दो, ४–शरदमें मिश्रीके साथ निसोत, धमासा, नागरमोथा, द्राक्षा, नेत्रवाला मुलहठी, चन्दन और सोनामक्खीका विरेचन दो, ५–हेमन्तमें उष्ण जलके साथ निसोत, चित्रक, पाठ, चोख, वच और सोनामक्खीका विरेचन दो और ६–शिशिरऋतुमें मधुके साथ निसोंत, पिप्पली, सोंठ, सेंधानमक और सोनामक्खीका विरेचन देना चाहिये ।

विरेचनार्थ अभयादिमोदक[1], हर्रकी छाल, मिर्च, सोंठ, वायविडंग, आंवला, पिप्पली, पिप्पलीमूल, तज, पत्रज, नागरमोथा ये सब समान; इन सबसे त्रिगुणी दात्यूणी इन सबसे अष्टगुणी निसोत और इन सबसे छःगुणी मिश्री इन सबको महीन पीसकर मधुके साथ २ टंक प्रमाणकी गोलियां बना लो और १ गोली प्रातःकाल शीतल जलके साथ दो तो उष्णजल न पीनेतक विरेचन होते ही रहेंगे, जो इससे विशेष विरेचन हो जावे तो विषमज्वर, मन्दाग्नि, पाण्डु, कास, भगन्दर, राजयक्ष्मा, अर्श, कुष्ठ, नेत्रविकार, गण्डमाला, उदररोग, वातरोग, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी तथा जंघा और कटिकी पीडा ये सब विकार दूर होकर तरुणता प्राप्त होवे ।

१ इस अभयादि मोदकमें औषधोंके संयोगका प्रमाण हमने शार्ङ्गधरसेही लिखा है, इसका यथार्थ निश्चय शार्ङ्गधरसे करलो ।

विशेषतः--विरेचन (जुलाब) देनेपर रोगीके नेत्र शीतल जलसे धुलाओ, सुगंधि सुँघाओ, पान खिलाओ और निर्वात स्थानमें रक्खो परंतु स्नान और पीनेके लिये उष्ण जलका ही उपयोग करो, शीतल जल मत दो नहीं तो रोगीके नाभिकुक्षिमें शूल, मलावरोध, वायुसरणका अभाव, पित्तरोग, शरीरमें भारीपन, दाह, अरुचि, आध्मान, चक्कर और वमन ये विकार होंगे, यदि इनमेंसे कोई विकार उत्पन्न होता दिखाई पडे तो पाचन देकर शुद्ध कर लो तो सब रोग दूर होकर क्षुधा बढेगी और शरीर हलका हो जावेगा।

दुष्टविरेचनशमन--यदि प्रमाणसे विशेष विरेचन हो तो मूर्च्छा, गुदभ्रंश (काँच निकलना), शूल और अतिसार आदि रोग उत्पन्न होते हैं, इसलिये विशेष विरेचन हो तो शीघ्र शीतल जलसे स्नान कराके चावल, मिश्री, मधु, शिखरण, दही, षष्ठितण्डुल, मसूर और मिश्रीयुक्त बकरीके दूधका सेवन कराओ तो विरेचन रुक जावेगा।

शुद्धविरेचन लाभ--यदि विरेचन यथार्थरूपसे हो जावे तो मन प्रसन्न, वायुसरण, बुद्धिनिर्मल तथा क्षुधा और बलवर्द्धन होगा।

षड्ऋतुमें हर्रैसेवनविधि--१ ग्रीष्म ऋतुमें १ हर्रै समान गुड़के साथ, २ वर्षामें २ हर्रै सैन्धानमकके साथ, ३ शरदमें ३ हर्रै मिश्रीके साथ, ४ हिममें ४ हर्रै सोंठके साथ, ५ शिशिरमें ५ हर्रै पिप्पलके साथ और ६ वसन्त ऋतुमें हर्रै प्रतिदिन मधुके साथ सेवन करते रहो तो ऋतुजन्य विकार न होकर समस्त रोग नष्ट होंगे।

बस्तिकर्म विकार- जिसे रोगोंके वातप्रकोपसे मलमूत्रका रुकाव हो गयाहो तो उसकी इंद्रिय या गुदामें बस्तिकर्म करना चाहिये, यह पिचकारी स्वर्ण या जस्ता आदि धातुओंकी नली और बकरेके अण्डकोशकी थैलीके संयोगसे शुंड़ाकार बनाई जाती है, जो १ वर्षसे ६ वर्षकी अवस्था तक ६ अंगुल, १२ वर्षपर्यन्त ८ अंगुल, और १२ वर्ष पश्चात १२ अंगुल, लंबी रखनी चाहिये यदि उक्त नियमसे न्यूनाधिक करना हो तो वैद्य अपनी बुद्धिसे विचार करले।

बस्तिक्रिया--जिस रोगीको बस्तिकर्म करना हो तो उसे चिकना और अधिक भोजन मत कराओ, किन्तु हलका भोजन देकर उष्णजल पिलाओ और कुछ काल इधर उधर टहलाकर मलमूत्र त्यागके अनंतर बायें करवटके आधारसे सुला दो, तब बाई जाँघ लंबी और दाहिनी

ऊँची करके गुदामें पिचकारीको लगाओ इस समय तुम (वैद्य) पिचकारीको घी लगाकर बायें हाथसे पकड़ो और दाहिने हाथसे खींचकर १० ताली बजाने या १०० तककी गिनती मुँहसे गिननेतक पिचकारी मारते जाओ परन्तु पिचकारीको मारते समय रोगी और वैद्य दोनों जमुहाई खांसी और छींकसे बचे रहें, पिचकारी मार चुकनेपर रोगीको दोनों पांव पसारकर सीधा सुला दो; तदनन्तर चतुराईसे दोनों पांवकी अंगुलियाँ खिचवाके औंधासुलादो और कूलोंको मसलकर सोने दो इसी प्रकार १ दिनके अन्तरसे आठ नौ दिनतक अनुवासन और पश्चात् निरूहबस्ति दो, बस्तिकर्मवाले रोगीको उष्ण जलसे स्नान कराओ, दिनको न सोने दो, और अजीर्ण तथा कुपथ्यसे सदा बचाते ही रहो।

अनुवासन बस्ति वर्णन–जिसमें घृत, तेल आदि स्निग्ध पदार्थोंसे पिचकारी मारी जाती है, उसे अनुवासन बस्ति कहते हैं, इसीका एक भेद "मात्रा बस्ति" भी है, शीत और वसन्तऋतुमें दिनको तथा ग्रीष्म, वर्षा और शरदऋतुमें रात्रिको अनुवासन देना चाहिये।

अनुवासन योग्य तैल–गिलोय, एरंडकी जड़, कणगचकी जड़, भारंगी, अडूसा, रोहित, शतावरी, सहिंजना, काकलहरी ये सब टके २ भर और जौ (यव), उर्द, अलसी, बेरकी जड़ और कुलथी ये सब सेर सेरभर लेकर सबको ६४ सेर जलमें पकावो चतुर्थांश रहजानेपर उसीमें ४ सेर मीठा तेल डालकर पकाओ तदनन्तर सब रसादि जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर इसमेंसे १ टंक तेलको पिचकारी सौंफके जल और सेंधानमकके संयोगसे दो तों सब वातरोग दूर होगें, यह अनुवासन बस्ति देनेपर मलाशय या पक्वाशयमें जलयुक्त स्नेह रहकर मूत्राशय मसलनेपर भी गुदाद्वारा न निकले तो निरूहबस्ति या विरेचन कर दो तो वायुसरण तथा मलद्रव होकर शरीर शुद्ध हो जावेगा।

अनुवासनबस्ति वर्जन–भस्मक, कास, श्वास, क्षयरोगी तथा भययुक्त मनुष्योंको अनुवासन बस्ति मत करो।

निरूहबस्तिवर्णन–जिसमें औषधियोंके जलकी पिचकारी मारी जाती है उसे निरूहबस्ति कहते हैं, उसका एक भेद उत्तरबस्ति भी है, सामान्य रीतिसे इसके और भी अनेक भेद हैं।

निरूहबस्ति योग्य-जिसका अधिक चिकना शरीर हो, हृदयमें चोट लगी हो, शरीर क्षीण हो तथा आध्मान, छर्दि, हिक्का।

अर्श, श्वास, कास, उदररोग, शोथ, अतीसार, विसूचिका, उदावर्त्त, वातरक्त, विषमज्वर, मूर्छा, तृषा, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मन्दाग्नि, शूल, अम्लपित्त, हृद्रोग और पादरोगयुक्त मनुष्यको निरूहबस्ति देनेसे उसके समस्त (उक्त) रोग नष्ट हो जायँगे इसका प्रमाण सवा पैसे भरका है; अनुवासन बस्तिकी क्रियासे ही निरूहबस्ति भी दो चार बार दो।

विशेषतः-केवल वातविकारवालेको स्नेहयुक्त, पित्तवालेको दूधयुक्त और कफविकारवालेको कसैले या कडवे रस तथा मूत्रादियुक्त निरूहबस्ति देना चाहिये, परन्तु सुकुमार बालक और वृद्धको तो मृदुबस्तिही देना योग्य है।

१ उत्क्लेदनबस्ति-अरंडकी बीजी, महुआ, पिप्पली, सैंधानमक, बच और झाऊ वृक्षकी छालके क्राथसे पिचकारी मारो इसे उत्क्लेदनबस्ति-कहते हैं।

२ दोषहरबस्ति-सौंफ, मुलहठी, और बीलको इन्द्रयवकी काजी और गोमूत्रमें पीसकर बस्ति दो तो सब दोष दूर हों इसे दोषहर-बस्ति कहते हैं।

३ लेखनबस्ति-त्रिफलाका क्वाथ, मधु, गोमूत्र और जवाखारको मिलाकर बस्ति दो इसे लेखनबस्ति कहते हैं।

४ शोधनबस्ति-हर्रे, किरमाल आदि विरेचक पदार्थोंके जल से बस्ति करो इसे शोधनबस्ति कहते हैं।

५ शमनबस्ति-प्रियंगुपुष्प, मुलहठी, नागरमोथा, रसोत इन सबको दूधमें पीसकर बस्ति दो इसे शमनबस्ति कहते हैं।

६ बृंहणबस्ति-पौष्टिक औषधोंकाक्काथ, मिष्टद्रव, घृत, मांसरस इत्या-दिकी बस्ति दो इसे बृंहणबस्ति कहते हैं।

७ पिच्छिलबस्ति-बेरके पत्ते, शतावरी, ल्हेसुवे, मोचरस इन सबको दुग्धमें पकाके वह दुग्ध मधुके साथ बस्तिमें दो इसे पिच्छल-बस्ति कहते हैं।

८ निरूहबस्ति–ऽ॥आधसेर मधु,आधसेर घी और थोड़ासा सैंधानमक इन तीनोंको मथन कर १ दिनके अंतरसे पांच सात दिनतक एक एक पिचकारी मारो इसे निरूहबस्ति जानो।

९ मधुतैलबस्ति–अरंडमूलके काथमें मधु और मीठा तेल टकाभर, सौंफ १ पैसा भर और सेंधा नमक अधेले भर डालकर मथो और इसकी बस्ति करो तो मेद, गुल्म, प्लीहा, कृमि और मलके समस्त रोग दूर होकर बल बढ़ेगा।

१० स्थापनबस्ति–मधु. घृत, दूध, तैल ये चारों पैसे २ भर सैंधा नमक झाड–वृक्षके वक्कलका रस अधेले २ भर इन सबको एकजीव करके पिचकारी मारो उसे स्थापनबस्ति कहते हैं।

११ सिद्धबस्ति–पिप्पली, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और मुलहठीके काथमें मधु, तेल और सेंधा नमक डालकर औटावो और इसकी पिचकारी मारो इसेसिद्ध बस्ति कहते हैं।

१२ फलबस्ति–गुदामें बाहर और भीतर भी स्नेह लगाकर अंगूठेके समान मोटी और बारह अंगुल लम्बी कड़ी पिचकारी गुदामें आधी चलाकर मारो इसे फलबस्ति कहते हैं बस्तिकर्म समस्त वातरोगोंका नाश करता है।

धूम्रपानविचार–१ शमन, २ बृंहण, ३ रेचक, ४ कासघ्न, ५ वमनकर्त्ता और ६ व्रणधूम ये छः प्रकारसे धूम्रपान होते हैं।

धूम्रपानवर्जन–भय, श्रम, दुःख, दन्तरोग, रात्रि जागरण, तालुरोग, दाह, प्यास, उदररोग, शिरोग्रह, वमन, आध्मान, प्रहार, पांडु, क्षीणता रोगवाले मनुष्य, बालक, वृद्ध और गर्भिणी स्त्री इन सबको धूम्रपान करना कदापि योग्य नहीं है।

धूम्रपानगुण–धूम्रपान करनेसे वात और कफके रोग शांत होते हैं सम्पूर्ण इन्द्रियाँ और मन प्रसन्न रहता है, केश (बाल) और दन्त दृढ होते हैं।

षट्विध धूम्रपान वर्णन–१ इलायची आदिका धुआँ शमन २ शर आदिक बृंहण, ३ तीक्ष्ण औषधोंका रेचन, ४ मिर्च आदिक धुआ खाँसी (कास) हर्त्ता, ५ चर्म आदिका धुआं वमन कर्त्ता ६ नीम या वच आदिका धुआं, (जो, व्रण आदिको दिया जाता है) वह व्रणधूम्र कहलाता है।

१ अपराजित धूप-मोरपंख, नीमके पत्ते, कटियालीके फल, हींग, मिर्च, छड़, कपास, बकरेके बाल, साँपकी कांचली, बिल्ली की विष्ठा और हाथीका दाँत इन सबको महीन पीसकर घृतके संयोगसे धूनी दो तो भूत, प्रेत पिशाच, राक्षस और डाकिनी आदि सब दोष तथा ज्वर दूर होते हैं।

२ महेश्वर धूप--हींग, देवदारु, घृत, बिल्वपत्र, गोडस्थि, कुटकी सरसों, नीमके पत्ते, शिरके बाल, साँपकी काचली, मार्जारकी विष्ठा, गोशृंग, मैनफल, दोनों कटियाली, कपास, आटेका भूसा (चलनीमें शेष हुआ भाग), बकरेके रोम, चन्दन, मोरपंख और अजामून (बकरीका मूत्र) इन सबको महीन पीसकर धूनी दो तो भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी साँप, चुड़ैल, राक्षस और सब ज्वर आदि दूर होते हैं।

रक्तमोचन विचार--मनुष्यके शरीरमें रक्तके कारण बहुधा विकार हुआ करते हैं इसलिये वैद्य विचारपूर्वक रोगीके शरीरमेंसे रुधिर अवश्य निकलवावे और शरत्ऋतुमें तो प्रत्येक मनुष्यको रक्त निकलवाना ही चाहिये जिससे रक्त-विकार न होने पावे।

शुद्धरक्तस्वरूप-जो रक्त पिष्टरस, लालवर्ण, शीतोष्ण, भारी, चिकना और गंधयुक्त हो उसे शुद्धरक्त जानो।

दुष्टरक्तलक्षण-जब शरीरका रक्त बिगड़जाता है तब शरीरमें पीड़ा, पाक, दाह, मण्डल (चट्टे), खाज, फुन्सी, शोथ गर्मीके अनेक विकार उत्पन्न होते हैं।

रुधिरवृद्धिलक्षण-जब शरीरमें रक्त बहुत बढ़ जाता है तब अंगमें भारीपन, मेदोवृद्धि, निद्राधिक्य, दाह, नसोंमें भारीपन और नेत्रोंमें ललाई छा जाती है।

रक्तक्षीण-जब शरीरका रक्त विशेष क्षीण हो जाता है, तब खट्टे मीठे पदार्थोंके भक्षणमें विशेष इच्छा, मूर्च्छा, रूखापन और नसोंमें शिथिलता प्राप्त हो जाती है।

१ वातदूषितरक्तविचार-लालवर्ण, फेनयुक्त, दृढ़ धारा निकलते समय सूक्ष्म और वेगवती हो तथा शरीरमें चटके उठें तो विचारलो कि यह रक्त बादीसे बिगड़ा है।

२ पित्तदूषितरक्तविचार-रक्त पीला या काला या नीला या हरा रंग लिये हो, उष्णता, स्थिरता और दुर्गंधयुक्त हो तथा जिसपर मक्खी

औ चींटियां न झुकें (प्रीति न करें) तो विचारो कि यह रक्त पित्तसे बिगड़ा है ।

३ कफदूषितरक्तविचार-जो शीतल, चिकना, भारी, गेरू या मांस-ग्रंथिसदृश तथा अधिक और मंदगामी रक्त हो तो विचार लो कि यह रक्त कफसे बिगड़ा है ।

४ त्रिदोषदूषितरक्तविचार-पूर्वोक्त तीनों दोषोंके आचरणयुक्त कांजीके समान वर्णका रक्त होतो विचारो कि यह रक्त सन्निपातसे बिगड़ा है ।

५ विषदूषितरक्तविचार-काला तथा कांजीके समान या बीरवहूटीके सदृश, विशेष दुर्गंधियुक्त रस नासिकासेगिरे, जिससे शरीरमें कुष्ठ, शोथ, दाह और पाकहो जावे तो जानना रक्त विषसे बिगड़ा है ।

रक्तमोचनयोग्य रोगी-शोथ, दाह, व्रण; फुन्सियां, अंगपाक शरीरका रक्तवर्ण, वातरक्त, व्याऊँ (व्यवाई), स्तनरोग, भारीपन, रक्तनेत्र, तंद्रा, नासिकाविकार, मुखरोग, प्लीहा, विसप विद्रधि, छाले, शिरोग्रह, उपदंश, और वात, पित्त इन रोगोंसे युक्त रोगका रुधिर सिंगी या जोंक या तुम्बी या छुरे (अस्तुरे) या सीर (फस्त) द्वारा निकलवा देना चाहिये ।

रक्तमोचनवर्जन-क्षीण, जारकर्म युक्त, नपुंसक, भयातुर, अर्श, शोथ, पांडु, उदरव्याधि, काम, श्वास, छार्दि, अतिसार, पसीनायुक्त विरेचनादि पंचकर्महीन, १२ वर्ष न्यून और ७० वर्षसे अधिक वयका पुरुष और गर्भिणी तथा प्रसूता स्त्री इनका रक्तमत निकलवाओ, हां यदि उक्तरोगोंमेंसे भी कोई रोग रक्तमोचनसेही नष्ट होनेके योग्य हो तो जोंक लगाकर रक्त निकलवाना ठीक होगा ।

विशेषतः-विषदूषित रक्त सीर या छुरे (अस्तुरे) से और वात, पित्त, कफसे दूषितरक्तहो तो सिंगी या जोंक या तुमडीसे निकलवाना चाहिये, जोंकें जहां लगाई जातीहैं वहांसे १ हाथ सिंगी या तुमडी बारह अंगुल (१ बीता) छुरा १ अंगुलपर्यंत और सीर खुलवानेसे सब शरीर मात्रका दुष्ट रुधिर निकलकर शरीर शुद्धहो जाता है परंतु ऐसे लाभोंको देखकरभी क्षुधित, निद्रित, मूर्छित, भ्रमित, मदोन्मत्त और और मत्रमूलके वेगयुक्तमनुष्यका रक्तमोचन शीतकालमें कदापि मत कराओ, यदि पूर्वोक्त जलौका आदि उपायोंसे रक्त भलीभांति न निकलेतो उस स्थानपर कूठ, सोंठ, मिर्च, पिप्पली और सेंधानमकका चूर्ण मसलो तो वहाँसे पूर्णरूपसे रक्तस्राव होगा, रक्तमोचनके समय

विशेष शीत तथा विशेष उष्णताका समय बचाकर सम शीतोष्ण कालमें रक्तमोचन कराओ और रोगीको हलका भोजन दो।

रक्तस्तम्भनोपाय-यदि सीर छुडानेपर रक्तस्राव बन्द न हो तो लोद, राल, निसोत, जौ, गेहूँ, धावड़ेकी छाल, गेरू, सांपकी कांचली, रेशमकी राख और सांभरकी खाल इन सबका महीन चूर्ण उस सीरके मुखपर लगाओ और जल आदिसे शीतल उपाय करो तो रक्त रुक जायगा यदि सीर छुड़ानेकी नस नाड़ीपर हों तो उसे दाग दो या खार लगाओ अथवा कसैली वस्तुका लेप करो, यदि बायें अण्डकोशपर शोथ हो तो दाहिने हाथके अँगूठेके नीचेकी नसको दाग दो या दाहिने हाथकी सीर छुड़ा दो और दाहिने अण्डकोशपर शोथ हो तो बायें हाथके अँगूठेके नीचेकी नसको दाग दो या बायें हाथकी सीर छुड़ा दो शोथ उतर जावेगा, तथा विसूचिकारोगग्रसित मनुष्यको पार्श्वभागपर दाग दो तो विसूचिका (महामारी) दूर हो जावेगी।

सीरोद्भवव्यथा-यदि सीर खुलवानेमें अधिक रुधिर निकल जावे तो वह रोगी नेत्ररहित, अर्धांगवात, तिमिर, तृषा, शिरोग्रह, कास, श्वास, हिचकी, दाह पांडु इन रोगोंमेंसे किसी रोगसे युक्त हो जाता है अत्यन्त रुधिरनिकल जानेपर प्राणरहित भी हो जाता है इस लिये वैद्यको विचारके साथ रक्तमोचन करवाना चाहिये।

शमन-यदि दैवशात् रुधिर निकलनेपर रोगी क्षीण हो जावे तो उसे षष्टितंडुलकी क्षीर (खीर) या दूध (भक्षणयोग्यवर्ण समझा जावे तो) मृगमांस या बकरेका माँसरस, पीडा शांत होकर शरीर हलका और मन प्रसन्न होने तक सेवन कराते रहो. यदि विशेष रुधिर निकल कर शोथ आ जावे तो उसे उष्ण घीसे सेंको या अन्य उपचार करो तो शोथ मिटकर पीडा शांत हो जावेगी।

रक्तमोचनपर वर्जित कर्म-रक्तमोचन करानेवाले रोगीको मैथुन, क्रोध, शीतलजलका स्नान, बाहिरी वायु; एकस्थानपर बैठा रहना, दिनको सोना, खारी खट्टी और कडवी वस्तु खाना, चिंता, विशेष भाषण और अजीर्ण पर भोजन, शरीरमें पूर्णबल प्राप्त होने तक ये कर्म कदापि न करने दो।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे स्नेहनवमनविरेचनाभ्यासेवनबस्तिकर्मधूम्रपानरक्तमोचन निरूपणं नाम त्रयोविंशतितमस्तरंगः ॥ २३ ॥

इति विचारखण्डः २.

सूचना

★

इस तृतीय खण्डमें सब रोगोंका निदान उत्तम प्रकारसे वर्णन किया गया है इसी लिये इसको 'निदानखण्ड' संज्ञा दी गई है, इसके ३४ तरंग हैं, जिनमेंसे प्रथम तरंगमें निदान पंचक, द्वितीयामें रोगोंके १४ प्रकार, तथा शरीरस्थ १४ वेगोंकेप्रति रोधसे रोगोत्पत्तिका प्रदर्शन, तृतीय तरंगमें शिवजीकी कोपाग्निद्वारा ज्वरका प्रादुर्भाव तथा तद्विभादि और अवशिष्ट तरंगोंमें सम्पूर्ण रोगोंकी लक्षणोत्पत्ति यथाक्रमसे वर्णनकीगयी है, जिनकी सूचना यहाँ न देनेका मुख्य कारण यह है कि, जिस तरंगमें जो जो रोग वर्णित हैं, उनका वृत्तान्त तत्तत्तरंके प्रथम श्लोकसे ही ज्ञात हो जावेगा, विशेषतः–जहां कहीं उक्त श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्दकी योजना दिखाई पड़े वहाँ पाठकगण ऐसा विचार लेवें कि इस तरंगमें श्लोकोक्त रोगोंसे भी कुछ विशेष रोग हैं।

श्रीः

अथ निदानखण्डः ३.

निदानपञ्चकम्

रोगज्ञानार्थमेवादौ यत्नः कार्या भिषग्वरैः ।
सति तस्मिन् क्रियारम्भः पुण्याय यशसेश्रियै ॥ १ ॥

सुश्रुते

प्रथम वैद्यको रोग जाननेके लिये प्रयत्न करना चाहिये क्योंकि जो रोगनिश्चय होनेपर चिकित्साका प्रारंभ करता है वही पुण्य, यश और लक्ष्मी इत्यादिको प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं ऐसा सुश्रुतमें लिखा है ॥ १ ॥

रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनंतरमौषधम् ।
ततः कर्म भिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥ २ ॥

भावप्रकाशे

तथा भावप्रकाशमें भी लिखा है कि, वैद्य प्रथम रोगकी परीक्षा करके उसीरोगयोग्य औषध विचारे तदनन्तर रोग और औषधको यथार्थ जान उपाय करे, यदि इसके विरुद्ध करे तो उसके समान दुष्ट पातकी और हिंसक दूसरा कौन होगा ॥ २ ॥

अथ रोगज्ञानाय पञ्चोपायानाह

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ।
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधा स्मृतम् ॥ ३ ॥

१ निदान, २ पूर्वरूप, ३ रूप, ४ उपशय और ५ सम्प्राप्ति ये पांच विधान रोगज्ञानके लिये हैं जिनसे वैद्य रोगोंको पहिचान सके ॥ ३ ॥

उक्त पांचों विषयोंका स्पष्टीकरण नीचे करते हैं—

१–निदान, निमित्त, हेतु, २ आयतन, ३ प्रत्यय, ४ उत्थापन और ५ कारण ये निदानके पर्याय हैं, रोगहोनेके कारणको निदान कहते हैं।

२ पूर्वरूप--जिस चिह्नसे उत्पन्न होनेवाला रोग जाना जावे उसे पूर्वरूप जो कि दोषोंके कारणसे अप्रसिद्ध (गुप्त) रहता है, जैसे ज्वरमें श्रम होना और दूसरा विशेष पूर्वरूप, जिसमें वातादि दोष स्पष्ट दिखाई पडें जैसे वातज्वरके आदिमें जमुहाई और अंगमर्दन होना।

३ रूप--पूर्वरूपकी प्रसिद्धि होनेपर उस (पूर्वरूप) को ही रूप कहते हैं, अर्थात जिसमें रोग साफ जान पड़े वह रूप कहलाताहै, इसके "संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिह्न और आकृति" भी नाम हैं।

४ उपशय--१ हेतु विपरीतकारी, २ व्याधिविपरीतकारी, ३ हेतुव्याधिविपरीतकारी, ४ हेतुविपरीत अर्थकारी, ५ व्याधिविपरीत अर्थकारी और ६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी, औषधि, अन्न और विहारकी सुखकारक योजनाको उपाय (तथा सात्म्य) और इनकी दुःखकारक योजनाको अनुपशय (तथा असात्म्य) कहते हैं।

उपशय और अनुपशय दोनोंके अठारह २ (३६) भेद हैं अर्थात १ हेतुविपरीतकारी औषध, २ हेतुविपरीतकारी अन्न ३ हेतुविपरीतकारी विहार, ४ व्याधिविपरीतकारी औषध, ५ व्याधिविपरीतकारी अन्न, ६ व्याधिविपरीतकारी विहार, ७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध, ८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न, ९ हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार, १० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध, ११ हेतुविपरीतकारी अन्न, १२ हेतुविपरीत अर्थकारी विहार, १३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न, १५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार, १६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न और १७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार, ये १८ भेद उपशयके और इसी प्रकार (इन्हीं नामोंके १८ भेद अनुपशयके होकर ३६ होजाते हैं।

अब उक्त अठारह भेदोंको उदाहरणोंके द्वारा दृढ करते हैं—

१ हेतुविपरीतकारी औषध–जिसका "शीत" हेतु (कारण) है ऐसे कफज्वर तथा शीतज्वरमें शुण्ठि आदि उष्णौषध जो कि शीतको नाश करके सुखकारी हो वह हेतुविपरीतकारी औषध कहलाती है।

२ हेतुविपरीतकारी अन्न–श्रमजनित वातज्वरमें कुछ उष्णता लिये हुए मधुरतायुक्त स्निग्ध (चिकना) भात आदि श्रम हरनेवाले और सुखकारक जितने अन्न हैं वे हेतुविपरीतकारी अन्न कहलाते हैं।

३ हेतुविपरीतकारी विहार–दिनके शयनसे बढ़े हुए कफको शमनकारक रात्रिके जागरण आदि व्यवहार हेतुविपरीतकारी विहार कहलाते हैं।

४ व्याधिविपरीतकारी औषध–जैसे अतिसारमें पाठादिस्तभंक तथा जो सुखकारक हो वह व्याधिविपरीत औषध कहलाती है।

५ व्याधिविपरीतकारी अन्न–जैसे अतिसार रोगमें मसूर आदि स्तम्भक तथा सुखकारक अन्न व्याधिविपरीतकारी अन्न कहलाते हैं।

६ व्याधिविपरीतकारी विहार–जैसे उदावर्त रोगमें बलात्कारसे (काँख काँखकर) अधोवायुको निकालना इत्यादि कार्योंको व्याधिविपरीतकारी विहार कहते हैं।

७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध–जैसे वातशोथरोगमें इस रोगकी नाशक दशमूल आदि औषधको हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध कहते हैं।

८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न–जैसे कफ तथा ग्रहणीमें इन रोगोंके नाशक सुखकारक तक्र (मट्ठा) तथा तद्युक्त मूँगादि लघु अन्नको हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न कहते हैं।

९ हेतुव्या विपरीतकारी विहार–जैसे घाममें विचरनेसे जो दाहयुक्त पित्तज्वर उत्पन्न हुआ तो उसपर जल सिंचित उरई (खश) की टट्टी लगे हुए शीतल स्थानमें कोमल शय्यापर लेटना आदि पित्तज्वरनाशक तथा सुखदायी कार्योंको हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार कहतेहैं।

१० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध–जैसे पित्तप्रधानसे पके हुए शोथपर पित्तकारक उष्ण अर्कमूलादिका लेप लगा देना जो हेतुके विपरीत कार्यको करे ऐसी क्रियाको हेतुविपरीत अर्थकारी औषध कहते हैं।

११ हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न–जैसे पित्तशोथपर दाहकारक अन्नका उपयोग हो, इसे हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न कहते हैं।

१२ हेतुविपरीत अर्थकारी विहार–जैसे वातोन्मादमें त्रास देनेवाला विहार (त्रास देना) वातनाशक तथा सुखकारक होनेसे हेतुविपरीत अर्थकारी विहार कहलाता है।

१३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध--जैसे कफमें मैनफल आदि वांतिकारक पदार्थ जो कि व्याधिसे विपरीत कार्य करनेवाले हों वे व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध कहलाती हैं।

१४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न -जैसे अतिसार रोगोंमें दुग्ध आदि रेचक अन्न (भक्षणपदार्थ) व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न कहलाते हैं।

१५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार--जैसे वमन होते समय मुखमें और भी अंगुष्ठ आदि डालकर वमन करना इसे व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार कहते हैं।

१६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध--जैसे अग्निदग्धपर उष्ण अगर (चन्दन) आदि औषधिका लेप जो हेतु तथा व्याधि दोनोंके विपरीत अर्थको करनेवाले हैं, वे हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध कहावेंगी।

१७--हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न जैसे मदात्यय (मतवाली दशा) में मद्यादि पान करना, इसे हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न (भक्षण) कहते हैं।

१८ हेतुव्याधिविपरीत अर्थका विहार--जैसे व्यायामजन्य मूढवात (कसरत करनेसे उत्पन्न हुई जो बादी) पर जलमें तैरना इत्यादि ऐसे कार्यको हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार कहते हैं।

ये १८ अठारहों उपचार सुखकारक होनेसे अपशय तथा यही औषध अन्न और विहार दुःखकारक होनेसे (१८ भेद) अनुपशय कहलाते हैं, ऐसेही सद्वैद्यको देश, काल और अवस्थाका विचार भी करना चाहिये।

५ सम्प्राप्ति--बिगडे हुए वात, पित्त और कफ अपने स्थानको छोडके अंग प्रत्यंगोंमें फैलकर जो रोगोत्पत्ति करते हैं, इस (उत्पत्ति) को सम्प्राप्ति (तथा आगति भी कहते हैं इस संप्राप्तिके "१ संख्या, २ विकल्प, ३ प्राधान्य, ४ बल और ५ काल" ये पांच भेद हैं।

१ संख्या--जैसे ८ प्रकारका ज्वर, ६ प्रकारका अतिसार आदि यह जो प्रत्येक रोगकी संख्या लिखी है इसे संख्या सम्प्राप्ति कहते हैं।

२ विकल्प--जिस रोगमें वातादि तीनों दोष मिश्रित हों, उस दोषसमूहमें निश्चय किया जावे कि, किसका कितना अंश है तो इस अंशांशकल्पनाको विकल्पसम्प्राप्ति कहते हैं।

३ प्राधान्य- जो रोग स्वतंत्र हो उसे प्रधान, तथा जो परतंत्र हो उसे अप्रधान कहते हैं, जैसे ज्वर स्वतंत्र होनेसे प्रधान तथा उसके उपद्रव परतंत्र होनेसे अप्रधान हैं, इस उक्त विषयके निश्चयको प्राधान्य सम्प्राप्ति कहते हैं।

४ बल--जिस रोगमें निदान, पूर्वरूप और रूप आदि सम्पूर्ण अंग हों वह बलवान् रोग तथा जिसमें उक्त अंग न हों वह निर्बल रोग कहलाता है, उक्त विषयके निश्चयको बल सम्प्राप्ति कहते हैं।

५ काल--वात, पित्त और कफके समय आदिका निश्चय करना, इसे कालसम्प्राप्ति कहते हैं।

ये सब विषय विस्तृतभावसे माधवनिदान तथा सुश्रुत आदि ग्रन्थोंमें लिखे हैं, वैद्य प्रथम निदानादि पांचों उपायों द्वारा रोगका पूर्ण निश्चय कर लेवे।

रोगाणां भेदाः

रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता।
रोगा दुःखस्य दातारो ज्वरप्रभृतयो हि ते॥ १॥

भावप्रकाशः

वात, पित्त, और कफकी न्यूनाधिकताको रोग तथा इनकी समताको आरोग्य कहते हैं, ज्वर आदि रोग ही दुःख देनेवाले हैं, इसलिये हम प्रथम रोगोंके १४ भेदोंको दिखलाते हैं जिनकी परिभाषा आगे लिखेंगे॥ १॥

१ सहजरोग, २ गर्भजरोग, ३ जातज्ञातरोग, ४ पीड़ाजनित रोग, ५ कालरोग, ६ प्रभावजरोग, ७ स्वभावजरोग, ८ देशजरोग, ९ आगंतुकरोग, १० कायिकरोग, ११ अंतररोग, १२ कर्मज रोग, १३ दोषजरो और १४ कर्मदोषजरोग।

१ सहजरोग-माता पिताके वीर्यदोषसे सन्तानको जो रोग हो वह सहजरोग कहलाता है।

२ गर्भज-बालक गर्भसेही कुबडा, पंगुला, छः अंगुली युक्त तथा किसी अंगसे हीन उत्पन्न हो वह गर्भजरोग कहलाता है।

३ जातज्ञातरोग-बालकके गर्भनिवास कालमें माताके मिथ्या

आहार विहारसे बालकको मूकता आदि रोग हों, उन्हें जातज्ञात रोग जानो।

४ पीडाजनितरोग–शस्त्रप्रहार आदिसे जो अस्थिभंगादि रोग उत्पन्न होवे पीडाजनित रोग कहलाते हैं।

५ कालरोग–शीत, उष्ण और वर्षाऋतुमें जल वायुके विपर्ययसे जो रोग उत्पन्न हो वह कालरोग कहलाता है।

६ प्रभावजरोग–इष्टदेव, गुरु, तपस्वी और वृद्धादिके शाप तथा ग्रहोंकी प्रतिकूलतासे उत्पन्न रोग प्रभावज कहलाते हैं।

७ स्वभावजरोग–भूँख, प्यास और वृद्धताके कारणसे जो उत्पन्न हुए हों वे स्वभावजरोग कहलाते हैं।

८ देशजरोग–किसी देशमें मनुष्य काले, भूरे, तथा लाल रंग लिये उत्पन्न होते हैं, इसी प्रकार किसी देशमें कोई रोग विशेषतापूर्वक होते हैं वे देशज रोग कहलाते हैं।

९ आगंतुकरोग–क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष और भूतादिबाधासे उत्पन्न रोग आगंतुकरोग कहलाता हैं।

१० कायिकरोग–ज्वर आदि विषरोग पर्यंत जो मुख्य रोग हैं वे कायिक रोग कहलाते हैं।

११ अंतररोग–चित्तभ्रम (हौलदिल) आदि विकारोंको अंतररोग कहते ह।

१२ कर्मजरोग–इस जन्मके ब्रह्महत्यादि पाप तथा पूर्वजन्मके दुष्कर्मोंसे जो उत्पन्न हों उन्हें कर्मजरोग कहते हैं।

१३ दोषजरोग–वात, पित्त और कफसे जो उत्पन्न हो उसे दोषजरोग कहते हैं।

१४ कर्मदोषरोग–ब्रह्महत्यादि पाप तथा वात, पित्त, कफ इन दोनों कारणोंसे युक्त जो रोग उत्पन्न हो उसे कर्मदोषजरोग कहते हैं, उक्त समग्र रोगोंके दो भेद और भी किये गये हैं अर्थात "१ साध्य २ असाध्य" अब साध्यके पुनः दो भेद कहते हैं अर्थात "१ साध्य २ कष्टसाध्य"

१ साध्य–जो थोड़ेही यत्नसे शमन हो जावे।

२ कष्टसाध्य–जो बहुत यत्न करनेपर कठिनाईसे शमन हो।

२ असाध्यके भी दो भेद होते होते हैं अर्थात् " १ याप्य २ असाध्य "

१ याप्य–रोगपर जबतक औषध चलती रही तथा पथ्यसे बर्ताव रहा तबतक रोग दबा रहा और ज्योंही औषध सेवन छोड़कर कुपथ्य हुआ कि वही रोग पुनः उत्पन्न हो गया।

२ असाध्य–जिस रोगपर कोई भी औषध गुण न करे और अन्तमें वह रोग शरीरको नष्ट कर देवे

उक्त भेदोंके व्यतिरिक्त रोगोंके औरभी अनंत भेद हैं जिनको ईश्वरही जानता है, परन्तु सद्वैद्यको चाहिये कि, अपने शास्त्र तथा बुद्धिबलसे उन सब भेदोंको अंतर्गतही समझ लेवे।

रोगोत्पत्तिका दूसरा कारण तथा विभेद और भी सुनो–

इस शरीरमें निम्नलिखित १४ चौदह वेग हैं, मनुष्यको उचित है कि किसी वेगको निष्कारण उत्पन्न न करे और जो कोई वेग स्वयं उत्पन्न हो उसे न रोके, तथा उस वेग जनित कार्य को अवश्य करे तो शरीर सर्वदा रोगरहित रहेगा, यदि वेगोंको उत्पन्न करे या स्वयं उत्पन्न हुए को रोकके तत्तत्कार्य से अभावित रहे तो शरीर अवश्य रोग युक्त हो जावेगा, १ अधोवायुवेग, २ रेचन (मल) वेग, ३ मूत्रवेग, ४ डकारवेग, ५ छींकवेग, ६ तृषावेग, ७ क्षुधावेग, ८ निद्रावेग; ९ खांसीवेग, १० श्रमजनित श्वासवेग, ११ जमुहाई वेग, १२ अश्रुवेग, १३ वमनवेग और १४ कामवेग।

इन प्रत्येकके रोकनेसे जो जो हानि प्राप्त होती हैं तथा रोग उत्पन्न होते हैं उन्हें प्रकट करते हैं।

१ अधोवायुवेग–रोकनेसे गोला. प्लीहा, अफरा, उदरपीड़ा आदि रोग उत्पन्न होकर अधोवायुका सरण उत्तम प्रकारसे नहीं होता (अर्थात् मलद्वारसे वायु नहीं निकलती) इसलिये अधोवायु रुकनेसे मूत्रकृच्छ्र, बंध, कुष्ठ, नेत्ररोग, हृदयपीड़ा ये रोग उत्पन्न होते हैं।

२ मलवेग–रोकनेसे हाथ, पांव, मस्तक, हृदय आदिमें पीड़ा उत्पन्न होकर वायुकी ऊर्ध्वगति और अधोवायुका प्रतिबन्ध तथा उदावर्त्त और पीनसरोग उत्पन्न होते हैं और अधोवायुकी प्रतिबन्ध लिखित हानियां भी होंगी।

३ मूत्रवेग-रोकनेसे अंगमें फूटन, मूत्रविबंध (पथरीका रोग) और मल प्रतिबन्ध लिखित रोगभी उत्पन्न होते हैं।

४ डकारवेग-रोकनेसे अरुचि, शरीरकंपन, हृदयरुकावट, अफरा, खांसी और हिचकी आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

५ छींकवेग-रोकनेसे शीशमें पीड़ा, शरीरकी सब इन्द्रियोंमें दुर्बलता, ग्रीवास्तम्भन (गर्दन जकड़जाना), मुखमें टेढ़ापन आदि व्यथा उत्पन्न हो जाती है।

६ तृषावेग-रोकनेसे मुखशोष (मुँह सूखना) समग्र अंगमें फूटन, बधिरपन (बहरा), मोह, भ्रम और हृदयमें पीड़ा उत्पन्न होती है।

७ क्षुधावेग-रोकनेसे सब अङ्ग टूटना, भोजनपर अरुचि, समग्रवस्तुओंपर ग्लानि, शरीरमें कृशता (दुर्बलपन), बाईं तरफ का शूल चलना, श्रम, विना श्रम किये श्रम होना, सब इन्द्रियोंमें शिथिलता होकर शरीरका वर्ण बदल जाता है।

८ निद्रावेग-रोकनेसे मोह, मस्तक और नेत्रोंमें भारीपन, आलस्य, जमुहाई और अंगम पीड़ा होती है।

९ खांसीवेग-रोकनेसे अन्नपर अरुचि, हृदयरोग, श्वासरोग, शोषरोग, हिचकी उत्पन्न होकर वही (खांसी) रोग विशेष बढ़ता है।

१० श्रमजनितश्वासवेग--रोकनेसे गोला, हृदयरोग और मोह उत्पन्न होता है।

११ जमुहाई--रोकनेसे मस्तकमें पीड़ा, इन्द्रियोंमें दुर्बलता और मुख तथा टेढ़ापन हो जाता है।

१२ अश्रुवेग-रोकनेसे पीनस, गोला, अरुचि, नेत्ररोग, मस्तकमें पीडा, हृदयमें पीड़ा और ग्रीवामें पीड़ा उत्पन्न होती है।

१३ वमनवेग--रोकनेसे रक्तवात, रक्तपित्त, कोढ, नेत्ररोग, पामा (खुजली), श्वास, खाँसी, हृदयपीडा, सूजन, मुखपर श्याम छाया और कीलें ये रोग उत्पन्न होते हैं।

१४ कामवेग--रोकनेसे प्रमेह, शुक्रावरोध (सुजाक), लिंगेन्द्रियमें पीडा तथा सूजन, चित्तभ्रम और भोजनपर अरुचि इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं।

ज्वराधिकार

यतः समस्तरोगाणां ज्वरो राजेति विश्रुतः ।
अतो ज्वराधिकारोऽत्र प्रथमो कथ्यते मया ॥ १ ॥

सब रोगोंका राजा ज्वर है इसलिये पहिलेसे यहां ज्वरका अधिकार लिखते हैं ॥ १ ॥

ज्वरस्य प्रथमत्पुत्पत्तिमाह

दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिश्वाससम्भवः ।
ज्वरोऽष्टधा पृथग्द्वन्द्वसंघातागंतुजः स्मृतः ॥ २ ॥

सुश्रुते

दक्षप्रजापतिके अपमानसे क्रोधित होकर श्रीमहादेवजीने निजश्वाससे ज्वरको उत्पन्न किया यह ज्वर आठ प्रकारका है अर्थात् १ वातज्वर, २ पित्तज्वर, ३ कफज्वर, ४ वातपित्तज्वर, ५ वातकफज्वर, ६ पित्तकफ-ज्वर, ७ सन्निपातज्वर और ८ आगंतुकज्वर ॥ २ ॥

मूर्तिरप्यस्योक्ता सुश्रुतेन

रुद्रकोपाग्निसम्भूतः सर्वभूतप्रणाशनः ॥
त्रिपाद्भस्मप्रहरणस्त्रिशिराः सुमनोहरः ॥ ३ ॥

नीचे ज्वरके अवयव देखो--इस ज्वरके तीन ३ चरण, ३ मस्तक, ९ नेत्र, ६ भुजा, ३ ह्रस्व (छोटी) जाँघें हैं ॥ ३ ॥

वैयाघ्रचर्मवसनः कपिलो माल्यविग्रहः ।
पिङ्गेक्षणोह्रस्वजंघो बीभत्सो बलवानलम् ॥ ४ ॥
पुरुषो लोकनाशार्थमसौ ज्वर इति स्मृतः ॥ ५ ॥

अन्यच्च

ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिराः षड्भुजो नवलोचनः ॥
भस्मप्रहरणो रुद्रः कालान्तकयमोपमः ॥ ६ ॥

ज्वर शृंगार--कुछ ललाई लिये हुए पीला वर्ण और पीलेही नेत्र हैं, व्याघ्रचर्मके वस्त्र पहिने, भस्म रमाये, गलेमें माला डाले, ऐसी भयावनी मूर्तिको धारण किये सर्व प्राणिमात्रको नष्ट करनेके लिये श्रीशंकरजीकी कोपाग्निसे यह ज्वर उत्पन्न हुआ है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

चित्र २

पृथग्दोषः प्रभुतानां ज्वराणां हि यथाक्रमम् ॥
तरंगे प्रथमे चात्र निदान कथ्यते मया ॥ ७ ॥

वातादि पृथक् २ दोषोंसे उत्पन्न भये जो वात, पित्त और कफज्वर उनका निदान इस प्रथम तरंगमें यथाक्रमसे कहते हैं ॥ ७ ॥

ज्वरप्राप्ति--जब वात, पित्त और कफ मनुष्यके मिथ्या आहार विहारके कारण रसमें प्राप्त होकर उस (रस) को बिगाड़ देते हैं, और अग्निको बाहर निकालकर शरीरको तप्त कर देते हैं, तब इस दशावाले मनुष्यको ज्वर प्राप्त हुआ करते हैं।

ज्वरमात्रके सामान्य लक्षण--शरीर उष्ण होना, पसीना निकलना, क्षुधा मन्द होना, अंग जकड़ना, मस्तकमें पीडा होना और हाथ, पैर फूटना ये सब लक्षण संगही हों तो ज्वर प्राप्त हुआ जानो।

१ वातज्वरका पूर्वरूप--जमुहाई आना और हाथ पांवमें पीड़ा होना।

२ पित्तज्वरका पूर्वरूप--किसी कार्यमें चित्त न लगना और नेत्र जलना।

३ कफज्वरका पूर्वरूप--अन्नसे अरुचि और शरीर भारी होना उक्त लक्षण तत्तज्ज्वर आनेके पूर्वहीसे प्रगट हो आते हैं।

१ वातज्वर लक्षण--शरीर कांपने लगे, ज्वरका विषम (न्यूनाधिक = अर्थात् कभी अति कभी सूक्ष्म) वेग होवे, नींद और छींकका अभाव, शरीरमें रूखापन हो आवे, मस्तक और अंगमें पीडा हो, जिह्वा छहों रसोंका स्वाद न पहिचान सके, रेचनकी रुकावट हो, पेटमें शूल, अफरा आदि पीड़ा हो और जमुहाई विशेष आवे तो वातज्वर जानो।

२ पित्तज्वर लक्षण--नेत्रोंमें दाह हो, मुख खट्टा होजावे, प्यास अधिक लगे, मूर्च्छा (चक्कर = गश्त, शरीर अति उष्ण हो, ज्वरका विशेष वेग हो, रेचनद्रव (दस्त पतला) हो, वमन हो, निद्रा न आवे, मुख सूखे या पक जावे, पसीना आता हो, मल मूत्र और नेत्र पीले पड गये हों तो पित्तज्वर जानो।

---

१ जिनका निवास नाभि और स्तनोंके मध्य आमाशय (आंचके स्थान) में रहता है।

३ कफज्वर लक्षण–अन्नपर रुचि न हो, शरीर भारी हो जावे, रोम २ खड़े हो जावें मूत्र और नख श्वेत हो जावें निद्रा अधिक आवे, शरीर ठंढासा हो (अर्थात् हाथ पांव तो जलसे धोनेके सदृश शीतल हों पर अवशिष्ट शरीर इससे किंचित् उष्ण हो जावे) मुख मीठा हो, ज्वरका विशेष वेग न रहे, आलस्य अधिक आवे, श्वास कास आवे, नाक बहे तथा कफजन्य मलसे नाक रुक जावे तो कफज्वर जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे वातादिज्वरत्रयनिदान निरूपणे प्रथमस्तरंगः ॥२॥

द्वन्द्वजज्वरः

द्वंद्वदोषप्रभूतानां ज्वराणां च यथाक्रमम्
तरंगे च द्वितीयेऽत्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न हुए जो द्वन्द्वज (वात पित्त, वात कफ और पित्त कफ) ज्वर हैं उनका निदान इस दूसरे तरंगमें लिखते हैं ॥ १ ॥

४ वातपित्तज्वर लक्षण–मूर्च्छा (चक्कर) आवे, निद्राका अभाव, मस्तकमें पीडा कण्ठ और मुख सूखके वमन हो, रोमांच हो उठे, अन्न-पर रुचि न चले, अन्धेरी आवे, अंगमें पीडा हो, जमुहाई आवे और प्रलाप (कुछका कुछ बकवाद) करे तो वात पित्तज्वर जानो ।

५ वातकफज्वर लक्षण–खांसी चले, अन्नपर अरुचि, सन्धियोंमें पीडा, मस्तकमें पीडा, नाकका बहाव, शरीरमें अत्यंत थकाव कंप और भारीपन, नींदका अभाव, पसीनेका बहाव, श्वास का चलाव, पेटमें शूल, सर्वथा हंसकी तरह नाडीकी गति, धूसर (धूएँका रंग), श्वेत, चिकना किंवा सुरमेका रंग जैसा मूत्र, मल भी काला या चिकना हो, नेत्र धूसर हों, मुखका स्वाद कसैला या मीठा हो, जीभ काली अथवा श्वेत और आर्द्रता (गीलापन) को लिये हो कण्ठमें कफसे घुरांठा चले और शरीर ठण्डा हो जावे तो वात-कफज्वर जानना चाहिये ।

६ कफपित्तज्वरलक्षण–मुख और जिह्वा कफसे युक्त हो, तंद्रा (आधे नेत्र खुले और आधे बंद), मोह, खांसी, अन्नपर अरुचि, प्यासकी

अधिकाई, बारबारदाह और ठंढ लगे, शरीर और हृदयमें पीडा, मूर्छा आवे, भूँख न लगे, शरीर जकडासा जान पडे, नाडी हंस या मेंढ़कके सदृश गति करे, मूत्र कुछ ललाई लिये हुए श्वेत और चिकना हो, मल भी ललाईपर हो, नेत्र मेंढकके सदृश हों, मुख मीठा (और कभी कभी कडुवा भी) और जिह्वा लाल या श्वेत हो तो पित्तकफज्वर जानो, इन सबका निदान ज्वरतिमिरभास्करमें लिखा है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे वातादिद्वन्द्वजज्वरवर्णनं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

सन्निपातज्वर

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्य हि।
तरंगे च तृतीयेऽत्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

त्रिदोष करके उत्पन्न जो सन्निपातज्वर उसका निदान इस तृतीय तरंगमें लिखते हैं ॥ १ ॥

सन्निपातज्वर कारण–जो मनुष्य अतिचिकना, मीठा, खट्टा, तीखा और रूखा भोजन करे, रुचिसे अधिक विरुद्ध वस्तु खावे, मलीन जल पीवे, क्रोधवती, रोगयुक्ता स्त्रीसे मैथुन करे, बिगड़ा हुआ कच्चा मांस खावे तथा शीतोष्ण देश और काल (समय) के विरुद्ध व्यवहार रक्खे उसे सन्निपातज्वर उत्पन्न हो जावेगा।

लक्षण–जिसको क्षणमें दाह और अकस्मात् क्षणमें ठंढ लगे, स्वभाव बदल जावे, इंद्रियां अपने अपने धर्मको त्याग कर दें, शरीरकी हड्डी संधि (हड्डियोंका जोड़) और मस्तकमें विशेष पीडा हो, नेत्रोंसे आंसू बहे, नेत्र काले या लाल होजावें, कानोंमें विचित्र शब्द और पीडा जान पडे, कंठमें कांटे पड़ जावें, तंद्रा, मोह, कास, श्वास, भ्रम और अन्नपर अरुचि हो जावे, प्रलाप करने लगे, जिह्वा काली, खुरदरी, या लट्ठर (कठोर) हो, रुधिरयुक्त कफ निकले, दिनको निद्रा आवे, रात्रिको निद्रा न आवे, पसीना कभी अधिक हो और कभी बिल्कुल न हो, रोगी अकस्मात् नाचना गाना रोना हँसना किंवा मस्तकादिक अवयव हिलाना ऐसे कार्य करने लगे, प्यास बारंबार लगे, हृदयमें पीडा हो, मलमूत्र थोडा बहुत हो या पूर्णही रुक जावे, शरीर कृश हो, कंठमें कफका घरांटा चले, मूक होजावे, ओष्ठ तथा इंद्रियां पक

जावें, पेट भारी हो, नाड़ीकी गति महामंद, शिथिल,सूक्ष्म और टूटीसी हो, मूत्र हलदीके सदृश पीला, रक्तके समान लाल और काला हो जावे और मल भी श्वेत श्याम तथा सूकरमांसवत हो जावे, जिसमें उपर्युक्त लक्षण हों उसे सन्निपातज्वरग्रसित जानो, वेग तथा बल-उपर्युक्त लक्षणधारी सन्निपातज्वर और काल (मृत्यु) में कुछ भेद नहीं है, जो वैद्य इस ज्वरसे विजय पावे (इसको हटावे = दूर करे रोगी अरोग करे) उससे अधिक प्रतापी कौन होगा ? कोई नहीं ।

रोगी उस वैद्यको (जिसने उसे सन्निपातरूपी अजगरके मुँहसे बचाया) जो कुछ देवे सो थोडा ही है, रत्न, सुवर्णादि असंख्यात द्रव्य तो क्या वरन् अपनी आत्मा भी सर्वदा वैद्यकी सेवामें अर्पण कर देवे तो उसके ऋणसे उऋण नहीं हो सक्ता क्योंकि उसने कालसे भी बचाया है ।

चरक, सुश्रुत और वाग्भटके मतसे तो उक्त प्रकारका ही सन्निपात है, परन्तु अन्य ग्रन्थोंके मतसे ऋषियोंने इसके ५२ भेद कहे हैं जिनमेंसे १३ प्रकारके तो मुख्य ही हैं, अर्थात् १ संधिग, २ अंतक, ३ रुग्दाह, ४ चित्तभ्रम, ५ शीतांग, ६ तंद्रिक, ७ कण्ठ कुब्ज, ८ कर्णक, ९ भुग्ननेत्र, १० रक्तष्ठीवी, ११ प्रलाप, १२ जिह्वक, और १३ अभिन्यास।

सन्निपातायुर्बल-अर्थात् हर प्रकारके सन्निपात अपने जुदे जुदे; नियत कालपर्यंत भोगवान रहते हैं, जिनमेंसे १ संधिग ७ दिन २ अंतक १० दिन, ३ रुग्दाह २० दिन, ४ चित्तभ्रम, ११ दिन, ५ शीतांग, १५ दिन, ६ तंद्रिक २५ दिन, ७ कंठकुब्ज १३ दिन, ८ कर्णक ९० दिन, (३ मास), ९ भुग्ननेत्र ८ दिन, १० रक्तष्ठीवी १० दिन, ११ प्रलाप १४ दिन, १२ जिह्वक १६ दिन, और १३ अभिन्यास सन्निपात १५ दिवस तक रहता है, सो सन्निपातमें कोई भी उपद्रव उठ आवे तो रोगीको तत्काल नष्ट होनेमें विलम्ब नहीं लगता इसलिये सद्वैद्य उपद्रव शमनपर पूर्ण ध्यान रक्खे ।

१ संधिग सन्निपातज्वर लक्षण-जिस रोगीकी गांठगांठ (संधि संधि) पर अधिक शूल चले, शरीर सूज जावे, पेट भारी हो, अङ्ग

१ सन्निपातस्य कालस्य कश्चिद्भेदो न वर्तते। चिकित्सको जयेद्यस्तं कोऽन्यस्तस्मात्प्रतापवान् ॥ १ ॥

२ त्रिदोषाजगरग्रस्तं मोचयेद्यस्तु वैद्यराट् । आत्मापितस्मैदातव्य; किं पुनः कनकादिकम् ॥ २ ॥ वैद्यजीवनेह्युक्तम् ॥

शिथिल हो बल नष्ट हो वायु तथा कफका अतिकोप हो, निद्रा न आवे तो संधिग सन्निपात जानो ।

२ अन्तक सन्निपातज्वर लक्षण–शरीरमें अत्यन्त दाह लग जावे, देहकम्पायमान होने लगे, मस्तक इधर उधर पटके, श्वास, कास और हिचकी आवे, प्रलाप करे और वस्तु ज्ञान न रहे तो अन्तक सन्निपात जानो ।

३ रुग्दाहसन्निपात लक्षण–जो रोगी विलाप करे, शरीरमें अति दाह हो, उदरमें शूल चले, शरीर व्याकुल हो, और प्यास अधिक लगे तो रुग्दाह सन्निपात जानो ।

४ चित्तभ्रमसन्निपात लक्षण–रोगी को भ्रम हो, मंदताप और मोह होवे, (पागल) के समान नेत्र होकर बका करे, नाचे, गावे, हँसे और श्वास अधिक आवे तो चित्त भ्रम जानो ।

५ शीतांगसन्निपात लक्षण--समग्र शरीर हिम (बर्फ) के समान ठंढ़ा होवे उस रोगीको शीतांगसन्निपात जानो ।

६ तंद्रिकसन्निपात लक्षण--रोगीको तन्द्रा अधिक हो, ज्वर वेगसे चढ़े, प्यास अधिक लगे, जिह्वा काली पड़कर खरदरी हो जावे, श्वास चढे, अतिसार, दाह और कानमें पीड़ा हो तो तंद्रिकसन्निपात जानो ।

कंठकुब्जसन्निपात लक्षण--मस्तक दूखे, दाह और पीडा अधिक हो, शरीर अत्यन्त तप्त हो, कण्ठ रुककर सूख जावे, शरीरमात्रमें पीडा होकर बकने लगे तो कण्ठकुब्ज सन्निपात जानो (यह कष्ठसाध्य है) ।

८ कर्णकसन्निपात लक्षण--शरीरमें ज्वर हो, कानके नीचे शोथ (सूजन) हो, श्वास चले, शरीर कांपे प्रलाप करे, पसीना निकले, कण्ठ सूखे, प्यास लगे और मोह भय हो उसे कर्णक सन्निपात जानो, (कर्णकसन्निपातके लक्षण अमृतसागरमें नहीं हैं इसलिये चक्रपाणि-दत्तके मतानुसार लिखे हैं)

९ भुग्ननेत्रसन्निपात लक्षण--रोगीकी स्मरणशक्ति स्मरणशक्ति नष्ट हो जावे, ज्वरका अधिक वेग हो, नेत्र टेड़े तथा चञ्चल हो जावें, शरीरकांपे भ्रम हो और प्रलाप करने लगे तो भुग्ननेत्रसन्निपात जानना चाहिये

१ यह अत्यन्त असाध्य है ।

१० रक्तष्ठीवीसन्निपात लक्षण—थूकके साथ रक्त गिरे, प्यास अधिक लगे; मोह उत्पन्नहो, श्वास अधिक चले, पेटमें शूल उठे अफारा, भ्रम और वमन हो तो रक्तष्ठीवीसन्निपात समझो ।

११ प्रलापसन्निपात लक्षण—शरीर कम्पितहो, विशेष प्रलाप करे, देह विशेष उष्ण हो, दाह अधिक हो, ज्वरका वेग तीक्ष्ण हो, श्वास चले अङ्गमें विकलता (बेचैनी—तलमलाहट) हो और रोगी संज्ञाहीन हो जावे (अर्थात् बेसुध, जो मनुष्यादिक नहीं पहिचाने) तो प्रलाप-सन्निपात जानो ।

१२ जिह्वकसन्निपात लक्षण—श्वास चले, ताप अधिक हो जिह्वा कठोर (लट्ठर) पड़जावे, तथा जिह्वामें कांटे पड़कर रोगी मूक (गूँगा) बहरा और बलहीनहो जावेतो जिह्वकसंन्निपातजानो ।

१३ अभिन्यास सन्निपात लक्षण—निद्रा न आवे, खांसी अधिकहो, शरीर कम्पायमानहो, समस्त चेष्टा बिगड़ जावे, गद्गद वाणी हो जावे जिह्वा काष्ठके समान (कठिन) हो जावे और संपूर्ण इंद्रियोंने अपना २ कर्तव्य कर्म त्याग कर दिया हो, तो अभिन्यांससन्निपात जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे सन्निपातज्वरभेदवर्णनं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

आगन्तुकज्वर

आगन्तुकप्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमम् ।
तुर्यै तरंगे चात्रादौ निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस चतुर्थ तरंगके आदिमें यथाक्रमसे आगन्तुक आदि ज्वरोंका निदान लिखते हैं ॥ १ ॥

१ शस्त्रप्रहार, २ भूतबाधा, ३ काम, क्रोध, शोक भयका आधिक्य, ४ विषभक्षण और ५ शाप इन कारणोंके द्वारा जो ज्वर उत्पन्न हुआहो वह आगन्तुकज्वर कहलाता है ।

१ शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न हुआ आगन्तुकज्वर-शस्त्रप्रहारसे पीडा उत्पन्नहोके बादीको कुपित करती है यह बादी रुधिरको बिगाड़कर

---

१ यह कष्टसाध्य है । २ यह अभिन्यास सन्निपात महाअसाध्य मृत्युरूप है इससे संरक्षण पाना देवकृपा तथा सद्वैद्यके हाथ है ।

चोटलगे हुए स्थानपर अत्यन्त पीडा, शोथ (सूजन) तथा शरीरके वर्णका विपर्यय (बदलना) कर देती है, उक्त लक्षण धारणकर ज्वर उत्पन्न हो तो शस्त्रकी चोट से उत्पन्न हुआ जानो ।

२ भूतादिबाधासे उत्पन्न हुआ आगन्तुक-शरीरमें उद्वेग (त्रास, दुःख, गड़बड़, हड़फूटन) होवे, कभी हँसे, कभी रोवे, कभी कम्पायमान हो, प्रलाप करे और चित्त स्थिर न रहे तो उक्त ज्वर जानो ।

३ काम, क्रोध, शोक, भयके आधिक्य से उत्पन्न हुआ इसके ५ भेद हैं ।

(१)-कामज्वर-- (पुरुषको) हो तो भोजनमें अरुचि होवे, मनमें दाह होवे, निद्रा, लज्जा, बुद्धि, धैर्य आदि से च्युत हो जावे (ये बातें न रहें) हृदयमें पीडा उठे, केवल सम्भोगमें ही ध्यान लगा रहे, और श्वासोच्छ्वास (साँस भरना) करे तो उस पुरुषको कामज्वर जानना चाहिये ।

(२)--कामज्वर--(स्त्रीको) होतो मूर्च्छा आवे, समग्र अंगमें मरोडे उठें, प्यास लगे, नेत्र चपलहो जावें, मनमें स्तनमर्दन करानेकी इच्छा विशेष हो; पसीना निकले, हृदयमें दाह हो, भोजनमें अरुचि होजावे लज्जा, निद्रा और धैर्यका नाश हो जावे उसी स्त्रीको कामज्वर जानो ।

(३)-क्रोधज्वर-शरीरमें कंप आवे, शरीरमें पीडा हो तथा पित्तज्वर (ऊपर लिख चुके हैं) के सदृश सब लक्षण हों तो क्रोधज्वर जानो ।

(४) शोकज्वर-(जिसे " मानसीज्वर " संज्ञा भी दी है) पुत्र, मित्र, स्त्री आदिके बिछोह 'नाश' से, धन हरणसे और राजादि वरिष्ठ पुरुषोंके तिरस्कारसे मानसीज्वर उत्पन्न होता है, रोगीको शोक अधिक हो, अतिसार हो और सब वस्तुओंसे ग्लानि हो जावे तो मानसीज्वर जानो ।

(५)-भयज्वर प्रलाप करे, अतिसार हो, चित्त स्थिर न रहे और भोजनसे अरुचि हो जाय तो भजज्वर जानो ।

४-विष आदि भक्षणसे ज्वर स्थावर[1] तथा जंगम[2] विष भक्षणसे ज्वर उत्पन्न होता है उससे रोगीके मुखपर श्यामता छाजाना अतिसार

१ संखिया, वत्सनाभ, हरतालआदि भक्षणसे । २ सर्प बिच्छू आदि विषवाले जीवोंके काटनेसे

होना, भोजनपर अरुचि होना और प्यास अधिक लगना, मूर्छा आना, शरीरमें सुई छेदन सदृश पीडा होती है। (उक्त लक्षण अमृतसागरमें नहीं लिखे हैं, अतएव हमने माधवनिदानसे लिखे हैं)

५–शापज्वर–गुरु, माता, पिताके तिरस्कार करनेके फलमें उनका शाप लगनेसे जो ज्वर हो वह शापज्वर कहलाता है, इस ज्वरमें हड्फूटन होकर शरीर विफल होता है और शेष सब लक्षण ज्वरके सदृशही होते हैं॥ इति आगंतुकज्वर॥

विषमज्वरोत्पत्ति–मनुष्यको ज्वर आके छूट गया हो, पश्चात् किसी प्रकारके कुपथ्यसे वातादि अल्पदोष कुपित होकर, रसधातुके व्यतिरिक्त रुधिरादि षट् धातुओंमेंसे किसी धातुमें प्राप्त होकर विषमज्वर को उत्पन्न करते हैं।

विषमज्वर लक्षण–शरीरको शीत या उष्ण करके चाहे जब ज्वरका वेग हो आवे और यह वेग कभी न्यून और कभी अधिक होता रहे तो इसे विषमज्वर जानो।

विषमज्वरके ५ भेद हैं–अर्थात् १ सन्तत, २ सतत, ३ अन्येद्यु ४ तृतीयक और ५ चतुर्थक।

१ सन्तत विषमज्वर–जो ज्वर ७ या १० अथवा १२ दिन पर्यन्त निरन्तर एकसा बना रहे फिर अपनी अवधि पूर्ण होनेपर शान्त हो वह सन्ततज्वर कहलाता है।

२ सततज्वर–जो ज्वर रात्रि दिन ८ प्रहर (२४ घंटे) में दो वार चढ़े वह सततज्वर कहलाता है।

३ अन्येद्यु–जो ज्वर एक दिनके अन्तरसे आवे वह अन्येद्यु कहलाता है, इसे इकतरा या एकन्तरा भी कहते हैं, जो एक दिन चढाता और एक दिन शांत रहता है।

४ तृतीयक–जो ज्वर तीसरे दिन चढे वह तृतीयक कहलाता है। इसे तिजारी भी कहते हैं, जो एक दिन चढ़ता और तीन दिन शांत रहता है।

५ चातुर्थिक–जो ज्वर चौथे दिन चढे वह चातुर्थिक कहलाता है। इसे चौथिया भी कहते हैं, जो एक दिन चढ़ता और दो दिन शांत रहता है॥ इति विषमज्वर॥

जीर्णज्वर–ज्वर अपनी आरंभ तिथिसे ७ दिनतक तरुण, १४ दिनपर्यन्त मध्यम, २१ दिनपर्यन्त प्राचीन और २१ दिनके पश्चात् वही जीर्णज्वर कहाने लगता है, रोगीके शरीरमें ज्वर २१ दिन रहे तो देह दुर्बल तथा रूखी हो जावे, क्षुधा न लगे और पेटमें सदा भारीपन ही बना रहे तो उसे जीर्णज्वर जानो।

अजीर्णज्वर–वारंवार द्रवरेचन (पतला दस्त) हो, खट्टी डकारें आवें, वमनकी इच्छा (जी मचलाना) हो और उदरमें पीडा रहे तो उसे अजीर्ण ज्वर जानना चाहिये।

दृष्टिज्वर–जमुहाई अधिक आवे, उदरमें पीड़ा हो, हाथ पाँवमें फूटन (फूटा करे) और शरीर निश्शक्त हो जावे तो दृष्टिज्वर जानो।

रुधिरप्रकोप ज्वर–अंगमें फूटन हो मुखसे श्वास चले, शरीरमें शिथिलता, तृषा और मूर्छा हो और पेट फूले तो रुधिरप्रकोप ज्वर जानो।

मलज्वर–जिसमें मुखशोष, दाह, भ्रम, मूर्छा, वमन, हिचकी, उदरशूल और शीशपीडा हो, उसे मलज्वर कहते हैं।

कालज्वर–ज्वरका वेग अधिक हो, ऊर्ध्व (ऊपरको) श्वास चले, शरीरकी कांति नष्ट हो जावे, पसीना अधिक निकले, शरीर शिथिल हो जावे, नाडी अपना योग्य स्थान छोड़ देवे (नाडी न मिले) और समस्त इंद्रियें अपना कर्तव्य छोड़ देवें तो काल (मृत्यु) ज्वर जानो।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे आगंतुकादिज्वरलक्षणं
नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

ज्वरोपद्रवः

ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीन यथाक्रमम्।
तरंगे पंचमे चात्र वर्णनं क्रियते मया ॥ १ ॥

इस–इस पांचवें तरंगमें ज्वरके श्वास आदि उपद्रवोंका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

श्वासो मूर्छाऽरुचिश्छर्दिस्तृष्णाऽतीसारविड्ग्रहाः।
हिक्काकासांगदाहश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥ २ ॥

भावप्रकाश भाग १

ज्वरके १० उपद्रवं–१ श्वास, मूर्छा, ३ अरुचि ४ वमन (उलटी), ५ तृषा, ६ अतीसार, ७ विड्बंध (मलकी रुकावट), ८ हिचकी, ९ कास और १० अंगमें दाह ये ज्वरके दश उपद्रव हैं, दूसरा ऐसाही भावप्रकाशमें लिखा है ॥ २ ॥

ज्वर कुटुम्ब–१ प्यास ज्वरकी स्त्री, २ श्वास कास दोनों पुत्र, ३ हिचकी, वमन दोनों कन्या, ४ अतिसार भ्राता, ५ अरुचि बहिन (भगिनी), ६ विड्बंध (मल रुकना) भानजा, ७ अफरा (पेट फूलना) श्वशुर और ८ मूर्छा दासी हैं, इस कुटुम्बमें जो बलाढ्य हो उसका यत्न वैद्य प्रथम करे, क्योंकि कुटुम्बी होनेसे ये सब ज्वरके अत्युपकारी और रोगीके महाअपकारी (हानि करनेवाले) ही हैं।

ज्वरमुक्तस्य लक्षणमाह

देहो लघुर्व्यपगतक्लममोहतापः
पाको मुखे करणसौष्ठवमव्यथत्वम्।
स्वेदक्षयः प्रकृतियोगिमनोऽन्नलिप्सा
कण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥ १ ॥

भावप्रकाश १ भाग,

सुश्रुतोऽप्याह

स्वेदो लघुत्वं शिरसः कण्डूपाको मुखस्य च।
क्षवथुश्चान्नकांक्षा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥ १ ॥

अब छूटे ज्वरके लक्षण लिखते हैं, १ रोगीका शरीर हलका पड जावे, २ मस्तकमें खुजली चले, ओष्ठोंपर पपड़ी जम जावे अर्थात् मुख पक-जावे, ३ इन्द्रियें अपने अपने विषयोंको स्वीकार कर लेवें, ५ समस्त शरीरमें पसीना निकलने लगे, ६ क्षुधा भूख) बढ़ जावे, ७ छींके आने

१ ज्वरके रहतेही श्वास आदि अन्य विकार उत्पन्न होके निज प्रबलतासे उस ज्वरका यत्न होनेमें बाधक होवें (यत्न होने ही न देवें) वह ज्वरोपद्रव कहलाता है।

लगें, ८ रेचन शुद्ध (दस्त साफ) होने लगे और ९ शरीरकी सब व्यथा दूर हो जावे तब वैद्य निश्चय विचार लेवे कि इस रोगीका ज्वर छूट गया ॥ १ ॥ २ ॥

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे ज्वरोपद्रवनिरूपणं नाम पञ्चमस्तरंगः ॥ ५ ॥

अथातिसार

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेर्हि यथाक्रमम् ।
षष्ठे तरंगे वै चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

इस छठवें तरंगमें वातादि छः प्रकारके अतिसारका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

मैदा–(गेहूँका आटा कपड़ेसे छानाहुआ) आदिके भारी पक्वान्न अति चिकने पदार्थ, रूखे पदार्थ, अति उष्ण पदार्थ तथा ,विष ऐसे ऐसे पदार्थ भक्षणसे भोजन करके (बिना पाचन हुए) ही पुनः भोजन करनेसे और मलके वेगको रोकनेसे अतिसार उत्पन्न होता है ।

अतिसारसम्प्राप्ति–उक्त कुपथ्य करनेसे मनुष्यके शरीरमें मल वृद्धिको प्राप्त होके उदराग्निको शांत करता है तब शरीरस्थित रसादि रूप जल विष्ठासे मिलकर पतला मलरूप होता और अधोवायुके वेगसे वारंवार गुदामार्गद्वारा निकलने लगता है, इस बाधाको अतिसार कहते हैं ।

अतिसार भेद–छः प्रकारके हैं अर्थात् १ वायुजन्य, २ पित्तजन्य, ३ कफजन्य, ४ सन्निपातजन्य, ५ शोकजन्य और ६ आमजन्य ।

अतिसारका पूर्वरूप–पहिलेहीसे हृदय, नाभि, गुदा, उदर और पेडूमें पीडा हो, अंगमें फूटन होने लगे, गुदाकी अपानवायु रुकजावे, बंधकोष्ठ (दस्त न लगना) तथा अफरा होजावे और अन्न पाचन न होवे तो जानो कि, इस मनुष्यको अतिसारविकार उत्पन्न होवेगा ।

१ वातातिसार–मल कुछ लालिमाको लिये हो, मलमें फेन (फस्क) मिला हो, मल रूखा हो, बार बार थोड़ा थोड़ा उतरे मल कुछ आमयुक्त हो और उतरते समय पेडू (पाथे और उदरके मध्यका स्थान) में पीडा हो तो वातातिसार जानो ।

२ पित्तातिसार-मल पीला, लाल, नीला पतला तथा दुर्गन्ध-युक्त हो, गुदा पकजावे, शरीरमें पसीना निकले, प्यास लगे, दाह और मूर्च्छा हो तो पित्तातिसार जानना चाहिये, यदि अधिक उष्ण वस्तु खानेमें आवे तो पित्त बढ़कर रुधिरको बिगाड़ देता है तब रुधिरयुक्त मल गिरनेसे रक्तातिसार कहलाता है, यह पित्तातिसारसे पृथक् नहीं बरन् उसीका ही भेद है।

३ कफातिसार-जिसमें मल चिकना, श्वेत, गाढ़ा, शीतल, दुर्गंधित और किंचित् दुःखपूर्वक गुदाद्वारासे निकले और भारी शरीर हो जावे तो कफातिसार जानो।

४ संन्निपातातिसार-रोगीका मल शूकरकेमांसवत् होवे, नेत्रोंमें तंद्रा होवे, मुख सूखे, प्यास अधिक लगे, भ्रम तथा मोह और उपर्युक्त लिखित वात, पित्त, कफातिसारके लक्षण हों तो सन्निपातातिसार जानो।[1]

५ शोकातिसार-जिस पुरुषके पुत्र, मित्र, स्त्री तथा धनादि नष्ट हो जावें, उसका शोकवश अल्प आहार हो जाता है तब शरीरका समस्त तेज अग्न्याशयमें प्राप्त होकर रुधिरको बिगाड़ देता है और बिगाड़ा हुआ रुधिर विष्ठायुक्त (अथवा केवलभी) होकर गुंजा (चिरम चिरमिटी) सदृश बडे कष्टपूर्वक गुदाद्वारा बाहर निकलता है, उक्त लक्षण शोकातिसारके हैं।[2]

६ आमातिसार-पुरुषको प्रथमके भोजनका अजीर्ण हो और उसीपर कोई गरिष्ठ वस्तु और भी खानेमें आवे तब उसके वात, पित्त, कफ कोठेमें प्राप्त होके धातुसमूह तथा मलको बिगाड़ देते हैं तब आमातिसार उत्पन्न होता है, रोगीके पेटमें मरोडे उठें शूल चले, दुर्गन्धित तथा अनेक वर्णयुक्त मल हो, मलके साथ आमका संयोग भी हो तो आमातिसार जानो। परीक्षा यह है कि, आम श्वेत और चिकनी होती है, जो आमातिसारवाले रोगीके मलको जलमें डालो तो आम नीचे जम जावेगी और मल जलपर तैरता रहेगा।

---

१ यह अतिसार असाध्य है, जो तरुणावस्थावाले पुरुषको होवे तो चाहे देवेच्छासे बन्द भी जावे परन्तु निर्बल तथा बालकको हो तो बचना दुर्लभ ही है।

२ इसीका एक भेद भयातिसार भी है, जो भयातुर दशामें उत्पन्न होता है।

७ मुर्रा (अतिसार)-यह भी अतिसारका सप्तम भेद है, कुपथ्यी पुरुषोंको बादी बढकर कफयुक्त हो मुर्रा उत्पन्न करती है, मुर्रा होनेसे पेटमें पीडा होकर गुदाद्वारसे अति कष्ट पूर्वक मलनिकलता है। इसके चार भेद हैं, अर्थात्-१ वातज २ पित्तज ३ कफज और ४ रक्तज।

१ वातज-जिसमें अति पीडापूर्वक मल उतरे वह वातसे है।

२ पित्तज-जिसमें अतिदाह (जलन) पूर्वक मल उतरे वह पित्तसे है।

३ कफज-जिसमें कफयुक्त मल हो वह कफसे है।

४ रक्तज-जिसमें रक्तयुक्त मल हो वह रक्तसे है।

अतिसारके असाध्य लक्षण-शूकरके मांसवत् मल हो। प्यास दाह अरुचि, श्वास, हिचकी, पार्श्वशूल और मूर्च्छा प्राप्त हो जावे, किसी कार्यमें मन नहीं लगे, गुदा पक जावे, अग्नि नाश हो जावे, ज्वर बना रहे, मूत्र बन्द हो जावे और शरीरका बल नष्ट हो जावे तो इस रोगी का बचना दैववश ही जानो उसके संरक्षणकी आशा नहीं है।

अतिसारमुक्त लक्षण-जिस रोगीको मल बिना मूत्र ही उत्तम प्रकारसे होने लगे, अपानवायु न रुके, वरन् गुदाद्वारा उत्तम प्रकारसे संसर्ग हो, क्षुधा लगे और कोठा हलका पडजावे तो अतिसार नष्ट हुआ जानो ॥ इत्यतिसारः ॥

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे अतिसारोत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नाम षष्ठस्तरंगः ॥६॥

संग्रहणी

पृथग्दोषैस्समस्तैश्च चतुर्धा ग्रहणीगदः।
तरंगे सप्तमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

वात, पित्त, कफ तथा सन्निपातसे यह चार प्रकारका संग्रहणी रोग होता है, सो इस सातवें तरंगमें उक्त रोगका निदान लिखते हैं ॥ १ ॥

संग्रहणीरोगकी उत्पत्ति-अतिसार निवृत्त होनेपर अथवा मध्यमें भी जो मन्दाग्निवाला पुरुष अहित पदार्थोंका सेवन करे तो उसके कुपथ्य-रूप आहारसे अग्नि पुनः दूषित होके "ग्रहणी"[1] नामकी कलाको

---

१ जो कि आमाशय और पक्वाशयके मध्यमें अन्नादिको ग्रहण (पकड़ने-धारण) करनेवाली छठवीं कला है उसको "ग्रहणी" कहते हैं।

बिगाड देती है, तब वह बिगडी हुई ग्रहणीकला कच्चे अन्नको ग्रहण और पक्के अन्नको गुदाद्वारा त्यागकर देती है. तब संग्रहणी उत्पन्न होती है और इसीलिये इसका नाम भी संग्रहणी है ॥

संग्रहणी लक्षणोत्पत्ति-संग्रहणी चार प्रकारकी होती है, अर्थात् १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, और ४ सन्निपातज, इन कारणोंसे दूषित होके वह ग्रहणीकला खाये हुए बहुतेरे आहारको कच्चा (बिना पाचन हुआ ही) तथा पचे हुएको पीडा और दुर्गन्धियुक्त (कभी पतला और कभी गाढ़ा) बाहर निकाल देती है इसे संग्रहणी कहते हैं, उक्त लक्षण हों तो संग्रहणी रोग उत्पन्न हुआ जानिये ।

वातजसंग्रहणी कारण-जो मनुष्य वातज पदार्थोंका विशेष भक्षण करे, मिथ्या आहार विहार करे और अतिमैथुन करे तो वादीकुपित होके जठराग्निको बिगाड़ देतीहै, तब वातजसंग्रहणी उत्पन्न होती है ।

१ वातजसंग्रहणीलक्षण-भक्षण किया हुआ आहार क्लेशसे पाचन होवे; कण्ठ सूखे, भूख न लगे, प्यास अधिक लगे, कानोंमें (भन भन) शब्दहो, पार्श्व, जांघ और पडू (नाभिका तलस्थल) में पीडाहो, कभी कभी शरीरभरमें सुईसी चुभे, हृदयमें पीड़ा उठे, शरीर कृश होवे, जिह्वामें स्वाद न रहे, मीठे आदि नाना भांतिके पदार्थोंकी भक्षणेच्छा हो जावे, भोजन किये हुए आहारके पाचनानन्तर पेट फूले अथवा भोजन करनेसे ही जीव को सुख हो अन्यथा नहीं, भोजन पश्चात पेटमें गोला या प्लीहा (फिया=तापतिल्ली) की शंका रहे, वारंबार मरोडेयुक्त क्लेशपूर्वक अपशब्द करता हुआ झागसहित रेचन हो और श्वास,कास भी हो तो उस रोगीके वातजसंग्रहणी जानो ।

२ पित्तजसंग्रहणीकारण-जो पुरुषउष्ण वस्तुका अधिक सेवन करे, मिर्च आदि तीक्ष्ण (चरपरा) खट्टे और खारे पदार्थ विशेष खावे तो उसका पित्त दूषित होकर जठराग्निको बुझा देता है। उसका कच्चा ही मल निकलने लगता है तबपित्तज संग्रहणी होती है ।

लक्षण-कच्चा मल नीले, पीलेवर्ण युक्त, पानी सहित गुदाद्वार से निकले, और खट्टी डकारें आवें, हृदय और कंठमें दाह हो, प्यास लगे और अरुचि होवें तो पित्तजसंग्रहणी जानो ।

मन्दाग्नि, शब्द, भ्रम, गोला, प्लीहा और उदरोग हो तो उस पुरुषको वातार्श (बादीकी) बवासीर जानो।

२ पित्तार्शलक्षण—गुदामें मोटे, काले, नीले, लाल, पीले तथा श्वेत रंगके मस्से हों, मस्सोंमेंसे उष्ण महीन रुधिरकी धारा गिरे, तदनन्तर वेगसे कोमल हो जावे, जोंकके सदृश मुख हो, शरीरमें दाह, ज्वर और पसीनाका वेग हो, मूर्छा, तृषा और अरुचि (किसी कार्यमें प्रीति न होना) विशेष हो, मल पतला, नीला, या लाल हो और त्वचा, नेत्र पीले पड़ जावें तो उस पुरुषको पित्तार्श जानो।

३ कफार्श लक्षण—गुदामें गाढ़े, मन्द मन्द पीडायुक्त, ऊंचे, भारी, कफसे लिपटे हुए, खुजालयुक्त, पेडूमें (नाभीके नीचे) अफरा होवे, श्वासकास, हृदय पीड़ा, अरुचि,पीनस,प्रमेह,मूत्रकृच्छ्र,शिरःपीडा, शीतलांग, मंदाग्नि, वमन और आमवात ये रोग हों, कफसे युक्त मल गिरे, शरीर पीला पड़जावे, और मस्सोंसे रुधिर न गिरे तो कफार्श जानो।

४ सन्निपातार्श लक्षण—जिसमें वात, पित्त और कफार्श तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातार्श कहते हैं।

५ रक्तार्शलक्षण—गुदामें चिरमिटके वर्ण सदृश मस्से होवे,उन मस्सोंमेंसे अति उष्णता लिये हुए रुधिरकी दीर्घ धारा बहे, मल गाढ़ा और कष्टपूर्वक उतरे, रुधिर अधिक गिरनेसे शरीरका वर्ण मेंढकसदृश हो जावे, बल, वर्ण, उत्साह और पराक्रम नष्ट हो जावे,शरीर रूखा और कृश पड़ जावे और अधोवायु उत्तम प्रकारसे न हो तो रक्तार्श जानो।

यदि मस्सोंसे रुधिर पतला तथा फेनके सदृश गिरे, कटि, गुदा, जांघोंमें पीड़ा होवे और शरीर दुर्बल हो जावे तो वातरक्तार्श जानो। और श्वेत, चिकना, भारी, ठंढा मल हो; मंस्सोंसे गाढ़ी तथा उष्ण रुधिरधार गिरे और गुदामें सदा कफसा लगा जान पड़े तो कफरक्तार्श जानो।

६ सहजार्श लक्षण—माताके रजोदोष और पिताके वीर्य दोषसे सहजार्श होता है, जिसके लक्षण वातादि दोषोंके मिलापसे निश्चित करना चाहिये, परन्तु विशेष लक्षण ये होते हैं—सहजार्शके मस्से अति कठोर, पांडुवर्ण युक्त, अंतर्मुख, (मुख भीतरकी ओर

१ विशेषता यह है कि, उक्त छः भेदोंमेंसे पित और रक्तार्शकी खूनी और इन दोनोंसे अन्य सबका वादीमें गणना किया जाता है।

कभी प्रत्यक्ष, कभी अंतर्गत, कभी तो देखनेमें आते और कभी नहीं दीखते) रहते हैं, शरीरकी नसें न्यारी २ दीखती हैं, शरीर कृश, वीर्य क्षीण, अल्पाहार, क्रोधी, अल्पसंतान, मंदाग्नि, अरुचि मस्तक, नेत्र, कान, रोगयुक्त और मंदस्वर (महीन शब्द) हो तो उस पुरुषको सहजार्श जानना चाहिये।

असाध्यार्श लक्षण–जिस रोगीको बवासीरके साथ ही शोथ, अतिसार, वमन, हडफूटन, तृषा, ज्वर, अरुचि, मंदाग्नि और हृदय शूल होकर गुदा पक जावे तो उसे महासाध्य (विशेष प्राणांतक) जानो। उक्त लक्षण धारणीय असाध्यार्शमें रोगी निश्चय मृत्युग्रस्त हो जावेगा।

चर्मकील रोग यह भी अर्शरूप कहा है अर्थात् गुदा के व्यतिरिक्त किसी भी शरीरके अवयवमें मस्से हो उसे चर्मकीलरोग कहते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे अर्शरोगोत्पत्तिनिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

मन्दाग्निभस्मकाजीर्ण

मन्दाग्निभस्मकाजीर्णप्रभृतीनां रुजां क्रमात्।
तरंगे नवमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब इस नवम तरंगमें मंदाग्नि भस्मक और अजीर्णादि रोगोंको यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

मन्दाग्निरोगोत्पत्ति-मनुष्यको चार प्रकारकी जठराग्नि होती है अर्थात् १ मन्दाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि और ४ समाग्नि।

१ मन्दाग्नि–कफप्रकृतिवालेको कफाधिक्यसे मन्दाग्नि होती है।

२ तीक्ष्णाग्नि–पित्तप्रकृतिवाले पुरुषकी पित्ताधिकतासे तीक्ष्णाग्नि होती है।

३ विषमाग्नि–वातल प्रकृतिवालेको वाताधिकतासे विषमाग्नि होती है।

---

१ इसी प्रकार अर्शरोग नालिकामें भी होता है।

४ समाग्नि–जिस पुरुषकी प्रकृतिमें वात, पित्त और कफ इन तीनों दोषोंकी तुल्यता (सामान्यदशा) रहती है उसे समाग्नि रहती है।

१ मंदाग्निलक्षण–योग्य आहार (थोडा भी) उत्तमतापूर्वक न पचे मस्तक और उदरमें बोझ (वजन) रहे और शरीरमें हडफूटन हो तो मन्दाग्नि है।

२ तीक्ष्णाग्निलक्षण–जिसको अधिकसे अधिक भोजन करनेपर भी पाचन हो जावे उसे तीक्ष्णाग्नि जानो।

३ विषमाग्निलक्षण–कभी तो भोजन पाचक हो जावे, तथा कभी न पचे, पेट फूले, शूल चले, पेट भारी रहे, पेटमें शब्द होता रहे और अतिसार हो तो विषमाग्नि जानना चाहिये।

४ समाग्निलक्षण–प्रमाणित भोजन उत्तम प्रकारसे पाचन हो जावे तथा विशेष भी पच सके, अजीर्ण दशामें भी पच सके, भारी पदार्थ भक्षणसे अजीर्ण न हो, क्षुधा लगती रहे, यदि किसी कारण क्षुधाका वेग रुके तो भी रोग न हो तो उसे समाग्नि जानो पूर्वोक्त तीनों अग्नियोंसे यह उत्तम है।

भस्मकरोगोत्पत्ति कारण–तीक्ष्णादि वस्तुके विशेष भक्षण और रूखे अन्नके सेवनसे कफ न्यून होकर वादी और पित्तको बढाता है तब वह (पित्त तथा वात) पवनकी प्रेरणासे अग्नि बढ़ाकर भस्मकरोग उत्पन्न कर देता है।

भस्मकरोगलक्षण–जो खाया जावे वह भस्म होजावे, दाह, मूर्च्छा उत्पन्न हो और खाया हुआ पदार्थ तो क्या समग्र धातुयें भी भस्म हुईसी जान पड़े तो भस्मक रोग जानो।

अजीर्णरोगोत्पत्तिकारण–अतिशय जलपान, विषमान्न, मल मूत्र-वेग प्रतिबंध, दिनकी निद्रा और रात्रिके जागरणसे अजीर्णरोग होता है।

अजीर्णरोग लक्षण–पथ्य हलका; समयानुकूल और यथोचित भोजनका भी पाचन न हो, आठोंप्रहर चित्तमें ईर्षा, भय, क्रोध, लोभ,

१ मंदाग्निवालेको बहुधा रोगदशा रहती है। २ तीक्ष्णाग्निवालेको पैत्तिक रोग विशेष होते हैं। ३ विषमाग्निवालेको वातिकरोग विशेष होते हैं। ४ समाग्निवाला पुरुष बहुधा सुखी (रोगरहित) रहता है। ५ यह रोगीको प्राणान्तक ही है।

दीनता तथा कोई अन्यविकार बना ही रहे और वांछित भोजन अंग न लगे तो उस पुरुषको अजीर्ण रोग उत्पन्न हुआ जानो।

अजीर्णरोगके सामान्य लक्षण—मनमें ग्लानि, शरीरमें भारीपन, पेटमें अफरा और चित्तमें भ्रम रहे, अधोवायु स्वच्छतासे न निकले, बद्धकोष्ठ हो और वारंवार द्रव रेचन (पतला दस्त) हो तो सामान्य अजीर्ण जानो।

अजीर्णरोग ६ प्रकारका होता है अर्थात् " १ आमाजीर्ण, २ विदग्धाजीर्ण, ३ विष्टब्धाजीर्ण, ४ रसशेषाजीर्ण ५ दिनपाकी अजीर्ण और ६ प्राकृताजीर्ण" इनकी परिभाषा नीचे देखो।

१ आमाजीर्ण—जिसमें खाया हुआ कच्चाही अन्न गुदाद्वारसे बाहर निकल जाता है, यह कफसे उत्पन्न होता है।

२ विदग्धाजीर्ण—पित्तसे उत्पन्न होता है. जिसमें भक्षितान्न जल जाता है।

३ विष्टब्धाजीर्ण वायुसे उत्पन्न होता है, जिसमें भक्षितान्न विष्टब्ध (बँधना = दृढ़होना) होकर उदरमें पीडा उत्पन्न होती है।

४ रसशेषाजीर्ण—जिसमें खाया हुआ अन्न उत्तम रीतिसे पाचन न होके रसरूप हो जाता है और वह द्रव्यरूपी मल गुदाद्वारसे बाहर निकलता है।

५ दिनपाकी अजीर्ण—इसमें भक्षण किया हुआ अन्न ८ प्रहर (दिन रात्रि) में पाचन होता है अर्थात् १ बार भोजन करनेसे ही दिनभर भूख न लगकर दूसरे दिन क्षुधा लगे. इसमें पेटमें पीडा नहीं होती यह दोषरहित है।

६ प्रकृत्याजीर्ण—जो कि नित्यं ही रहता है जिसकी शांतिके लिये शतपद गमन (सौ पग चलना) अथवा वामांग शयन (बायें करवटसे सोना, अर्थात् सोते समय अपनी दाहिनी बाजू ऊपर और बाई बाजू नीचे रखके सोना) इत्यादि उपाय है. अब इन्हींके लक्षण वर्णन करते हैं।

१ आमाजीर्ण लक्षण—शरीर भारी हो, वमनकी इच्छा रहे, जैसा भोजन किया हो वैसी डकारें आवें और कच्चा ही मल उतरे तो आमाजीर्ण जानो।

---

१ भोजन करनेपर पुनः भोजन करना। २ इसे सामान्य अजीर्ण भी कहते हैं यह वैकारिक नहीं होता।

२ विदग्धाजीर्ण लक्षण-भ्रम, प्यास, दाह और पसीना होवे, धूम युक्त खट्टी डकारें आवें और उष्णतासम्बन्धी अनेक रोग उत्पन्न होवें तो विदग्धाजीर्ण जानो ।

३ विष्टब्धाजीर्ण लक्षण-पेटमें शूल चले, पेट फूल जावे, मल और अधोवायु रुक जावे, शिर जकड़ जावे और बादीके बहुत रोग हुआ करें तो विष्टब्धाजीर्ण जानो ।

४ रसशेषाजीर्ण लक्षण-अन्नपर अरुचि होवे, हृदयमें पीडा होवे और शरीर तथा पेट भारी होवे, तो रसशेषाजीर्ण जानो ।

५ दिनपाकी अजीर्ण लक्षण-अन्नपर अरुचि, आलस्य और सब शरीरमें भारीपन होवे तो दिनपाकी अजीर्ण जानो ।

६ प्राकृताजीर्ण लक्षण-मनमें ग्लानि, भारीपन, निबंध (कब्जियत), भ्रम होवे, अधोवायु और मल अवरोधित होवें तथा मलकी बारम्बार प्रवृत्ति होवे तो प्राकृताजीर्ण जानो ।

अजीर्णके उपद्रव-मूर्च्छा, प्रलाप, वमन, मुखसे लारका बहाव शरीरमें शिथिलता और चित्तमें भ्रम ये अजीर्णके उपद्रव हैं, जिस रोगीको उक्त उपद्रव उत्पन्न हो जायँ वह निश्चय कालवश होगा, जो मनुष्य अजीर्णमें भी पशुके समान भोजन करता ही जावे उसे अनेकानेक रोग उत्पन्न होते हैं, क्योंकि समस्त रोगोंका मूलकारण अजीर्ण ही है, अजीर्ण गया कि रोग भी गये ।

अजीर्णमें स्वल्प आम दोषोंसे बंद होके भी अग्नि मार्गको नहीं रोकती इसलिये अजीर्णमें भी क्षुधा लगती है, उस कच्ची भूखमें भी जो पुरुष अति विचारसे भोजन करता ही जावे तो उपद्रवोंके उठाव (वेग) से नष्ट होजावेगा. इत्यजीर्णनिदानम् ।

विसूचिका रोगोत्पतिकारण-प्रथम जिस पुरुषके मंदाग्निसे आमाजीर्ण हो उसीपर अतिगरिष्ठ वस्तु खाई जावे तो विसूचिका रोग होगा ।

विसूचिकारोगलक्षण-जिस अजीर्णमें वायु रहके सुई छेदनेकीसी पीडा होवे, मूर्च्छा आवे, अतिसार होवे, वमन आवे, तृषा लगे पेटमें शूल चले, भ्रम होवे, पैर ऐठें, पग-फूटन हो, जमुहाई आवें, दाह हो,

१ जिसे लोकमें बहुत महामारी, मरी, गोली तथा सपाटेकी बीमारी कहते हैं इसीको उर्दू भाषावाले हैजा और अंग्रेजीवाले कालरा कहते हैं, इसका शीघ्रोपाय न किया जावे तो इससे रक्षा पाना दैववत ही जानो ।

शरीरका वर्ण पलट जावे, कंपन लग जावे और मस्तकमें पीडा होवे तो विसूचिकारोग जानो।

विसूचिकाके उपद्रव--यदि विसूचिकामें निद्रा न आवे, कोई वस्तु प्रिय न लगे, शरीर कम्पायमान हो, मूत्र रुक जावे और संज्ञा न रहे तो वह रोगी अवश्य मरेगा।

अलसरोगोत्पत्ति कारण--वायुजन्य विष्टब्धाजीर्णसे अलसरोग उत्पन्न होता है।

अलसरोगलक्षण--जिस रोगमें पेट तथा कूखें अधिक फूलें। आंतोंमें शब्द होवे, रोगी अतिविकल दशामें होवे, पवन (श्वास) नीचेको जानेसे रुककर ऊपरकी ओर कूँख, हृदय खण्डादि स्थानोंमें प्राप्त होवे, मल मूत्र और अधोवायु रुक जावे, तृषा अधिक लगे; और डकारें अधिक आवें तो उसे अलसरोग जानो।

विलंबिकारोगोत्पत्ति--विदग्धाजीर्ण द्वारा विलम्बिका रोग उत्पन्न होता है।

विलंबिकारोगलक्षण--जिसमें भोजन किया हुआ अन्न कफ और वायुसे दूषित होके ऊपर नीचे न जा सके अर्थात् न तो वमन होके मुखद्वारसेनिकले, न मलद्वारसे मल होके निकले बरन् बीचमेंही रहके क्लेश देवे इसेही विलंबिकाका रोग जानो।

विसूचिका, अलस और विलंबिका तीनोंके संयुक्तोपद्रव-जब इन रोगोंमें रोगीके दांत, नख और ओष्ठ कालेपड़ जावें, संज्ञा न रहे, वमन प्रचारित रहे, नेत्र भीतरको घुस जावें तो वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होगा।

अजीर्णरोगनिवृत्तिलक्षण--डकार शुद्ध आने लगें, शरीरमें उत्साह बढे, मल, मूत्र और अधोवायुका सरण भली भांति होने लगे, शरीरमें हलकापन आ जावे और क्षुधा तृषा भली भांति प्राप्त हो जावे, तब अजीर्णरोग नष्ट हुआ है जानना चाहिये।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे मंदाग्न्यादिरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः ॥१॥

---

१ "किसी २ ग्रन्थमें इसका नाम ": दण्डालसिका" भी दिया है, इसकी चिकित्सा बडी कठिनाईसे होती है। २ इनके विस्तृतरूपसे २१ भेद हैं; इसके समस्त भेदोंको ज्ञात करना हो तो माधवनिदान देखो।

कृमिरोगादि

कृमेः पांडोः कामलाया निदानं च यथाक्रमम् ।
हलीमकस्य रोगस्य दिगूर्मौ लिख्यते मया ॥ २ ॥

कृमि, पांडु, कामला और हलीमक रोगका निदान हम इस दशवें तरङ्गमें यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

कृमिरोगोत्पत्ति-कृमि दो प्रकारके होते हैं अर्थात् १ शरीरके बाहर और दूसरा भीतर, फिर भी मैल, कफ, रक्त और विष्ठासे उपजकर कृमि चार प्रकारके हैं; अर्थात् १ विष्ठासे लट्टें, पसीनासे २ जुआं, ३ चामजुआं और ४ लीखादि पेटके कृमि हैं वे केचुएके सदृश होते हैं ।

कृमि उत्पत्ति-अजीर्णमें भोजन, मीठा, खट्टा, द्रवपदार्थका विशेष सेवन, व्यायामका अभाव, दिनको निद्रा और विपरीत आहार विहारादिक करनेसे पेटमें कृमि उत्पन्न होते हैं ।

कृमिलक्षण १-ज्वर चढ़े, शरीरविवर्ण हो जावे, पेटमेंशूल चले हृदयसे पीड़ाहोवे, तथा भ्रम, अरुचि और अतिसार जिस मनुष्यको हो जावे अवश्य कृमिरोग उत्पन्न हुआ जानो ।

पांडुरोगोत्पत्ति-पांडुरोगके ५ भेद हैं, अर्थात् वे पांच कारणोंसे उत्पन्न होते हैं १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ मृत्तिका भक्षणसे, अधिक श्रम, दिनको निद्रा और खटाई तथा तीक्ष्ण वस्तुओंके विशेष भक्षणसे वात, पित्त कफ तीनों कुपित होकर रुधिरको बिगाड़ देते हैं जिससे त्वचा पीली पड जाती है, इसीको पांडु अथवा (पीलिया) रोग कहते हैं ।

पांडुरोगका पूर्वरूप-त्वचा फटने (चर्राने) लगे, अंगमें पीडा होवे, मृत्तिका भक्षणपर इच्छा दौड़े, नेत्रोंपर कुछ सूजन होवे, मूत्र पीला पड जावे और अन्न पाचन न होवे तो उसे पांडुरोग जानो ।

वातपांडु लक्षण-जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र, रूखे, काले या लाल हो जावें, शरीरमें कम्प तथा पीडा होवे, पेट फूला रहे और आमादिक होवे तो वातपांडु जानो ।

पित्तपांडु लक्षण-जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र, मल पीला हो, शरीरमें दाह, प्यास और ज्वर रहे, मल, पतला हो जावे उसे पित्तका पांडुरोग जानो ।

कफपांडुलक्षण-मुखसे कफ गिरे, शरीरपर शोथ, तन्द्रा, आलस्य तथा बोझ हो; त्वचा नेत्र, मूत्र श्वेत हो जावे तो कफपांडु जानो ।

सन्निपातपांडु लक्षण-ज्वर, अरुचि, हृदयपीड़ा, वमन, तृषा, विकलता, क्षीणता, और इंद्रियोंका विषय त्याग हो जावे तो सन्निपातपांडु जानो ।

मृत्तिका भक्षणसे पांडुरोगोत्पत्ति-मृत्तिका भक्षणसे एक ही दोष कुपित होकर पांडु उत्पन्न होता है, इसका निर्णय देखो-कसैली मृत्तिका भक्षणसे वायु, खारी मृत्तिकासे पित्त तथा मीठीसे कफ कुपित होकर यह मृत्तिका सप्तधातु और भक्षित आहारको रूखा कर देती है और आप तो परिपक्व नहीं होती परन्तु नसोंको फुलाकर रसादि (बहानेवाली) नाडियोंके छिद्रोंको भरके उनका कर्म (रसादिका बहाव) बन्द कर देती है, तब शरीरका बल, अन्तःकरणकी शक्ति, देहकी कांति और जठराग्नि नष्ट हो जाती है, इस प्रकारसे उक्त रोग उत्पन्न होताहै ।

मृत्तिकाभक्षणसे पांडुरोग लक्षण-त्वचाका वर्ण पीत हो, शरीर मात्रका विवर्ण हो करके तंद्रा, आलस्य, कास, श्वास, शूल, अर्श; अरुचि, नेत्र और इन्द्रिय आदिपर शोथ, पेटमें कृमि, अतिसार और कफ तथा रक्तसे युक्त मल ये लक्षण हों तो मृत्तिका भक्षण पांडुरोग जानो ।

पांडुमात्रके असाध्य लक्षण-शरीरका रुधिर नष्ट हो जावे, शरीरका रंग श्वेतसा दीखे, दांत, नख, नेत्र पीतवर्ण हो जावें, सब देहपर शोथ आजावे, अतिसार तथा ज्वर होवे और रोगीको सर्व पदार्थ पीले ही दिखाई पडें तो जानो कि यह पांडुरोगी अवश्य मरेगा[1] ।

कामलारोगोत्पत्ति-जो पांडुरोगी अत्यन्त उष्ण, पित्तकारक वस्तुका भक्षण करे तो उसका पित्त और रुधिर दग्ध होकर कामलारोग उत्पन्न होता है ।

१-इसपर वैद्यकी चिकित्सा करना व्यर्थ ही है, क्योंकि आरोग्य तो होना ही नहीं फिर लाभ क्या ।

कामलारोग लक्षण–जिनके नेत्र, त्वचा, नख, मुखादि हलदीके समान पीले पडजावें, मल मूत्र कुछ रक्तवर्णको लिये हों, शरीरका वर्ण पीले मेंढ़ककेसा हो जावे, इन्द्रियां निर्बल दशामें हो जावें, दाह, अन्नसे अरुचि, अन्नपाचन और शरीरमें क्षीणत्व (दुर्बलता) हो जावे तो कामलारोग जानना चाहिये ।

हलीमकरोगका विषय–यदि पांडुसे रोगी पुरुषकी त्वचाका वर्ण हरा, धूसर, काला, पीला हो जावे, बल उत्साहसे रहित हो जावे, तन्द्रा, मन्दाग्नि, जीर्ण ज्वर रहे, कामोद्दीपनी शक्ति न रहे, अंगपीडा, दाह, तृषा, अरुचि और भ्रम ये लक्षण हों तो हलीमकरोग जानो ।

इति श्री अमृतसागरे निदानखण्डे कृमिप्रभृतिरोगलक्षणनिरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥१०॥

रक्तपित्त, रोगराट् शोष

निदानं रक्तपित्तस्य रोगराट् शोषकास्तथा ।
ज्यामृगांकमिते चास्मिन् तरंग लिख्यते मया ॥ १ ॥

रक्तपित्त, रोगराट् (राजरोग) और शोष इन रोगोंका निदान इस ११ वें तरंगमें लिखते हैं ॥ १ ॥

रक्तपित्तरोगोत्पत्ति–घाममें भ्रमण, श्रम, मार्गगमन, मैथुन, शोक और उष्ण, तीक्ष्ण, कटु, नमक तथा खटाईके भक्षण इन कार्योंकी अति बहुतायत होनेसे पित्त दग्ध होके शरीरस्थ रुधिरको दग्ध कर देता है, तब वह रुधिर ऊर्ध्वमार्ग (नाक, नेत्र, कान, मुख) तथा अधोमार्ग (लिंग, योनि, गुदा) से निकलता है, अथवा जो अत्यन्तही कुपित हो जावे तो सब देहके रोमद्वारसे भी निकलने लगता है, इसे रक्तपित्त कहते हैं।

रक्तपित्तका पूर्वरूप–अंगमें पीडा, शिथिलता, शीतलताकी अभिलाषा कंठ तथा मुखसे धुँआ निकलता हुआ जान पडे, वमन, रुधिर मुखमें आवे और जमुहाई तथा श्वासमें तप्त लोहेके सदृश गन्ध आवे तो विचार लो कि, इसे रक्तपित्त होगा ।

१ हलीमक भी पांडुका ही भेद है, जो वातपित्तकोपसे उत्पन्न होता है।

रक्तपित्त भेद–यह रोग १ कफ २ वात ३ पित्त और ४ संन्निपातसे उत्पन्न होनेके कारण चार भागोंमें विभाजित किया है।

कफजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त गाढा, कुछ कफयुक्त, पाण्डुवर्ण, चिकना तथा मयूरके चन्दवेके समान वर्णवाला हो तो कफज रक्तपित्त जानो।

वातजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त श्यामता लिये फेनयुक्त पतला और रूखा हो तो वातज रक्तपित्त जानो।

पित्तजरक्तपित्त लक्षण–जो रक्त लाल, खैर आदिके क्वाथ समान या काला, गोमूत्रसमान; वमनी समान चिकना अंगार समानधूसर और सुरमेके रंगसमान हो तो पित्तज रक्तपित्त जानो।

सन्निपातज रक्तपित्त लक्षण–जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण युक्त मिलते हों उसे सन्निपातज रक्तपित्त जानो।

रक्तपित्तके साध्यासाध्य लक्षण–जो रुधिर नाक, नेत्र, कान और मुख इन ऊर्ध्वद्वारोंसे गिरे तो साध्य लिंग, योनि, गुदादि अधोद्वारसे गिरे तो याप्य और दोनों मार्गोंसे प्रचलित हो तो असाध्य जानो।

रक्तपित्तके उपद्रव–दुर्बलता, श्वास, कास, ज्वर, वमन, मादकता, पांडुता, दाह, मूर्छा, भोजनपर अतिदाह, सर्वदा अधैर्य, हृदयमें अति पीडा, तृषा, मल द्रवदशामें हो, मस्तकमें ताप, थूकमें दुर्गंधि, अन्नपर अरुचि और अन्नका अपचन ये रक्तपित्तके उपद्रव हैं, इनसे युक्त रोगीको ईश्वरही बचावे।

रक्तपित्तके दुर्लक्षण–यह रोग वृद्ध तथा रोगक्षीण पुरुषको प्राणहारक ही है, जो इस रोगमें रोगियोंको आकाश भी लाल रुधिरसमान दीखने लगे अथवा नेत्र रुधिरवत लालहो जावें और सर्वत्र रुधिर सदृश दीख पडे तो वह अवश्य मरेगा।

राजरोगोत्पत्ति–मल, मूत्र, अधोवायुका अवरोध, वीर्यकी क्षीणता ये साहस[१] अधिक गरिष्ठ तथा विषमाशनसे राजयोग होता है, यह त्रिदोषरूप ही है परन्तु कफप्रधान मानाहै जब कफ, वात और पित्त ये कुपित होके रससंचारके मार्गको रोक लेते हैं तब रक्तादिका बढ़ाव बंद होनेसे मनुष्य सूखता जाता है। अथवा विशेष मैथुनसे भी वीर्य

१ अपनी शक्तिसे अधिक परिश्रम करना इसे साहस कहते हैं भोजनपर पुनः भोजन, कभी अधिक कभी थोड़ा कभी अबेरा कभी सवेरा इसप्रकार जो भोजन किया जावे वह विषमाशन कहलाता है।

क्षीण होनेसे मनुष्य कुपित होके मज्जाको सुखा अस्थ्यादि (हाड) रसपर्यंतको क्षय करता है, तब वह मनुष्य प्रतिदिन क्षीणशरीर होकर सूखने लगता है। ऐसे कारणसे राजरोग उत्पन्न होता है।

राजरोग भेद–यह रोग ५ प्रकारका होता है, अर्थात् १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ प्रहारज, इसके रोगराज, क्षय, शोष और राजयक्ष्मा ये नाम भी हैं, शोष ६ प्रकारका है।

राजरोग पूर्वरूप–कास, श्वास, अंगपीड़ा, गाँसीद्वारा कफपतन तालु सुखावे, वमन, अग्निमन्द, मादकता, पीनस, नाकका बहाव निद्राकी अधिकता, श्वेतनेत्र, मांस भक्षणेच्छा, और मैथुनेच्छा इनकी विशेषता हो तो राजरोग होगा ऐसा जानो।

राजरोग लक्षण–कन्धे तथा पार्श्वभागमें पीड़ा हो, हाथ पाँवमें दाह हो और सर्वांगमें ज्वर रहे तो राजरोग जानो। तथा (२) भोजनमें अरुचि, ज्वर, कास, श्वास, थूकके संग रुधिरका संसर्ग और शब्दमें घरघराहट हो तो राजरोग जानो।

वातजराजरोगलक्षण–स्वरभंग (बोलनेमें घर्राटा) शूल और कन्धों तथा पार्श्वभागमें संकोच (खिंचाव) हो तो वातजराजरोग जानो।

पित्तजराजरोग लक्षण–ज्वर, दाह, अतिसार और मुखसे रुधिरपतन हो तो पित्तजराजरोग जानो।

कफजराजराजरोग लक्षण–मस्तकमें भारीपन, भोजनमें अरुचि, खांसी और (गला पकड़ना) लग जावे तो कफजराजरोग जानो।

सन्निपातजराजरोग लक्षण–जिसमें उक्त वात, पित्त और कफ इन तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातजरोग जानो।

हृदयप्रहारजरोग लक्षण–शरीरमें पीड़ाहो, मुखसे वमनमें रुधिर गिरे और शरीर रूखा पड़जावे तो हृदयकी चोटसे यह राजरोग उत्पन्न हुआ जानो।

असाध्यराजरोग लक्षण[1]–जिस रोगीके नेत्र श्वेत पड़ जावे, अन्नसे अरुचि होवे और श्वास; प्रमेह तथा मूत्रकी अतिवृद्धि हो तो वह रोगी अवश्य मर जावे, यदि असाध्य राजरोगपर उत्तम प्रकारसे चिकित्सा

१ ये दोनों महाअसाध्य हैं।

करे तथा रोगी तरुण, द्रव्यवान् सद्वैद्य और पथ्याधारी हो तो १००० दिन पर्यंत जीवित रहकर पश्चात् मर जावेगा ।

साध्यराजरोग लक्षण-रोगी ज्वररहित हो, बलयुक्त हो वैद्यकी दी हुई औषध कटु होवे तो भी उसे अमृतसदृश स्वीकार कर ले, अति-तीव्र क्षुधा लगे और पुष्ट हो तो उसे साध्य जानो ।

शोषरोगोत्पत्ति-यह राजरोगका ही एक भेद है। छः प्रकारसे उत्पन्न होता है अर्थात्-१ अधिक स्त्रीप्रसंग, २ अधिक शोक, ३ जेरा, ४ अधिक मार्गगमन, ५ व्यायामादि अतिश्रम और ६ हृदयमें चोट लगनेसे यह शोषरोग होता है ।

१ अधिक स्त्रीप्रसंगसे उत्पन्न हुए शोषरोगके लक्षण-लिंगेन्द्रिय और पोतोंमें पीड़ा हो, मैथुन शक्ति न रहे, शरीर पीला पड जावे । चिन्ताग्रस्त रहे, शरीर शिथिलसा बना रहे, सब धातु-क्षीण होते होते केवल अस्थिमात्र रह जावे, तथा राजरोगके लक्षण भी युक्त हों तो स्त्री प्रसंगकी अधिकतासे उत्पन्न हुआ शोकरोग जानो ।

२ शोकजशोषरोग लक्षण-इसके लक्षण उक्त लक्षणोंसेही मिलते हैं विशेषता यही है कि, इसमें वीर्यका क्षय नहीं होता ।

३ जराशोषरोग लक्षण-शरीर कृश हो जावे, वीर्य, बल, बुद्धिका क्षय होवे, शरीर कम्पायमान हो, भोजनमें अरुचि हो, शब्दमें घर्राटा हो, कफ बढ़ जावे, देह भारी पड़ जावे पीनस होजावे, अंग रूखासा होजावे तो जराशोषरोग जानो ।

४ अधिक मार्गगमन शोषरोग लक्षण-अंग शिथिल होकर भूँजासा हो जाय, रूखापन आजावे, सर्वांग स्पर्शज्ञानरहित होजावे, तृषास्थान (कंठमुखादि) सूखता रहे तो मार्गगमन शोषरोग जानो ।

५ श्रमजशोषरोग लक्षण-उक्त लक्षण होकर हृदयमें चोट लगनेके भी लक्षण हों तो श्रमजशोषरोग जानो ।

६ हृदयप्रहारज शोषरोग लक्षण-अधिक भार आदिके उठानेसे हृद-यमें धक्का (भार-चोट) बैठकर तथा अतिमैथुन करके रूखे पदार्थ भक्षणसे यह रोग उत्पन्न होता है, तब उस मनुष्यके ये लक्षण होते हैं अर्थात् हृदय, पार्श्व तथा कटिमें पीडा, अंगसूखना कम्प, बल,वीर्य,

१ जरा = वृद्ध-अवस्था = बुढापा - तृतीयावस्था ।

रुचि और अग्निकी न्यूनता, पीले कफयुक्त खांसी, कभी कभी खांसीमें रक्त भी आना, रुधिरयुक्त वमन, व मूत्र ज्वर, अतिसार और सबको अतिकृपण अनाथ सदृश दृष्टि पड़े तो हृदयमें चोट लगकर अतिगम्भीर व्रणद्वारा शोषरोग जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे रक्तपित्तराजरोगादिलक्षणनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥११॥

कास, हिक्का, श्वास

अथ कासस्य हिक्कायाः श्वासस्य हि यथाक्रमम् ।
तरंगे द्वादशे चास्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस बारहवें तरंगमें कास, हिक्का और श्वास का निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

कासरोगोत्पत्ति–मुखमें धुवाँ तथा धूलिका प्रवेश, रूखे अन्नका भक्षण, भोजनमें कुपथ्य, मल, मूत्र, छींकका प्रतिरोध और चिकनाई या मूली आदि वस्तुओंके भक्षणपर जलपानके करनेसे खाँसीका रोग उत्पन्न होता है, यह रोग हृदयके प्राण वायुसे युक्त होके कण्ठस्थ उदानवायुको लेता हुआ दोनोंको युक्तकर बिगाड देता है, तब कंठका बिगडा हुआ उदानवायु मनुष्यके कण्ठसे कांसे (फूले) फूटे पात्रके समान शब्द मुखद्वारा बडे वेगसे बाहर निकलता है, यही कास रोग है, यह पांच प्रकारसे होता है, अर्थात्–१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ प्रहार और ५ क्षयीसे उत्पन्न होता है, इन पांचों प्रकारोंमें एकसे दूसरे उत्तरोत्तर बलाढ्य हैं, जैसे वातसे पित्त, पित्तसे कफ, कफसे प्रहार और प्रहारसे क्षयीका कास बलाढ्य होता है ।

कासरोगका पूर्वरूप–गलेमें कांटे पड़जावें, कण्ठके भीतर खुजाल चले और भोजन न किया जावे तो जानो कि इसे कासरोग होगा ।

वातकासरोग लक्षण–हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर और पार्श्वमें शूल चले, मुख निस्तेज हो जावे, पराक्रम बल तथा स्वर नष्ट हो जावे, भोजन करते समय कण्ठमें व्यथा हो, सूखी खांसी चले और बोलनेमें टूटा हुआ शब्द निकले तो वातकास जानो

पित्तकासरोग लक्षण–हृदयमें दाह, ज्वर, मुखमें फीकापन, मुख सूखना,

प्यास लगना, कटु वमन होना और शरीर पीला पड़जाना ये लक्षण हों तो पित्तकी खांसी जानो।

कफकासरोगलक्षण—मुख कफसे लिपटा रहे, मस्तकमें पीड़ा हो, भोजनमें अरुचि रहे, शरीर भारी हो, कंठमें खुजाल चले और मुखसे थूकमें कफके डल्लेके डल्ले आवें तो कफकास जानो।

क्षतज कासोत्पत्ति--अतिमैथुन, बोझ उठाना मार्ग गमन मल्लयुद्धादि करना, घोड़े, हाथी आदिपर चढ़के दौड़ना और रूखे पदार्थोंके भक्षणसे वायु कुपित होकर हृदयमें चोट लगती हुई खांसी उत्पन्न करती है।

क्षतजकास लक्षण--प्रथम सूखी खांसी चले, तदनन्तर खखारके साथ रुधिर गिरने लगे, कंठ अस्थि संधियोंमें पीड़ा, ज्वर, शूल, प्यास और कबूतरके सदृश घर घर शब्द हो तो क्षतजकास रोग जानो।

क्षयीकासरोगोत्पत्ति--कुपथ्य, विषमान्न, अति मैथुन, मल मूत्रावरोध और अति शोकसे मनुष्योंकी अग्नि मंद होकर वात, पित्त और कफ कुपित होते हैं; तब उस मनुष्यको क्षय होकर कासको उत्पन्न करती है।

क्षयीकासरोगलक्षण--शरीर क्षीण हो जावे. दाह, ज्वर, मोह, सूखी खांसी चले, देह दिनोंदिन दुर्बल होती जावे, रक्त मांसकी हीनता हो जावे और खखारमें राध (पीव) गिरे तो असाध्य क्षयीकास जानो।

कासमात्रके असाध्य लक्षण--वात पित्त तथा कफकी खांसी साध्य और क्षतज तथा क्षयीकी खांसी असाध्य जानो. जो यह रोग वृद्धावस्थामें उत्पन्न हो तो असाध्य ही है।

हिक्कारोगोत्पत्ति--उष्ण, वातल भारी, रूखी तथा बासीवस्तुका भक्षण, मुखमें रज (धूली=बारीक मृत्तिका) प्रवेश, श्रम, मार्ग· गमन और मल मूत्रका वेग रोकने से हिक्का (हिचकी) रोग उत्पन्न होता है।

हिक्काकी परिभाषा--वायु दोनों ओरके पार्श्व (पसुली) तथा अंतड़ियोंको क्लेश देती हुई, बड़े शब्द युक्त होकर ऊपरको चढ़ती है और प्राणोंको त्रास देती मुखसे भयंकर शब्द निकालती है उसे हिक्का कहते हैं. वायु और कफके संयोगसे ५ प्रकारकी हिक्का उत्पन्न होती है, अर्थात् १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गंभीरा और ५ महती।

हिक्काका पूर्वरूप--कंठ, हृदयभारी हो, मुख कसैला हो और कुक्षि (कूंख) में अफरा हो तो अनुमान कर लो कि,इसे हिक्का उत्पन्न होगी।

१ अन्नजाहिस्का लक्षण--अयुक्तिपूर्वक अधिक अन्न भक्षण तथा अधिक जलपानसे वायु कुपित होके ऊर्ध्वगामी होती है इसे अन्नजा कहते हैं।

२ यमलाहिचकीलक्षण--कुछ समयके अंतरसे दो दो हिचकी आकर शीश और ग्रीवाको कंपित करें उसे यमला जानना।

३ क्षुद्राहिस्कालक्षण--जो कंठ तथा हृदयकी संधिसे उत्पन्न होके बेर बेर (समयका अंतर देकर) मंद २ चले उसे क्षुद्राहिचकी जानो।

४ गंभीरहिचकी लक्षण--यह हिचकी नाभिस्थानसे भयङ्करता पूर्वक उठके विशेष पीड़ा तथा उपद्रवोंके साथ उत्पन्न होती है।

५ महतीहिंचकी लक्षण- जो सब मर्मस्थानोंको पीड़ित और शरीरको कंपित करती हुई उठे उसे महतीहिचकी जानो।

असाध्यहिक्का लक्षण--रोगीको हिचकी चलते समय शरीरमें कम्प आवे, ऊर्ध्वदृष्टि हो, अँधियारी आजावे, शरीर क्षीणहो, छींकें अधिक आवें और भोजनमें अरुचि हो जावे तो असाध्य हिक्का जानो।

श्वासरोगोत्पत्ति--जिन वस्तुओंके भक्षणसे हिक्कारोग उत्पन्न होता है बहुधा उन्हींसे श्वासरोग भी होता है, यह भी पांच प्रकारका हैं अर्थात् १ महाश्वास, २ ऊर्ध्वश्वास, ३ छिन्नश्वास, ४ तमकश्वास और ५ क्षुद्रश्वास।

श्वासरोग पूर्वरूप--हृदयमें पीडा, शूल, अफरा, मलमूत्रावरोध, मुख बेरस (नीरस) और कनपटीमें पीडा हो तो जानो कि, अब श्वास उत्पन्न होगा।

श्वासरोगस्वरूप -सब शरीरमें भ्रमणकारी कफसे मिलके समस्तनसोंको रोक देवे और वायुका बहाव बंद होकर श्वास (दम) चल उठे इसे श्वासरोग कहते हैं।

१ महाश्वास लक्षण--मनुष्य श्वाससे दुःखित हो, मतवाले, वृषभके समान निरंतर ऊंचे स्वरसे श्वास खींचे श्वासका शब्द दूर तक सुनाई

१ बहुधा इन लक्षणोंयुक्त गम्भीरा और महती हिक्काही हुआ करती है।

दे, नेत्र कायरयुक्त होवे, संज्ञाहीन हो जावे, मुख फट जावे, बोलनमें असमर्थ हो, अतिदीन जैसा दृष्टि पड़े तो—महाश्वास जानो।

२ ऊर्ध्वश्वासलक्षण--श्वासऊपरको लेवे और वह श्वासनीचे नहीं आवे, मुख कफयुक्त हो जावे, नेत्र ऊपरको चढ़कर चकित विचकित (घबराहटयुक्त) हो जावे, मोह और ग्लानि होतो ऊर्ध्वश्वास जानो।

३ छिन्नश्वासलक्षण--सब शरीरके पांचों वायु (प्राण, अपान, समान, उदान, और व्यान) से पीड़ित टूटती हुई श्वास लेवै, क्लेशित हुआ श्वास न ले, मर्मस्थान टूटे, अफरा हो जावे, पसीना निकले नेत्र फट-जावे, श्वास लेते समय नेत्र रक्तवर्ण हो जावे, संज्ञा न रहे और शरी-रका वर्णविपर्यय हो जावे तो छिन्नश्वास जानो।

४ तमकश्वास लक्षण--शरीरका पवन उलटा घूमके नसोंको रोक देवे तब ग्रीवा शिरको पकड़के कफ उपजाती है, वह कफ कंठमें जाके घुर घुर शब्द करता हुआ प्राणांतक श्वासको उपजाता है, जिसके वेगसे रोगीको ग्लानि प्राप्त होती है, रोगीकी अग्नि रुकजाती है, श्वास लेनेके समय मोह होता है, कफसे अतिदुःख पाता है, गलेका कफ मुखद्वारा बाहर निकलनेपर एक या दो घड़ी सुखसे बीतते हैं और भाषण भी कर सकता है, सोता है तभी श्वास आजाती है, निद्रा नहीं आती, बैठनमें भी चैन नहीं पडता है, उष्णता प्रिय होती है, नेत्रोंपर शोथ आजाता है, ललाटपर पसीना हो आता है, मुख सूखता है, लुहारकी भाथी (धोकनी) सदृश श्वास आती है, वर्षाकी पवन, मधुर और शीतल वस्तुओंसे श्वास वृद्धि पाती है, ये लक्षण जिस रोगीको हों उसे तमकश्वास जानो।

५ क्षुद्रश्वास लक्षण--रूखी वस्तुके भक्षण और परिश्रमसे क्षुद्रश्वास उत्पन्न होती है, यह श्वास मनुष्यके खानपानकी गतिको नहीं रोकती इन्द्रियोंको विशेष पीड़ा भी नहीं देती, किन्तु श्वासमात्र चलती है।

श्वासका साध्यासाध्य निर्णय--क्षुद्रश्वास भी प्रथम अवस्थामें परन्तु विशेषकरके तरुणावस्थामें बलाढ्य पुरुषको साध्य ही है, तमकश्वास कष्टसाध्यहै परन्तु महाऊर्ध्व और छिन्नश्वास ये तीनों तो महाअसाध्य और प्राणहारक ही हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे कासहिक्काश्वासरोगलक्षण निरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः॥१२॥

१–१-२-३ ये तीनों महाअसाध्य हैं इनसे रक्षा दैववश ही है

स्वरभंग, अरोचक, छर्दि

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चात्र यथाक्रमम् ।
तरंगे रामचन्द्रे हि निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस तेरहवें तरंगमें स्वरभंग, अरोचक और छर्दि इन रोगों का निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं ॥ १ ॥

स्वरभंगरोगोत्पत्ति–दीर्घ स्वरसे भाषण, पठन, बिष भक्षण और कंठमें किसी प्रकारकी चोट लग जानेसे, वातादि दोष कुपित होनेके कारणसे कंठसे शब्द प्रकाश करने वाली नाड़ियोंमें स्थिर होके स्वरको भंग कर देते हैं। यह स्वरभंग रोग छः प्रकार का होता है । अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ शरीरकी स्थूलता और ६ क्षयीरोगसे स्वरभंग होता है।

वातस्वरभंग लक्षण–जिसके नेत्र, मुख, मल, मूत्र श्याम हों। गर्दभ, सदृश टूटा हुआ शब्द निकले तो वातस्वर भंग जानो।

पित्त स्वरभंग लक्षण–नेत्र, मुख, मल, मूत्र पीले हों और बोलनेके समय कण्ठमें दाह हो तो पित्त स्वरभंग जानों।

कफस्वरभंग लक्षण–सदा कंठ कफसे रुका रहे, क्लेशके साथ मंद बोलते बने और रात्रिके समय कफ अधिक बढ़ जावे तो स्थूलताका कफस्वरभंग जानो।

सन्निपात स्वरभंग लक्षण–जिसमें वात, पित्त, कफ तीनों लक्षण युक्त हों उसे सन्निपातस्वरभंग जानो।

स्थूलस्वरभंग लक्षण-गलेके भीतर ही बोले, शब्द स्पष्ट न जान पड़े, बिलम्बसे शब्द निकले और प्यास अधिक लगे तो स्थूलताका स्वरभंग जानो।

क्षयीस्वरभंग लक्षण–जिसके बोलते समय मुखसे बाफ (बाष्प) निकले उसे क्षयीस्वरभंग जानो।

अरोचकरोगोत्पत्ति–शोक, क्रोध, मोह, लोभ, भय, दुर्गन्ध, ग्लानिकारक भोजन और ग्लानिकारक रूप देखनेसे त्रिदोष कुपित होके अरोचक (अरुचि करनेवाले) रोग उत्पन्न होते हैं।

१ यह अच्छा नहीं किन्तु हानिकारक ही है।

अरोचक रोग ५ प्रकारका है अर्थात्--१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ शोकादिसे उत्पन्न होनेवाला।

वातारोचक लक्षण--मुख कसैला रहे, हृदयमें शूल रहे और अन्न पर रुचि न रहे तो वातारोचक जानो।

पित्तारोचक लक्षण--मुख कड़ुआ, खट्टा, उष्ण, नीरस या सलोना रहे शरीरमें दाह और मुख शोष हो तो पित्तारोचक जानो।

कफारोचक लक्षण--मुख मीठा तथा चिकना रहे, शरीरभरमें बद्धकोष्ठ हो, मुखसे लार गिरे, शरीरके प्रत्येक अवयवमें पीड़ा हो और भोजनकी ओर जीव नहीं चले तो कफारोचक जानो।

सन्निपातारोचक लक्षण, जिसमें त्रिदोषकेयुक्त लक्षण मिले हों। उसे सन्निपातारोचक जानो।

शोकारोचक लक्षण--क्षुधा न लगे, मुखसे खाया न जावे, अर्थात् मुखमें ग्रास इधर उधर घूमने लगे तो शोकारोचक जानो।

अरोचक रोग का पूर्वरूप- मुखमें अन्न इत्यादि स्वादरहित मालूम हों तो जानो कि, अरोचक होगा।

भक्तद्वेष लक्षण–जिस पुरुषको भोजनके देखते ही तथा भोजनका नाम लेतेही अतिशय ग्लानि प्राप्त होकर चित्त खिन्न हो जावे और भोजनकी रुचि किंचित मात्र भी न रहे, उसे भुक्तद्वेष रोग जानो यह अरोचक का एक विशेष भेद ही है।

अथ छर्दिरोगोत्पत्ति–अधिक पतली, चिकनी, ग्लानिकारक वस्तु अति शीघ्रतापूर्वक भोजन, दुर्गंधि, दुर्गंधितस्थानावलोकन, उदरमें कृमि और स्त्रियों को गर्भधारणसे वात, पित्त, कफ, कुपित होके अंगोंको पीडित करते हुऐ मुख की ओर दौड़ते हैं तब भक्षित पदार्थ मुखद्वारा निकल जाता हैं इसे छर्दि (वमन, वांति, उल्टी, छांटनी तथा उछाल) रोग कहते हैं।

छर्दिरोगके ५ भेद हैं अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ ग्लानिकारक पदार्थ सेवनसे उत्पन्न होता है।

छर्दिरोगका पूर्वरूप–प्रथम ही खट्टा, कड़ुवा रस हृदयमें आवे, डकार न आवे, मुखसे लार गिरे, मुखमें बार बार खट्टा पानी घिर आवे,

मुख कडुवा रहे, अन्न जलपर रुचि न हो तो जानोकि इसे कुछ कालमें अवश्य वमन होगा।

वातच्छर्दि लक्षण–हृदय, पार्श्वभाग, मस्तक, नाभिमें पीडा हो, मुखशोष हो, स्वरभेद हो, डकारमें उच्च स्वर निकले, अतिक्लेशपूर्वक फेन काले रंगयुक्त कसैला बड़े वेगसे वमन हो तो वातच्छर्दि जानो।

पित्तच्छर्दि लक्षण–मुखशोष, मूर्च्छा, तृषा, अन्धेरी और चक्कर आवे, तालु नेत्र उष्ण हो और हरी तथा लाल रंग की उष्ण उल्टी हो तो पित्तच्छर्दि जानो।

कफच्छर्दि लक्षण–तंद्रा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन होवे, मुख मीठा हो, नींद न आवे और चिकना "मीठा" गाढ़ा कफ युक्त वमन हो तथा वमनहोते समय सब रोम खड़े हो जावें तो कफच्छर्दि जानो।

सन्निपातच्छर्दि लक्षण–शूल, अपच (पचे नहीं), अरुचि, दाह, श्वास, प्रमेह इत्यादि समस्त रोग निरंतर रहें और सलोना खट्टा, नीला तथा लाल गाढ़ा उष्ण वमन होय तो सन्निपातच्छर्दि जानो।

ग्लानिच्छर्दिलक्षण–जिस ग्लानिकारक पदार्थके संसर्गसे उल्टी हुई हो उसीका बारबार स्मरण बना रहे, तो ग्लानिच्छर्दि जानो।

विशेषतः–ग्लानिच्छर्दिमें भी त्रिदोषका निर्णय पूर्वोक्त रीतिके अनुसारही करना चाहिये छर्दिमात्रके साध्यासाध्य लक्षण तथा उपद्रवोंका विशेषज्ञाता होना चाहोतो चरक, सुश्रुतादिक ग्रंथदेखो।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे स्वरभेदारोचकच्छर्दिरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

तृषा. मूर्च्छा, मदात्यय. (आर्याछन्द)

अध्यब्जेऽत्र तरंगे तृष्णा मूर्च्छामदात्ययादीनाम् ॥
रोगाणां हि निदानं विचार्यलिख्यते मया यथासंख्यम् ।

अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा, मूर्छा और मदात्ययादि रोगोंका निदान लिखते हैं।

तृषारोगोत्पत्ति-भय, श्रम, बलनाशसे बढ़ा हुआ पित्त वायुसे मिलके तालुमें प्राप्त होता है इसलिये जलप्रसारणी नसें रुकजाती हैं और तृषा उत्पन्न होती है।

तृषारोग सात प्रकारका है अर्थात्-१ वायु, २ पित्त, ३ कफ ४ शस्त्रप्रहार, ५ बलनाश ६ आम (आंव) और ७ भोजन करनेसे उत्पन्न होता है।

तृषारोगका स्वरूप-निरंतर जल पीनेपर भी तृप्ति न होवे, जल पीनेमें ही चित्त लगा रहे, तो तृषारोग उत्पन्न हुआ जानो।

१ वायुतृषालक्षण-मुख कांतिरहित हो जावे, कनपटी और मस्तकमें पीड़ा होती हो, नसें रुक जावें, मुखमें रसका स्वादनाश हो जावे और शीतलजलपानसे तृषाबढ़े तो वायुतृषा जानो।

२ पित्ततृषा लक्षण-मूर्च्छा, भोजनपर अरुचि, दाह, नेत्र रक्त, मुख शोष होजावे, ठंढी वस्तु प्रियलगे, मुखकटु होजावे, शरीरमें ज्वर रहे और मलमूत्र पीतवर्ण हो जावेंतो पित्ततृषा जानो।

कफतृषोत्पत्ति--कफद्वारा जठराग्निका रुकाव होकर जलप्रसारणी नसोंका शोषण होता है तब कफतृषा उत्पन्न होकर ये लक्षण होजाते हैं

३ कफतृषा लक्षण--रोगी तृषासे पीडित होता है, अधिक निद्रा आने लगती है, शरीर बोझल हो जाता है, मुख मीठा रहकर दिन प्रति सूखता जाता है ये लक्षण कफतृषाके हैं।

४ शस्त्रप्रहार तृषा लक्षण--शस्त्रादिकी चोट लगनेसे शरीरावयवोंमें रुधिरप्रहार तृषा होनेके कारण अधिक पीड़ा होनेसे बारबार तृषा लगे उसे शस्त्रप्रहार तृषा जानो।

५ बलनाशतृषा लक्षण--क्षीणता होकर हृदयमें पीडा होवे, कफ बढ़ जावे, मुखशोष हो और अधिक जलपान करनेपर भी तृषा न मिटे तो क्षीणताकी तृषा जानो।

६ आमतृषा लक्षण- क्षीणताकी तृषाके लक्षण ही इसके लक्षण हैं।

७ भोजनतृषा लक्षण--चिकना,खट्टा, खारा, भारी अन्न अधिक खानेसे जो तत्काल तृषा लगे उसे भोजन तृषा जानो।

तृषारोगोपद्रव--मुखका स्वर मंद पड़ जावे, कण्ठ, तालु सूख जावे। ज्वर, मोह, कास, श्वास ये सब हों तो इन उपद्रवोंसे बचना कठिन ही है।

मूर्च्छारोगोत्पत्ति–क्षीणता, अतिकुपथ्य, मलमूत्रावरोध, प्रहारसे बाहिरी इन्द्रियों (नेत्र कर्ण आदि) तथा मनःस्थानमें त्रिदोष प्रवेश होनेसे संज्ञाप्रवाहिनी नसोंको रोक देते हैं तब अन्धेरी प्राप्त होकर वह मनुष्य काष्ठसदृश पृथ्वीपर गिर पडता है, उसे सुखदुःखादिका बोध नहीं रहता इसे वैद्य मूर्च्छा तथा मोह भी कहते है, मूर्च्छारोग छः प्रकारका है, अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रुधिर, ५ मद्यपान ६ विषभक्षणसे होता है, परन्तु उक्त छहों प्रकारोंमें पित्त प्रधान रहता है।

मूर्च्छा सामान्यरूप–कुपथ्यी, पराक्रमहीन, क्षीणतायुक्त और मद्यपी पुरुषके अज्ञानका मुख्य हेतु पित्तरूप तमोगुण बढ़के ज्ञानरूप सतोगुण और रजोगुण आच्छादित कर देता है, तब दशों इंद्रियोंमें त्रिदोषका प्रवेश होके ज्ञानवाही नसें भी आच्छादित होजाती हैं, अतएव ज्ञाननाशक बढ़े हुए तमोगुणके वेगसे मनुष्य बेसुध होकर पृथ्वीपर गिरपड़ता है इस दशामें प्राप्त होके वह मूर्च्छित कहलाता है।

मूर्च्छाका पूर्वरूप–हृदयमें पीड़ा होवे, विशेष जँभाई आवे, मनमें ग्लानि हो और संज्ञा नष्ट होकर चित्तभ्रांतिसी जान पड़े तो अनुमान करो कि किंचित्कालमें इस पुरुषको मूर्च्छा आवेगी।

वातमूर्च्छा लक्षण–प्रथम आकाशका वर्ण काला, नीला या लालसा दीखे, तदनन्तर अन्धकारमें प्रवेश हुआसा जान पड़े, अल्पकालमें पुनः ज्ञानयुक्त हो जावे, शरीरमें कम्प, हड़फूटन, हृदयमें पीड़ा, शरीर कृशतायुक्त और शरीरकी त्वचा लाल तथा (धूमके रंग सदृश) धूसर दृष्टि पड़े तो वातमूर्च्छा जानो।

पित्तमूर्च्छा लक्षण–प्रथम आकाशका वर्ण लाल, हरा तथा पीला दृष्टि पडकर मूर्च्छा आजावे, तदनन्तर पसीना आनेपर संज्ञायुक्त होवे, तृषा लगे, शरीर सन्तप्त हो जावे नेत्रोंका रंग लाल तथा पीला पड जावे, मुखसे टूटते हुए (अस्पष्ट) अक्षर निकले और शरीर पीला पड जावे तो पित्तमूर्च्छा जानो।

कफमूर्च्छा लक्षण–प्रथम आकाश मेघाच्छादितसा दीख पडे, पश्चात् मूर्च्छा आवे, फिर कुछ काल पश्चात् संज्ञा प्राप्त होवे, शरीरपर जान पडे कि मैंने कुछ चर्म या गीला वस्त्र बोझलसा ओढ़ा है, मुखसे लार गिरने लगे, बार बार थूके तो कफमूर्च्छा जानो।

सन्निपातमूर्च्छा लक्षण-उक्त तीनों दोषोंके लक्षण युक्त हो तो सन्निपातमूर्च्छा जानो, सन्निपातकी मूर्च्छा मनुष्यको अपस्मार (मिरगी) के समान गिरा देती है, परन्तु अपस्मारमें रोगीकी बीभत्स (भयानक) चेष्टा हो जाती है और सन्निपातमूर्च्छामें यह दशा नहीं गिनी जाती, ६ प्रकारकी मूर्च्छासे भिन्न होनेसे मूर्च्छामें नहीं गिनी जाती।

रक्तजमूर्च्छा लक्षण-जिसको रक्त देखते ही अथवा दुर्गन्धमात्रसे पृथिवी आकाश भरमें अंधकार रूपसे दृष्टि पड़े, फिर घबराकर मूर्च्छा हो आवे, नेत्र तन जावें और भलीभांति श्वास न आवे तो रक्तमूर्च्छा जानो।

मद्यमूर्च्छा लक्षण-अधिक मद्यपानसे मनुष्य कुछका कुछ बकता हुआ धरणीपर गिर पड़े, संज्ञाहीन होके (जब तक न उतरजावे) हाथ, पैर, पीटता हुआ भूमिपर पडा रहे और तृषा अधिक लगे तो मद्यमूर्च्छा जानो।

विषमूर्च्छा लक्षण-शरीर कम्पित हो, निद्रा अधिक आवे, प्यास विशेष लगे, संज्ञाहीन होजावे, मुख काला पड़जावे और अतिसार होकर भोजनसे अरुचि होजावे तो विषमूर्च्छा जानो।

विशेषतः-मनुष्य जिस प्रकार मूर्च्छामें अचेत हो जाता है, तैसेही भ्रम, तंद्रा, और संन्यासमें भी संज्ञाहीन हो जाता है, परंतु इन चारोंके लक्षण मूर्च्छासे भिन्न रहतेहैं अतएव जुदे २ दर्शावेंगे तथापि ये मूर्च्छाके भेदही हैं।

भ्रमलक्षण-रजोगुण और वात पित्तके संयोगसे भ्रम होता है।

तन्द्रालक्षण-तमोगुण और वात कफके संयोगसे तद्रा होती है।

निद्रालक्षण-तमोगुण और कफके मिलापसे प्राणियोंका मन और दशों इंद्रियां खिन्न होकर अपने अपने विषयोंका त्याग कर देती हैं तब निद्रा आती है।

संन्यास लक्षण-त्रिदोषके वेगसे मनुष्यकी नाड़ी, देह और मनकी क्रिया नष्ट होनेसे निर्बल पुरुषोंको संन्यास रोग उत्पन्न होता है, तब वह पुरुष पीडित होकर काष्ठ, तथा मृतकके सदृश पडा रहता है, इस रोगपर शीघ्रही चिकित्सा करनी चाहिये नहीं तो प्राणनाशमें कुछ विलंब नहीं है।

मदात्ययरोगोत्पत्ति–अति विरुद्ध नियमसे मदिरा (मद्य दारू, ब्रांडी, शराब) पान करे तो मदात्ययरोग उत्पन्न होता है, क्योंकि जो गुणागुण विषमें है वेही मद्यमें भी होते हैं मद्य जो युक्तिसे सेवन किया जावे तो अमृतके समान लाभदायक होता है तथा अयुक्तिसे पीवे तो विषसदृश प्राणनाशक होता है; जैसे नियत समयपर परिमित आहार स्वास्थ्यवर्द्धक तथा हितकारी होता है और अनियत समयका तथा अधिक मात्रामें किया भोजन रोगप्रद होता है उसीभांति विष और मद्यभी समय तथा मात्राके अनुकूल हिताहित फल देते हैं, अतः जिन लोगोंकी जातिमें मद्यपानसे कुछ दोष न हो तो वे निम्नलिखित शास्त्रोक्त नियमोंसे पान करें तो मदात्ययरोग न होके शरीर आरोग्य रहेगा परन्तु जिन वर्णोंके लिये मद्यपानशास्त्रसे वर्जित है वे उसके गुणोंकी ओर ध्यान देनेकी कदापि इच्छा न करें नहीं तो स्वधर्मच्युत होकर अंतमें नरकवासी होंगे अतएव मनुजी आदि ऋषिमुनियोंकी आज्ञा है, कि जो मद्यपान करनेवाले भी मद्यका त्याग करदें तो महापुण्यफलके भागी होकर स्वर्गगामी होवेंगे ।

मद्यपानविधि–प्रातःकाल स्नानादिक करके प्रसन्नचित्तसे २ टके भर उत्तम मद्यपान करो, तदनन्तर मध्याह्नकालमें घृत शर्करादि उत्तम व्यंजनके साथ ४ चार टकेभर मद्य पियो तदनन्तर सायंकालकोभी प्रथम प्रहरमें भोजनके साथ ८ आठ टके भर मद्य पियो और उत्तमोत्तम फल, दुग्ध, मलाई आदि पदार्थ भक्षण करो तो सदा तरुण रहकर काम, तेज, बल, बुद्धि, स्मृति और हर्षादिकी नित्यप्रति वृद्धि होगी और जो अन्यथा पिओगे तो बल, बुद्धि, तेज, स्मृति, हर्ष, लज्जा और संज्ञाहीन तथा मदात्यय रोग, आलस्य, प्रलापादिसे पूरित होकर शरीरका नाश हो जावेगा ।

मदात्ययरोगोत्पत्ति–क्षुधित, सर्वदा अनियमित काल, प्रमाण हीन अधिकता, क्रोध, भय, तृषा, श्रम, निर्बलता, मल मूत्रका वेग, खट्टे पदार्थ और उष्णतासे पीडित दशा इन बातोंके मिलापसे जो मदिरा सेवन करोगे तो मदात्यय, परमद, पानाजीर्ण तथा पानविभ्रमरोग होंगे, मदात्ययरोगके चार भेद हैं–

१ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ सन्निपात मदात्यय ।

वातमदात्यय लक्षण–हिचकी, श्वास, शिरःकम्प, पार्श्वशूल, निद्राभाव और अतिप्रलाप (अनर्थवाक्यकथन) करे तो वातमदात्यय जानो।

पित्तमदात्यय लक्षण–अतितृषा, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतिसार होवे, चक्कर आवे और शरीर हरा पड़जावे तो पित्तमदात्यय जानो।

कफमदात्यय लक्षण–अरुचि, खट्टा तथा सलोने भक्षित पदार्थ युक्त वमन हो, तन्द्रा, शरीरमें भारीपन हो तो कफमदात्यय जानो।

सन्निपातमदात्यय लक्षण–जिसमें वात, पित्त, कफ तीनोंके लक्षण मिश्रित हों उसे सन्निपातमदात्यय जानो।

परमदरोग लक्षण--पीनस, शीश अंगमें पीड़ा शरीरमें भारीपन, मुखस्वादका नाश, मलमूत्रकी रुकावट, तन्द्रा, अरुचि, प्यास हो तो परमद रोग जानो।

पानाजीर्ण लक्षण--पेट अधिक फूले, वमन हो, दाह उठे और अजीर्ण हो तो पानाजीर्ण जानो।

पानविभ्रमरोग लक्षण--शीश, हृदय, अंगमें पीड़ा हो, कफ थूके, मुखसे धुँआ निकले, मूर्छा हो, वमन आवे, ज्वर चढे और मद्य तथा मिठाईपर अरुचि हो तो पान विभ्रमरोग जानो।

मदात्ययके असाध्य लक्षण--रोगीका नीचेका ओष्ठ लटक जावे, शरीर ऊपर ठंढा हो जावे हृदयमें अग्निदाह हो, मुखमें तेलकी गंध आवे, जीभ दांत काले पडजावें, नेत्र काले या लाल या पीले पडजावें, हिचकी आवे, ज्वर चढे, वमन होवे, पार्श्वशूल उठे, खांसी चले और चक्कर आवे तो असाध्य मदात्यय रोग जानो।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे तृषामदात्ययादिरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥१४॥

दाह, उन्माद

शरौषधीधवे चास्मिन् तरंगे हि यथाक्रमम्।
दाहोन्मादरुजो नूनं निदानं लिख्यते मया॥ १॥

अब हम इस १५ वें तरंगमें दाह और उन्माद रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं॥ १॥

दाहरोगोत्पत्तिकारण--१ पित्त, २ दुष्ट (विकारी), रुधिरवृद्धि, ३ कोठेमें शस्त्रादिकी चोट, ४ मद्यादिपान, ५ तृषावरोध, ६ धातुक्षय और ७ मर्मस्थानमें प्रहार लगनेसे दाहरोग उत्पन्न होता है, यह रोग उक्त सातकारणोंसे उत्पन्न उक्त सातही विभागोंमें विभाजित किया गयाहै।

१ पित्तदाहलक्षण--रोगीके शरीरमें सब लक्षण पित्तज्वरकी नाईं उपस्थित हों तो पित्तदाह जानो।

२ रुधिरवृद्धिदाह लक्षण--सब शरीरमें दाह लग जावे, शरीरसे धुँआ निकले, शरीर और नेत्रोंका वर्ण ताम्र सदृश (तांबेके समान) लाल हो जावे, मुखसे रक्तकी गंध आवे और सब अंग अग्निसमान जलने लगे तो दुष्ट रुधिर वृद्धि दाह जानो।

३ कोठेमें शस्त्रकी चोट से उत्पन्न दाह लक्षण--कोठा रुधिरसे भरा रहे, शरीरमें अति दुःसह दाह उठे तो उक्त दाह जानो, यह असाध्य प्राणान्तक है।

४ मद्यपान दाहलक्षण--मद्यपानकी उष्णता, पित्त और रक्तसे बढ़ी हुई त्वचामें प्राप्त होके भयंकर दाह उत्पन्न करती है, जिससे सब शरीर अत्युष्ण हो जाता है इसे मद्यकी दाह जानना चाहिये।

५ तृषावरोधदाह लक्षण--प्यास रोकनेसेशरीरके जल सम्बन्धी द्रव (रस रक्त आदि) धातु क्षीण होकर पित्तकी उष्णता बढ़ जाती है, इस लिये शरीर भीतर बाहरसे दग्ध होकर मनुष्य अचेत हो जाता, तब उसका कंठ तालु आदि सूखकर जीभ बाहर निकलके तड़फड़ाने लगती है, इन लक्षणोंसे युक्त हो तो तृषावरोधदाह जानो।

६ धातुक्षयदाह लक्षण--रोगी मूर्च्छा, तृषायुक्त होकर सूक्ष्मस्वर हो जावे और उठने बैठने तथा कार्यकी शक्ति न रहे तो धातुक्षय दाह जानो, इस दाहसे बचना दुर्लभ ही है।

७ प्रहारजदाह--शिर हृदय, मूत्राशय आदि मर्मस्थानमें चोट लगकर दाह उत्पन्न हो तो प्रहारज दाह जानो।

दाहके असाध्य लक्षण--ऊपरसे शरीर शीतल और रोगीके हृदयान्तरमें अत्यन्त दाह हो तो असाध्य जानो।

उन्मादरोगोत्पत्तिकारण--प्रकृति विरुद्ध पदार्थ, अपवित्र भोजन और धतूरा, भांग विषादि भक्षण, देवता, गुरु, ब्राह्मण, तपस्वी, राजा आदिका अपमान, भय तथा हर्षकी अधिकतासे मनुष्यका मन बिगड़कर वातादि दोष युक्त हो जाता है, तब मनुष्यकी स्मरणशक्ति नष्ट होकर उन्मत्त (मदयुक्त, दिवाना, गहला, पागल, खफ्ती) हो जाता है ।

उन्मादरोगभेद--यह रोग ६ प्रकारका होताहै,अर्थात् १ वात २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ शोक, ६ विषोन्माद ।

उन्मादस्वरूप--क्षीण पुरुष के विरुद्ध आहारसे त्रिदोषदूषित होकर बुद्धिके स्थान (हृदय) को बिगाड देते हैं, और मन प्रवाहिणी नाड़ियोंमें प्राप्त होकर मनुष्यके मनको मोहित (कार्याकार्यके विचारसे रहित=स्थिर) कर देते हैं,वह पुरुष (पागल) उन्मत्त कहलाता है ।

उन्मादरोगका पूर्वरूप--बुद्धि ठिकाने न रहे, शरीरका पराक्रम नष्ट हो जावे, धैर्य जाता रहे, दृष्टि स्थिर न रहे भलीभांति वार्तालाप न कर सके, हृदय सूना, पड़ जावे तो अनुमान करो कि इसे उन्मादरोग होगा ।

१ वातोन्माद लक्षण--रूखी या शीतल वस्तुके भक्षण और विरेचनकी विशेषतासे धातु क्षीण होकर वादी बढ़ जाती है, तब उस मनुष्यका हृदय बिगड़कर स्मरण तत्काल नष्ट हो जाता है, जो वह मनुष्य निष्कारण ही हँसे, नाचे, गावे, रोवे, हाथ और मुखसे वानरकी नाईं चेष्टा दिखावे, शरीर कठोर, काला, या लाल हो जावे और भोजन करके पाचन हुए पर यह रोग भी बढ़े तो वातोन्माद जानो ।

२ पित्तोन्माद लक्षण--अजीर्णपर भोजन करने तथा कडुवा, खट्टा, उष्ण पदार्थ खानेसे बढ़ा हुआ पित्त हृदयको बिगाड़ कर उन्मादरोग उत्पन्न करता है, तब वह मनुष्य किसीकी वात नहीं मानता, नग्न हो जाता, मारने लगता, इधर उधर भागता, शरीर पीला पड जाता, उष्ण वस्तुकी इच्छा करता और मुख पीला पड़ जाता है, जिस रोगीके ये लक्षण हों उसे पित्तोन्माद जानो ।

३ कफोन्माद लक्षण--जो मनुष्य अधिक खाकर श्रम नहीं करते उनका पित्तसहित कफ बढकर हृदयमें प्रविष्ट हो जाता है । और

चित्तके बिगाड़से बुद्धि, स्मृति नष्ट करके मनुष्यको उन्मत्त कर देता है। जो रोगी अल्प भाषण करे, क्षुधारहित हो जावे, निद्रा, स्त्री और एकान्त स्थान अतिप्रिय लगे, वमन हो, बलहीन हो जावे और मुखादिक श्वेत हो जावें तो कफोन्माद जानो।

४ सन्निपातोन्माद लक्षण–उक्त तीनों (वात, पित्त, कफ) दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात (त्रिदोष) उन्माद जानो।

५ शोकोन्माद लक्षण--राजा, प्रबलशत्रु, चोर अथवा सिंहादिक भयंकर जीवोंका भय, धन, बन्धु (पुत्र, कलत्र, भ्रातादि) का बिछोह मैथुनकेलिये इच्छित स्त्रीकी अप्राप्ति और कामशांतिमें बाधा पड़नेके कारणसे शोक और दुःख होकर उन्मादरोग होता है। रोगी विचित्र बातें करने लगे, मनका अभिप्राय यथार्थरूपसे प्रदर्शित करनेकी संज्ञा न रहे, कभी गावे कभी हँसे और कभी रोवे तो शोकोन्माद जानो।

६ विषोन्माद लक्षण--नेत्र लाल हों, दीन होजावे, और शरीरका बल तथा इन्द्रियों की कांति नष्ट हो जावे और मुख श्याम पड़ जावे, जो ये लक्षण हों तो विषभक्षणका उन्माद जानो इससे बचना दुर्लभ है।

उन्मादरोगके असाध्य लक्षण- जो रोगी नीचा मस्तक या ऊंचा मुख रक्खे, शरीर का बल और मांस नष्ट हो जावे, निद्रा न आवे वरन् जागताही रहे तो वह उन्मादरोगी मर जावेगा।

इति षडविधोन्मादरोगनिदानं समाप्तम्

अब हम इसके अनंतर भूतोन्मादादि ब्रह्मराक्षसोन्माद पर्यंत १६ विशेष उन्मादोंका निदान लिखते हैं।

१ भूतोन्माद लक्षण--भूत लगे हुए रोगीकी वाणी, चेष्टा, पराक्रम और ज्ञानाज्ञान यथास्थित न रहकर विचित्र ढंगका ही रहता है। परंतु मनुष्यत्वसे कुछ विरुद्ध नहीं हो जाता है।

२ देवोन्माद लक्षण--जो रोगी सब बातों से संतुष्ट, पवित्र और ब्रह्मण्य (शीलस्वभावादि ब्राह्मणके नवगुणयुक्त) रहे, सुन्दर पुष्पोंकी माला और सुगंधित (गंध चंदनादि) पदार्थ धारण करता रहे, नेत्र न मींचे, बिना पढ़े भी संस्कृत गद्य पद्य भाषण श्लोक और वार्ता करने

लगे, शरीरका तेज बढ़ता जावे और अन्य लोगोंको इच्छित वरदान देने लगे, तो शरीरमें देवता होनेका उन्माद जानो।

३ असुरोन्माद लक्षण--रोगीके शरीरमें पसीना न निकले, ब्राह्मण गुरु, देवतामें दोष बतावे, दृष्टि कुटिल होजावे, किसी प्रकारके कहनेका भय न लगे, कुमार्गमें प्रीति बढ़े, किसी वस्तुसे तृप्ति न हो, भोजनादिमें दुष्टात्मा हो तो असुर प्रवेशका उन्माद जानो।

४ गंधर्वोन्माद लक्षण-दुष्टात्मा हो, पुष्पवाटिकामें निवास स्वीकार करे, गाना बजाना, नृत्यमें प्रीति हो अल्पभाषी हो और आचार[1]में मन लगारहे तो गन्धर्वोन्माद जानो।

५ यक्षोन्माद[2] लक्षण-नेत्र लाल हों, मलिन तथा रक्तवस्त्र धारण करे अपना अभिप्राय न दर्शित करे, तेज युक्त हो, शीघ्रतासे चले, सहनशील हो और "किसको क्या कह दूँ" ऐसा कहता रहे तो यक्षोन्माद जानो।

६ पितृजोन्मादलक्षण-जो मनुष्य दर्भ (डाभ=एक प्रकार का घास=कुश) पर अपने पितरोंको सर्वदा पिंड देता रहे, शांतस्वभाव हो, दाहिने कांधेपर अंगोछा धरके पितरोंके लिये तर्पण करता रहे, सदा पितृभक्तिमें लगा रहे और मांस, गुड़, क्षीर आदिके भक्षणकी इच्छा रक्खे तो पितृजोन्माद जानो।

७ सर्पोन्माद[3] लक्षण-सर्पग्रहगृहीत मनुष्य कभी सर्पके सदृश लोट जावे, कभी सर्पके सदृश जीभसे गलफर चाटे, क्रोधकरे, गुड़ दूध, मधु, क्षीर इनके भक्षणकी इच्छाकरेतो सर्पोन्माद जानो।

८ राक्षसोन्माद लक्षण-जो मांस, रक्त तथा मद्यकी इच्छा करे, निर्लज्जता निष्ठुरता, शूरता, क्रोध, अपवित्रता, बलकी विशेषता हो और रात्रिमें विचरतारहे तो राक्षसोन्माद जानो।

९ पिशाचोन्मादलक्षण-ऊपरको हाथ किये रहे मनमानी बकवाद करे, शरीरमें दुर्गंधि, अपवित्रता, लालच, चंचलता रहे, बहुत खावे, उद्यान (निर्जन वन) में निवासकी इच्छा करे, रोता हुआ नाना प्रकारकी चेष्टा करे तो पिशाचोन्माद जानो।

---

१ शिष्टजनोंने जो रीति स्वीकार की है वही आचार कहलाता है।

२ यक्षोन्माद और गन्धर्वोन्मादके लक्षण पूर्वामृतसागरमें समग्न ही लिखे हैं परंतु वे परस्पर जुदे हैं, अतएव हमने यक्षोन्माद लक्षण माधवनिदानसे लिखा है।

३ सर्पोन्माद भी पूर्वामृतसागरमें नहीं है, इसलिये माधवनिदानसे लिखा है।

सूचना-ये नव उन्माद निदान ग्रंथोंसे लिखे हैं, अब इसके आगे पूर्वामृतसागर लिखते हैं।

१ सतीदोषोन्माद लक्षण--मन निश्चल न रहे, निस्सन्तान होजावे, सतीका ततिहास (प्राचीन कथा) सुननेकी रुचि करे, मौन हो जावे, यदि बोले तो बरदान देवे, पवित्रतापूर्वक उत्तम वस्तुओंमें मन लगावे तो सतीदोषोन्माद लक्षण जानो।

२ क्षेत्रपालदोषोन्मादलक्षण--मुख और नाकसे रुधिर गिरे, मस्तकमें श्मशानकी भस्म डाले, खोटे स्वप्नदेखे, पेट और संधियोंमें पीड़ाहो, चित्त स्थिर न रहे तो क्षेत्रपालदोषोन्माद जानो।

३ देव्युन्माद लक्षण[1]--पक्षाघात हो, शरीर और रुधिर सूख जावे, मुख और हाथ पांव टेढे हो जावें, देहक्षीण हो जावे और स्मरणका अभाव होजावे तो देव्युन्माद जानो।

४ कामन उन्मादलक्षण कांधे और मस्तक भारी रहें, मन स्थिर न रहे, क्षीणांगहोजावे, नाक, आँख, हाथ और पांवमें दाहहो वीर्य न्यून पड़जावे, शरीर सूखकर सुईचुभानेके समान पीड़ा हो तो कामन (जादू) का उन्माद जानो।

५ शंखिनी, डाकिनी दोषोन्माद लक्षण-सर्वांगमें पीड़ाहो, नेत्र बहुत दुखें, मूर्च्छा हो, शरीर कँपे, रोवे, हँसे प्रलापकरे, भोजन में अरुचि-स्वरभंगहो, शरीरका बल और क्षुधानष्ट होजावे, ज्वर चढ़े, चक्कर आवे तो शंखिनी, डंकिनी (डाकन) दोषोन्मादजानो।

६ प्रेतोन्माद लक्षण-जो मनुष्य प्रातःकाल ही घरसे उठउठ कर भागे, कुवाच्य भाषण करे, बहुत चिल्लावे, शरीर कँपे, रोवे, खाने, पीनेसे अभाव हो और लम्बी श्वासें छोड़े तो प्रेतोन्माद जानो।

७ ब्रह्मराक्षसोन्मादलक्षण-देव, ब्राह्मण, गुरुसे द्वेष रक्खे, आप स्वयं वेद वेदान्तादिका ज्ञाताहो, स्वयं अपने शरीरको पीड़ित करे, पर नाश न करे तो ब्रह्मराक्षसोन्माद जानो।

सूचना-ये सातो, उन्माद पूर्वामृतसागरसे लिखे हैं परंतु माधवनिदानमें नहीं लिखे गये हैं।

उन्मादरोगके असाध्यलक्षण-नेत्र फटेसे होजावे, सदा इधर उधर गिरे, घूमतारहे, मुखसे फेन, निद्रा अधिक आवे, खड़े ही कम्प आकर गिर पड़े तो असाध्योन्माद रोग जानो।

१ देव्युन्माद देवीका उन्माद, जिसे मारवाडमें विजासनी देवी अथवा मावल्या भी कहते हैं।

उन्मादप्रवेश काल--१ उक्त लक्षणयुक्त उन्माद पूर्णमासीको हो तो देवोन्माद, संध्या समय हो तो भूतोन्माद तथा असुरोन्माद, अष्टमीको हो तो गंधर्वोन्माद, पंचमीको हो तो यक्षोन्माद, अमावस्याको हो तो पितरोन्माद, पंचमीको हो तो सर्पोन्माद, चतुर्दशीकी रात्रिको हो तो राक्षसोन्माद तथा पिशाचोन्माद जानो ।

उन्मादनिवृत्तिकाल-जो जो तिथि और समय जिस २ उन्मादके प्रवेशका कहा गया है, वही २ काल उनके बलिप्रदान तथा शमनका भी जानना चाहिये ।

शंका-आपने देवोन्मादादिमें यह दर्शित किया कि, मनुष्यके शरीरमें इनका प्रवेश होता है तो शरीरमें समाते हुए वे हमको दीखते क्यों नहीं हैं, प्रवेश हो तो दीखना चाहिये ?

समाधान-सुनियेगा, जिस प्रकार दर्पन या जलमें तुम्हारे शरीरका प्रतिबिंब, शरीरमें शीतोष्णता और कांतिमणि तथा सूर्यमुखी कांचमें सूर्यकिरणें प्रवेश होते दृष्टि नहीं पड़ती हैं परंतु यथार्थमें प्रविष्ट होकर अग्निको उत्पन्न करती हैं और अपने शरीरका बिंब भी तुम ज्योंका त्यों देखते हो इसी प्रकार देवग्रहादि भी मनुष्यके शरीरमें प्रवेश होते हुए नहीं दीखते, परंतु प्रवेश होके उन्मादको उत्पन्न कर नाना प्रकारकी चेष्टा दिखाते हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे दाहोन्मादरोगलक्षणनिरूपणं नाम पञ्चदशस्तरंगः ॥१५॥

अपस्मारवातरोगाः

अपस्मारस्य रोगस्य वातजानां यथाक्रमम् ।
रसौषधीशे भंगेऽस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें मृगी और बादीसे उत्पन्न होनेवाले रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

अपस्मार (मृगी) मृगीरोगोत्पत्ति कारण-चिन्ता, शोक आदिसे कुपित हुए वात, पित्त, कफ, हृदयकी नसोंमें प्राप्त होके स्मरणमात्रका नाश कर देते हैं इस दशाको लोकमें मृगीरोग कहते हैं ।

अपस्मार भेद-यह रोग चार प्रकारका है, अर्थात्-१ वातज २ पित्तज, ३ कफज और ४ सन्निपातज ।

अपस्मार पूर्वरूप–हृदयकम्प, शून्यता, पसीना निकले, एक ध्यान लग जावे, मूर्च्छा आजावे, निद्रा न आवे और ज्ञान नष्ट हो जावे, तो अनुमान करो कि, इस मनुष्यको अपस्माररोग उत्पन्न होगा।

अपस्मार सामान्यरूप–अन्धकारमें प्रवेश हुआ सा जान पड़े, नेत्र घूम जावें शरीर झटके (हिले), हाथ, पैर और अंग फेंकता हुआ मूर्च्छित होकर धरणी पर गिर पड़े तो अपस्मार प्राप्त हुआ जानो।

१ वातापस्मार लक्षण–कंप हो, दांत किरकिरावें, मुखसे फेन गिरे, श्वासका वेग, काले पीलेसे कुछ आकार रोगीकी दृष्टिमें आवें तो बादीकी मृगी जानो।

२ पित्तापस्मार लक्षण–मुखसे पीला फेन गिरे, त्वचा, मुख, नेत्र, पीले पड़ जावें, तृषा अधिक लगे, सर्वांग उष्ण हो जावे पीला पीलासा दीखे और समस्त जगत्मात्रमें अग्नि व्याप्त दीखे तो पित्तकी मृगी जानो।

३ कफापस्मार लक्षण–मुखसे श्वेत फेन गिरे, शरीरकी त्वचा, नेत्र, मुख श्वेत हो जावें, जाड़ा लगे, रोमांच हो आवे और जगत्मात्रमें श्वेतही पदार्थ दृष्टि पड़े तो श्लैष्मिक अपस्मार जानो।

४ सन्निपातापस्मार लक्षण–पूर्वोक्त दोनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात (त्रिदोष) मृगी जानो।

असाध्यापस्मार लक्षण–भौंहें चढ़ जावें और नेत्र फिर जावें तो असाध्यापस्मार जानो, यह रोगी मर जावेगा।

अपस्मार प्राप्त काल निर्णय–बारहवें दिन वातापस्मार, पंद्रहवें दिन पित्तापस्मार और तीसवें दिन कफापस्मार प्राप्त होता है, परंतु उक्त नियमसे कुछ न्यूनाधिक कालमें भी प्राप्त हो सकता है, जिसप्रकार नियतकालमें उत्पन्न होनेपर वनस्पति अन्नादिभी आगे पीछे उत्पन्न हुआ करते हैं उसी प्रकार मृगी भी कभी कभी अपने सूचित कालसे आगे पीछे होती है परञ्च उसके समयका पूर्ण विपर्यय नहीं होता है।

वातव्याधिरोगोत्पत्ति कारण–कसैले, कड़वे, तीक्ष्ण, रूखे पदार्थ खानेसे, स्वल्प, शीतल = ठंढा (बासी) भोजन करनेसे, परिश्रम, मैथुन, धातुक्षीणता, शोक, भय, मांसक्षीणता, वमन, विरेचन, आम-

दोष, मलवेगावरोध, वृद्धपन, लंघन, जलक्रीड़ा और प्रहार इनकी विशेष प्रबलतासे तथा वर्षाऋतु व तीसरे प्रहर व एक प्रहर रात्रि शेष रहनेके समय बलवान् वायुकुपित होनेसे शरीरकी खाली नसोंमें प्रवेश होकर (एक तथा सर्वांगमें रहनेवाले) रोगोंको उत्पन्न करती है, जिनके निम्नलिखित ८४ भेद हैं ।

शुद्धनाम	व्यवहारीनाम	शुद्धनाम	व्यवहारीनाम
१ शिरोग्रहरोग,	मस्तकका दुखना ।	२५ प्रत्यष्ठीलारोग,	नाभिके नीचे पीडा-युक्त ।
२ अल्पकेशरोग,	छोटे बाल रहना ।	२६ तूनीरोग,	गुदा और लिंगकी पीडा ।
३ जृंभादिकरोग,	अधिक जमुहाई आना।	२७ प्रतितूनीरोग,	मूत्राशयकी पीडा ।
४ हनुग्रहरोग,	ठुड्डी हिलना ।	२८ विषमाग्निरोग,	अनियमित पाचन-शक्ति ।
५ जिह्वास्तंभरोग-	जीभ न हिलना ।	२९ आटोपरोग,	पेटकी नसोंका तनाव ।
६ गद्गदरोग,	अटककर बोलना ।	३० पार्श्वशूलरोग,	पसली दुखना ।
७ अल्पभाषणरोग,	धीरे धीरे बोलना ।	३१ पृष्ठशूलरोग,	पीठकी पीडा ।
८ मूकरोग,	गूँगापन ।	३२ बहुमूत्ररोग,	अधिकमूत्ररोग, ।
९ प्रलापरोग,	कुछका कुछ बोलना ।	३३ बस्तिवातरोग,	मूत्र रुक जाना ।
१० वाचालरोग,	अधिक बोलना ।	३४ मलदृढता,	कठिन मल होजाना ।
११ नीरसरोग,	जिह्वाका स्वाद नष्ट होना ।	३५ मलावरोध,	मल न उतरना ।
१२ बधिररोग,	बहिरापन ।	३६ गृध्रसीरोग,	मंदगति होजाना ।
१३ कर्णनाद,	कानोंमें घरघर शब्द होना ।	३७ कलायखंजरोग,	कंपित गति होना ।
१४ त्वक्शून्यरोग-	शरीरको स्पर्शज्ञान न रहना ।	३८ खंजरोग,	लंगडापन ।
१५ अर्दित रोग,	मुख एक ओर टेढा होना ।	३९ पंगुरोग,	पंगुलापन ।
१६ मन्यास्तंभरोग	ग्रीवा न मुडना ।	४० क्रोष्टुशीर्षकरोग,	घुटनेकी पीडा ।
१७ बाहुशोषरोग,	भुजा सूख जाना ।	४१ खल्लीरोग,	हाथ पांव मुडजाना ।
१८ अपबाहुकरोग,	भुजा न मुडना ।	४२ वातकंटकरोग,	मुसुकुरोंकी पीडा ।
१९ चर्चितरोग । +		४३ पादहर्षरोग,	झिनीझिनी ।
२० विश्वाचीरोग,	उँगलियोंके नीचे खुजाल ।	४४ पाददाहरोग,	पावोंमें जलन पडना ।
२१ ऊर्ध्ववातरोग,	अधिक डकार आना ।	४५ आक्षेपकरोग,	शरीर डुगना (डुलना)
२२ आध्मानरोग,	अफरा (पेट फूलना ।)	४६ दंडकरोग,	काष्ठसदृश ।
२३ प्रत्याध्मानरोग,	नाभिसे पेटतक फूलना ।	४७ वातक्षेपरोग,	वातसे शरीर डुगना ।
२४ वाताष्ठीलारोग,	नाभिके नीचे गुठली होना ।	४८ पित्ताक्षेपरोग,	पित्तसे शरीर डुगना ।
		४९ दंडापतानकरोग,	सूखे काष्ठसमान-पडे रहना ।

+ चर्चित अभिलाषिक और लोंद इन तीनों रोगोंके व्यवहारी नाम नहीं पाये जाते हैं ।

शुद्धनाम	व्यवहारीनाम	शुद्धनाम	व्यवहारीनाम
५० अभिघाताक्षेपक रोग,	शरीर डुगते चोटसी लगना।	६६ श्यामतारोग,	कालापन।
५१ अंतरायामरोग,	नेत्रोंका खिचाव।	६७ क्षीणतारोग,	दुबलापन।
५२ बाह्यायामरोग,	पीठकी नसोंका खिचाव।	६८ शीतलतारोग,	शरीर ठंडा रहना।
५३ धनुर्वात;	शरीर कमानके समान हो जाना।	६९ रोमाञ्चरोग,	पुलकित शरीर होना।
५४ कुब्जकरोग:	कुबडपन।	७० अंगमदरोग,	हडफूटन होना।
५५ अपतन्त्ररोग,	शरीरके झुकाव सहित नेत्र फटना।	७१ अंगविभ्रमरोग.	अंगभ्रांति।
५६ अपतानरोग,	केवल नेत्र फटना।	७२ स्नायुसंकोच,	नसोंका सिमिट जाना।
५७ पक्षाघातरोग,	लकवा मारजाना।	७३ अंगशोषरोग,	शरीर सूख जाना।
५८ अभिलाषिकरोग,+		७४ भयरोग,	डरना।
५९ कम्परोग,	शरीर कांपना।	७५ उन्मादरोग,	पागलपन।
६० स्तम्भरोग,	शरीर जकड़ना।	७६ मोहरोग,	असावधानी।
६१ व्यथारोग,	शरीर चटकना।	७७ निद्रानाश,	नींद न आना।
६२ लोदररोग,+		७८ स्वेदाभाव,	पसीना न निकलना।
६३ मेदोरोग,	मेदकाबढना।	७९ बलक्षीणरोग	निर्बलता नाताकती।
६४ स्फुरणरोग,	अंग फरकना।	८० वीर्यनाशरोग,	धातुक्षीण होना।
६५ रूक्षता,	रूखापन।	८१ रजोधर्मरोग,	स्त्रीको मासिकरज प्राप्ति।
		८२ गर्भनाशकरोग.	गर्भ गिरजाना।
		८३ अश्रमश्रम,	बिनाश्रम थकजाना।
		८४ श्रमनाश,	थकावट दूर होना।

ये चौरासी प्रकारके वातरोग हैं जिनमेंसे मुख्य २ के निदान लक्षण आगे लिखते हैं।

शिरोग्रहरोग लक्षण—कुपित हुआ वात रक्तमें प्रवेश होके मस्तक को धारण करनेवाली नसोंको रूखी; पीडायुक्त और काली करके मस्तकको जकड़ देता है इसे शिरोग्रहरोग कहते हैं, यह असाध्य है।

अल्पकेशरोग लक्षण—रोमकूपस्थ वायु कुपित होके उस स्थान (बालोंके रंध्र=छिद्र) की नसोंको निर्बल कर देता है, इसलिये वहां थोडे बाल निकलते हैं इसे अल्पकेश रोग कहते हैं,इस रोगमें मुख्य कारण निर्बलता ही है।

जृम्भादिरोगका लक्षण—प्रथम मुखकी एक श्वासको मुखहीमें पीकर तदनंतर उसी श्वासको मुखद्वारा बाहर निकालनेको जमुहाई कहते हैं और जमुहाईकी बहुतायतको जृम्भादिकरोग कहते हैं।

१ इस रोगका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखा है, परन्तु हमने "स्थानानामनुरूपैश्च लिंगाशेषान् विनिर्दिशेत्" इस श्लोकके आशयसे लिखे दिया है।

हनुग्रहरोग लक्षण-दतौनके चीरनेसे, जिह्वाको अधिक घिसनेसे, अधिक चबेना खाने और किसी प्रकार चोट लगनेसे डाढ़ीकी जडमें रहनेवाला वायु कुपित होके मुखको खुला या मूँदाही रख देता है, तब उस मनुष्यको खाने बोलनेमें अतिकष्ट पड़ता है, इसे हनुग्रहरोग कहते हैं।

जिह्वा स्तंभरोग लक्षण-शब्दको प्रवृत्त करनेवाली नसोंमें रहने वाला वायु कुपित होनेसे जीभको खींचकर स्थिर (जैसीकी तैसी) रखे देता है तब मनुष्य खाने पीने, बोलनेमें असमर्थ होजाता है, इसे जिह्वास्तंभरोग कहते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे अपस्मारवातव्याधिरोगलक्षण-
निरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

वातोद्भवरोगाः

भंगे चास्मिँल्लिख्यते सप्तचंद्रे रोगाणां वै कारणं
वातजानाम् ॥ मान्यान्ग्रंथान्सुश्रुतादीन्विचार्य
ज्ञाने येषां सन्ति वैद्यास्सुवैद्याः[1] ॥ १ ॥

अब हम इस सत्रहवे तरंगमें वातरोग (बादीसे उत्पन्न होने-वाले रोगों) का निदान माननीय सुश्रुतादि ग्रंथोंको विचारके लिखते हैं । जिन वातरोगोंका पूर्ण ज्ञान होनेसे वैद्य सुवैद्य (सुंदर वैद्य, सब वैद्योंमें पूज्य, सत्कारपात्र) होजाता है। किंवा जिन सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंके बोधसे वैद्य सुवैद्य होजाता है ॥ १ ॥

त्वचा शून्यरोग लक्षण-जिस पुरुषको शीत, उष्ण, कोमल, कठोर आदिका स्पर्शज्ञान नष्ट होजावे उसे त्वचाशून्य रोग जानो।

अर्दितरोग लक्षण-अत्यंत दीर्घ शब्दसे बोलने, कठिन पदार्थ खाने, जमुहाई लेते समय हँस देने, उँची नीची गर्दन करके सोने, मस्तकपर अधिक बोझा उठाने इत्यादि कारणोंसे मस्तक, नाक, ओठ, ठुड्डी, ललाट, और नेत्रकी संधियोंमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे मुखको किसी एक ओर टेढा करके अर्दित रोग उत्पन्न करता है, जिससे ग्रीवा

---

१ सुपूज्याः इति पाठो वा ।

शुद्धनाम	व्यवहारीनाम
५० अभिधाताक्षेपक रोग,	शरीर डुगते चोटसी लगना।
५१ अंतरायामरोग,	नेत्रोंका खिचाव।
५२ बाह्यायामरोग,	पीठकी नसोंका खिचाव।
५३ धनुर्वात;	शरीर कमानके समान हो जाना।
५४ कुब्जकरोग;	कुबडपन।
५५ अपतन्त्ररोग,	शरीरके झुकाव सहित नेत्र फटना।
५६ अपतानरोग,	केवल नेत्र फटना।
५७ पक्षाघातरोग,	लकवा मारजाना।
५८ अभिलाषिकरोग,[१]	+
५९ कम्परोग,	शरीर कांपना।
६० स्तम्भरोग,	शरीर जकड़ना।
६१ व्यथारोग,	शरीर चटकना।
६२ लोदररोग,	+
६३ मेदोरोग,	मेदकाबढना।
६४ स्फुरणरोग,	अंग फरकना।
६५ रूक्षता,	रूखापन।
६६ श्यामतारोग,	कालापन।
६७ क्षीणतारोग,	दुबलापन।
६८ शीतलतारोग,	शरीर ठंडा रहना।
६९ रोमाञ्चरोग,	पुलकित शरीर होना।
७० अंगमदरोग,	हडफूटन होना।
७१ अंगविभ्रमरोग.	अंगभ्रांति।
७२ स्नायुसंकोच,	नसोंका सिमिट जाना।
७३ अंगशोषरोग,	शरीर सूख जाना।
७४ भयरोग,	डरना।
७५ उन्मादरोग,	पागलपन।
७६ मोहरोग,	असावधानी।
७७ निद्रानाश,	नींद न आना।
७८ स्वेदाभाव,	पसीना न निकलना।
७९ बलक्षीणरोग	निर्बलता नाताकती।
८० वीर्यनाशरोग,	धातुक्षीण होना।
८१ रजोधर्मरोग,	स्त्रीको मासिकरज प्राप्ति।
८२ गर्भनाशकरोग.	गर्भ गिरजाना।
८३ अश्रमश्रम,	विनाश्रम थकजाना।
८४ श्रमनाश,	थकावट दूर होना।

ये चौरासी प्रकारके वातरोग हैं जिनमेंसे मुख्य २ के निदान लक्षण आगे लिखते हैं।

शिरोग्रहरोग लक्षण–कुपित हुआ वात रक्तमें प्रवेश होके मस्तक को धारण करनेवाली नसोंको रूखी; पीडायुक्त और काली करके मस्तकको जकड़ देता है इसे शिरोग्रहरोग कहते हैं, यह असाध्य है।

अल्पकेशरोग लक्षण–रोमकूपस्थ वायु कुपित होके उस स्थान (बालोंके रंध्र=छिद्र) की नसोंको निर्बल कर देता है, इसलिये वहां थोडे बाल निकलते हैं इसे अल्पकेश रोग कहते हैं,इस रोगमें मुख्य कारण निर्बलता ही है।

जृम्भादिरोगका लक्षण–प्रथम मुखकी एक श्वासको मुखहीमें पीकर तदनंतर उसी श्वासको मुखद्वारा बाहर निकालनेको जमुहाई कहते हैं और जमुहाईकी बहुतायतको जृम्भादिकरोग कहते हैं।

१ इस रोगका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखा है, परन्तु हमने "स्थानानामनुरूपैश्च लिंगाशेषान् विनिर्दिशेत्" इस श्लोकके आशयसे लिखे दिया है।

हनुग्रहरोग लक्षण-दतौनके चीरनेसे, जिह्वाको अधिक घिसनेसे, अधिक चबेना खाने और किसी प्रकार चोट लगनेसे डाढ़ीकी जडमें रहनेवाला वायु कुपित होके मुखको खुला या मूँदाही रख देता है, तब उस मनुष्यको खाने बोलनेमें अतिकष्ट पड़ता है, इसे हनुग्रहरोग कहते हैं।

जिह्वा स्तंभरोग लक्षण-शब्दको प्रवृत्त करनेवाली नसोंमें रहने वाला वायु कुपित होनेसे जीभको खींचकर स्थिर (जैसीकी तैसी) रखे देता है तब मनुष्य खाने पीने, बोलनेमें असमर्थ होजाता है, इसे जिह्वास्तंभरोग कहते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे अपस्मारवातव्याधिरोगलक्षण-
निरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

वातोद्भवरोगाः

भंगे चास्मिँल्लिख्यते सप्तचंद्रे रोगाणां वै कारणं
वातजानाम् ॥ मान्यान्ग्रंथान्सुश्रुतादीन्विचार्य
ज्ञाने येषां सन्ति वैद्यास्सुवैद्याः[1] ॥ १ ॥

अब हम इस सत्रहवे तरंगमें वातरोग (बादीसे उत्पन्न होने-वाले रोगों) का निदान माननीय सुश्रुतादि ग्रंथोंको विचारके लिखते हैं। जिन वातरोगोंका पूर्ण ज्ञान होनेसे वैद्य सुवैद्य (सुंदर वैद्य, सब वैद्योंमें पूज्य, सत्कारपात्र) होजाता है। किंवा जिन सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंके बोधसे वैद्य सुवैद्य होजाता है ॥ १॥

त्वचा शून्यरोग लक्षण-जिस पुरुषको शीत, उष्ण, कोमल, कठोर आदिका स्पर्शज्ञान नष्ट होजावे उसे त्वचाशून्य रोग जानो।

अर्दितरोग लक्षण-अत्यंत दीर्घ शब्दसे बोलने, कठिन पदार्थ खाने, जमुहाई लेते समय हँस देने, ऊँची नीची गर्दन करके सोने, मस्तकपर अधिक बोझा उठाने इत्यादि कारणोंसे मस्तक, नाक, ओठ, ठुड्डी, ललाट, और नेत्रकी संधियोंमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे मुखको किसी एक ओर टेढा करके अर्दित रोग उत्पन्न करता है, जिससे ग्रीवा

---

१ सुपूज्याः इति पाठो वा।

सहित मुख टेढा होकर मस्तक हिलता रहता है, बोलते नहीं बनता, नेत्रादिक विकृत होजाते हैं और मुख जिस ओर टेढा होता है उसी ओरको गर्दन, ठुड्डी, दांत और पार्श्वशूलमें भी पीडा होती है, जिस रोगी को ये लक्षण हों उसे अर्दितरोग जानो। यह रोग तीन प्रकारका है अर्थात १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज।

१ वात्तार्दितरोग लक्षण—लार अधिक गिरे, शरीरमें अधिक पीडा हो, शरीर कम्पित हो, शरीर फर्कै, ठुड्डी न मुड़े और ओठ सूजजावे तो वातार्दितरोग जानना चाहिये।

२ पितार्दितरोग लक्षण—मुख पीला पड़ जावे, ज्वर चढ़े और तृषा अधिक लगे तो पित्तार्दितरोग जानो।

३ कफार्दितरोग लक्षण—अधिक मोह हो, कंठ, शीश, गर्दन इन तीनों स्थानोंमें शोथ हो और ये तीनों अंग स्तब्ध हो जावें तो कफार्दित रोग जानो।

असाध्यार्दितरोग लक्षण—क्षीण पुरुष जिसको पलक न लगे, बोली स्पष्ट न समझपड़े, जीभ, नाक, नेत्रसे जल बहता रहे। कँपता रहे और जो ३ वर्षसे अधिक अवधि होगई तो यह नहीं सुधरेगा।

मन्यास्तम्भरोग लक्षण--दिनमें अधिक सोने और अधिक बैठे रहनेसे विकारको प्राप्त हुआ कफ वायुसे मिलके ग्रीवाको नहीं मुड़ने देता, इसे मन्यास्तम्भरोग कहते हैं।

बाहुशोषरोग लक्षण--कांधेमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे भुजा स्तब्ध होकर सूख जाती है इसे बाहुशोष रोग कहते हैं।

अपबाहुकरोग लक्षण--भुजाकी नसोंमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे नसोंको संकुचित (इकट्ठी) करके भुजाको स्तम्भित कर देता है, इसे अपबाहु या भुजास्तम्भ रोग कहते हैं।

विश्वाचीरोग लक्षण--हाथकी अंगुलियोंके नीचे खुजाल चले तथा पीछे खुजली होकर भुजाको निरुपयोगी कर देवे तो विश्वाचीरोग जानो।

ऊर्ध्ववातरोग लक्षण--कुपथ्य सेवनसे अधोवायु कुपित होके कफयुक्त होकर बारबार डकार उत्पन्न करती है इसे उर्ध्ववायु रोग कहते हैं।

आध्मानरोग लक्षण--पेटमें अफरा चढ जावे, पीडा हो, मूल द्वारका पवन (वायुसरण) बंद होजावे तो आध्मानरोग जानो।

प्रत्याध्मानरोग लक्षण-पार्श्वभाग तथा हृदयपर तो अफरा न हो केवल नाभिस्थानसे पेटमात्रपर ही अफरा हो तो प्रत्याध्मानरोग जानो।

वाताष्ठिलारोग लक्षण-नाभिके नीचे अचल या (सचल) गुल्लीके सदृश गोल ऊपरकी ऊँची, इधर उधर नीची और दृढ एक गठान (गाँठ) उत्पन्न होती है, जिससे मल, मूत्र रुक जाता है, इसे वाताष्ठीलारोग कहते हैं।

प्रत्यष्ठीलारोग लक्षण-वही वाताष्ठीला पीडायुक्त, मल, मूत्र, तथा अधोवायु प्रतिबन्धक और पेटमें तीर्छी हो तो प्रत्यष्ठीला रोग जानो।

तूनीरोगलक्षण-मलमूत्राशयमें रहनेवाली वायु कुपित होकर गुदा और लिंगेन्द्रियमें पीड़ा उत्पन्न करे उसे तूनीरोग कहते हैं।

प्रतितूनीरोग लक्षण-गुदा और लिंगमें रहनेवाली वायु गुदा और लिंगको पीड़ा करती हुई पेडू (नाभिके तलेका स्थान) में पीड़ा उत्पन्न करेतो उसे प्रतितूनीरोग कहते हैं।

त्रिकशूलरोग लक्षण-कटि कमरकी तीनों हड्डी, पीठकी तीनों हड्डी और बांसमें पीडा उत्पन्न हो उसे त्रिकशूल जानो।

वस्तिवातरोग लक्षण-मूत्राशयमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे मूत्रको रोकके ननाप्रकारकेरोग उत्पन्नकरे उसे वस्तिवात कहते हैं।

गृध्रसीरोग लक्षण-यह रोग पहिले कूले फिर क्रमशः कमर, पीठ, जांघ, घुटने, पिंड़री और पांवमें प्राप्त होकर पैरोंको जकड़ देता, सुईचुभानेके सदृश वेदना करता, तथा कम्प उपजाता और पांवकी गति मन्द कर देता है, ये लक्षण हों तो गृध्रसीरोग जानो, यह दो प्रकारका होताहै अर्थात् १ वात और २ वातकफसे उत्पन्न हुआ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे वातरोगलक्षणनिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः ॥१७॥

वातोद्भवरोगाः

हेतु गदानां हि समीरजानां पीयूषसिन्धौ लिखतं पुराणे॥
भंगे लिखाम्यत्र यथाष्टचन्द्रे लोकोपकाराय सुभाषयाहम् ॥१॥

---

१ पीठकी समस्त सूक्ष्म अस्थियोंको धारणकारिणी दीर्घास्थि (बड़ी हड्डी) जिसे पीठ की "नागिन" भी कहते हैं।

२ बस्तिवातमें या तो मूत्र बूंद २ करके उतरताहै, या पूर्णरूपसे बन्दही हो जाता है इसीलिये चिकित्साखण्डमें दोनों प्रकारकी चिकित्साभी जुदी २ बर्णनकी गई हैं।

अब हम इस अठारहवें तरङ्गमें वातोद्भव रोगोंका निदान प्राचीनामृतसागरकी पद्धतिसे मनुष्योंके लाभके लिये सुन्दर नागरी भाषामें लिखते हैं ॥ १ ॥

खंजरोगलक्षण–कमरमें रहनेवाला वायु जांघोंकी नसोंको पकड़के एक पांवको स्तंभित कर देता है उसे लंगड़ापन कहते हैं।

पंगुरोग लक्षण--कमरमें रहनेवालावायु जाँघोंकी नसोंको ग्रहण करके दोनों जाँघोंकी नसोंका नाश कर देता है तब मनुष्य चलने से असमर्थ हो जाताहै उसे पंगुरोग कहते हैं।

कलायखंजरोग लक्षण--संधियोंकी बन्धनरूपी नसें ढीली पड जानेसे मनुष्य कम्पित होकर लँगड़ाते हुए चलते ह, उसे कलायखंजरोग कहते ह।

क्रोष्टुशीर्षकरोग लक्षण--घुटनोंमें वादी और रक्त विकारसे शोथ होवे, विशेष पीड़ा होवे और घुटने शृगाल (स्यार) के मस्तक सदृश कठोर हो जावें तो क्रोष्टुशीर्षकरोग जानो।

खल्लरोग लक्षण--पैर, पिंडुरी, जांघें और पहुँच मरोडे खाजावें तो खल्लरोग जानो।

वातकंटकरोग लक्षण--ऊँचेनीचे स्थानमें पांवरखनेसे श्रमजान पड़े और पांवकी गट्टियोंमें पीडा हो तो वातकंठकरोग जानो।

पाददाहरोग लक्षण–वात, पित्त, और रक्त तीनों युक्त होकर पादतल (पगतली तलुवों) में दाह (जलन) उत्पन्न करते हैं उसे पाददाह कहते हैं।

पादहर्षरोग लक्षण- दोनों या एक पांव झनझुन करके सो जावे और दाबने या झटकन देनेसे पुनः पूर्ववत् जग उठे (झनझनाहट मिटकर अच्छे हो जावें) उसे पादहर्ष (या झिनझिनी चढना) रोग जानो।

आक्षेपकरोग लक्षण -वायु कुपित होके रक्तप्रसारणी सब नाड़ियोंमें प्राप्त होता है तब वारंवार चलित होके शरीरको हिलाता है उसे आक्षेपक रोग कहते हैं।

विशेषतः--चोट लगनेसे वायु कुपित होकर आक्षेप उत्पन्न हुआ हो तो साध्य और अन्यथा कारणसे हो तो असाध्य जानो।

अंतरायामरोग लक्षण--पैरकी अंगुली, एँडी, पेट, हृदय, छाती और गलेमें रहनेवाला वायु वेगयुक्त होकर नसोंके समूहको खींच लेता है तब मनुष्यके नेत्र ठुड्डी और पंसुली स्तब्ध होकर मुखसे आपही आप

कफ गिरता और दृष्टिभ्रमसे आगेको धनुषाकार बना हुआ दीखता है, जो ये लक्षण हों तो अन्तरायामरोग जानो।

बाह्यायामरोग लक्षण--जिस प्रकार अन्तरायाममें वायु आगेकी नसोंमें प्राप्त होकर आगेको झुका देता है, उसी प्रकार बाह्यायाममें वायु पीछेकी सब नसोंमें निवास करता हुआ कुपित होकर पीछेको नवा (झुका) देता है। जिसके कमर, पँसुरी और जांघोंकी नसें टूट जावें उसे असाध्य बाह्यायाम जानना चाहिये।

धनुस्तम्भरोग लक्षण--जिसका शरीर (कमान) के सदृश हो जावे शरीरका वर्ण पलट जावे, मुख मूँद (बँध) जावे, देह शिथिल हो जावे चैतन्यता न रहे और पसीना भी निकले तो धनुर्वात जानो । इस रोगमें रोगीके जीनेकी १० दिनकी अवधि होती है।

कुब्जकरोग लक्षण--वायु कुपित होके हृदय या पीठको ऊंची करके अधिक पीडा करती है। उसे कुब्जक रोग कहते हैं।

अपतंत्ररोग लक्षण--वातल वस्तुके सेवनसे वायु कुपित होके अपने स्थानको छोड देता है, और हृदयमें प्राप्त होके शिर और कनपटीमें पीडा उत्पन्न करता है, जो रोगीका शरीर कमानकासा नव (झुक) जावे, रोगी मोहको प्राप्त हो, अत्यन्त कष्टपूर्वक ऊपरको श्वास लेवे, नेत्र फटे रहजावें, या मिच जावें, कंठमें घरघर शब्द होने लगे और संज्ञा नष्ट होती आवे तो अपतंत्ररोग जानो।

अपतानकरोग लक्षण-नेत्र फट जावे; संज्ञाहीन होजावे, कंठमें कफका घर्राटा चले, संज्ञा आनेसे चैतन्य होकर असंज्ञा होनेपर पुनः-मोहित होकर चैतन्यका अभाव होजावे, ये लक्षण हों तो अपतानक रोग जानो, यह असाध्य रोग स्त्रीको गर्भपात और पुरुषको अधिक रुधिर निकलनेसे तथा अत्यन्त चोट लगनेसे होता है।

पक्षाघातरोग लक्षण-किसी कारणसे वायु कुपित होके मनुष्यके अर्द्ध शरीरको ग्रहण कर शरीरकी मोटी तथा मध्यम नसोंको सुखाकर संधियोंके बंधन ढीले कर देता है तब मनुष्यका अर्धांग (एक ओरका पक्ष अर्थात् नाक, कान, आँख, हाथ पांव) शिथिल होकर बेकाम तथा अचेत होजाता है उसे पक्षाघातरोग कहते हैं। जिस प्रकार यह अर्धांग शिथिल होता है उसी प्रकार सर्वांग भी शिथिल होजाता है इस रोगके

दो भेद हैं—१ पित्तवात पक्षाघात और २ कफवातपक्षाघात, कोई कोई आचार्य इसे एकांग रोग कोई पक्षावधरोग और लोकमें बहुधा लकवा रोग कहते हैं ।

पित्तवातपक्षाघात लक्षण--शरीरके भीतर, बाहर दोनों ओर दाह हो और मूर्छा आवे तो पित्तवातपक्षाघातरोग जानो ।

कफवात पक्षाघात लक्षण--शरीर भीतर तथा बाहरसे शीतलसा जान पड़े अंगपर सूजन हो और देहभारी होतो कफवातपक्षाघात जानो ।

पक्षाघात असाध्य लक्षण--यदि केवल वायुसे पक्षाघात हो तो कष्टसाध्य और गर्भिणी स्त्री, प्रसूता स्त्री, बालक, वृद्ध, क्षीण पुरुष घायल मनुष्य और (जिसके शरीरमेंसे रुधिर निकलगया हो) शून्य शरीरवालेको पक्षाघात हो तो असाध्य जानो ।

निद्रानाशरोग लक्षण--कटु, तीक्ष्ण आदि पदार्थ भक्षण, चिंता और कामादिका वेग रोकनेसे वायु कुपित होकर निद्राका नाश कर देता है तब मनुष्यको लेटे रहनेपर भी निद्रा नहीं आती, ये लक्षण हों तो निद्रानाशरोग जानो ।

सर्वांगकुपितवात लक्षण--समस्त अंगभरका वायु कुपित होकर देहभरमें पीड़ा उपजावे तो सर्वांगकुपितवात जानो ।

त्वग्गतकुपितवायु लक्षण--त्वचामें रहनेवाले वायुके कुपित होनेसे त्वचा रूखी, फटी हुई, शून्य, पतली, काली, पीडायुक्त, लाल होकर खिंचती हुई जान पड़े और त्वचाका रस शुष्क हो जावे तो त्वग्गतवायु कुपित हुआ जानो ।

रक्तगत कुपितवायु लक्षण--रक्तस्थ वायु कुपित होनेसे अंगमें संताप सहित तीव्र पीडा उत्पन्न होवे, शरीरका वर्ण कुरूप होजावे अरुचि होवे, शरीरमें फोड़े फुन्सी होकर देहमें काली पडजावे और भोजन करनेपर-शरीर जकड़ जावेतो रक्तगतवायु कुपित हुआजानो ।

मांसमेदोगत कुपित वायु लक्षण--शरीरजकडकर भारी होजावे और दंडा तथा मुक्केके प्रहार समान पीडा हो तो मांस मेदोगतवायु कुपित जानो ।

अस्थिमज्जागत कुपितवायु लक्षण--हड्डी और पांवोंमें पीडा हो, संधियोंमें शूल चले, मांस, बल और निद्राका अभाव होकर समस्त शरी-

स्मात्रमें निरंतर पीडा होती रहे, तो हड्डी तथा मज्जा चिकना फेन शरीरस्थ सप्तधातुओंमें (चतुर्थधातु) की वायु कुपित जानो ।

शुक्रगत कुपितवायु लक्षण--पुरुषका वीर्य स्त्री प्रसंगके समय शीघ्र पात हो जावे, या विलम्ब तक पात न हो और स्त्रीका गर्भ नियतकालसे पूर्व गिर जावे, या विलम्ब तक प्रसवोत्पत्ति न हो तथा वीर्य और गर्भमें कुछ दुष्टविकार उत्पन्न हो तो वीर्यस्थवायु कुपित जानो ।

कोष्ठगत कुपितवायु लक्षण--मल मूत्र रुक जावे, उदरपीडा, हृदयशूल, अर्श, गुल्म और पार्श्वशूल उत्पन्न हो तो कोष्ठगत वायु कुपित हुआ जानो ।

अमाशयगत कुपितवायु लक्षण--हृदय, पार्श्व, नाभिमें पीडा हो, तृषा लगे, मुख कंठ सूख जावे, डकारें अधिक आवें और विसूचिका उत्पन्न हो तो अमाशयका वायु कुपित हुआ जानो ।

पक्वाशयगत कुपित वायु लक्षण--आंतोंमें शब्द हो, पेटमें शूल हो, पीठमें पीडा हो, मल, मूत्र, कष्टसे उतरे और अफरा हो तो पक्वाशयस्थ वायुका कोप जानो ।

गुदास्थकुपितवायु लक्षण--मल, मूत्र, रुक जावे, उदरशूल और आध्मान (अफरा) हो जांघ, पीठ और पार्श्वभागमें पीडा हो और पथरीका रोग हो तो मलद्वार (गुदा) का वायु कुपित जानो ।

हृदयकुपित वायु लक्षण--हृदयमें पीडा हो तो हृदयकीवायुका कोप जानो ।

कर्णादि इन्द्रियस्थ कुपितवायु लक्षण--कर्णादिक इन्द्रियोंकी शक्ति नष्ट हो तो इन्द्रियस्थ वायुकोप जानो ।

शिरोगतकुपितवातलक्षण--शरीरकी नसोंमें तडक उठकर नसोंका गोला बँधजावे (इकट्ठी हो जावें) तो शिरास्थवायुकाकोप जानो ।

संधिस्थ कुपित वात लक्षण--शरीरकी संधियोंमें (जोडोंमें) शूल चले और तडक उठे तो संधिस्थवातका कोप जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे वातरोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टादशस्तरंगः ॥१८॥

वातोद्भवरोगाः

नोक्तं येषां वातजानां पुराणेऽमृतसागरे ।
नन्दसोमे तरंगे तन्निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस १९ वें तरंगमें उन रोगोंका निदान वर्णन करते हैं, जिनका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखा गया है ॥ १ ॥

स्नायुगतकुपितबात लक्षण--सिरानामक रक्तप्रसारणी नसोंसे अन्य नसोंमें प्राप्त हुआ कुपित वायु सर्वांग रोगको और किसी एकही विशेष अङ्गकी नसोंमें प्राप्त होनेसे एकांग रोगको उत्पन्न करता है इसे स्नायुगतकुपितवात जानो ।

दंडापतानकरोग लक्षण–शरीरकी नसोंमें कफयुक्त कुपित वायु प्राप्त होनेसे मनुष्य दंडके समान (जडरूप होकर पड़ा रहता है, उसे दंडापतानक रोग कहते हैं ।

व्रणायामरोग लक्षण--मर्म स्थानके कोठेमें कफयुक्त हुआ वायु प्रवेश होनेसे सब देहमें फैलके शरीरको नवा (झुका) देता है उसे व्रणायाम कहते हैं ।

जिह्वास्थित मूकादिरोग लक्षण–कफयुक्त वायु कुपित होके जिह्वाकी शब्द प्रसारणी नसोंको घेर लेता है तब दोषोंकी न्यूनाधिकतासे जिह्वामें मूक मिन्मिन और गद्गद रोग उत्पन्न हो जाते हैं जिससे सर्वतोभावसे भाषा बंद हो जावे वह मूकरोग, नासिकास्वरसे बोले वह मिन्मिनरोग और हकेलाके बोले वह गद्गदरोग जानो ।

कम्पवातरोग लक्षण–जिसमें सब अंग और शिर कँपता रहे उसे वेपथु (कम्पवात) रोग कहते हैं ।

अनुक्तवातरोग-संग्रहार्थमाह-

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैश्शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्ग पित्ताद्यैरुपलक्षयेत् ॥ १ ॥

अवशिष्ट वातरोगोंका निदान तथा उनके स्थानके नामानुरूप चिह्न और उक्त समस्तवातरोगोंमें पित्तादिकके संसर्ग ये सब अपनी बुद्धिसे जानो ।

---

१ अटकते अटकते बोलना, एक अक्षरको अनेकवार कहना जैसे "पानी कहनेके लिये प-प-प-पा ! पानी" कहकर कठिनाईपूर्वक पानी शब्दका उच्चारण करना ।

पित्तकफयुक्त पंचवायुके कार्य-(१) पित्तयुक्त प्राणवायु हो तो वांति और दाह होय, कफयुक्त हो तो दुर्बलता, शैथिल्य झपकी और मुख स्वादरहित होगा, (२ उदानवायु पित्तयुक्त होनेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम और घबराहट हो कफयुक्त हो, तो पसीनेका अभाव, रोमांच, मंदाग्नि और शीतलता होगी, (३) समानवायु पित्तयुक्त हो तो शरीरमें दाह, उष्णता, मूर्च्छा और पसीना आवेगा, कफयुक्त हो तो रोमाञ्च होकर मल मूत्रकी रुकावट हो जावेगी, (४ (अपान वायु पित्तयुक्त हो तो दाह, उष्णता और मूत्र लाल होगा, कफयुक्त हो तो शरीरके तलभागमें भारीपन और जाडा लगेगा (५) व्यानवायु कफयुक्त होनेसे शोथ, शूल और शरीर जकड़कर दंडेके समान रह जावेगा। पित्तयुक्त होनेसे दाह और घबराहट होकर हाथपांव पटकेगा।

पञ्चविधस्य प्रकृतस्य वायोः कार्यलिंगं चाह-

अव्याहतगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतौ स्थितः ॥
वायुस्स्यात् सोऽधिकंजीवेद्वीतरोगःसमाःशतम् ॥ १ ॥

(इति माधवः)

अब पांचों प्रकारके वायुके कार्य और चिह्न लिखते हैं, जिस मनुष्यके पञ्चवायु शरीरमें अपने स्वभाव व स्थानानुकूल स्थित रहकर किसी प्रकारसे अवरोधित न होवें। वह मनुष्य १०० सौ वर्षपर्यन्त रोगरहित जीवेगा। क्योंकि शरीरस्थ वायुके विकारसे ही प्राणी रोगयुक्त होके पूर्ण आयु नहीं भोगने पाते हैं। इस बातपर प्रत्येक वैद्य और मनुष्योंको पूर्ण ध्यानदेना चाहिये उक्त १०० वर्षका आयुप्रमाण कलियुगके मनुष्योंका है, इसीलिये मनु महाराजने अपनी मनुस्मृतिमें लिखा है॥१

आरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः ॥
कृतत्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः ॥ १ ॥

मनु० १ अ० ४२ श्लो०

मनुष्योंकी आयु कृतयुगमें ४०० वर्ष, त्रेतायुगमें ३०० वर्ष, द्वापरयुगमें २०० वर्ष थी और अब कलियुगमें १०० वर्षकी है। आयुके उक्त निश्चित वर्षोंसे अधिक आयु भोगनेकेलिये मुख्य कारण स्वधर्ममें तत्पर रहना और अल्पायु होनेका मुख्य कारण स्वधर्मसे च्युत होकर अधर्म सेवन करना ही है। क्योंकि अधर्मसंबन्धी कार्य करनेसे रोगोत्पत्ति और रोगोत्पत्ति होनेसे आयु नष्ट हो जाती है। ॥ १ ॥

सूचना—इस तरंगमें जो रोग निदान लिखे हैं वे पूर्वामृतसागरमें नहीं थे परन्तु हमने माधवनिदानादि ग्रन्थोंसे लेके लिखे हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे क्षुद्ररोगलक्षणनिरूपणं नाम एकोनविंशस्तरंगः ॥१९॥

ऊरुस्तम्भादिपित्त–कफरोगाः

भंगेऽत्रनेत्र रोगाणामूरुस्तम्भामवातयोः।
पित्तजानां श्लेष्मजानां निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

इस बीसवें तरंगमें ऊरुस्तम्भ. आमवात, पित्तरोग और कफरोगोंका निदान लिखतें हैं ॥ १ ॥

ऊरुस्तम्भरोगोत्पत्ति–शीतल, उष्ण, भारी या चिकनी वस्तु अधिक क्षुधा या अल्पाजीर्णमें खाने, दिनको शयन और रात्रिके जागरणसे वायु कुपित होके पित्तको बिगाड़ देती है। तब दोनों जाघें स्तंभित होकर सूनी हो जातीं और मनुष्य हलने चलनेसे असमर्थ हो जाता है।

ऊरुस्तम्भपूर्वरूप-निद्रा, अरुचि, छर्दि, रोमांच अधिक हों, ध्यान लग जावे, ज्वरांश कुछ हो और दोमों जांघोंमें पीड़ा हो तो ऊरुस्तम्भ होगा।

ऊरुस्तम्भरोग लक्षण–दोनों पांव सूजजावें, पीड़ा होवे, पांव कठिनाईसे उठें, दोनों जांघोंमें पीड़ा हो, दाह हो पृथ्वीपर पांव रखते समय विशेष पीड़ा हो, शीतोष्ण तथा स्पर्शज्ञान न हो, गति नष्ट हो जावे, जांघ काष्ठसदृश टूटीसी जान पडें तो महावातव्याधि तथा ऊरुस्तम्भरोग जानो।

असाध्य ऊरुस्तम्भ लक्षण--शरीरमें दाह, पीडा और कम्प प्राप्त हो तो वह रोगी अवश्य मरता है।

आमवातरोगोत्पत्ति--मन्दाग्निवाला मनुष्य कुपथ्यपूर्वक चिकना अन्न खानेपर परिश्रम न करे तो वा वायुकी प्रेरणा भक्षितान्नका कच्चा रस कफाशय (हृदय) में प्राप्त होये नसोंमें प्रवेश होता है और वही रस त्रिदोषसे अतिदूषित होनेसे शरीरकी नसोंको पूरित करके अग्निमांद्यको प्रगट करता है, तब शरीर भारी होकर आम तथा सब रोग उत्पन्न होते हैं।

१ धन्वंतरिजीने सुश्रुतमें इसी ऊरुस्तम्भका महावातव्याधिरोग नाम भी दिया है, इसलिये हमने उपर्युक्त लक्षण सुश्रुतोक्त ही लिखे हैं।

आमवात लक्षण--मंदाग्निवाला मनुष्य अजीर्णमें भोजन करता है, इसलिये उसमें उदरमें आम उत्पन्न होकर अनेक रोगोंको उत्पन्न करती है, तब मस्तक, अंग, स्कंन्ध पृष्ठ, कटि घुटनोंमें पीडाहोती है, नसोंको संकोच होता और शरीर स्तंभित हो जाता है ये लक्षण हों तो आमवात जानो।

ग्रन्थान्तरोक्त आमवातरोगके विशेष लक्षण–अंगमें पीडा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन, तृषा और आलस्यकी अधिकता पाचनशक्तिका अभाव, सूनापन और ज्वरका वेग हो तो आमवात जानो।

पित्तरोगोत्पत्ति कारण–कड़वी, खट्टी, उष्ण, दाहकारक, तीक्ष्ण, रूखी वस्तु भक्षणसे, भूँख, मैथुन, क्रोध, परिश्रम, मद्यपानकी विशेषतासे, तृषा, क्षुधाका वेग रोकनेसे, घातमें फिरनेसे और अधिक नमक खानेसे पित्त कुपित हो जाता है, तथा अपच होनेसे, शरद् ऋतु, ग्रीष्मऋतु, मध्याह्नके और अर्द्धरात्रिके समयमें भी पित्त कुपित हो जाता है तब कुपित पित्तसे निम्नलिखित ४० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं।

रोगनाम

१ तरुणावस्थामें बाल श्वेत होना।
२ रक्तनेत्र (आंखे लाल होना)
३ रक्तमूत्र (लालपेशाबउतरना)
४ पीतनेत्र (पीलेनेत्र होजाना)
५ पीतमूत्र (पीला पेशाब उतरना)
६ पीतमल (पीलादस्त होना)
७ पीतनख (नखपीले पड़जाना)
८ पीतदंत (दांत पीले पड़जाना)
९ पीतशरीर (देह पीलीपड़जाना)
१० अँधियारी आना।
११ सर्वत्र पीतहीपीत दृष्टि पड़ना।
१२ अल्पनिद्रा (थोडीनींदआना)
१३ मुखशोष (मुँह सूखना)
१४ मुखदुर्गन्धि (मुँहकीबुरीवास)
१५ मुखतीक्ष्ण (मुँह तीखा रहना)
१६ उष्ण श्वास (श्वास गर्म चलना)
१७ मुखमें खट्टापन।

रोगनाम

१८ डकारके साथ बाफनिकलना।
१९ चक्कर आना।
२० इन्द्रियोंकी शिथिलता।
२१ क्रोधाधिक्य (गुस्साचढीरहे)
२२ दाह) शरीर जलना)
२३ अतिसार (दस्त लगना)
२४ उष्णतापर अरुचि।
२५ शीतलतापर प्रीति।
२६ सर्वग्राह (किसी वस्तुसे पूर्णता न होना)
२७ सर्व वस्तुओंसे विशेष स्नेह।
२८ भोजनानंतर दाह प्राप्त।
२९ क्षुधावृद्धि (भूँखबहुतलगना)
३० नकसीर (नाकसे रक्तगिरना)
३१ मलद्राव (पतला दस्त)
३२ मलोष्णता (गर्मदस्तहोना)
३३ मूत्रोष्णता (गर्म पेशाब उतरना

रोगनाम	रोगनाम
३४ मूत्रकृच्छ्र,	३८ पसीनामें दुर्गन्धि आना।
३५ वीर्यक्षीणता ।	३९ हाथ पांवका चर्म फटना,(ब्याऊ)
३६ शरीरोष्णता, (अंग तप्त रहना)	४० शरीर फूटना या फोड़े आदिकी अधिकता।
३७ पसीनाकी विशेषता ।	

ये चालीस रोग पित्तप्रकोपकी उष्णताद्वारा उत्पन्न होते हैं।

कफरोगोत्पत्ति कारण–भारी, मीठी, चिकनी शीतल वस्तु तथा दधि भक्षणसे, मंदाग्निसे, दिनमें सोनेसे और अधिक बैठे रहनेसे कफ कुपित होता है, तथा प्रभात समय भोजन किये पश्चात् और वसन्तऋतुमें भी कफ कोपको प्राप्त होता है तब इसके प्रकोपसे आगे लिखित २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं।

रोगनाम ।	रोगनाम ।
१ मुख मीठा रहना ।	१२ मंदाग्नि ।
२ मुख कफसे लिप्त रहना ।	१३ रेचनाधिकता (बहुत दस्त होना)
३ मुखसे लार गिरना ।	१४ श्वेत मल उतरना ।
४ अधिक निद्रा आना ।	१५ मूत्राधिक्य (बहुत पेशाब होना)
५ कंठमें घर्राटा चलना ।	१६ श्वेतमूत्रसफेदपेशाब उतरना
६ कटु रसकी इच्छा ।	१७ वीर्याधिक्य ।
७ उष्णताकी इच्छा ।	१८ निश्चलता (जडत्व)
८ बुद्धिजडता (अक्कुंद होना)	१९ शरीरमें भारीपन ।
९ स्मरणशक्तिकी अल्पता ।	२० शरीरमें शीतलता ।
१० आलस्याधिक्य (सुस्ती)	
११ क्षुधाका अभावभूँखनलगना	

कफके प्रकोपसे ये २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे ऊरुस्तम्भवातपित्तरोगकफरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम विंशतितमस्तरंगः ॥ २० ॥

वातरक्तशूलादिरोगाः

निदानं वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमम् ॥
एकविंशतिमे भंगे रोगाणां लिख्यतेमया ॥ १ ॥

अब हम २१ वे तरंगमें वातरक्त और शूल आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं।

वातरक्तरोगोत्पत्ति–नमक, उष्ण वस्तु, सड़ा हुआ मांस, मूँगके बडे, मूँग, कुलथी, उर्द शाक, मांस मछली, दही और अन्य विरुद्ध वस्तु खाने, मद्य और कांजी पीने, अजीर्ण दशामें भोजन करने, हाथी, घोड़ा, ऊँटपर आरूढ होने, दिनको निद्रा लेने और क्रोध करनेकी विशेष अधिकतासे सुकुमार और सुखग्राही पुरुषोंको वातरक्त-रोग उत्पन्न होता है।

वातरक्तपूर्वरूप–पसीना किंचित् न निकले, या बहुत निकले, शरीर काला पड़जावे, शरीरका स्पर्शज्ञान नष्ट हो जावे, अल्प प्रहारपर विशेष पीडा हो, समस्त संधियां ढीली पड़जावें, अधिक आलस्य आवे, शरीरमें फुन्सी बहुत हों; घुटन, जांघ, कमर, हाथ, पैरमें पीडा विशेष हो, शरीर भारी पड़ जावे, देह शून्य हो जावे, देहमें दाहहो, वर्ण विपर्यय रंग, (बदलजाना) खिजावे और शरीरपर लाल चट्टे पड़जावें, तो जानो कि, वातरक्त उत्पन्न होगा।

वातरक्तस्वरूप–सब शरीरका रक्त दग्ध होकर दोनों पावोंमेंसे चूने (टपकने) लगता है, इसे वातरक्त कहते हैं, इसके ५ भेदहैं– १ वाताधिक, २ पित्ताधिक, ३ कफाधिक. ४ रक्ताधिक, और ५ सन्निपातके आधिक्यसे उत्पन्न हुआ वातरक्त जानो।

वाताधिकवातरक्त लक्षण–पाँवोंमें अधिक शूल हो, पावों-पर कुछ शोथ भी हो, पाँवके तलुवे, चर्म या कोर रूखी और काली पड़ जावे, चौबीसों नाड़ी और अंगुलियोंकी संधियोंमें संकोच हो, शरीर जकड़कर कँपे और सूना पड़ जावे तो वाताधिक वातरक्त जानो।

२ पित्ताधिक वातरक्त लक्षण–शरीरमें दाह, मोह, मूर्च्छा, मद, तृषा, पसीनेका बहाव, स्पर्शासहन, पीड़ा, शोथ, पकाव और उष्णताकी विशेषता हो तो पित्ताधिक वातरक्त जानो।

३ कफाधिक वातरक्त लक्षण—शरीरमें शूल (कुकरी), भारीपन, शून्यता, चिकनाहट, शीतलता और कडुत्वकी अधिकता हो तो कफाधिक वातरक्त रोग जानो ।

४ रक्ताधिक वातरक्त लक्षण--शरीरपर शोथ, पीड़ा, ललाई. चमक और कंडुत्व; (खुजलाहट) हो तो रक्ताधिक वातरक्त लक्षण जानो ।

५ सन्निपात वातरक्त लक्षण--जिसमें पूर्वोक्त त्रिदोषोंके लक्षण एकत्र दृष्टि पड़े उसे सन्निपात वातरक्त जानो ।

हस्त वातरक्त लक्षण--जैसे पाँवकी पगथली तैसेही हाथकी हथेली में भी फुन्सी होकर अन्तमें सब शरीरमें हो जाती है उसे हस्त वातरक्त कहते हैं ।

असाध्य वातरक्त लक्षण--पावके तलुवोंसे घुटनोंतक सर्वत्र फुन्सियाँ हो जावे, शरीर फटन और लगे चूने, बल मांस और जठराग्निकी हीनता हो जावे । तो असाध्य वातरक्त जानो । यह रोग १ वर्षकी अवधितक याप्य रहता है ।

वात रक्तोपद्रव, निद्राका अभाव, अन्नपर अरुचि, श्वास, शिरः पीड़ा (शिरमें वेदना), मांसका गलना, फुन्सियोंका पकना, अंगुलियोंमें टेढापन या गलना. तृषा, ज्वर, मोह, कम्प, हिचकी और ब्योंची ये वातरक्तके उपद्रव हैं ।

शूल रोगभेद--यह रोग आठ प्रकारका है अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ आमरस (कच्चारस), ६ वात कफ, ७ कफपित्त और ८ वातपित्तका शूल ।

१ वातशूलरोगोत्पति कारण—घोड़े आदि पशुओं पर आरूढ होकर दौड़ाने, मैथुन, जागरण, जलपान, भीगा हुआ अन्न, सूखा मांस, विरुद्ध पदार्थ भक्षण करने, मल, मूत्र और वायु रोकने और शोक, लंघन, हास्यकी अधिकतासे वायु कुपित होकर हृदय, दोनों पार्श्वभाग और रोमकूपमें शूलरोगको उत्पन्न करता है ।

वातशूल लक्षण—सन्ध्यासमय बदली (बदल) होनेपर या शीतकालमें उक्तहृदयादिस्थानमें शूलचलनलगे चलते २ बारम्बार रुकजावे मलमूत्र रुकजावे और अतिपीड़ा हो तो वातशूल जानो ।

२ पित्तशूलोत्पत्ति कारण-खारी, तीखी, उष्ण, खट्टी वस्तु, काली मिर्च, तिल, खली, कुलथीके विशेष भक्षण, काँजी, मदिरा, आसन के विशेषपान, श्रम, मैथुन; क्रोध और धूपमें घूमनेकी अधिकतासे पित्त कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है,

पित्तशूल लक्षण--तृषा, दाह, मूर्छा, भ्रम, क्रोध विशेष हो, मध्याह्न, अर्द्ध रात्रि, ग्रीष्मऋतुमें और शरदऋतुमें शूल अधिक चले और नाभि पर अधिक पसीना आवे तो पित्तशूल जानो।

कफशूलोत्पति कारण-अनूपदेशज पशुका मांस मछली, खोवा (मावा), पेठा, मैदाके पक्वान्नविशेष खाने और दूध, गन्ना, (ईख) का रस, मधुर रसके पानसे कफ कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है,

३ कफ शूल लक्षण-हृदयमें पीड़ा, वमन होनेकी इच्छा, खांसी भोजन में अरुचि, उदर और मस्तकमें भारीपन, मलमूत्रका रुकाव होवे, भोजन करनेपर अधिक पीड़ा और प्रातःकाल या वसन्त ऋतुमें शूल चले तो कफ शूल जानो।

४ सन्निपात शूल रोगोत्पत्ति कारण लक्षण--पूर्वोक्त तीनों दोषोंके कारण और लक्षण हों तो सन्निपात शूल जानो।

५ आमशूलरोग लक्षण-अफरा, वमन, शरीरमें भारीपन, मूत्राशयमें गुड़गुड़ाहट, हृदयमें जकड़पन होवे, लार गिरे और कफशूलके सब लक्षण मिलें तो आमशूल जानो।

६ वातकफशूल लक्षण-पेडू, हृदय, कंठ और दोनों पार्श्वभागोंमें शूल चले तो वातकफशूल जानो।

७ कफपित्तशूल लक्षण-कुक्षि, हृदय और नाभिस्थानमें शूल चले तो कफपित्तशूल जानो।

८ पित्तवातशूल लक्षण--दाह और ज्वरयुक्त शूल चले तो पित्तवात शूल जानो।

द्रष्टव्य-शूलरोगके और भी विशेष भेद हैं, परंतु हमने प्राची-नामृतसागरमें लिखित भेदोंकेही लक्षण लिखे हैं जिन्हें विशेष भेद देखना हो वे चरक सुश्रुतादि ग्रंथ देखें, इसी शूलके तीन उपभेद और सुनो।

परिणाम-शूलरोगोत्पत्ति कारण-उपर्युक्त लेखानुसार केवल इसमें कुपित वायु कफ पित्तसे मिलकर शूलको उत्पन्न करती है।

परिणामशूल लक्षण-भोजन करनेके पश्चात शूल उठे तो परिणाम-शूल जानो।

अन्नद्रवशूल लक्षण-भक्षित भोजन पचे या न पचे शूल सदैव रहे, पथ्य करनेपर भी शांत न हो तो अन्नद्रवशूल जानो।

जरत्पित्तशूल लक्षण-भोजन पाचन न होतेही शूल उठे तो जरत्पित्त शूल जानो।

शूलरोगोपद्रव-तृषा, मूर्छा, अफरा, अरुचि, शरीरमें भारीपन, श्वास, कास, हिक्का और उदरमें विशेष पीडा होना ये शूलके नव उपद्रव हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे वातरक्तशूलरोगलक्षणनिरूपणं नामैकविंशतितमस्तरंगः ॥ २१ ॥

उदावर्त्तानाह-

उदावर्तस्य रोगस्य चानाहस्य यथाक्रमम्।
द्वाविंशेऽस्मिस्तरंगे हि निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २२ वें तरंगमें उदावर्त्त और आनाह रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

उदावर्त्तरोगोत्पत्ति कारण-१ अधोवायुवेग, २ मलवेग, ३ मूत्र-वेग, ४ जमुहाईवेग, ५ अश्रुवेग, ६ छींकवेग, ७ डकारवेग, ८ वमन-वेग ९ कामवेग, १० क्षुधावेग, ११ तृषावेग, १२ श्वासवेग और १३ निद्रावेग इन तेरह वेगोंके प्रतिरोधसे १३ प्रकारका उदावर्तरोग उत्पन्न होता है।

१ अधोवायु वातरोगोदावर्त्त लक्षण-मलमूत्र रुक जावे, अफरा चढे, गुदा, मूत्राशय, लिंगेन्द्रियमें पीड़ा हो, तथा अन्य बादीके अनेक उदर-रोग हों तो अधोवायु (सरण) रोकनेका उदावर्त जानो।

२ मल वेगावरोधोदावर्त्त लक्षण-पेटमें गुड़गुड़ शब्द हो, शूल उठे, पेडूमें पीड़ा हो, मल न उतरे, डकारें अधिक आवें और मुखसे मल निकल आवे तो मल रोकने का उदावर्त्त जानो ।

३ मूत्रावरोधोदावर्त्त लक्षण-मूत्राशय लिंगेंद्रियमें शूल हो, मूत्र कष्ट से उतरे, मस्तक में पीडा हो, आमाशयके अभाव पर भी पेटमें अफरा हो तो मूत्र रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

४ जृंभावरोधोदावर्त्त लक्षण-गर्दन और कंठ रुक जावे शिरोग्रह हों, जमुहाई अधिक आवें नाक, कान, आंखोंमें अधिक पीड़ा हो और बादी के अनेकानेक रोग हों तो जमुहाई रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

५ अश्रु अवरोधोदावर्त्त लक्षण-आनंद और शोक दोनों दशामें अश्रुपात होते हैं, जो किसी भी दशामें आंसू रोके तो शिर भारी और नेत्ररोग होंगे, ये लक्षण हों तो आँसू रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

६ छिक्कावरोधोदावर्त्त लक्षण-ग्रीवा न मुरके, मस्तक में शूल चले, आधाशीशी हो और सब इंद्रियां दुर्बल हो जावें तो छींक रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

७ उद्गारावरोधोदावर्त्त लक्षण-कंठ और मुख भोजन करने पर भी भारी रहे, मोह और व्यथा हो, अधोवायु सरण न हो और वायुके अनेक विकार हों तो डकारका वेग रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

८ वमनावरोधोदावर्त्त लक्षण-मच्छरादि जीवोंके काटने सदृश ददोरा (दाफड़) होजावे, शरीरमें खुजली चले, अन्नपर अरुचि, मुखपर छाया, शोथ, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, हृदयपीड़ा और विसर्प हो तो वमन रोगका उदावर्त्त जानो।

९ कामावरोधोदावर्त्त लक्षण-पेडू, गुदा और लिंगेन्द्रियमें पीड़ा हो, मूत्र, रुक जावे, उपस्थेन्द्रियसे वीर्य आपही गिरने लगे, शर्करा (पथरी), नेत्रविकार और शोथ रोग हो तो वीर्य रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

१० क्षुधावरोधोदावर्त्त लक्षण-हाथ पांवमें फूटन, तन्द्रा, क्षीणता, दृष्टिमन्दता, अरुचि और बिना श्रम किये ही थकावट हो तो भूखका वेग रोकनेका उदावर्त्त जानो ।

११ क्षुधावरोधोदावर्त्त लक्षण–कंठ और मुख सूख जावे, श्रवणेन्द्रिय मन्द पड़ जावे और हृदयमें पीड़ा हो तो प्यास रोकनेका उदावर्त्त जानो।

१२ श्वासावरोधोदावर्त्त लक्षण–परिश्रमसे उत्पन्न हुई श्वास रोकनेका हृदयमें पीड़ा, मोह और पेटमें गोला उठता है, ये लक्षण हों तो श्वास रोकनेका उदावर्त्त जानो।

१३ निद्रावरोधोदावर्त्त लक्षण–अधिक जमुहाई आवे, हडफूटन होवे, नेत्र भारी हो जावे, शिर भारी होकर तन्द्रा हो तो नींद रोकनेका उदावर्त जानो, उदावर्त्तसम्प्राप्ति—रूखे, कसैले, कड़वे भोजनसे कोठेकी वायु कुपित होकर उदावर्त्त रोगउत्पन्न करती है।

उदावर्त्त सामान्य या विशेष लक्षण–उक्त कारणसे वायु कुपित होके मल, मूत्र, वायुसरण, आंसू, कफ और मेदप्रसारणी नाड़ी तथा मल मूत्रकोभी ऊर्ध्वगामी करदेता है, तब हृदय तथा पेडूका शूल और उबकाई (वमनेच्छा) से मनुष्य विकल होकर बड़े कष्टपूर्वक श्वास, कास, दाह, मोह, तृषा, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मनोभ्रम, श्रवणभ्रम, (कानोंमें भनभनाहट सुनाई पड़ना) और प्रतिश्याय (नाक बहना, जुखाम) तथा अन्य बहुतेरे वातविकार भी उत्पन्न होते हैं।

उदावर्त्तासाध्य लक्षण–उदावर्तवाला रोगी तृषा, क्षीणता, शूल और क्लेशसे विकल हो तथा मुखसे मल गिरनेलगे तो वह पूर्ण रोगग्रसित हो गया उसका बचना दैववशातही जानो।

आनाहरोगोत्पत्तिकारण–आंव किंवा मल उदरमें क्रमसे संचित होनेपर कुपित वायुसे बँध जाते हैं (सूखके दृढ़ हो जाते हैं) तब मलद्वारसे वह दृढ़ मल यथार्थ सुगमतापूर्वक न निकलने के कारण पेटमें फूलकर तनजाता है इसे आनाह (अफरा) का रोग कहते है।

आमानाहरोग लक्षण–तृषा, शिरोग्रह, आमाशयमें शूल, शरीर में भारीपन, हृदयमें पीड़ा, उबकाई, प्रतिश्याय और डकारोंका अभाव हो तो आंवका अफरा जानो।

मलानाह लक्षण–शरीर और कनपटी जकड़ जावे, मल, मूत्र रुक जावे, मूर्च्छा और श्वास आवे, पक्वाशयमें शूल चले, मलयुक्त उल्टी

हों और आलसरोगोक्त लक्षण हों तो पक्वाशयमें मलके संग्रहका आनाह जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे उत्पत्तिखण्डे आयुर्वेदप्रवक्तणां प्रादुर्भावनिरूपण नाम द्वाविंशतितमस्तरंगः ॥ २२ ॥

गुल्मरोगः

अथ पञ्चविधस्यात्र गुल्मरोगस्य हि क्रमात् ।
त्रयोविंशे तरंगेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥१॥

अब हम इस २३ वें तरंगमें ५ प्रकारके गुल्मरोगका निदान क्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

गुल्मरोगोत्पत्तिकारण–आहार विहारकी विरुद्धतासे वात, पित्त, और कफ कुपित होकर पुरुष तथा स्त्रियोंके मूत्राशयसे हृदयपर्यन्त गोलेके आकारकी एक गाँठ (नससमूह) उत्पन्न कर देते हैं इसीको गुल्मरोग कहते हैं यह गुल्म रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ रुधिरसे उत्पन्न होता है।

गुल्मरोगस्थान–दोनों पार्श्व, हृदय, नाभि और पेडू मूत्राशय इनमें से किसी एक स्थानमें गुल्म रोग उत्पन्न होता है।

गुल्मरोगसंप्राप्ति–हृदय और मूत्राशयके मध्य एक गोल गाँठ होकर फिरने लगा या स्थिर रह जावे, प्रतिदिन उसका आकार बढ़ता जावे, अन्नपर अरुचि हो, मल, मूत्र कष्टसे उतरें, वायु बढ़ जावे, आँतोंमें शब्द होवे, अफरा चढ़े और पवन ऊर्ध्वगतिको प्राप्त होजावे तो गुल्म रोग हुआ जानो ।

१ वातगुल्मोत्पत्तिकारण–रूखा अन्न भक्षण, विषमासन बैठक, मलमूत्रावरोध, शोक, प्रहार, मलक्षीणता, लंघन, विरुद्ध चेष्टा और अपनी अपेक्षा विशेष बलवान् पुरुषसे मल्लक्रीडादि युद्ध करनेसे वातका गुल्म होता है।

वातगुल्म लक्षण–गोला कभी न्यून और कभी अधिक पीडा देवे अधोवायु नहीं निकले, मल न उतरे मुख और कण्ठ सूखे, शरीरकी

कांति (वर्ण) काली पडजावे, शीतज्वर चढे, हृदय कूख और पार्श्वभागमें पीडा हो, भोजन पचनेके पश्चात् पीडा अधिक और भोजन करने पर घट जावे, रूखे, कसैले और कडुवे पदार्थ भक्षणसे पीड़ाकी अधिकाई हो तो बादीसे उत्पन्न हुआ गुल्मरोग जानो ।

२ पित्तगुल्मोत्पत्तिकारण–कडुवा, खट्टा, तीक्ष्ण और उष्ण रस सेवन, मद्य पान करने, क्रोध करने, धूपमें बैठने, अग्नि तापने, चोट लगने, रुधिर बिगड़ने और आंवके बढ़ावसे पित्तगुल्म होता है ।

पित्तगुल्म लक्षण–शरीरमें ज्वर, तृषा, पीडा, दाह, व्रण होवे, पसीना अधिक निकले, भोजन करते समय और गोलोंमें हाथ लगनेसे अत्यंत पीडा हो तो पित्तगुल्म जानो ।

३ कफगुल्मोत्पत्ति कारण–शीतल, भारी, चिकनी वस्तु खाने, दिन को सोने और बैठे रहनेसे कफगुल्म उत्पन्न होता है ।

कफगुल्म लक्षण–शीतज्वर चढे, शरीरमें पीड़ा भोजनपर अरुचि, अंगमें भारीपन, खांसी और मुखसे कडुवे खट्टे रससे युक्त वमन हो तो कफका गुल्म (गोला) जानो ।

सन्निपातगुल्म लक्षण–पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात गुल्म जानो ।

रुधिरगुल्मोत्पत्तिकारण–यह रुधिरगुल्म पुरुषको नहीं वरन् स्त्रीकेही होता है, नव मासके पूर्व कच्चा गर्भ गिरने, कुपथ्य भक्षण और मिथ्या आहार विहार करनेसे गर्भके ऋतुसमय अथवा विना ऋतुही वायु कुपित होकर रक्तका संग्रह करके गुल्म को उत्पन्न करता है।

रुधिरगुल्म लक्षण–स्त्रीके उदरमें पीडा उठे, दाह चले, शूल होवे, वह अवयवरहित गोला पेटमें चारों ओर घूमे, पित्तगुल्मके सब चिह्न हों और गर्भधारणके सदृश सब लक्षण दृष्टि पडें तो रुधिरगुल्म जानो।

विशेष द्रष्टव्य–वैद्यको चाहिये कि, इस (रुधिरगुल्म) का निश्चय १० दशमाश पूर्ण होने पर करे, क्योंकि, रुधिरगुल्मके और गर्भधारणके लक्षण समानही होते हैं, ईश्वरकी विचित्र गति है न जाने गुल्मका विश्वास करके यत्न किया जावे और गर्भ हो तो पूर्ण अनर्थ हो जावेगा इस लिये १० मास (गर्भसे बालोत्पत्तिकी अवधि तक) ठहरे; जो गर्भ

हो तो बालक उत्पन्न होगाही और न हो तो फिर गुल्मरोगकी चिकित्सा आयुर्वेदोक्तरीतिसे करे।

असाध्य गुल्मरोगके लक्षण--जो गुल्म क्रमशः बढता हुआ समस्त उदरमें व्याप्त होकर धात्वन्तरमें प्राप्त होजावे, नसोंसे लिपटा हुआ कछुएके आकार होजावे, दुर्बलता, अरुचि, उबकाई खाँसी, उलटी, विकलता, तृषा, ज्वर, तन्द्रा और प्रतिश्याय ये, उपद्रव उत्पन्न करे तो असाध्य गुल्मरोग जानो।

तथा २-रोगीके हृदय, नाभि, हाथ, पाँवपर सूजन चढे, ज्वर, श्वास, वमन और अतिसारकी वृद्धि हो वह रोगी निश्चय कालवश प्राप्त होगा

तथा ३-रोगीके शूल, तृषा, अन्नपर द्वेष होजावे और गुल्मकी गाँठ अकस्मात् गुप्त प्रगट होती जावे तो इस रोगीका कुशल रहना असंभवही जानो।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे गुल्मरोगलक्षणनिरूपणं नाम त्रयोविंशस्तरंगः॥२३॥

यकृत्-प्लीहा-हृद्रोग

यकृत्प्लीहाहृद्गदानां तरंगेऽस्मिन्यथाक्रमम्॥
समुद्रलोचनमिते निदानं लिख्यते मया॥ १॥

इस २४ चौबीसवें तरंगमें यकृत, प्लीहा और हृद्रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं।

यकृत्-प्लीहान्तर-यकृत और प्लीहा शरीरके अंग हैं। हृदयके नीचे दक्षिण पार्श्वभागमें यकृत, वामपार्श्वमें प्लीहा रहता है, प्लीहा रोग नसोंमें बहावका मुख्य स्थान है।इससे रोगीको अत्यंत क्लेश होता है। यकृत और प्लीहामें केवल दाहिने बाँयेंकाही अंतर है, इसलिये उन दोनोंकी लक्षणोत्पत्ति तथा चिकित्सा भी तुल्य है। प्रथम हम प्लीहाको दरशाते हैं। प्लीहारोगोत्पत्ति कारण--मनुष्यके उष्णवस्तु तथा दही आदि कफकारी पदार्थ भक्षण करनेसे रुधिर या कफ बढ़कर प्लीहाको बढ़ा देते हैं।

१ प्लीहा वही रोग है जिसे मारवाडीभाषामें फिया, बुन्देलखण्डी भाषामें खपरा और उर्दू भाषामें इसको तापतिल्ली भी कहते हैं।

प्लीहारोगकी सम्प्राप्ति-- मंदज्वर, मन्दाग्नि होकर बल नष्ट हो जावे, शरीरमें कुपित कफ पित्तके लक्षण होजावे और शरीर पीत वर्णका हो जावे तो प्लीहारोग (पिलही) उत्पन्न हुआ जानो यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ रुधिरसे उत्पन्न होता है ।

१ वातप्लीहा लक्षण-पेटमें नित्य, अफरा रहा करे, उदावर्त रोग हो और पेटमें शूल चले तो बादीका प्लीहा जानो ।

२ पित्तप्लीहा लक्षण--ज्वर, तृषा, दाह, मोह हो और शरीरका वर्ण पीला पड जावे तो पित्तकी प्लीहा जानों ।

३ कफप्लीहा लक्षण-पेटमें मंद मंद पीडा हो, प्लीहा दृष्टि पड़े, भारी हो, शरीरमें बोझ जान पडे और भोजनमें अरुचि हो तो कफ-प्लीहा जानो ।

४ रुधिरप्लीहा लक्षण-सब इन्द्रियां शिथिल हो जावें, शरीर का वर्ण विपरीत हो जावे, अंग भारी हो, पेट लाल हो भ्रम, दाह, मोह हो तो रुधिरप्लीहा जानो ।

असाध्यप्लीहा लक्षण-जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों वह असाध्य है ।

यकृतरोग-इसकी उत्पत्ति लक्षणादि सब प्लीहाके समानही हैं इस-लिये प्रथम यकृत रोगके विषयमें कुछ न लिखा ।

हृद्रोगोत्पत्ति कारण-उष्ण, भारी, कसैली, खट्टी, तीक्ष्ण वस्तुके अतिभक्षण, अधिक श्रम, हृदयमें चोट, अतिचिन्ता और मलमूत्रावरो-धके कारणसे हृद्रोग उत्पन्न होता है, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ कृमि इन पांच कारणोंसे उत्पन्न होता है ।

हृद्रोगसामान्यस्वरूप-भोजनका रस प्रथम हृदयमें प्राप्त होकर त्रिदो-षकी प्रेरणासे बिगड़ जाता है, छाती (हृदय) में अत्यंत पीडा उत्पन्न होती है, इसे वैद्यलोग हृद्रोग कहते हैं ।

वातहृद्रोग लक्षण-हृदयमें पीडा फैल जावे, सुई चुभाने, दही मथने, आरीसे चीरने, कुल्हाडीसे फाडने, या हाथसे चीर डालनेके सदृश पीड़ा होवे तो बादीका हृद्रोग जानो ।

पित्तहृद्रोग लक्षण--तृषा, दाह, घबराहट, मूर्छा, मुखमें कुछ दुर्गंध हो, मुख सूखे, हृदयमें चूसनेके समान पीडा हो और मुखसे धुआँ निकले तो पित्तका हृद्रोग जानो ।

कफजहृद्रोग लक्षण--हृदय भारी हो, मुखसे कफ गिरे, भोजनमें अरुचि हो, शरीर जकड बंद हो जावे, हृदयमें कफ जम जावे, मुख मीठा रहे और अग्नि मंद हो जावे तो कफका हृद्रोग जानो ।

सन्निपातहृद्रोग लक्षण--जिसमें उक्त कहे हुए तीनों दोषोंके लक्षण दृष्टि पडें और तीव्र सुई छेदनके सदृश पीडा हो तो सन्निपात हृद्रोग जानो ।

कृमिजहृद्रोग लक्षण- रोगीको खाज, उबकाई, थूकी (थूकनेकी इच्छा), शूल, हृदयमें पीड़ा, नेत्रोंके सामने अँधियारी, भोजनपर अरुचि, नेत्रोंमें पीड़ा हो तो कृमिका हृद्रोग जानो ।

हृद्रोगके उपद्रव--क्लोम (तृषास्थानकी ग्लानि) और भ्रम हो, मुख-सूखे और कफकृमिके सब लक्षण हों तो हृद्रोगके उपद्रव जानो ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे यकृत्—प्लीहा—हृद्रोग-
लक्षणनिरूपणं नाम चतुर्विंशतितमस्तरंगः ॥ २४ ॥

मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात

मूत्रकृच्छ्रस्य रोगस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात् ।
तरंगे बाणनेत्रेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

इस पचीसवें तरंगमें मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगोंका निदान यथा क्रमसे लिखते हैं ।

मूत्रकृच्छ्र रोगोत्पत्ति--तीक्ष्ण, रूखा, कच्चा अन्न खाने, जलचर जीवोंका मांस भक्षण करने, भोजनपर पुनः भोजन करने, अजीर्ण होने, परिश्रम होने, मद्य पीने, नृत्य करने, घोडे आदिकी आरूढि (सवारी) करनेसे मनुष्यके मूत्रकृच्छ्ररोग उत्पन्न होता है ।

यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ प्रहार, ६ मलावरोध, ७ शुक्रावरोध और ८ पथरीसे उत्पन्न होनेके कारण आठ प्रकारका है ।

मूत्रकृच्छ्ररोगके सामान्यलक्षण—वात, पित्त कफ अपने अपने कारणोंसे कुपित हो मूत्राशयमें प्राप्त होकर मूत्रमार्गमें पीडा करते हैं

तब मूत्र अतिकष्टपूर्वक चिलक चिलक कर उतरता है, मूत्रका रुकाव तो थोड़ा परंतु पीड़ा अधिक होती है, जो ये लक्षण होने लगें तो मूत्रकृच्छ्र हुआ जानो ।

१ वातमूत्रकृच्छ्र लक्षण–जांघ, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और मूत्राशयकी संधियोंमें पीडा होवे, थोडा थोड़ा मूत्र वारंवार उतरे तो वातमूत्रकृच्छ्र जानो ।

२ पित्तमूत्रकृच्छ्र लक्षण–पीला या लाल तथा अत्यंत उष्ण मूत्र लिंगेन्द्रियसे बड़ी तडकपूर्वक उतरे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र जानो ।

३ कफमूत्रकृच्छ्र लक्षण–मूत्राशय और लिंगेन्द्रिय दोनों भारी हों, दोनोंमें शोथ हो, मूत्रमें फेन आजावे और मूत्र कष्टसे उतरे तो कफमूत्रकृच्छ्र जानो ।

४ सन्निपातमूत्रकृच्छ्र लक्षण–तीनों दोषोंके समस्त लक्षण दृष्टि पडें तो सन्निपातमूत्रकृच्छ्र जानो ।

५ प्रहारजमूत्रकृच्छ्र लक्षण–मूत्र रुक जावे और वातमूत्रकृच्छ्र के समस्त लक्षण हों तो चोट लगनेका मूत्रकृच्छ्र जानो, इससे बचना कठिन है ।

६ मलावरोधमूत्रकृच्छ्र लक्षण–मलके वेग रोकनेसे वायु कुपित होकर मूत्राशयमें और पेटमें अफरा करता है, जो जांघोंमें पीड़ा और मूत्र कष्टसे उतरे तो मलावरोध मूत्रकृच्छ्र जानो ।

७ शुक्रावरोधमूत्रकृच्छ्र लक्षण–मूत्राशय और लिंगेंद्रियमें शूल चले, वीर्यमिश्रित मूत्र अतिकष्टपूर्वक उतरे तो वीर्य रोकनेका मूत्रकृच्छ्र रोग जानो ।

८पथरीमूत्रकृच्छ्र लक्षण–पथरी और शर्करा (रेती) ये दोनों अन्त्र स्थान पोतेमें रहती हैं, पथरी पित्तसे पकती, बादीसे सूखती और कफसे घिसती हुई रेतीरूप होकर मूत्रमागसे निकलनेके समय मूत्रको रोकती है तब रोगीके हृदयमें पीडा, शरीरमें कम्प, कुक्षिमें शूल, मन्दाग्नि और मूर्च्छा होती है ये लक्षण हों तो पथरीका मूत्रकृच्छ्र जानो ।

मूत्राघातरोगोत्पत्ति कारण–कुपथ्य करनेसे वात, पित्त, कफका प्रकोप होकर मूत्राघातरोग उत्पन्न होता है, यह रोग [१] वातकुंड-

---

१ मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्रमें विशेषांतर नहीं, मूत्रकृच्छ्रमें मूत्र थोडा रुकता पर पीडा अधिक होती है, और मूत्राघातमें मूत्र अधिक रुकता पर पीडा थोडी होती हैं अर्थात् एक दूसरेसे विपरीत है ।

लिका, २ अष्ठीला, ३ वातबस्ति, ४ मूत्रातीत, ५ मूत्रजठर, ६ मूत्रोत्संग, ७ मूत्राशय, ८ मूत्रग्रंथि ९ मूत्रशुक्र, १० उष्णवात ११ मूत्रसाद, १२ विड्विघात और १३ बस्तिकुण्डली इन भेदोंसे १३ प्रकारका है।

१ वातकुण्डलीका लक्षण–रूखी वस्तु खाने और मूत्रकृच्छ्रके धारणसे वायु मूत्राशयमें प्राप्त होकर पीड़ा करता, मूत्रकी नसोंमें विचारता हुआ कुपित होता है, तब कफ मूत्रके छिद्रको रोक देता है, और वायु कुण्डलाकार होकर लिंगेन्द्रियके मुखमें रहता है इसलिये मनुष्य थोड़ा २ अत्यंत पीडापूर्वक मूतता है, जो ये लक्षण हों तो वातकुण्डलिका जानो, यह असाध्य है रोगीका बचना दुर्लभही जानो।

२ अष्ठीलारोग लक्षण–मूत्राशयमें अफरा हो, गुदासे वायुसरण न हो, गुदामें वायुका दृढ़ और पत्थरसदृश गांठ पड़जावे, मल न उतरे और अति पीड़ा हो तो अष्ठीलारोग जानो।

३ वातबस्ति लक्षण–मूत्रका वेग रोकनेसे मूत्राशयमें वायु प्राप्त होकर मूत्रप्रसारणी नसोंका मुख रोकदेता है, जो मूत्र न उतरे, कूख तथा मूत्राशयमें पीड़ा हो तो बस्तिवात जानो, यह रोग अतिकष्टकारी होता है।

४ मूत्रातीत लक्षण–जो मनुष्य मूत्रको विलम्बतक रोके रहे पश्चात मूत्र वेगसे न उतरे, मंद धारसे प्रवाह हो उसे मूत्रातीत जानो।

५ मूत्रजठररोग लक्षण–मूत्रका वेग रोकनेसे गुदाकी अपानवायु उदर को पवनसे भरके नाभीके नीचे अफरा और अत्यन्त पीडा उत्पन्न करे तो मूत्रजठररोग जानो।

६ मूत्रोत्संग लक्षण–पेडू या लिंगेन्द्रियकी नसोंमें प्राप्त हुए मूत्रको रोक रखनेसे मूत्रके संग थोड़ा २ रुधिर पीडायुक्त या बिना पीडाही गिरने लगे तो मूत्रोत्संग जानो।

७ मूत्रक्षयरोग लक्षण–अतिश्रमसे शरीर रूखाहोकर मूत्राशयमें रहने वाले वात, पित्त, मूत्रको नष्ट कर देते हैं तब अतिदाह और पीडापूर्वक थोड़ा २ मूत्र उतरता है इसे मूत्रक्षयरोग कहते हैं।

८ मूत्रग्रंथि लक्षण—मूत्राशयमें अकस्मात् छोटीसी स्थिर अति दृढ़ आंवलेके समान गोल वातकी गांठ उत्पन्न होजावे तो मूत्रग्रंथि जानो।

९ मूत्रशुक्र रोगलक्षण—मूत्रके वेगके समय स्त्रीसे मैथुनकरनेको प्रवृत्त हो तो पुरुषका वायु शुक्रस्थानको भ्रष्टकर मूत्रस्राव (पेशाब कर चुकने के पूर्व या पश्चात्) भस्मके पानीके सदृश वीर्यको गिराता है इसे मूत्र-शुक्र कहते हैं।

१० उष्णवातरोग लक्षण—स्त्रीप्रसंग, श्रम और धूपकी अधिकतासे पेड़ूमें रहनेवाले वात, पित्त, पेडू, लिंगेन्द्रिय और गुदाको दग्ध करते हुये अतिकष्टपूर्वक हल्दीके समान पीतवर्ण या रुधिर युक्त रक्तवर्ण मूत्र उतरने देवे तो उष्णवातरोग जानो।

११ मूत्रसादरोग लक्षण—कुपथ्यके कारण मूत्राशयका वात पित्त, और कफ बिगड़कर मूत्रको अत्यन्त कष्टपूर्वक उतरने देते हैं, तब रोगीका शरीर सूख जावे, पीला, लाल, श्वेत गोरोचन समान, रक्त समान, या चूना सदृश और गाढ़ा तथा थोड़ा २ मूत्र उतरे तो मूत्र-सादरोग जानो।

१२ विडिघातरोग लक्षण—अति रूखा अन्न खानेसे मनुष्य दुर्बल होकर अतिकष्टपूर्वक मलयुक्त मूत्र छोड़े और मूत्रकी दुर्गन्धि मल सदृश आवे तो विडिघातरोग जानो।

१३ वस्तिकुण्डलिकारोग लक्षण—विशेष वेगपूर्वक दौड़ने, लंघन और श्रमकी दीर्घता तथा किसी प्रकारके प्रहारसे मूत्राशयमें गांठ पड़के गर्भके समान निश्चल हो जावे, शूल और दाह हो, गांठ दबानेसे बूँद बूँद और विशेष दबानेसे मूत्रकी धारा गिरने लगे तथा शस्त्रकी चोट लगनेके सदृश दीर्घ पीड़ा हो तो वस्तिकुण्डलिकारोग जानो, यह असाध्य है इससे बचना मुश्किल है।

विशेषतः वातकुण्डलिकासे वस्तिकुण्डलिकापर्यन्त जो ऊपर १३ विकार लिख आये हैं ये तेरहों मूत्रघातके विशेषभेद हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे मूत्रकृच्छ्रमूत्राघातरोगोत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नाम पंचविंशतितमस्तरंगः ॥ २५ ॥

अश्मरी-प्रमेह पिडिका

अश्मरीमेहपिडिकागदानां च यथाक्रमम् ।
रसपक्षमिते भङ्गे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस छब्बीसवें तरंगमें अश्मरी, प्रमेह और पिडिका रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ।

अश्मरी (पथरी) रोगोत्पत्तिकारण–मूत्राशयमें रहता हुआ वायु मूत्राशयके वीर्य, मूत्र, पित्त और कफको सुखाकर क्रमक्रमसे पथरीको उत्पन्न करता है, जैसे गौके हृदय (पित्ते) अन्तरस्थानमें गोरोचन बढ़ जाता है, वैसेही मनुष्यके पथरी बढ़ जाती है, यह तीनों दोषोंके कोपसे होती है, एकसे ही नहीं ।

अश्मरी पूर्वरूप--पेट फूले, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और अंत्रस्थान (अंडकोश) आदिमें अत्यन्त पीडा हो, हृष्टपुष्ट बकरेके सदृश मूत्रकी गंध आवे, मूत्रकृच्छ्रमें ज्वर और अरुचि प्राप्त हो तो पथरी होनेवाली जानो ।

अश्मरीसामान्यरूप-- नाभि, मूत्र नस (सीवन), मूत्राशय, मस्तकमें अत्यंत पीडा हो, मूत्रकी धारा एकसी बँधी हुई नहीं किन्तु टूटती हुई गिरे, मूत्रमार्ग रुक जावे, पथरीसे मूत्रमार्ग खुल जानेपर सुख पूर्वक पीला और उसी पथरीसे मूत्रमार्ग बंद हो जानेपर दीर्घ वेदनापूर्वक लाल मूत्र उतरे तो पथरीका प्रवेश हो चुका जानो ।

अश्मरी भेद–यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, और वीर्यावरोधसे उत्पन्न होकर चार प्रकारका है परंतु चारोंके साथकफका संसर्ग सदैव बनाही रहता है ।

१ वाताश्मरी लक्षण–लघु शंका (मूत्र) करते समय इन्द्रिय और नाभिमें पीडाके मारे चिल्ला उठे, रेचन होजावे, कम्पित होवे, मूत्र बूंद बूंद उतरे दांत चाबने लगे और कांटेयुक्त श्यामरंगकी पथरी हो तो बादीकी पथरी जानो ।

१ पथरी कुछ ऊपर दीखती नहीं परंतु सद्वैद्य शुद्ध क्रियासे निकाल सकते हैं । उक्त विधिसे निकाली हुई पथरियोंकी परीक्षा तथा निरीक्षण करनेसे उपरोक्त वर्णित लक्षण निस्संदेह प्रत्यक्ष देखे गये हैं ।

२ पित्ताश्मरी लक्षण–पेडूमें पके हुए फोडोंके समान वेदना और उष्णता होवे। भिलावेके बीज सदृश आकार हो और पथरी का रंग पीला लाल या काला हो तो पित्तकी पथरी जानो।

३ कफाश्मरी लक्षण–पेडू शीतल या भारी रहनेपर पीडा अधिक हो, पथरी चिकनी, गिलगिली, श्वेत और मुर्गोंके अंडेके बराबर हो तो कफकी पथरी जानो।

शुक्रवरोधाश्मरी लक्षण–मैथुन करनेकी योग्यावस्थामें (वीर्य पूर्वरूपसे भर चुकनेपर) प्राप्त होनेपर भी किसी प्रकारसे वीर्यको रोककर पात न होने देवे तो (वह वीर्य) वायुकी प्रेरणासे मूत्राशय और अंडकोशके बीचमेंही सूखकर पथरी उत्पन्न कर देता है। जो पेडूमें शूल चले, अंडकोशपर शोथ, मूत्रमें पीडा और वीर्यका अभाव हो जावे तो वीर्यकी पथरी जानो।

उपभेद–यही शुक्राश्मरी लिंग और अंडकोशका मध्यभाग दबानेसे वायुकी प्रेरणाद्वारा रेतीके सदृश बारीक रूप होकर मूत्रके साथ गिरती है, जब वायु अनुलोम गतिमें होती है तब तो यह पथरी मूत्रमार्गसे एक साथही निकल जाती है परंतु वायु प्रतिलोम होनेसे पुनः एकत्र होकर बंद रहती है तब यह (पथरी) मूत्रवाहिनी नाड़ियोंमें जमकर उपद्रवोंको उत्पन्न करती है।

अश्मरी उपद्रव–निर्बलता, अंगशैथिल्य, कृशता, कुक्षिशूल, अरुचि पाण्डुवर्ण, उष्णवात, तृषा, उलटी और हृदयमें दबानेके सदृश पीडा ये पथरीके उपद्रव हैं इन्हें प्रथम दबाओ तब पश्चात् मूलरोगको दबाना चाहिये।

आसाध्याश्मरी लक्षण--नाभि और अण्डकोशमें शोथ हो मल, मूत्र रुककर विशेष पीडा हो तो पथरी, शर्करा या सिकता इस रोगीको नष्ट कर देवेगी, इससे बचना दुर्लभही जानो।

प्रमेहरोगोत्पत्ति -बैठे रहना, सोते रहना, श्रम न करना, मैथुन करना, धूपमें फिरना, नवीनजल या मद्यपान करना, दही, भेड़ियेका मांस, गुड़ आदि मिष्ट पदार्थ, कफकारी पदार्थ, विरुद्ध भोजन,

१ वात पित्त और कफकी पथरी तो बाल, वृद्ध, युवा सभीको होती है, परन्तु शुक्राश्मरी केवल तरुण पुरुषोंको ही (जो पूर्णवीर्यपूरित हो गये हों) होती है, शर्करा और सिकता ये दोनों शुक्राश्मरीके भेद हैं।

उष्ण भोजन और खट्टा या कड़ुवा रस खाना, इन क्रियाओंका विशेषाधिक्य होनेसे मनुष्यको प्रमेह (परमा) रोग उत्पन्न होता है, यह रोग वात, पित्त, और कफके भेदसे २० प्रकारका है, इनके प्रभेदका स्पष्टीकरण दिखलाते हैं।

१ वातप्रमेहसंप्राप्ति–अपनी अपेक्षा क्षीण, कफ, पित्तकी क्षीणताके कारण मूत्राशयके शुद्ध मांसस्नेह (वसा) मज्जा और शरीरके रसको वायु (मूत्राशयकी) नसोंके मुखमें स्थित करके ४ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करती है।

२ पित्तप्रमेहसम्प्राप्ति–उष्ण पदार्थोंसे कुपित हुआ पित्त मूत्राशयके भेद, मांस और शरीरके रसको दूषित करके ६ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है।

३ कफप्रमेहसम्प्राप्ति–स्वकारणीय कुपित हुआ कफ मूत्राशयके भेद, मांस और शरीररसको दूषित करके १० प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है।

१ वातप्रमेहान्तर्गत भेद–१ वसाप्रमेह, २ मज्जाप्रमेह, ३ मधुप्रमेह और ४ हस्तिप्रमेह ये वातसे होते हैं।

२ पित्तप्रमेहान्तर्गत भेद–१ क्षारप्रमेह, २ नीलप्रमेह, ३ कालप्रमेह, ४ हारिद्रप्रमेह ५ मांजिष्ठप्रमेह और ६ रक्तप्रमेह, ये पित्तसे होते हैं।

३ कफप्रमेहान्तर्गत भेद–१ उदकप्रमेह, २ इक्षुप्रमेह, ३ सांद्रप्रमेह, ४ सुराप्रमेह, ५ पिष्टप्रमेह, ६ शुक्रप्रमेह, ७ सिकताप्रमेह, ८ शीतप्रमेह, ९ शनैःप्रमेह और १० लालप्रमेह, ये दश कफसे होते हैं।

विशेषभेद–१ पूयप्रमेह, २ तक्रप्रमेह, ३ पिडिकाप्रमेह, ४ शर्कराप्रमेह, ५ घृतप्रमेह और ६ अतिमूत्रप्रमेह ये ६ प्रकारके प्रमेह उक्त २० प्रमेहोंसे व्यतिरिक्त हैं, क्योंकि पूर्वोक्त २० प्रमेह चरक, सुश्रुत, वाग्भट और भावप्रकाशके मतसे तथा पूर्वोक्त ६ प्रमेह आत्रेयमतसे निश्चित किये गये हैं अतएव २६ प्रकार भी हो सकते हैं।

साध्यासाध्यप्रमेहनिर्णय–१ वायुसे दूषित मज्जादि सर्वशरीरव्यापी गम्भीर धातुओंके नाश होनेसे वातप्रमेह असाध्य, दोष और दूष्योंके[1]

१ वात, पित्त और कफ दोष तथा रस मांसादि दोषोंसे नष्ट होनेवाले दूष्य कहलाते हैं।

वैषम्यसे पित्तप्रमेह याप्य, ३ दोष और दूष्योंके समान यत्न होनेसे कफप्रमेह साध्य होता है।

प्रमेहपूर्वक–जीभ, तालु और दांतोंमें अधिक मैल जमे, हाथ, पांवमें दाह हो, तृषा अधिक लगे, मुख मीठा बना रहे और देह चिकनी होजावे तो अनुमान कर लो कि, प्रमेह उत्पन्न होगा।

प्रमेहसामान्य लक्षण–अत्यन्त गाढ़ा या अत्यन्त पतला मूत्र उतरे तो जानो, कि इसे प्रमेह उत्पन्न हो चुका है।

वातप्रमेहान्तर्गतभेद लक्षण

१ वसाप्रमेहलक्षण–मूत्रके साथ वसा[1] भी गिरे, मूत्रका रंग कुछ कुछ नीलवर्ण हो तो वसाप्रमेह जानो।

२ मज्जाप्रमेह लक्षण–मज्जा (हाडकी) गूदेकी सदृश अथवा मज्जायुक्त मूत्र उतरे तो वसाप्रमेह जानो।

३ मधु[2]प्रमेह लक्षण–कसैला या मधुके समान मीठा और रूखा मूत्र उतरे तो मधु (क्षौद्र) प्रमेह जानो।

४ हस्तिप्रमेह लक्षण–वेगरहित और स्निग्ध (चिकनाहट) सहित तथा अवरोधयुक्त मतवाले हाथीके समान मूत्र उतरे तो हस्तिप्रमेह जानो।

पित्तप्रमेहान्तर्गत लक्षण

१ क्षारप्रमेह लक्षण–खारके पानी सदृश मूत्रका वर्ण हो जावे, और इन्द्रियमें खारसदृश जलन होवे तो क्षारप्रमेह जानो।

२ नीलप्रमेह लक्षण–जिसके मूत्रका रंग नीलके समान हो जावे उसे नीलप्रमेह जानो।

३ काल[3]प्रमेह लक्षण–जिसके मूत्रका रंग काला (स्याहीसदृश) हो जावे उसे कालप्रमेह जानो।

---

१ शुद्ध मांसका मिश्रण; चिकना घृतसदृश पदार्थ जिसे उर्दूभाषामें चर्बी कहते हैं,

२ प्रमेहका कोई भी भेद बहुत दिनोंतक निरोषध रहने और कुपथ्यपूर्वक व्यवहारसे मधुप्रमेह होजाता है यह महाअसाध्य है,

३ इसके लक्षणानुसार तो कालप्रमेहकी अपेक्षा "श्यामप्रमेह" नामही कहा होता, क्योंकि काल शब्द मृत्युबोधक होनेसे उसका अर्थ मृत्युप्रमेह हो जावेगा।

४ हरिद्राप्रमेह लक्षण-जिसके मूत्रका रंग हल्दीके समान पीला हो जावे और अतिकटु तथा दाहयुक्त मूत्र उतरे तो हरिद्राप्रमेह जानो।

५ मांजिष्ठप्रमेह लक्षण-मँजीठके रंग सदृश मूत्रका रंग हो जावे और मूत्रमें दुर्गंधि आवे तो मांजिष्ठप्रमेह जानो।

६ रक्तप्रमेह लक्षण-मूत्रका रंग रक्तसदृश; अत्यंत दुर्गंधियुक्त उष्ण और नमकयुक्त हो तो रक्तप्रमेह जानो।

कफप्रमेहान्तर्गतभेदलक्षण

१ उदकप्रमेह लक्षण-निर्मल, शीतल, श्वेतवर्ण, चिकना, गाढ़ा और गंधरहित जलसदृश तथा बहुत मूत्र उतरे तो उदक प्रमेह जानो।

२ इक्षुप्रमेह लक्षण-ईखके रस समान अत्यंत मीठा मूत्र उतरे, जिस पर चींटी या मक्खी आ बैठें उसे इक्षुप्रमेह जानो।

३ सांद्रप्रमेह लक्षण-बासी पानीक सदृश गाढा मूत्र उतरे तो सांद्रप्रमेह जानो।

४ सुराप्रमेह लक्षण-मदिराके समान गंधित, निर्मल, गाढ़ा और बहुत मूत्र उतरे तो सुराप्रमेह जानो।

५ पिष्टप्रमेह लक्षण-चावलके आटे मिले जलकेसमान, गँदला, गाढा और श्वेत मूत्र उतरे, लघुशंकाके समय पीडा होकर रोमाञ्चित होजावे तो पिष्टप्रमेह जानो।

६ शुक्रप्रमेह लक्षण-वीर्यके सदृश या वीर्ययुक्त मूत्र उतरे तो शुक्रप्रमेह जानो।

७ सिकताप्रमेह लक्षण-वीर्यके कणको लिये हुए मूत्र उतरे उसे सिकताप्रमेह जानो, सिकता=रेती या बालू।

८ शीतप्रमेह लक्षण-बारम्बार शीत (ठंढा) और बहुत मूत्र उतरे उसे शीतप्रमेह जानो।

९ शनैःप्रमेह लक्षण-जो शनैः शनैः (धीरे धीरे) रहरहकर मंद धारासे और थोड़ा थोड़ा मूत्र उतरे तो शनैःप्रमेह जानो।

१० लालाप्रमेह लक्षण-लार (मुँहका थूक चिकना जल) के सदृश तार चलता हुआ मूत्र उतरे तो लालाप्रमेह जानो।

१ वातप्रमेहोपद्रव--उदावर्त्त रोग हो जावे, शरीरमें पीड़ा होवे, हृदय कँपे, सब रसकी भक्षणेच्छा रहे, पेटमें शूल हो, निद्रा न आवे, शरीर सूख जावे, और श्वास खांसी हो तो वातप्रमेहका उपद्रव है।

२ पित्तप्रमेहोपद्रव–पेडू और इंद्रियोंमें शूल हो, पोते फटने लगें, ज्वर, मोह, तृषा, मूर्च्छा, अतिसार हो, खट्टी डकारें आवें ये पित्त-प्रमेहके उपद्रव हैं।

३ कफप्रमेहोपद्रव–अन्न पाचन न हो, भोजनमें अरुचि हो, बमन हो, निद्रा अधिक आवे, खांसी चले और पीनसका रोग हो, ये कफ-प्रमेहके उपद्रव हैं, इन्हें प्रथम दबाओ पश्चात् चिकित्सा करो।

आत्रेयमतनिर्मित षड्विध प्रमेहके लक्षण

१ पूयप्रमेह लक्षण–राध (पीव) के सदृश मूत्र उतरे या पीवके समान गंधउठे तो पूयप्रमेह जानो।

२ तक्रप्रमेह लक्षण–छाँछ (माठा) के सदृश मूत्र उतरे या मूत्रमें मट्ठाके समान गंध आवे तो उसे तक्रप्रमेह जानो।

३ पिडिकाप्रमेह लक्षण–जिनके मूत्रमें वीर्यकी डली (ढेला) गिरे उसे पिडिकाप्रमेह जानो।

४ शर्कराप्रमेह लक्षण–मूत्र शर्करा तथा मिश्रीके समान मीठा और मिश्रीके सदृश वर्णधारी हो तो शर्कराप्रमेह जानो।

५ घृतप्रमेह लक्षण–मूत्रका वर्ण और स्वाद घृतके समान हो जावे तो घृतप्रमेह जानो।

६ अतिमूत्रप्रमेह लक्षण–रात दिन क्रमशः अधिक मूत्र उतरे और रोगीभी क्रमशः निर्बल होता जावेतो अतिमूत्रप्रमेह जानो।

असाध्यप्रमेह लक्षण–वात, पित्त और कफके प्रमेह अपने अपने उपद्रवयुक्तहो जावें, तथा प्रमेहपर पीड़िका प्राप्त हो जावे तो महा-असाध्य होगा, उस रोगीका बचना असम्भव जानो।

प्रमेहयुक्त लक्षण–जिस रोगीका मूत्र निर्मल पानी सदृश पतला कडुवा और तीक्ष्णहो जावे उसका प्रमेह नष्ट हुआ जानो।

विशेष दृष्टि–जिस रोगीका शरीर हल्दीके सदृश पीला और मूत्र रुधिरके समान लाल हो जाता है, उसे बहुतसे वैद्य भ्रमसे रक्तप्रमेह

जानते हैं लेकिन वह रक्तप्रमेह नहीं है उसे रक्तपित्तका कोप समझना चाहिये यहभी रक्तप्रमेहका एक भेद है।

अनेक अचार्योंका ऐसा मत कि, रजोधर्म से स्त्रियोंके अनेक रोग दूर होजाते हैं, इसलिये उन्हें प्रमेह नहीं किन्तु प्रदर होता है।

पिड़िकारोगोत्पत्तिकारण-प्रमेह रोगपर विशेषकालतक औषधादि उपचार न होनेसे संधि, मर्मस्थान और मांसल (शरीरमें नितम्ब, जांघ आदि मांस भरे) अवयवोंमें पिडिका उत्पन्न होती है, यह रोग (१ शराविका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका और १० विद्रधि) १० प्रकारका है।

१ शराविकापिड़िका लक्षण-फुन्सी ऊपरसे ऊंची और बीचमें गड्ढा हो तो शराविका जानो।

२ कच्छपिका लक्षण-शरीरके पुष्ट स्थानोंमें सरसोंके समान दाहयुक्त और कछुवेके आकारकी फुन्सी हों तो कच्छपिका जानो।

३ जालिनी लक्षण-मांसपर जालके आकारकी दाहयुक्त फुन्सी हों तो जालिनीपिड़िका जानो।

४ विनता लक्षण--पीठपर या पेटपर दाहयुक्त बडी बडी फुन्सी हों तो विनता पीडिका जानो।

५ अलजी लक्षण-पीडायुक्त लाल या काली फुन्सी हों और बहुत फटें तो अलजी पीडिका जानो।

६ मसूरिका लक्षण-मसूरके बराबर और रंगसमान लाल रंग फुन्सी हों तो मसूरिका जानो।

७ सर्षपिका लक्षण -सरसोंके प्रमाण और सरसोंके रंग सदृश फुन्सी हों तो सर्षपिका जानो।

८ पुत्रिणी लक्षण--बड़ी फुन्सियोंके चारों तरफ बारीक बारीक बहुतसी फुन्सी हों तो पुत्रिणी जानो।

९ विदारिका लक्षण--विदारीकंदके समान गोल और उसीके रंगके समान रंगवाली फुन्सी हों तो विदारिका जानो।

१० विद्रधिपिडिका लक्षण--ये फुन्सी छः प्रकारकी होती हैं जिनका निदान आगे लिखेंगे।

आत्रेयमतनिर्मितपिडिका लक्षण ।

१ वातपिडिका लक्षण--काली फुन्सी हों, शरीर कँपने लगे; लघुशंका करनेमें शूल हो और रोगी विकल हो जावे तो वातपिडिका जानो।

२ पित्तपिडिका लक्षण--लाल या काली फुन्सी दाहयुक्त हों तो पित्तपिडिका जानो ।

३ कफपिडिका लक्षण -श्वेत, मोटी और शीतल हों, शोथयुक्त हों तो कफपिडिका जानो ।

४ सन्निपातपिडिका लक्षण--उक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपातपिडिका जानो ।

पिडिकाके उपद्रव--तृषा, खांसी, मोह, हिचकी, मंदज्वर, विसर्प और मर्मरोग होवे तथा मांसका संकोच (खिंचाव) हो ये पिडिकाके उपद्रव जानो ।

असाध्यपिडिका लक्षण--गुदा, हृदय, मस्तक, कंधे और मर्मस्थानोंमें फुंसियाँ होजावे तथा मंदाग्निवालेको पिडिकारोग हो जावे तो असाध्य जानो ।

विशेषता--यह रोग विशेषकर प्रमेहवाले रोगीको ही होता है, परन्तु मेद बिगड़नेसे विना प्रमेह भी उत्पन्न हो जाता है ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे अश्मरीप्रमेहपिडिकालक्षणनिरूपणं नाम षड्विंशतितमस्तरंगः ॥ २६ ॥

मेद, अतिस्थूल, कार्श्य, उदररोग,

मेदोरोगस्य स्थूलस्य कार्श्यस्य चोदरस्य वै ॥
मुनिपक्षमिते भंगे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २७ वें तरंगमें मेद, अमेद, अतिस्थूल कार्श्य और उदर रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ।

मेदोरोगोत्पत्ति कारण- अत्यंत परिश्रम करने, बैठे रहने, दिनको सोने, कफकारक पदार्थ भक्षण करने और घृत तथा मधुरान्नका भोजन करनेसे मेद (चरबी) बढ़कर समस्त धातुओंका मार्ग रोक देती है, तब अन्य धातु पुष्ट हो नहीं होने पातीं अतएव मेदोः वृद्धिवाला पुरुष सब कार्योंके करनेमें अशक्त हो जाता है ।

मेदोवृद्धि सम्प्राप्ति लक्षण--क्षुद्रश्वास, तृषा, मोह, निद्राधिकता, अकस्मात् श्वासावरोध, शरीरमें पीड़ा तथा शैथिल्य, छींकें आना पसीना न निकलना, शरीरदुर्गंधि, निर्बलता और मैथुनाशक्तता हो जावे तो मेदोवृद्धि हुई जानो। सब प्राणिमात्रको मेद रहती ही है परन्तु विशेष वृद्धि होने पर उक्त लक्षण होकर बहुधा पेट बढ़ जाया करता है।

मेदोवृद्धि द्वारा जठराग्नि वृद्धि कारण-मेदसे वायुसंचारमार्ग रुकनेसे वायु कोठेमें विशेष विचरता हुआ जठराग्निको दीप्त और आहारका शोषण करता है, इसलिये भोजन किया हुआ आहार शीघ्र पचकर पुनः क्षुधा प्राप्त होती है, यही व्यतिक्रम कुछ काल पर्यंत चलनेसे उस मनुष्यको अनेक भयंकर विकार उत्पन्न होते हैं, जैसे-अग्नि पवनकी सहायतासे प्रज्वलित होकर वनको भस्म कर देती है, उसी प्रकार उदरस्थ अग्नि और वायु मिलकर उस मेदरोगीको दग्ध कर देते हैं।

विशेषता-मेद अत्यंत बढ़ जानेपर वातादि दोष अकस्मात् घोरोपद्रव उत्पन्न करके रोगीका प्राण नष्ट कर देते हैं।

अतिस्थूल लक्षण-मनुष्यके शरीरमें मेद और मांस विशेष बढ़ जानेसे उसके कूले, पेट और स्तन (छाती) बहुत भारी हो जाते हैं, बल वृद्धि उत्साह जाते रहें; यह मोटा तो मर्यादासे बाहर होजाता परन्तु अशक्त रहता है उसे स्थूल (मोटा) कहते हैं, यह मेदोरोगका ही भेद है।

कार्श्यरोगोत्पत्तिकारण-वातकारक और रूखे पदार्थोंके भक्षण, लंघन; मैथुन, श्रम, भय, धन, पुत्रादि नाश और चिंता इनकी अधिकतासे मनुष्यको कार्श्य (कृशता, दुर्बलपन, क्षीणता) रोग होता है।

कार्श्यरोगसम्प्राप्ति लक्षण-कूले, पेटकी पसुली, गर्दन सूखती जावे, नसें दीखने लगें शरीरमें हड्डियां और चर्ममात्र शेष रह जावें और दुबला होजावे तो कार्श्यरोग प्रगट हुआ जानो इसी क्षीणतासे प्लीहा, खांसी, क्षयीरोग, गुल्म, अर्श, उदररोग, संग्रहणी और आध्मान इत्यादि रोग भी उत्पन्न होते हैं।

विशेषता-अनेक मनुष्य देखनेमें तो अत्यंत कृश हैं, परंतु उनके शरीरमें मेदका भाग अतिन्यून और वीर्यका भाग विशेष होनेके कारण

वे मैथुनादि कृत्य तथा स्त्रीको गर्भधारण करानेमें अपनी प्रबलतासे समर्थ रहते हैं, उन्हें क्षीण रोगयुक्त न जानो और अनेक मनुष्योंके शरीरमें मेदोभाग विशेष रहनेसे देखनेमें तो पुष्ट जान पड़ते हैं परन्तु वीर्यांश न्यून रहनेसे मैथुन तथा अन्य कृत्योंमें भी बलहीन और असमर्थ रहते हैं उन्हें क्षीणरोगयुक्त जानो।

कार्श्यरोग असाध्य लक्षण–जो मनुष्य स्वभावसे ही क्षीण हो, मन्दाग्नि हो जावे और शरीर बलही न होता जावे तो असाध्य जानो।

उदररोगोत्पत्तिकारण–मन्दाग्नि, अजीर्ण मलिनान्न, क्षीरमत्स्यादि भोजन, मलसंचय और कुपथ्यादि कारणोंसे वात, पित्त, कफ सञ्चित होकर पसीना तथा जलकी बहानेवाली नसोंको रोक देते हैं तब प्राणवायु, जठराग्नि और अपानवायु दूषित होकर उदर रोग उत्पन्न होता है यद्यपि समस्त रोग जठराग्निकी मन्दतासे होते हैं तथापि उदररोग तो प्रायः मन्दाग्निसे ही उत्पन्न होता है।

उदररोग सामान्य लक्षण–अफरा, गमनशक्तिका अभाव, शरीरमें दुर्बलता, अग्निमांद्य, शोथ, अंगशैथिल्य, हड़फूटन, तन्द्रा, अधोवायु और मलावरोध हो तो उदररोग जानो, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ प्लीहा ६ बद्धगुदा, ७ क्षत और ८ मलकी भिन्नताके कारण ८ प्रकारका है,

१ वातोदर लक्षण–हाथ, पांव, नाभि और कुक्षिमें सूजन हो, कुक्षिपार्श्व (पसली), पेट, कटि और पीठमें पीड़ा हो संधियोंमें फूटनकीसी वेदना हो, सूखी खांसी, शरीरमर्दन, नाभिके नीचे भारीपन, मलावरोध और पेटमें "गुड़ गुड़,' शब्द हो शरीरकी त्वचा, नख और नेत्र काले या लाल या धूसरवर्ण हो जावें तो बादीका उदर रोग जानो।

२ पित्तोदर लक्षण–ज्वर, मूर्च्छा, दाह, तृषा, मुखमें कटुपन, भ्रम, अतिसारहो, त्वचा पीली, पेटपर हरापन, पेटकी नसें पीली या ताम्रवर्ण दृष्टि पडे, पसीना तथा उष्णतासे पेटमें जलन पड़े, धूमयुक्त डकारें आवें और त्वचा कोमल तथा पकीसीजान पड़े तो पित्तका उदररोग जानो।

३ कफोदररोग लक्षण–शरीरमें शिथिलता, भारीपन और शोथ हो जावे, निद्राधिक्य, अन्नपर अरुचि हो, श्वास, कास और पेट भारी,

वमनहोनेकी इच्छाहो, अन्नपर अरुचिहो, पेटमें गुड़गुड़ाहट हो, शरीर तथा पेट ठंढा चिकना और श्वेतनसोंसे पूरित हो जावे तो कफसे उदररोग हुआ जानो।

४ सन्निपातोदर लक्षण-उक्त तीनों दोषोंके संयुक्त लक्षण हों तो सन्निपातोदर जानो, माधवनिदानमें सन्निपातोदर को ही " दुष्योदर " माना है, जिसका कारण और लक्षण आगे देखो।

दुष्योदरकारण--जिस मनुष्यको दुष्ट स्त्रियां वशीकरणके लिये अपने या किसी सिंहादि पशुकेनख, रोम, मूत्र, विष्ठा या आसव रजोधर्म होनेके समय योनिप्रवाही रुधिरको अन्नमें मिश्रित करके खिला देवें तथा कोई शत्रु विषयुक्त अन्नपानादि भक्षण करा देवे या संयोगज विष जैसे समभाग घृत और मधुयुक्त होनेसे विषरूप हो जाता है उसे (संयोगज विष) कहते हैं किंवा मलिन जल आदि पीनेमें आजावे तो उक्त कारणोंसे वात, पित्त, कफ तथा रुधिर समस्त शरीरमें कुपित-होके उदररोग उत्पन्न करते हैं, यह उदररोग शीत, वायु तथा दुर्दिन (जिस दिनसूर्य मेघोंसे आच्छादित हो) में विशेष कुपित होता है।

दुष्योदर लक्षण-रोगीके शरीरमें जलन हो, मूर्च्छा आवे, दुबला हो जावे, प्यास अधिकलगे और अङ्गका रंग पीला पड़ जावेतो दुष्योदर जानो।

५ प्लीहोदर लक्षण--दाहकारक तथा कफकारक पदार्थोंके विशेष सेवनसे रुधिर कुपित होकर कफसे प्लीहाको बढ़ाता है, तब वायें पार्श्वभागमें पीड़ा, मंदाग्नि, जीर्णज्वर और कफ पित्तके अन्य रोग उत्पन्न होकर वह मनुष्य बलहीन होता जाता है, ये लक्षण हों तो प्लीहोदर जानो।

विशेषतः--जो दाहिने पार्श्वभागमें पीड़ा होके उक्त समस्त लक्षण हों तो यकृतोदर जानो, यह प्लीहोदरकाही विशेष भेद है।

६ बद्धगुदोदर लक्षण--बिना पके अन्न भक्षणसे पेटकी महीन आंतें रुककर वातादि दोषसहित मलका संग्रह हो जाता है, वह मल थोड़ा

१ जो कुभार्या तथा अन्य दुष्ट स्त्री अपने पति या अन्य जनको किसी कुशिक्षा किंवा स्वेच्छासेही वशीकरणार्थ उक्त कार्य करती है इससे वह कुछ वशीभूत नहीं होता केवल धर्म और अरोग्यता भ्रष्ट होकर शरीर नष्ट होता है और वह कार्यसाधक (स्त्री) ऐसा महान् दुष्कर्म करके इसलोक तथा परलोकमें अपराधी मात्र होकर नरकगामिनी होती है।

थोड़ा अत्यंत कष्टपूर्वक गुदद्वारसे बाहर निकलता तथा हृदय और नाभिके बीचमेंपेट बढ़जाता है, ये लक्षण हों तो बद्धगुदोदर जानो।

७ क्षतोदर लक्षण--कांटा, कंकर रेती आदि छेदक वस्तु अन्न के साथ भक्षण करनेसे पक्वाशयमें प्राप्त होकर आंतोंको छेदनकर देता है, तब उस घायल आंतोंसे गुदाद्वारा बहुत सा द्रवभाग स्राव होकर पेडू बढ़जाता है और शूल उठकर चीरनेके समान पीडा होती है ये लक्षण हों तो क्षतोदर जानो, इसीको 'परिस्रावी' भी कहते हैं।

८ जलोदर लक्षण–घृतादिस्नेहवस्तु पान करने, बस्तिकर्म करने, रेचक (जुलाब) लेने और वमन करनेके पश्चात् शीघ्र ही शीतल जल पीनेमें आजावे तो जलकी बहनेवाली नसें दूषित होकर चिकनाईसे लिपटी हुई क्रम क्रमसे बढ़के जलोदरको उत्पन्न करती हैं, जिस रोगीके पेटपर नाभिके आसपास चिकनाहट और गुलाई हो जावे, शरीर कम्पित हो, रोगीके पेटमें शब्द और क्लेश हो तो जलोदर जानो, इसे 'उदकोदर' भी कहते हैं।

उदररोग साध्यासाध्यनिर्णय–ये समस्त आठों प्रकारके उदररोग उत्पन्न होते ही कष्टसाध्य हैं, बलवान् पुरुषको जलोदर न होने तक ७ उदररोग कुछ कालके हों तो याप्य या ईश्वरेच्छासे साध्य भी हो सकते हैं और बद्धगुदोदर उत्पन्न होनेसे १५ दिनतक साध्य तथा १५ दिन पश्चात् असाध्य हो जाता है, परन्तु क्षतोदर और जलोदर तो उत्पन्न होतेही असाध्य होते हैं।

उदररोग असाध्य लक्षण–रोगीके नेत्रपर सूजन होवे, उपस्थेंद्रिय टेढ़ी होजावे, शरीरकी त्वचा गल जावे, रक्त, मांस और जठराग्नि क्षीण होजावे, पार्श्वास्थि (पसुलियोंकी हड्डी) टूटीसी टेढी होजावे, अन्नपर अरुचि, शरीरपर शोथ और अतिसार हो जावे तथा रेचन (दस्त) होनेके पश्चात् पुनः पेट पूर्ववत् फूलकर भर जावे तो असाध्योदररोग जानो, इससे बचना कठिन है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे मेदोरोगकार्श्यरोगोदररोग लक्षणनिरूपणंनाम सप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

जिस प्रकार पखाला (मशक) में भरे हुये पानीके इधर उधर हिलनेसे शब्द होता है उसी प्रकार जलोदरवाले रोगीका पेट भी मशककी नाई तना हुआ, चिकना हिलता हुआ और शब्दमय हो जाता है।

शोथ अंडवृद्धि, वर्ध्म

शोथवृद्धिवर्ध्मरुजां तरंगेऽत्र यथाक्रमम् ॥
वसुनेत्रमिते भंगे कारणं वर्ण्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २८ अट्ठाईसवें तरंगमें शोथ, अंडवृद्धि और वर्ध्म रोगोंका निदान यथाक्रम वर्णन करते हैं।

शोथरोगोत्पत्ति कारण-वमन, विरेचन, ज्वर, पांडुरोग, लंघनसे दुर्बल होकर मनुष्य खारे, खट्टे, तीखे, उष्ण भारी पदार्थ, दही आदि कच्चे पदार्थ, मृत्तिका, शाकपत्र तथा मेदा आदि विरुद्ध दूषित और विषयुक्त अन्न खा लेवे, अर्शरोग बहुत दिनोंका हो जावे, पेटमें आमांश बढ जावे, गर्भस्थानमें चोट लग जावे, अनियमित कालमें गर्भ गिरजावे, तथा विरेचनादिपंचकर्म मिथ्योपचारपूर्वक किये जावें तो शोथरोग उत्पन्न होता है, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ ४ वातपित्त, ५ वातकफ, ६ कफपित्त, ७ सन्निपात, ८ प्रहार और विषके अंतरके कारणसे ९ प्रकारका होता है, रोग "सूजन" के नामसे बहुधा यह कहा जाता है।

शोथरोगपूर्वरूप-नेत्रादिकसे तीव्र उष्णता होवे, नसें तनके पीड़ित होवें, शरीर भारी पड़जावे और जिस अंगमें सूजन आनेवाली हो उस अंगमें भी कुछ बोझसा जानपड़े तो शोथ उपजनेवाला जानो।

शोथरोगोत्पत्ति-स्वकारणीय दूषित वायु,दूषित रक्त पित्त और कफको बाहरकी नसोंमें प्राप्त करके अपान वायुसंचार बंदकर लेता है, चर्मके नीचे मांस ऊँचा हो जाता है, इसे शोथ कहते हैं।

शोथसामान्य लक्षण-शरीर भारी, चित्त, विकल, उँचा, संतप्त और रोमांचित हो जावे, वर्णविपर्यय (शरीरका रंग विचित्र) सा होजावे और नसें महीन पड जावे तो शोथरोग उत्पन्न हुआ जानो।

१ वातशोथरोग लक्षण-जो शोथ (चर-एक अंगसे दूसरे अंगपर होनेवाला) होवे शरीरकी त्वचा कठोर; या लाल काली शून्य (स्पर्शबोधहीन) रोमहर्ष और पीडायुक्त होवे निष्कारणही न्यूनाधिक हो जावे; दबानेसे दबकर पुनः ऊँचा हो जावे, रात्रिको न्यून और दिनको अधिक वलिष्ठ रहे तो वातशोथ जानो।

२ पित्तशोथ लक्षण--जो शोथ स्पर्शमें कोमल, गंध युक्त हो त्वचाका वर्ण लाल या पीला हो जावे, भ्रम, ज्वर, स्वेद (पसीना), तृषा, मद और नेत्र रक्त हों, शोथमें दाह और छूनेसे पीडा तथा पाकयुक्त हो तो पित्तशोथ जानो ।

३ कफशोथ लक्षण--जो श्वेत, भारी, स्थिर हो, अन्न पर अरुचि, निद्रा, उलटी और अग्निमांद्य हो, लार गिरे, शोथ दबानेसे दब जावे, रात्रिको विशेष वेग, दिनको न्यून हो जावे तो कफशोथ जानो ।

४ वातपित्त शोथ लक्षण--जिसमें वात और पित्तदोनोंके लक्षण दृष्टि पड़े उसे वात पित्त शोथ जानो ।

५ वातकफशोथ लक्षण--जिसमें वात और कफ दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़े उसे वातकफ शोथ जानो ।

६ कफपित्त शोथ लक्षण--जिसमें कफ और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पड़े उसे कफ पित्त शोथ जानो ।

७ सन्निपात शोथ लक्षण--जिसमें वात, पित्त और कफ तीनोंके लक्षण दृष्टि पड़े उसे सन्निपात शोथ जानो ।

८ क्षतज शोथ लक्षण--चोट लगने, शस्त्र प्रहार होने, शीत पवन लगने, दधि भक्षण करने, भिलावां कौंचकी फलीके रुआं या जमीकंद आदि पदार्थ लगनेसे जो शोथ होता है वह शरीरमें चारों ओर फैल जाता है, लाल रंग और दाहयुक्त होता है और बहुधा पित्त शोथके लक्षणोंसे मिला हुआ होता है, ये लक्षण हों तो चोट लगनेका शोथ जानो ।

९ विषजशोथ लक्षण--विषवाले जीवोंके मल, मूत्र, वीर्यादि स्पर्श, या उनकी डाढ़, दंतादि लगने तथा विषैले वृक्षकी पवन लगने, किंवा मनुष्यादिके दाँत, डाढ़, नखादि लगनेसे जो शोथ होता है, वह शरीरमें अधिक फैलता और दाहयुक्त होता है ये लक्षण हों तो विषका शोथ जानो ।

शोथोपद्रव--कास, तृषा, छर्दि (वमन), भोजनमें अरुचि, शरीरमें दुर्बलता और ज्वर हो तो रोगीका बचना दुर्लभ है, ऐसे रोगीका यत्न करना ही निष्फल है ।

साध्यासाध्यनिर्णय--जो शोथ पेडू (मूत्राशय) से स्तनपर्यंत हो वह कष्टसाध्य और शरीरमात्र पर शोथ हो तो असाध्य है, पुरुषको जो

शोथ पांवसे चढ़कर मुख पर्यंत आवे, तथा स्त्रियोंको मुखसे चढ़कर पश्चात् पांवतक आवे, तो भी असाध्य है, परंतु गुह्यस्थान (योनि, लिंग, गुदा) पर उत्पन्न हुआ शोथ तो पुरुष स्त्री दोनोंके लिये असाध्य ही जानो।

अण्डवृद्धिरोगोत्पत्ति–यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रुधिर, ५ मल, ६ मूत्र, ७ अंत्र इन सात कारणोंसे उत्पन्न होकर सात ही विभागोंमें विभाजित किया गया है, इनमेंसे मूत्रज और अंत्रज ये दोनों वातसे ही उत्पन्न होते हैं परंतु इनमें केवल हेतु भेदमात्र हैं। यह वही रोग है जिसे वृद्धि, अन्त्रवृद्धि और लोकमें बहुधा "गोई" बढ़ना भी कहते हैं।

अण्डवृद्धिसामान्य लक्षण–स्वकारणीय कुपित अधोगामी वायु स्वस्थानसे चल जांघोंके ऊपरकी ओर पेड़ूके नीचे (जांघ और पेड़ूके मध्य) एक ओरकी सन्धियोंमें अण्डकोशमें प्राप्त होके अण्डकोशकी आधार-भूत नसोंको पीड़ित करता हुआ अंडकोश (गोई) का आकार बढ़ा देता है, इसे अण्डवृद्धि कहते हैं।

१ वाताण्डवृद्धि लक्षण–अण्डकोश पवनसे भरा हुआ, लुहारकी धौंकनी या पखाल (मशक) के समान जान पड़े, रूखा हो और निष्कारणही पीडा हो तो वाताण्डवृद्धि जानो।

२ पित्तांडवृद्धि लक्षण–अण्डकोश पके गूलर फलके समान, दाह युक्त, पाक युक्त और शोथ युक्त हो तो पित्तसे अण्डवृद्धि जानो।

३ कफांडवृद्धि लक्षण–अण्डकोश ठंढा, भारी, चिकना, कठोर, पीडा और खुजाल युक्त हो तो कफसे अण्डवृद्धि जानो।

४ रक्तांडवृद्धि लक्षण–अण्डकोश काले फोडेसे व्याप्त और पित्तांडवृद्धिके लक्षणयुक्त हों तो रुधिरकी अण्डवृद्धि जानो।

५ मेदांडवृद्धि लक्षण–अण्डकोश कोमल तथा तालफलसदृश हो और कफज अण्डवृद्धिके लक्षण जान पड़े तो मेदसे उत्पन्न हुई अंडवृद्धि जानो।

मूत्रांडवृद्धि लक्षण–चलनेके समय अण्डकोश जलभरी पखाल (मशक) सदृश तना हुआ, शब्दमय, नीचे लटका हुआ, पीड़ायुक्त और कोमल हो तथा मूत्र कष्टसे उतरे तो मूत्रसे अंडवृद्धि जानो,

जो मनुष्य मूत्रवेगको बहुत दिन तक रोका करे उसे यह अंडवृद्धि होती जानो ।

अंत्रांडवृद्धि लक्षण—वायुप्रकोपकारी आहार, मलमूत्रावरोध, शीतल जलमें तैरना, युद्धमें पदसंचाल, बोझ उठाना, मार्ग गमन, अंगको एडा टेढ़ा करना, भयोत्पादक कार्य करना, तथा अन्य वायुकोपकारी कार्योंके करनेसे वायु शरीरकीछोटी आँतोंको द्विगुण करके उनके स्थानमें नीचेके भागमें प्राप्त होता है और पेडू, जांघ और कमरकी संधिरूप वंक्षणस्थानमें प्राप्त होकर गांठ सदृश शोथको उत्पन्न करता है, जब इस शोथका उपाय बहुत कालतक नहीं होता तब अंडकोशमें प्राप्त होकर अफरा, शूल और मलमूत्रावरोधके साथ अंडवृद्धि उत्पन्न हो जाती है, इस अंत्रज अण्डवृद्धिको युक्तिसे दबाओ तो 'घुण घुण' शब्द होता हुआ पेटमें जाता और छोड़नेसे पुनः अंडकोश फूल जाता है, इन लक्षणोंसे युक्त हो तो अंत्रज अंडवृद्धि जानो ।

अंडवृद्धि असाध्य लक्षण—वायुका संचय अधिक होनेसे आँतें और अवयव मिलके अंत्रज अंडवृद्धि होती है सो जो वह वातांडवृद्धिके लक्षण सदृश हो तो असाध्य जानो ।

वर्ध्मरोगोत्पत्ति—कफकारक, दाही पदार्थ या भारी अन्न या सूखी दुर्गंधित मांस भक्षण तथा पित्तकारी मिथ्या विहार (स्त्रीसंगादिकी विपुलता) से सपित्त या केवल वायु कुपित होकर वंक्षण (मूत्राशय और जंघास्थलका संधिस्थान) में गठानके समान शोथ उत्पन्न करता है, उसे वर्ध्मरोग कहते हैं ।

वर्ध्मरोगसम्प्राप्ति लक्षण—उपर्युक्त गठान होकर शरीरमें ज्वर' शूल और शिथिलता हो तो वर्ध्मरोग जानो ।

विशेषतः—इसी वर्ध्मको लोकमें "बद" भी कहते हैं, अनुमान करते हैं कि या तो "वर्ध्म अपभ्रंश होकरही "बद" शब्द बन गया है, यावनी भाषाके "बद" शब्दसे (जिसका अर्थ बद है) बना है, क्योंकि इस रोगमें वह मनुष्य "बद या बादी या अपशय" को प्राप्त होता है ।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे शोथांडवृद्धिवर्ध्मरोगलक्षणनिरूपणं नामष्टाविंशतितमस्तरंगः ॥ २८ ॥

गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थि, अर्बुदरोग

गलगण्डादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमम् ॥
अंकनेत्रे तरंगेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २९ उन्तीसवें तरंगमें गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रंथि और अर्बुदरोगोंका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

गलगंडरोगोत्पत्ति–वात, कफ और मेद गलेके स्थानमें दूषित होकर गलेकी दोनों ओर स्थित होके अपने २ चिह्नों युक्त गलगंड रोग करते हैं।

गलगंडरोग सामान्य लक्षण–जिस मनुष्यके गलेमें अण्डकोशके समान दृढ़ शोथ होकर लटके वह शोथ बडा हो या छोटा उसे गलगण्डरोग जानो, यह रोग १ वात, २ कफ और ३ मेदकी भिन्नताके कारण तीन प्रकारका है।

१ वातगलगंडरोगलक्षण–जिसमें पीडा अधिक हो, गलेकी नसें काली या लाल हों, कठोर, विलम्बसे बढ़े, शोथ नहीं पके, मुख निस्वाद रहे और कण्ठ तालु सूखते रहें, उसे वातगलगण्ड जानो।

२ कफगलगण्डरोगलक्षण–गलेमें अंडकोशसमान लटकताहुआ स्थिर, भारी, शीतल, खुजालयुक्त और अल्प पीड़ादायक शोथ हो, जो विलंबसेही बढ़े और विलंबसेही पके, रोगीका मुख मीठा और कंठ, तालु कफसे लिपटे रहें तो कफका गलगण्डरोग जानो।

३ मेदोगलगंडरोग लक्षण–जो शोथ चिकना, पीला, कोमल, स्वल्पपीडायुक्त, अतिकटु होकर गलेकी संधिमें तुम्बडीके समान लटका रहे, जडमें पतला और रोगीके देहानुसार न्यूनाधिक हो, रोगीका मुख चिकना और गलेहीमें बोले तो मेदो गलगण्ड जानो।

गलगण्डरोग असाध्य लक्षण–रोगीको श्वास बड़े कष्टसे आवे, सर्वांग कोमल हो, रोग उत्पन्न होनेसे १ वर्ष बीत जावे, भोजनमें अरुचि हो, शरीर क्षीण हो जावे, शब्द (स्वर) स्पष्ट न निकले तो–असाध्य गलगण्ड जानो, ऐसे रोगीकी चिकित्सा करना ही व्यर्थ है।

गंडमालारोगोत्पत्ति लक्षण–मेद और कफके कारण मनुष्यके गले या कांख, ग्रीवा, या पेडू, या जांघकी संधियों (वंक्षणस्थानों में जो बेर या आंवलेके समान दृढ गठानें हो जाती हैं वे गण्डमाला कहलातीहैं।

अपचीरोगोत्पत्ति लक्षण—उपर्युक्त (गंडमाला) रोगकी गठानसे बहुत पुरानी होनेपर पककर पीब बहने लगती, एक अच्छी होती तो दूसरी हो जाती, उसमें विलम्ब अधिक होता ये लक्षण हों तो अपची-रोग जानो, यह गंडमालाकाही एक अवस्थाभेद है।

अपची असाध्य लक्षण—पार्श्वशूल, कास, ज्वर और वमनयुक्त अपची हो तो उसे असाध्य जानो।

ग्रंथिरोगोत्पत्ति—वात, पित्त और कफके कोपसे मांस, रक्त, मेद और नसें दूषितहोकर गोल, ऊंची और शोथयुक्त गठान उत्पन्न होती है, इसे ग्रंथिरोग कहते हैं, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ मेद और ५ नसोंकी भिन्नताके कारणसे ५ प्रकारका है।

१ वातजग्रंथि लक्षण—जो गठान प्रथम त्वचा (चर्म) को खींचकर बडी होवे पश्चात् उसमें काटने छेदने, उठाकर फेकने, मथन करने और फोड़नेके समान पीड़ा हो, गांठ काली कोमल और पखाल (मशक) के समान तनी रहे, तथा फूटनेपर उसमेंसे केवल निर्मल रक्त निकले ये लक्षण हों तो वातज ग्रन्थिजानो।

२ पित्तज ग्रंथि लक्षण—गठानमें अत्यन्त दाह, धुआं निकलतासा और सिंगी लगानेके समान पीड़ा जान पडे, पककर फूटने पर पीला या लाल या लालपीला पीब अथवा अत्यन्त रुधिरप्रवाह हो तो पित्तज ग्रंथि जानो।

३ कफजग्रंथि लक्षण—जो गठान ठंढी, रोगीके रंगसे मिलती हुई, अल्प पीड़ाकारक, विशेष कण्डू (खुजाल) युक्त, पत्थरसी दृढ़ (कड़ी), बहुत कालसे पकने या बढ़नेवाली और फूटने पर सफेद और गाढ़ी पीब बहे तो कफकी गठान जानो।

४ मेदजग्रंथि लक्षण—जो गठान रोगीका शरीर मोटा होनेसे बड़ी और दुर्बल होनेसे छोटी, चिकनी, अधिक कंडूयुक्त, अल्प पीड़ायुक्त हो और फूटने पर खल्ली (ढेप) या घीके समान मेद (चर्बी) निकले तो मेदकी गठान जानो।

५ शिराजन्यग्रंथि लक्षण—जो निर्बल पुरुष सब लोगोंके सदृश व्यायामादि करे तो ऐसे अशक्तिज कार्योंसे वायु संकुपित होकर नसोंके समूहको संकुचित, पीड़ित और सुखाकरके गोल ग्रंथि उत्पन्न करती है, उक्त लक्षण हों तो नसोंकी ग्रंथि जानो।

साध्यासाध्यग्रंथि लक्षण-शिरजन्यग्रंथि पीड़ासहित, चंचल हो तो कष्टसाध्य और पीड़ारहित, अचल, ऊँची हो तो असाध्य अथवा मर्म-स्थानमें हो तो असाध्य ही जानो।

अर्बुदरोगोत्पत्तिकारण--जो मनुष्य थोड़ा अन्न और अधिक मांस भक्षण करे, उसके वात, पित्त, और कफ दूषित होकर रुधिर मांसको बिगाड़ देते हैं, तब सब शरीर या किसी एक विशेष भागमें बडी, गोल, स्थिर, अल्प पीड़ायुक्त, दृढ़बलवाली, विलम्बसे बढ़नेवाली और पकानेवाली एक गठान ऊँचीसी उत्पन्न होती है; जिसे वैद्यकशास्त्रज्ञ लोग अर्बुदरोग कहते हैं; यह रोग "रक्तार्बुद और मांसार्बुद" दो प्रकारका होता है।

१ रक्तार्बुद लक्षण-स्वकारणीय कुपितपित्त, रक्त और नसोंको संकुचित तथा पीडितकरके मांसपिंडको ऊँचा करता है, तब वह व्रण कुछ पककरस्रवित होता, तदनंतर मांसके अंकुरोंसे आच्छादित और वृद्धिगत होके उसमें निरंतर रुधिर बहता रहता है; उसे रक्तार्बुद कहते हैं, यह रक्तार्बुद असाध्य होता है; क्योंकि इससे रक्तका क्षय और उपद्रवोंसे पीडित होनेके कारण रोगीका शरीर पांडुवर्ण-युक्त हो जाता है।

२ मांसार्बुद लक्षण-मनुष्यके शरीरमें मुष्टिप्रहार आदिसे प्रहारित स्थानका मांस दूषित होकर शोथ उत्पन्न करता है, वह शोथ पीड़ारहित, चिकना, पाकरहित, पत्थरसदृश कठोर, अचल और देहके वर्णसदृश हो तो मांसार्बुद जानो, यह भी असाध्यही है।

अर्बुद तथा द्व्यर्बुद अन्तर—एकबार अर्बुदरोग होकर पुनः उसी स्थानपर हो उसे अध्यर्बुद और जो एकसाथ या दो दोषोंके प्रकोपसाहचर्यसे हो उसे द्व्यर्बुदरोग जानो, यह भी असाध्य तथा अध्यर्बुदका भेदही है।

अर्बुदनिष्पाककारण-अर्बुदरोगमें कफ और मेदकी अधिकता होनेसे तथा दोषोंकी स्थिरता व ग्रंथि रहनेसे और स्वभावसे भी अर्बुद रोगका व्रण नहीं पकता, जो अर्बुद रक्त तथा पित्तसंबन्धी होता है वह भी नाहिं पकता है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे गलगण्डमालापचीग्रन्थ्यर्बुदरोगाणां लक्षणनिरूपणं नामैकोनत्रिंशस्तरंगः ॥ २९ ॥

१ स्थूल रीतिसे गाल, गला, कंधा, हृदय, शरीरकी संधियां पीठ और गुदाके निकटवर्त्ती स्थानको मर्मस्थान मान सकते हैं।

श्लीपद-विद्रधि

रोगस्य श्लीपदस्यात्र विद्रधेश्च यथाक्रमम् ॥
तरंगेऽत्र बृहद्भानौ निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस ३० तीसवें तरंगमें श्लीपद और विद्रधिके रोगोंका निदान वर्णन करते हैं।

श्लीपदरोगोत्पत्तिकारण–छहों ऋतुमें तालाब वगैरहका पुराना जल पीनेसे या विशेष शीत देशोंमें विशेष निवास करनेसे या जिन देशोंमें सदा पुराना पानी बना रहता है, वहाँ निवास करनेसे श्लीपदरोग उत्पन्न होता है।

श्लीपद सामान्य लक्षण–स्वलक्षण प्रगटकारक वातादिदोषोंसे पांवमें मेद और मांसका आश्रयभूत जो शोथ हो उसे श्लीपदरोग कहते हैं, इस रोगमें कफ प्रधान है, तथा पेडू और जंघास्थलकी संधियोंमें पीडायुक्त और ज्वरसहित शोथ उत्पन्न होके पश्चात् क्रमशः पांवोंपर उतर आवे उसे शोथ कहते हैं।

विशेषतः–अनेक अचार्योंका यह भी मत है कि यह रोग हाथ, पांव, नाक, कान, आंख, लिंग और ओष्ठमें भी होता है. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ और ४ सन्निपातकी जुदाईसे चार प्रकारका है।

१ वातश्लीपद लक्षण–काला, रूखा, फटा हुआ, अत्यंत पीडायुक्त और विशेष ज्वरसहित हो तो वायुका श्लीपद जानो।

२ पित्त श्लीपद लक्षण–जो श्लीपद पीला, दाहयुक्त, ज्वरसहित और कोमल हो तो पित्तश्लीपद जानो।

३ कफश्लीपद लक्षण–जो चिकना, श्वेत या पांडुवर्ण, भारी और स्थिर हो उसे कफका श्लीपद जानो, इसके लक्षण पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं।

४ सन्निपातश्लीपद लक्षण- जो अनेक छिद्रयुक्त बांबी (सर्पछिद्र) के समान हो और चूने बहने लगे, उसे सन्निपात श्लीपद जानो यह असाध्य है।

श्लीपद असाध्य लक्षण--जो श्लीपद मधुरादि कफकारक आहार और दिवस शयनादि मिथ्या विहारोंसे उत्पन्न हुआ हो, रोगीकी प्रकृति

---

१ यह श्लीपद वही रोग है जिसे लोकमें "हाथीपांव" कहते हैं। यह रोग कलकत्ते की ओर बंगाल प्रदेशमें पाया जाता है ।

कफसम्बन्धी हो, श्लीपदसे पानी झिरने लगे, जो ऊँचा या खाज खुजाल युक्त हो और त्रिदोषज चिह्न दृष्टि पड़े तो असाध्य जानो।

विद्रधिरोग -दो प्रकारका है अर्थात् १ बाह्यविद्रधि, २ अन्तरविद्रधि।

बाह्यविद्रधि रोगोत्पत्ति कारण--अस्थिनिवासी वात, पित्त, कफ स्वकारणोंसे कुपित होके त्वचा, मांस और मेदको दूषित करते हैं, तब धीरे धीरे गहन (गहरे) मूलवाला, पीडायुक्त, गोला या लम्बा शोथ चर्मपर उत्पन्न होता है उसे विद्रधिरोग कहते हैं, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ क्षतज और ६ रक्तज छः प्रकारका है।

१ वातजविद्रधिलक्षण--जो शोथ लाल या काला, कभी छोटा, कभी बड़ा अति पीडायुक्त और जिसका बढना तथा पकना ही विचित्र ढंगसे हो उसे बादीकी विद्रधि जानो।

२ पित्तजविद्रधि लक्षण--गूलरके पके फलसदृश, कुछ कालापन लिये पीला रंग हो, ज्वर दाहयुक्त हो, शीघ्र ही पके और बढ़े तो पित्तज विद्रधि जानो।

३ कफज विद्रधि लक्षण--जो सराव (सराई, दिया चिराग) के आकारका हो, पांडुवर्ण, ठण्ढा, खुजालयुक्त, चिकना, अल्पपीड़ायुक्त हो बढ़ने और पकनेमें शीघ्रता करे तो कफकी विद्रधि जानो।

विशेष लक्षण–बातजसे पतली, पित्तजसे पीली और कफजविद्रधिसे श्वेत पीब निकलती है।

४ सन्निपातविद्रधि लक्षण--नाना प्रकारकी पीडा हो, अनेक भांतिसे पीब बहे, घड़े सदृश ऊँचा शोथ हो जिसका कभी घटाव और कभी बढ़ाव होता रहे और इसी प्रकार पकना भी हो तो सन्निपातविद्रधि जानो।

५ क्षतजविद्रधि लक्षण -पत्थर या लाठीकी चोट लगे, या किसी शस्त्रादिकी मारसे घाव पड जावे उसपर कुपथ्य करनेसे घावकी गरमी वायुसे बढ़कर रक्तसहित पित्तको कुपित कर देती है, तब तृषा, दाह और ज्वरयुक्त विद्रधि उत्पन्न होकर पित्तविद्रधिके लक्षण धारण कर लेती है, ये लक्षण हों तो क्षतज (चोट लगनेकी) विद्रधि जानो।

६ रक्तजविद्रधि लक्षण--फोडे श्याम हों परंतु स्थानका धूसर वर्ण हो, तीव्र दाह, ज्वर, पीडा और पित्तजविद्रधिके लक्षण हों तो रक्तज-विद्रधि जानो।

बाह्यविद्रधि साध्यासाध्यनिर्णय--जो विद्रधिनाभिस्थानके ऊपर होती है पककर फूटनेके समय उसका मुँह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसे पीब ऊपर मुखद्वारसे बाहर निकलती है। जो। विद्रधि नाभिस्थानके नीचे होती है पककर फूटनेके समय उसका मुँह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसे पीब नीचे गुदाद्वारसे बाहर निकलती है, जो विद्रधि नाभिमें ही होती है उसकी पीब मुख या गुदा दोनों मार्गसे बाहर निकल सकती है, इसलिये नीचेकी ओर गुदामार्गसे पीब निकले तो वह रोगी न मरे और मुखद्वारा पीब निकले तो उस रोगीका बचना असम्भव है, वह मर जावेगा। यहाँ यही सिद्धान्त ठहरा कि नाभिस्थानके तलेकी विद्रधि साध्य और ऊपरके स्थानोंमें हो तो असाध्य है। नाभिमें ही विद्रधि होकर उसका बहाव ऊपरको हो तो असाध्य और नीचेको हो तो साध्य जानो।

विशेषतः--जो विद्रधि हृदय, नाभि और पेडूमें हो तो असाध्य तथा इनसे व्यतिरिक्त स्थानोंमें होकर मुख बाहरकी ओरको होके फूटे तो साध्य जानो। इसके कच्चेपन, पक्केपन, और विदग्धत्वका विचार शोथकी नाईं करलो।

अन्तरविद्रधिरोगोत्पत्तिका कारण--कुपथ्यके कारण वात, पित्त और कफ (मिले हुए न्यारे न्यारे) कुपित होकर शरीरके भीतर कोठेमें एक गोलाकार बाँबी (सर्पगृह) के समान ऊंची गाँठ उत्पन्न करते हैं इसे वैद्य अंतराविद्रधि (भीतर रहनेवाली विद्रधि) कहते हैं।

अंतरविद्रधिस्थान--यह रोग १ गुदा, २ पेडूके मुख, ३ नाभि, ४ कुक्षि (कूख), ५ वंक्षण (पेडू और जंघाका संधिस्थान), ६ हृदय और तृषास्थानके बीच, ७ प्लीहा (यकृत्) ८ हृदय, ९ नाभिके दक्षिणविभाग और १० तृषाके स्थानमें उत्पन्न होता है। इनके लक्षण पूर्वोक्त बाह्य विद्रधिके सदृश वातादि दोषोंपर ही अवलम्बित नहीं बरन् स्थानविशेषसे लक्षण भी विशेष होगये हैं।

१ गुदाविद्रधि लक्षण -भलीभाँति पवनका सरण न होकर अधोवायुका अवरोध होजावे तो गुदाकी विद्रधि जानो।

२ पेडूविद्रधि लक्षण--मूत्रकृच्छ्र हो तो पेडूकी विद्रधि उत्पन्न हुई जानो।

३ नाभिविद्रधि लक्षण--हिचकी अधिक आवें और अफरा रहे तो नाभिमें विद्रधि उत्पन्न हुई जानो।

४ कुक्षिविद्रधि लक्षण-कुक्षिमें वायुका कोप हो तो कूखकी विद्रधि जानो।

५ वंक्षणविद्रधि लक्षण- कटि (कमर) में पीडा हो तो वंक्षणकी विद्रधि जानो।

६ हृदयतृषास्थानमध्यवर्ती विद्रधि लक्षण--पार्श्वसंकोच और पार्श्व-शूल हो तो उक्त विद्रधि जानो।

७ प्लीहाविद्रधि लक्षण--श्वास रुककर निकले तो प्लीहा विद्रधि जानो।

८ हृदयविद्रधि लक्षण--सर्वांगमें पीडा होकर अंग जकड़ जावे और खांसी चले तो हृदयकी विद्रधि जानो।

९ नाभिके दक्षिणभागजविद्रधि लक्षण--श्वासका रोग हो तो नाभिकी दाहिनी ओर विद्रधि जानो।

१० तृषास्थानजविद्रधि लक्षण--तृषा अधिक लगे और जल पीनेपर भी तृप्त न हो तो तृषास्थानमें विद्रधि जानो।

अंतरविद्रधि साध्यासाध्य निर्णय--विद्रधिरोगमें अफरा, वमन, तृषा, हिचकी और पीडा अधिक हो तो असाध्य जानो. यह रोगी मर जावेगा, जो विद्रधि कच्ची वायुजन्य, बड़ी, या छोटी और मर्मस्थानमें हो तो कष्टसाध्य और सन्निपातकी विद्रधि असाध्य होती है, जो सन्निपातज विद्रधि हृदय, नाभि और पेडूमें होकर रुकजावे और मुँहके समान हो तो असाध्य जानो।

विशेषतः--जिस प्रकार अंतर विद्रधि होती है उसी प्रकार शरीरके भीतर मांस और रुधिरका एक गोला भी होता है, इनमें परस्पर यही भेद है कि विद्रधि पकती है पर यह गोला पकता नहीं है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे श्लीपदविद्रधिरोग लक्षणनिरूपणं नाम त्रिंशस्तरंगः ॥३०॥

व्रणशोथ–व्रणरोग

व्रणस्य व्रणशोथस्य ह्यग्निदग्धस्य च क्रमात् ।
चन्द्ररामतरंगेऽस्मिन् निदानं कथ्यते मया ॥ १० ॥

अब हम इस ३१ वें तरंगमें व्रणशोथ व्रण और अग्निदग्ध रोगका निदान क्रमानुसार वर्णन करते हैं ।

व्रणशोथरोगोत्पत्तिकारण--शरीरके किसी एक देश (स्थान) में शोथ आवे, उसे व्रणका पूर्वरूप जानो, यह शोथ छः कारणोंसे "१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ रक्त और ६ आगन्तुक (चोट)" से होता है जिनके लक्षण शोथ निदानमें कह आये हैं ।

विशेष लक्षण- वातव्रणशोथ विषम (कहीं कच्चा कहीं पक्का) पकता, पित्तज व्रणशोथ शीघ्र पकता, कफज व्रणशोथ विलम्बसे पकता तथा रक्तज और आगंतुक शीघ्र ही पकता है ।

अपक्वव्रणशोथ लक्षण--जिस व्रणशोथमें पीडा उष्णता और सूजन थोड़ी हो, रंग त्वचाके रंगसे मिलता हो और छूनेमें कठोरता हो तो कच्चा व्रणशोथ जानो ।

पकते हुए व्रणशोथके लक्षण--व्रणशोथमें अग्निसदृश जलन पड़े, क्षारके पकने समान पके, चींटी काटने, या छेदने, या शस्त्र मारने, या हाथसे भीतर दबाने या दंडा मारने, या सुई चुभाने, या मुखसे चूसने या अँगुलीसे फाड़ने या बिच्छू काटनेके सदृश वेदना हो, किसी एक भागमें दाह हो, वर्णविपर्यय (रंग तब्दील) हो जावे और सोते बैठते किसी भी प्रकारसे शांति न हो, व्रणशोथ फूलकर पखालके समान हो जावे और ज्वर, तृषा, अरुचि ये उपद्रव होजावें तो निश्चय करो कि व्रणशोथ पक रहा है ।

पक्वव्रणशोथ लणक्ष व्रण शोथकी पीड़ा, ललाई, ऊंचाई, न्यून पड़ जावे, उसपर सल (झिल्ली कुकरी) पड़जावें, बारंबार पीडा, खुजाल उठे उपद्रवोंकी शांतिहो, त्वचा फटीसी जान पडे और अंगुली दबानेसे पीब इधर उधर घूमने लगे तो व्रणशोथ पका जानो ।

विशेषतः–चाहे एक दोषजन्य व्रण भी हो परन्तु उसके पकनेके समय तीनों दोष मिलाकर उसे पकाते हैं अर्थात् वातसे पीडा,

पित्तसे पकाव और कफसे पीब बनती है तथा अनेक विद्वानोंका यह भी मत है कि कालान्तरसे बढ़ा हुआ पित्त अपनी प्रबलतासे वात और कफको वश करके रक्तको पचाता है तब व्रणशोथ पकाता है।

पीब भरे हुए व्रणशोथमें दोष-जिस प्रकार घासकी गंजी (ढेर = पुंज = समूह) में लगा हुआ अग्नि वायुकी प्रेरणासे प्रज्वलित होकर बलात्कारसे घासको जला देता है उसी प्रकार पके व्रणशोथमें रही हुई पीब भी उस स्थानके मांस और नसोंका नाश कर देती है, इसलिये सद्वैद्यको चाहिये कि पके हुए व्रण शोथमेंसे पीब अवश्य निकाल देवे।

विशेषतः-जो वैद्य कच्चे, पकते हुए और पक्के व्रणका पक्वापक्व निश्चय न कर सके और वैद्यजीविका करने लगे उसे चोर सदृश और जो कच्चे व्रणको फोड़ डाले तथा पक्केको न फोडे उस अविचारी वैद्यको चांडालके समान जानना चाहिये।

व्रणरोगोत्पत्ति कारण-शारीरिक और आगन्तुक दो कारणोंसे उत्पन्न होकर यह रोग उक्त दो ही प्रकारका है, वातादि दोषोंसे उत्पन्न हो तो शारीरिक और शस्त्रादिके प्रहारसे उत्पन्न हो तो आगन्तुक व्रण कहलता है।

शारीरक व्रणोत्पत्ति-शारीरक व्रण मुख्य चार कारणों "१ वात २ पित्त, ३ कफ, ४ रक्त" से उत्पन्न होता है, परन्तु रक्तके सम्बन्धसे द्विदोषज और दोषज होनेके कारण गौण रीतिसे ८ प्रकारका हो जाता है, अर्थात ५ वातपित्त, ६ वातकफ, ७ कफ पित्त और ८ सन्निपात (त्रिदोषज) जानो।

१ वातव्रण लक्षण-जो व्रण थर, कठोर, अल्पस्त्रवित, दीर्घपीडित, फूटनयुक्त, धूसर या श्यामवर्ण और सुई चुभानेकीसी पीड़ा करे, उसे बादीका व्रण (रवता-फोड़ा) जानो।

२ पित्तव्रणलक्षण-जो व्रण तृषा, मोह, ज्वर, दाह, आर्द्रत्व (गीलापन), पीबमें दुर्गंधियुक्त हो और चर्म फटे तो पित्तका व्रणजानो।

---

१ आमं विदह्यमानं च सम्यक्पक्वं च लक्षणैः। जानीयान्स भवेद्वैद्यःशेषास्तस्करवृत्तयः ॥ १ ॥ यश्छिनत्त्याममज्ञानाद्यश्च पक्वमुपेक्षते। श्वपचाविव मंतव्यौ तावनिश्चितकारिणौ ॥ २ ॥ इत्युक्तं माधवाचार्येण।

३ कफव्रण लक्षण–जो विशेष गिलगिला (कोमल) भारी, चिकना, अचल, श्वेतवर्ण, अल्प आर्द्र और अल्प पीडायुक्त हो उसे कफसे उत्पन्न हुआ जानो ।

४ रक्तव्रण लक्षण–जिस व्रणका रंग लाल और रक्त ही रक्त वहा करे उसे रुधिरसे उत्पन्न हुआ जानो ।

५ वातपित्तजव्रण लक्षण–जिसमें वात और पित्त दोनोंके लक्षण हों उसे वातपित्तजव्रण जानो ।

६ वातकफजव्रण लक्षण–जिस व्रणमें वात और कफ दोनोंके लक्षण हों उसे वातकफजव्रण जानो ।

७ कफपित्तज व्रण लक्षण–जो कफ और पित्त दोनोंके लक्षणोंसे युक्त हो उसे कफपित्तका व्रण जानो ।

८ सन्निपातजव्रण लक्षण–जिसमें वात, पित्त, कफ तीनों दोषों के उक्त वर्णित लक्षण हों उसे सन्निपातजव्रण जानो ।

विशेषतः–उक्त समस्त व्रणोंके २ दो भेद "१ दुष्ट व्रण और २ शुद्ध व्रण" किये, उनके लक्षण ये हैं ।

१ दुष्टव्रण लक्षण–जिससे निकलती हुई पीब या रक्तमें सड़नेकी दुर्गंधि आवे, बहुत ऊँचा हो, बहुत पुराना हो गया हो और शुद्ध व्रणके लक्षणोंसे सब विरुद्ध लक्षण हों उसे दुष्ट व्रण जानो ।

२ शुद्धव्रण लक्षण–जो जिह्वाके तलभाग समान कोमल और उसीके सदृश (तथा अरुण) वर्णयुक्त हो, पीड़ा और पीबका बहाव न हो और सब प्रकारसे सुन्दर व्यवस्था हो तो शुद्धव्रण जानो ।

भरते हुए व्रणके लक्षण–किनारे (कोरे) कपोतव्रण, (धूसर और पांडुवर्णका संयोग = कबूतरकासा रंग) हो जावे, पीब आदिके बहावयुक्त स्थिर और मांसके अंकुर (रवे रवे) निकल आवें तो जानो कि, यह व्रण भरने लगा है ।

भरितव्रण लक्षण–पीबका बहाव बंद हो गया हो, गांठ सूजन या पीड़ा कुछ हो तो जानलो कि, यह व्रण भलीभांति भर गया है ।

सुखसाध्यव्रण लक्षण–जो व्रण त्वचा और मांससे उत्पन्न हुआ हो, मर्म स्थानमें न हो, तरुण पुरुषको उपद्रवरहित तथा हेमन्त, शिशिर और वसंत ऋतुमें उत्पन्न हुआ हो उसे सुखसाध्य (सुखपूर्वक अच्छा हो जानेवाला) जानो ।

कष्टसाध्यव्रण लक्षण–जिसमें सुखसाध्य व्रणके उक्त लक्षण कुछ भी न हों तथा कुष्ठी, विषभक्षक, शोषरोगी, मधुप्रमेह युक्त पुरुषको और व्रणमें व्रण उत्पन्न हो तो उसे कष्टसाध्य जानो।

असाध्यव्रण लक्षण–सुखसाध्यव्रणोक्त समस्त लक्षण रहित हो उसे असाध्य जानो। वातादिदोषज व्रणमेंसे वसा (मांसगत स्नेह = = घृत = चर्बी) मेद (केवल चर्बी) मज्जा (हड्डियोंके भीतरका गूदा) और मस्तुलिंग (मस्तकके भीतरका कपास) ये शरीरांतर्गत पदार्थ बहते रहें तो असाध्य जानो, ये लक्षण आगंतुक व्रणमें हों तो असाध्य नहीं किन्तु साध्य है। जिन व्रणोंमेंसे मदिरा, या अगर, या जाईपुष्प, या कमलपुष्प, या चन्दन, या चम्पाके पुष्पसदृश दिव्य सुगंध आवे, मर्मस्थानमें न होनेपर भी मर्मस्थानकीसी पीड़ा हो, भीतरसे जले और बाहरसे ठंढा हो या बाहरसे जले तो भीतरसे ठंढा हो, रोगीका मांस बल क्षीण होजावे और श्वास, कास, क्षय, अरुचिकारक पीड़ा हो तो असाध्य जानो। जिन व्रणोंसे पीब या रक्त बहता रहे, मर्मस्थानमें हो और शास्त्रोक्तविधिसे उपचार करने पर भी कुशल न हो तो असाध्य जानो। उपर्युक्त लक्षण धारणीय व्रण असाध्य हैं, सद्वैद्यकोउचित है कि, जो यशकी इच्छा हो तो ऐसे असाध्य रोगोंपर चिकित्सा करनेको कदापि हाथ न उठावें।

आगंतुकव्रणोत्पत्तिकारण–असि (तलवार), बाण (तीर), तोमर (भाला), छुरिका (छूरी–चाकू) आदि नाना प्रकारके तीक्ष्णधार (मुख) वाले शस्त्र, अस्त्रोंके प्रहारसे शरीरके नाना भागोंमें अनेकाकृतिके व्रण (घावरूपक) उत्पन्न होते हैं जिन्हें आगंतुक व्रण कहते हैं। वे व्रण पृथक् २ संज्ञा से ६ प्रकारके हैं–"१ छिन्नव्रण २ भिन्नव्रण ३ विद्धव्रण, ४ क्षतव्रण, ५ पिच्चितव्रण और ६ घृष्टव्रण" हैं।

१ छिन्नव्रण लक्षण--शस्त्रके लगनेसे सीधा तिरछा कटे, घाव लम्बा हो, एक भाग कटकर समस्त गिर पडे या न भी गिरे उसे छिन्नव्रण जानो।

२ भिन्नव्रण,-शक्ति (बर्छी), कुंत (भाला), इषु (बाण), खड्ग (तलवार) या सींगके अग्रभाग (नोक) के लगनेसे कोष्ठ[1] विदीर्ण होके

---

१ स्थानान्यामाग्निपक्वान्नमूत्रस्य रुधिरस्य च। हृद्उंडुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते ॥ १ ॥ इत्युक्तं कोष्ठस्थानं माधवाचार्येण ॥

कुछ थोड़ासाही रक्त बहनेपर वह कोष्ठ (कोठेका) स्थान भरजावे और रोगीको ज्वर, दाह, तृषा, मूर्च्छा, श्वास, आध्मान, अरुचि, रक्तनेत्र, मल, मूत्र और अधोवायुका अवरोध, मुख, मूत्रमार्गसे रुधिर प्रवाह, मुखमें तप्त लोहसदृश गन्धि, शरीरमें दुर्गंधि हृदय और पार्श्वमें शूल हो तो भिन्नव्रण जानो।

विशेषतः–यदि कोष्ठस्थानसे बहा हुआ रुधिर आमाशयमें एकत्रित हुआ हो तो मुखसे वमनद्वारा रुधिर गिरे, पेट अधिक फूले और शूल चले और जो वही रुधिर पक्वाशयमें इकट्ठा हुआ हो तो पेट भारी हो और शरीरका तलभाग विशेष ठंढा रहे, ये बातें पूर्वामृतसागरमें नहीं थीं इसलिये हमने माधवनिदानसे लेकर लिखी हैं।

३ विद्धव्रण लक्षण–जो बारीक नोकवाले काँटे आदिसे आशय विना जो अंग छिदकर वह काँटेकी अनी उसीमें रहे, या निकल जावे, उसे विद्धव्रण कहते हैं।

४ क्षतव्रण लक्षण–जो बहुत कटा भी न हो और छिदा भी न हो पर छिन्न और भिन्नव्रणके लक्षणोंमें मध्यवर्त्ती हो तथा शरीरमें विषमता (टेढ़ापन) लिये हो उसे क्षतव्रण जानो, पूर्वामृतसागरमें इसके लक्षण नहीं लिखे हैं।

पिच्चितव्रण लक्षण–जो अंग गिरपडने या दबजानेके चोटसे हड्डी सहित चिपटकर फैलजावे (चपटा हो जावे) और उसमेंसे मज्जा और रक्त बहने लगे उसे पिच्चितव्रण जानो।

घृष्टव्रण लक्षण–जो अंगके घर्षण (रगडयाघिसाव) याकिसी प्रकारके प्रहारसे ऊपरका चर्म घिस जावे, उसमें दाह उठे, लासेके समान कुछ रक्तमिश्रितरस (जल) बहने लगे उसे घृष्टव्रण जानो।

सशल्यव्रणपरीक्षा-जो अंगके व्रण काला या धूसर, शोथित और छोटी २ फुन्सियाँ युक्त हों, वारंवार ठहर ठहरके रक्त निकले, व्रणका मांस कोमल और पानीके बुलबुलेके समान ऊँचा तथा पीडायुक्त हो उसे सशल्यव्रण जानो, अर्थात् उसके भीतर काँटा या किसी तीर आदिकी अनी रह गई हैं।

कोष्ठभेदलक्षण–जो बाणादि शस्त्र त्वचाको भेदनकर नसोंको भी भेदन करे (या न भी करे) और कोष्ठस्थानमें रह जानेसे पूर्वोक्त

भिन्नव्रण दर्शित उपद्रवोंको उत्पन्न करे तो जानो कि कोठेमें कोई अनी रह गई है।

असाध्यकोष्ठभेद लक्षण–पांडुवर्ण हो, हाथ, पांव, मुख और श्वास शीतल पड़ जावें, नेत्र लाल हो आवें और पेट फूल जावे तो असाध्य कोष्ठभेद जानो, सद्वैद्यको यशकी इच्छा हो तो इसपर चिकित्सा न करे।

मर्मप्रहार लक्षण–भ्रम, प्रलाप (अनर्थक वाक्य कथन), पतन गिरपड़ना), विचेष्टन (इधर उधर लोट पोट होना), ग्लानि, विकलता (घबराहट), उष्णता, शिथिलता, मूर्च्छा, डकार और वातज आक्षेत आदि तीव्ररोग होवें, व्रणसे मांसधोवन सदृश रक्त बहे और सर्वेन्द्रियां अपना अपना कार्य परित्याग करदेवें तो विचार करो कि "१ मांस, २ संधि, ३ शिरा, ४ स्नायु और ५ अस्थि इनपांचोंमेंसे किसीके" मर्मस्थानमें व्रण (घाव) होगया है।

१ मर्मरहितशिरादि विद्ध लक्षण–जो शिरा बाण आदिसे कटगई या छिदगई हो तो वीरबंहूटी[1] (वर्षाजन्यजीव) के वर्णसदृश बहुतसा रक्त रक्त बहे और रक्तके बहावसे वायु कुपित होकर आक्षेपादि अनेक रोग हों तो जानो कि, शिरामें मर्मस्थान छोड़ कर अन्यत्र घाव लगा है।

२ स्नायुविद्ध लक्षण--घावजन्य पीडासे रोगीके कूबड निकल आवे, सर्वांग उपांगसहित शरीर शिथिल होजावे। कार्य करनेसे असमर्थ हो जावे, अति पीडायुक्त घाव बहुत दिनोंमें भरे तो स्नायु छिदी या कटी हुई जानो।

३ संधिविद्ध लक्षण--शोथका बढाव, घोर पीडा, मलक्षय, गाँठोंमें फूटन या सूजन और संधियोंके कार्यांका उपराम (बंद होजाना) हो जावे तो जानो कि शरीरकी कोई चल या अचल संधि छिद गई है।

४ अस्थिविद्ध लक्षण--सम्पूर्ण कालमें वेदना होनेसे कभी और कहीं भी सुख न मिले उसकी अस्थि हड्डी छिदगई जानो।

---

१ एक प्रकारका कीड़ा जो बहुधा वर्षाऋतुमें निकलता है, इसकी त्वचा लाल मखमलके समान होती है, साधारण भाषामें "गोकुलगाय" और मारवाड़ प्रान्तमें "सावनकी डोकरी" के नामसे विख्यात है

५ शिरादिमर्मस्थानविद्ध लक्षण--जिन जिन ठिकानोंमें घाव लगा हो उसीके अनुसार तथा पूर्वोक्त भ्रम प्रलाप आदि सामान्यही लक्षण जानो ।

६ मांसमर्मविद्ध लक्षण--मर्म ताडित मांसका पांडुवर्ण, वर्णविपर्यय, उस स्थानपर स्पर्शज्ञानरहित होजावे तो मांसके मर्म स्थानमें चोट लगी जानो ।

व्रणोपद्रव--१ विसर्प, २ पक्षाघात, ३ शिरास्तंभ, ४ अपतानक, ५ मोह, ६ उन्माद, ७ व्रणपीड़ा, ८ ज्वर, ९ तृषा, १० हनुग्रह, ११ कास, १२ वमन, १३ अतिसार, १४ हिचकी, १५ श्वास और १६ कम्प ये व्रणके सोलह उपद्रव हैं ।

अग्निदग्धोत्पत्तिकारण--अग्निदग्ध दो प्रकारसे होता है, अर्थात् १ अग्निसेही जलकर, २ अग्नितप्त तेल घृतादि स्निग्ध पदार्थ और लोहादि धातु पदार्थसे जलकर, सो यह चार प्रकारका है अर्थात् १ प्लुष्ट, २ दुर्दग्ध, ३ सम्यग्दग्ध ४ अतिदग्ध जानो ।

१ प्लुष्ट लक्षण--जो अग्निसे जलकर कुछ और ही प्रकारका हो जावे उसे प्लुष्टदग्ध जानो ।

२ दुर्दग्ध लक्षण--जलेहुए अंगमें अतिदाह, अति पीडा, फोड़े हो जावें और विलम्बसे विश्राम हो तो दुर्दग्ध जानो ।

३ सम्यग्दग्ध लक्षण--जले हुए अंगमें ताम्रवर्ण, अतिदाह और पीडायुक्त तथा स्थिर हो जावे तो सम्यग्दग्ध जानो ।

४ अतिदग्ध लक्षण--त्वचा और मांस सब दग्ध होकर शरीरसे पृथक् होजावे । शिरा, स्नायु, संधिस्थानादि सब दग्ध होकर शरीरमात्रमें पीडा, दाह, ज्वर, तृषा और मूर्च्छा हो जावे, वर्णविपर्यय होकर अकुंर (भराव) विल बसे आवे तो अतिदग्ध जानो ।

विशेषतः--शरीर अग्निमें जलनेसे जहाँ तहाँ फूलकर पसीना आता है जिसे " फफोला" कहते हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे व्रणशोथव्रणाग्निदग्धरोगाणां लक्षणनिरूपणं नामैकत्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

---

१ यथास्वमेतानि विभावयेच्च लिंगानि मर्मस्वभिताडितेषु ॥ इति माधवः ।

भग्नरोग, नाडीव्रणरोग

निदानं भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य च ।
नेत्रशमतरंगेऽस्मिँल्लिख्यते हि यथाक्रमम् ॥ १ ॥

अब हम ३२ बत्तीसवें तरंगमें भग्नरोग और नाडीव्रणका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ।

भग्नरोगोत्पत्तिकारण–यह रोग सामान्यरीतिसे दो प्रकारका है अर्थात् १ संधिभग्न जिसमें हड्डी जोड़परसे उखड़ जाती है और दूसरा कांड भग्न जिसमें हड्डी बीचमेंसे टूट जाती है, इनमेंसे प्रथम संधि-भग्नके छः भेद अर्थात् १ उत्पिष्ट, २ विश्लिष्ट, ३ विवर्तित, ४ तिर्यग्गत, ५ क्षित और ६ अधः हैं ।

संधिभग्नसामान्य लक्षण–अंग फैलाना समेटने, इधर उधर फिरने, उठने बैठनेमें अत्यंत पीडा हो, किसीके समीप बैठना या अंग-स्पर्श करना न सुहावे तो जान लो कि इसकी किसी हड्डीका जोड़ उखड़ गया है ।

१ उत्पिष्टसंधिभग्न लक्षण–दो हड्डियोंके जोड़ उखड़ जानेसे उस स्थानके चहुँओर शोथ होकर रात्रिको अधिक पीड़ा हो तो उत्पिष्ट संधिभग्न जानो ।

२ विश्लिष्टसन्धिभग्न लक्षण–दो हड्डियोंका जोड़ उखड़ जानेसे उस स्थानके आस पास शोथ होकर निरंतर (रात्रि दिन) अत्यंत पीड़ा हो तो विश्लिष्ट संधिभग्न जानो ।

३ विवर्तितसंधिभग्न लक्षण–जोड़े उखड़े हुए स्थानमें सर्वदा शोथ-युक्त पीड़ा और पार्श्व भाग (पसुली) में तीव्र वेदना हो तो विवर्तित संधिभग्न जानो ।

४ तिर्यग्गतसंधि लक्षण–तिर्यग्गतसंधिके टूट जाने या उखड जानेसे उस स्थानमें अत्यन्त तीव्र पीड़ा होती है ।

५ क्षितसंधिभग्न लक्षण–जंघास्थलमें कभी अधिक और कभी न्यून पीड़ा होती है उसे क्षितसंधि कहते हैं ।

६ अधःसंधि भग्न लक्षण–संधिकी हड्डियोंमें परस्पर घर्षण और नीचेकी ओर पीड़ा हो उसे अधःसंधिभग्न जानो ।

कांडभग्नभेद-कांडभग्न १२ भेदहैं, अर्थात् १ कर्कट, २ अश्वकर्ण, ३ विचूर्णित, ४ अस्थिछिल्लिक, ५ पिच्चित, ६ कांडभग्न, ७ अतिपतित, ८ मज्जागत, ९ स्फुटित १० वक्र, ११ छिन्न और १२ द्विधारक ये टूटि हुई हड्डियोंके १२ भेद हैं।

१ कर्कटकाण्डभग्न लक्षण-दोनों ओरसे हड्डी दबकर बीचमें ऊँची हो जावे, उसे कर्कटकांडभग्न जानो।

२ अश्वकर्णकांडभग्न लक्षण-जो हड्डी चिपट या टूटकर घोड़के कान समान होजावे उसे उसे अश्वकर्णकांडभग्न जानो।

३ विचूर्णितकांडभग्न लक्षण-जो हाड भीतरका भीतरही चूर चूर होकर हाथसे देखनेसे चूरा चूरा जान पड़े उसे विचूर्णितकांडभग्न जानो।

४ अस्थिछिल्लिककांडभग्न लक्षण-हड्डीके किसी भागका छिलका निकल जावे उसे अस्थिछल्लिककांडभग्न जानो।

५ पिच्चितकांडभग्न लक्षण-जो हड्डी दबकर किसी प्रकारसे पिचक जावे उसे पिच्चितकांड भग्न जानो।

६ काण्डभग्न लक्षण-जिस हाडकी नली टूट जावे उसे काण्ड-भग्न जानो।

७ अतिपतितकांडभग्न लक्षण-सब हाडमात्र टूटकर जुदा हो जावें उसे अतिपतितकांडभग्न जानो।

८ मज्जागतकांडभग्न लक्षण-हाड़ टूट जानेसे मज्जा बहारको निकल आवे उसे मज्जागतकांड भग्न जानो।

९ स्फुटितकांडभग्न लक्षण-जिस हाड़के टुकड़े २ हो जावें उसे स्फुटितकांडभग्न कहते हैं।

१० वक्रकांडभग्न लक्षण-जो हाड़ किसी चोटसे टेढा हो जावे उसे वक्रकांडभग्न कहते हैं।

११ छिन्नकाण्डभग्न लक्षण-जिस हाड़के छोटे-छोटे टुकडे हों उसे छिन्नकांडभग्न जानो।

१२ द्विधाकरकांडभग्न लक्षण-१ भागका हाड़ अच्छाबचकर उसीके दूसरे भागका हाड़ चरा चूरा हो जावे उसे द्विधाकर कांडभग्न जानो,

ये काण्डभग्नके १२ भेद पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं अतएव हमने माधवनिदानसे लिखे हैं ।

कांडभग्नसामान्य लक्षण-अंगशैथिल्य, शोथ, ठनका, छिन्नस्थानेमें दबानेसे शब्द, स्पर्शासह्यता, सुई छेदनसदृश पीड़ा अंग फड़कना और सर्वत्र सर्वदा सुखकी अप्राप्ति हो तो हड्डी टूटी जानो ।

भग्नरोगकष्टसाध्य लक्षण-रोगी स्वल्प आहारी हो, कुपथ्यकरे, वातुल प्रकृतिवाला हो और ज्वर अतिसारादि उपद्रव होजावें तो रोगीका बचना कष्टके साथ होगा ।

भग्नरोग असाध्यलक्षण-रोगीका कपालफूटजावे, कमरकी हड्डी टूट-जावे, किसी स्थानकी संधि खुलजावे, हड्डी नीचेकोआवे, जाँघें पिचक जावें, ललाट, स्तन, गुदा, कनपटी, पीठ और मस्तक इनमेंसे कोई भाग फूट टूटजावे तो असाध्य भग्न रोग जानो ।

दूषित भग्नरोग असाध्य लक्षण-हाड़ जोडनेके समय ठीक ठीक न जुड़े, यदि ठीक २ जुड़ा हो तो यथार्थ गठनेसे न बांधा जावे, या भली-भांति बांधने पर भी किसी प्रकारका धक्का लग जावे, तथा ऐसी क्लिष्ट दशामें मैथुन किया जावे तो ऐसे कारणोंके प्रसंगसे भग्नरोग दूषित होकर असाध्य हो जाता है, वैद्यको उचित है कि ऐसे रोगीको असाध्य जान छोड देवे ।

भग्नरोगदशा-नाक, कान, नेत्रकी हड्डियां कोमल होनेसे नमजाती हैं, इनका नम जानाही भग्न है, नलीकी हड्डी फूट जाती हैं, कपाल, जाँघ और कुलेकी हड्डियां टुकडे २ हो जाती हैं, दांतटूट जाते हैं, हाथकेपहुँचे, दोनों पसुली, पीठ, छाती, पेट, गुदा और पांव इन स्थानोंमें जो गोल गोल चक्रवत् कंकणाकृति चक्र हैं वे भी टूट जाते हैं ।

नाडीव्रणरोगोत्पत्ति कारण-जो वैद्यकी अज्ञानतासे व्रणके पक जाने पर भी फोडकर उसकी पीब न निकाली जावे तो वह पीब व्रणकी अभ्यंतर नसोंमें प्राप्त होके त्वचा, मांस, स्नायु, शिरा, संधि, अस्थि, कोष्ठ और मर्मस्थानको विदीर्ण करती हुई नाडियों द्वारा अतिवेगसे बाहरको बहने लगती हैं, जिस प्रकार नलमें पानी ऊपरको वेग देता है, उसी प्रकार नाडीमेंसे पीब भी बाहरको बढती हुई निकलती है

इसीसे इसे नाडीव्रंण संज्ञा दी गई है, यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और प्रहारज नाडीव्रण ऐसे पांच प्रकारका है ।

१–वातजनाडीव्रण लक्षण–जो रात्रिके समय दृढ़ रूखा; सूक्ष्मछिद्रयुक्त, शूलयुक्त, फेनसहित पीबका विशेष बहाव होतो वातजनाडीव्रण जानो ।

२ पित्तजनाडीव्रण लक्षण–प्यास लगे, ज्वर चढे, सूक्ष्म दाह हो और पीली पीब बहे तो पित्तका नाडीव्रण जानो ।

३ कफजनाडीव्रण लक्षण–व्रणके मुखपर रुधिरयुक्त, श्वेत, गाढ़ा पीब बहे और रात्रिको व्रणपर पीड़ा तथा खुजाल चले तो कफका नासूर जानो ।

४ सन्निपातनाडीव्रण लक्षण–जिसमें दाह, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, मुखशोष और पीबकी अतिगंभीर (अथाह) गति हो तो सन्निपातका नासूर जानो, इस व्रणके रोगीका रक्षण ईश्वराधीन ही है ।

५ शस्त्रप्रहारजनाडीव्रणलक्षण–शरीरमें बाण या गोली आदिके भीतर पैठ जानेसे सद्वैद्य युक्तिसे निकालते हैं परंतुयदिउसके निकालनेपर भी वहां किसी प्रकारसे व्रण होजावे और उसमेंसे फेनसहित रुधिर मिश्रित पीब वहती रहे किसी प्रकार शरीर हिलतेही पीडा होने लगे तो उसे क्षतनाडीव्रण जानो ।

नाडीव्रणसाध्य लक्षण–सन्निपातका नाडीव्रण असाध्य और शेष चारों प्रकारके नाडीव्रण सुस्थान होनेसे साध्य ही होते हैं,

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे भग्नरोगनाडीव्रणरोगलक्षणनिरूपणं नाम द्वात्रिंशस्तरंगः ॥ ३२ ॥

---

१ यह नाडीव्रण लोकमें बहुधा "नासूर" इस नामसे प्रसिद्ध है ।

भगन्दर, उपदंश

भगन्दरस्यामयस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ।
रामराममिते भंगे निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस ३३ तेतीसवें तरंगमें भगंदर और उपदंश रोगका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

भगंदररोगोत्पत्ति–गुदाके आसपास २ अंगुलके घेरेमें १ फुन्सी होकर पकती, फूटती और उसमेंसे सदा पीब बहती रहती है उसे भगंदर-रोग कहते हैं। यह रोग भग (योनि) के चहुँओर तथा गुदा और बस्तिके बीचमें भी होता है और भगके आकारका होनेके कारण भगंदर कहलाता है यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ ४ सन्निपान और ५ शस्त्राभिघातजन्य होनेसे ५ प्रकारका होता है।

१ वातजशतपोनकभंगदर लक्षण–कसैला, रूखा पदार्थ अधिक खानेसे वात कुपित होकर गुदाके समीप फुन्सी उत्पन्न करता है। यदि आलस्यवश इसका यत्न न किया जावे तो वही फुन्सी पककर विशेष पीडा करती और फूटनेपर उसमेंसे पीब, मल, मूत्र, वीर्य भी निकला करता है और उसके चलनी सदृश छिद्र हो जाते हैं, ये लक्षण हों तो शतपोनक भगंदर जानो।

२ पित्तजउष्ट्रग्रीव भगंदरलक्षण–उष्ण वस्तु विशेष खानेसे पित्त कुपित होकर गुदाके चारोंतरफ २ अंगुलके घेरेमें लाल फुन्सी उत्पन्न करता है, जो वह फुन्सी तत्काल पककर उसमें उष्ण उष्ण पीब बहे और फुन्सीकी आकृति ऊँटकी गर्दनके समान हो तो पित्तज उष्ट्रग्रीव भगंदर जानो।

३ कफजपरिस्रावी भगंदर लक्षण–फुन्सीके स्थानमें अधिक खुजाल चले, थोडी पीडा हो. फुन्सीका रंग श्वेत हो और उसमें सदा पीब बहा करे तो कफज परिस्रावी भगंदर जानो।

४ सन्निपातशंबुकावर्तभगंदर लक्षण–फुन्सीमें अनेक प्रकारकी पीड़ा हो, नाना प्रकारका वर्ण हो सदैव पीब बहा करे, फुन्सी गौके थनके आकारकी और उसका छिद्र घेरेके समान घूमता हुआ हो तो सन्निपातजन्य शम्बुकावर्त्त भगंदर जानो।

५ क्षतजउन्मार्गिभगंदर लक्षण–गुदाके समीप किसी प्रकारकी चोट लगकर विशेष कालपर्यंत कुछ उपाय न किया जावे तो वह घाव बढ़ता हुआ गुदातक पहुँच जाता है, यदि फिर भी कुछ उपाय न करो तो उसमें कृमि पड़कर नानाप्रकारके छिद्रकर देते हैं ये लक्षण हों तो उन्मार्गिभगंदर जानो ।

असाध्य भगंदरलक्षण–यह सर्वथा अतिकष्टसाध्य ही है तथापि त्रिदोषज और क्षतज तो महाअसाध्य ही हैं तथा भगंदरसेही अधो-वायु, मल, वीर्य, मूत्र, और कीड़ निकलने लगे तो वह रोगी इस रोगसे नष्ट हो जावेगा ।

उपदंशरोगोत्पत्तिकारण–किसी प्रकार हाथकी चोट लगना, नख या दांत लगना, लिंगको स्वच्छतापूर्वक न धोना, हस्तमैथुन करना; मिथ्या आहार विहार करना, अतिमैथुन करना और रोग युक्त योनिके दोष इन कारणोंसे लिंगमें १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रक्त और ५ सन्नि-पात ये पांच प्रकारके उपदंश होते हैं ।

१ वातोपदंश लक्षण–लिंगेन्द्रियमें सुई कोचने या चीरनेके समान पीड़ा हो, लिंग फरके और श्यामवर्णके छाले हों तो वातोपदंश जानो ।

२ पित्तोपदंश लक्षण–लिंगमें दाह हो और पीले रंगके बहुत बहने-वाले छाले हों तो पित्तका उपदंश जानो ।

३ कफोपदंश लक्षण–लिंगमें खुजाल चले, शोथ हो, श्वेत रंगके बड़े बड़े छाले हों और उनमेंसे सर्वदा गाढ़ी पीब बहती रहे तो कफोपदंश जानो ।

४ रक्तोपदंश लक्षण–जिसके छाले मांसके सदृश हों, उसे रक्तका उपदंश जानो, यह एक पित्तोपदंशकाही भेद है ।

५ सन्निपातोपदंश लक्षण–नानाप्रकारकी पीड़ा, नाना प्रकारकी पीबका बहाव और पूर्वोक्त दोषोंके समस्त लक्षण हों तो सन्निपा-तोपदंश जानो ।

उपदंशके असाध्य लक्षण–लिंगका मांस बिखर जावे, कीड़े पड़ जावें, सब लिंग गलजावे, केवल अण्डकोशमात्र रहजावे तो असाध्य उपदंश जानो. तथा यह रोग होनेपर भी असावधानीसे यत्न करके विषयासक्तही बना रहे तो कुछ दिनोंमें लिंग सूजकर कीडे पड जावेंगे

और पककर दाह होगी तब लिंग गलकर गिरजानेसे वह रोगी मृत्युको प्राप्त हो जावेगा ।

लिंगवर्तिरोग लक्षण--लिंगके अग्रभागपर चमड़ेके नीचेकी संधिमें धान्यके अंकुर या मुर्गेकी चोटी या कुलथी या कमल पत्रके सदृश मांसके अंकुर निकलकर दाह और सुई चुभनेके समान पीडा करते, प्यास लगती और इन्द्रिय चूने लगती है उसे लिंगवर्ति तथा लिंगार्श भी कहते हैं ।

विशेषतःसुश्रुतमें लिखा है कि उपदंशरोग स्त्रियोंको भी होता है, परन्तु उन्हें मासिक रजोधर्म होनेसे पुरुषोंके समान प्रत्यक्ष प्रगट होता दिखाई नहीं देता है ।

शूकरोगोत्पत्तिकारण--जो मूर्ख मनुष्य अविचारसे लिंगवृद्धिके हेतु औषधियोंकी पट्टी तथा लेपादि करते हैं,उनके लिंगमें १८ प्रकारका शूकरोग होता है अर्थात् १ सर्षपिका, २ अष्ठीलिका ३ ग्रंथित, ४ कुंभिका, ५ अलजी, ६ मृदित, ७ सम्मूढ़पिडिका, ८ अवमन्थ, ९ पुष्करिका, १० स्पर्शहानि, ११ उत्तमा, १२ शतपोनक, १३ त्वकपाक, १४ शोणितार्बुद, १५ मांसार्बुद, १६ मांसपाक, १७ विद्रधि और १८ तिलकालक ।

१ सर्षपिका लक्षण—लिंगपर किसी प्रकारकी सरसोंके समान श्वेत फुन्सियां हों उसे सर्षपिका जानो ।

२ अष्ठीलिका लक्षण—लिंगपर किसी प्रकारसे कड़ी और पीडायुक्त फुन्सियां हों उसे अष्ठीलिका जानो ।

३ ग्रंथितलक्षण--लिंगपर गठावसी होजाती है उसे ग्रंथित जानो ।

४ कुम्भिका लक्षण--लिंगपर जामुनकी गुठली सदृश फुन्सी हो जावे उसे कुम्भिका जानो ।

५ अलजी लक्षण--लिंगपर प्रमेहकी फुन्सी हो जाती हैं उन्हें अलजी जानो ।

६ मृदित लक्षण—लिंगको शूकरोगकी दशामें दबानेसे जो सूजन हो आती है उसे मृदित जानो ।

---

१ यह वही रोग है जो लोकमें गर्मी और उर्दूभाषामें आतशकके नामसे प्रख्यात है ।

७ सम्मूढपिडिका लक्षण--लिंग दोनों हाथसे दवाया जावे तो उससे जो फुन्सियां हो जाती हैं, उन्हें सम्मूढ़ पिडिका जानो ।

८ अवमन्थ लक्षण--लिंगम किसी कारणसे बड़ी बड़ी सघन फुन्सियां होकर कफ रक्त विकारसे पीड़ा और रोमांच होता है उसे अवमंथ कहते हैं ।

९ पुष्करिका लक्षण- लिंगकी सुपारीपर रक्तपित्तके प्रकोपसे बहुत मिली हुई फुन्सियां हो जाती हैं, उन्हें पुष्करिका कहते हैं ।

१० स्पर्शहानि लक्षण--जो इन्द्रिय पीडाके मारे हाथ आदिका स्पर्श (छूना) न सह सके उसे स्पर्शहानि कहते हैं ।

११ उत्तमा लक्षण--अजीर्ण तथा रक्त पित्तके प्रकोपसे इंद्रिय पर मूंगा या उर्दके समान लाल फुन्सियां हो आती हैं उन्हें उत्तमा कहते हैं ।

१२ शतपोनक लक्षण--रक्तवातके कोपसे लिंगपर अनेक छिद्र पड़जाते हैं उन्हें शतपोनक कहते हैं ।

१३ त्वक्पाक लक्षण -तीनों दोषोंके प्रकोपसे इंद्रिय पककर दाह होती और उसीकी पीडासे शरीरमें ज्वर होता हैं उसे त्वक्पाक कहते हैं ।

१४ शोणितार्बुद लक्षण--इन्द्रियपर काली या लाल फुन्सी होकर पीडा होती है उसे शोणितार्बुद कहते हैं ।

१५ मांसार्बुद लक्षण--इन्द्रियपर कठोर फुन्सी होती हैं वे मांसार्बुद कहलाती हैं ।

१६ मांसपाक लक्षण--त्रिदोषके प्रकोपसे इंद्रियका मांस बिखरके पीडायुक्त हो जाता है उसे मांसपाक जानो ।

१७ विद्रधि लक्षण--सन्निपातके प्रकोपसे लिंगपर जो फुन्सियां उठती हैं उन्हें विद्रधि कहते हैं ।

१८ तिलकालक लक्षण -त्रिदोषके प्रकोपसे इन्द्रियपर काली या लाल तथा अन्य रंगोंकी विषहरी फुंसी होकर पकती और उनमेंसे पीब बहकर इंद्रिय गल जाती है उन्हें तिलकालक कहते हैं ।

शूकरोग असाध्य लक्षण--१ मांसार्बुद, २ मांसपाक, ३ विद्रधि और ४ तिलकालक ये चारों पिछले शूकरोग जो उत्पन्न हुए तो फिर शरी-

रके साथही नष्ट भी होते हैं ये असाध्य हैं परंतु पहिले १४ शूकरोग कष्टसाध्य भी होते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे गुल्मरोगलक्षणनिरूपणं नाम त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३३ ॥

कुष्ठरोग.

निदानं कुष्ठरोगस्य विवर्णो येन जायते ॥
नराणां वेदरामेऽस्मिँस्तरंगे वर्ण्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस ३४ चौतीसव तरंगमें मनुष्यके वर्णविदूषक कुष्ठ रोगका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

कुष्ठरोगोत्पत्तिकारण--विरुद्ध आहार, विहार, पतली, चिकनी वस्तु भक्षण, मलमूत्रावरोध, अग्नितापन, विशेष भोजन, शीतोष्णका विचार न रखना श्रम, घाममें फिरना, भय, धूप, श्रमकी विकलतापर तत्काल जलपान, अजीर्णपर भोजन, वमन, विरेचनपर कुपथ्य, नवीन जलपान, दही, मछली, खटाई, नमक, उर्द, मूली, तिल, गुड़, और बासीहुआ भक्षण, दिनको निद्रा, स्त्रीसंग, ब्राह्मणादिका शाप तथा नाना प्रकारके पापोंसे मनुष्यके तीनों दोष कुपित होकर सप्तधातुओंको बिगाड़कर अठारह प्रकारके कुष्ठ उत्पन्न करते हैं।

अष्टादश कुष्ठभेद--१ कापालिक, २ औदुम्बर, ३ मंडल, ४ ऋषिजिह्व, ५ पुंडरीक, ६ सिध्म (विभूति तथा सेहुआ), ७ कारण, ८ एककुष्ठ, ९ गजचर्म, १० चर्मदल, ११ किटिभ, १२ वैपादिक, १३ अलस, १४ दद्रु (दाद), १५ पामा (खुजली), १६ विस्फोटक, १७ सतारू और १८ विचर्चिका (ब्योची), इनमेंसे पहिले ७ महाकुष्ठ और पिछले ११ साधारण कुष्ठ जानो।

कुष्ठरोगपूर्वरूप–जिस स्थानका चर्म अति चिकना या खरखरा हो, विशेष पसीना निकले या निकलेही नहीं, रंग बदलजावे, दाद, खाज, शून्यता, सुई कोंचने सदृश पीड़ा, दरोरा, विना परिश्रम थकावट और व्रण होजावें, व्रणमें शूल उठे, व्रण शीघ्र उत्पन्न होकर बहुत काल-तक रहें, व्रण भरआवे और उनके मिटजानेपर भी वह स्थान खरदार बना रहे, उसी पूर्वस्थानपर किंचित सूक्ष्म कारणसेही पुनः व्रण हो

आवे, रोमांच होवे और रक्त काला पड़जावे तो जानो कि इस स्थान-पर कुष्ठरोग उत्पन्न होगा।

कुष्ठसामान्य लक्षण--पूर्वजन्मके पापोंसे मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट होकर कुपथ्य करती है, इस कुपथ्यसे त्रिदोष कुपित होकर शरीरकी नसोंमें प्राप्त होते हुए शरीरकी त्वचा, रक्त, मांसको दूषित करके त्वचाका रंग बदल देता है वह कुष्ठ कहलाता है।

विशेषतः वातप्रकोपसे कापालिक, एककुष्ठ, पित्तकोपसे औदुम्बर कफप्रकोपसे मंडल, वातपित्तप्रकोपसे विचर्चिका, ऋक्षजिह्वा, वातकफ प्रकोपसे गजचर्म, किटिभ, सिध्म, अलस, वैपादिक, पित्तकफप्रकोपसे दद्रु, सतारू, पुंडरीक, विस्फोटक, पामा, चर्मदल और तीनों दोषोंके प्रकोपसे काकण कुष्ठकी उत्पत्ति होती है।

१ कापालिक लक्षण--शरीरकी त्वचा काली, लाल, फटी हुई रूखी, कठोर, सूक्ष्म होकर अधिक पीड़ा हो, उसे कापालिक कुष्ठ जानो यह कुष्ठ विषम है, इसलिये कठिनाईसे दूर होवेगा।

२ औदुम्बर लक्षण--त्वचामें दाह, ललाई और खुजाल विशेष हो, रोम पीले पड़जावें और त्वचा गूलके पके फलसदृश होजावे उसे औदुम्बर कुष्ठ कहते हैं।

३ मंडल लक्षण--त्वचा श्वेत या लाल, चिकनी होजावे, गीली ऊँची और स्थिर रहे उसे मंडल कहते हैं।

४ ऋक्षजिह्व लक्षण--जो कुष्ठ किनारोंपर लाल और बीचमें पीलापन लिये कला हो, कर्कश और पीड़ायुक्त हो तथा रीछकी जिह्वाके आकारका हो वह ऋक्षजिह्व कुष्ठ कहलाता है।

५ पुंडरीक लक्षण--त्वचा कमलकी पँखुरीसदृश ललाई लिये हुए श्वेतवर्णका हो तो उसे पुण्डरीक कहते हैं।

६ सिध्मलक्षण--त्वचा श्वेत या ताम्रवर्ण और सूक्ष्म होजावे खुजाल चले और कुष्ठ क्रमशः फैलता जावे उसे सिध्मकुष्ठ जानो।

७ काकण लक्षण--त्वचा गुंजाके समान बीचमें काली और आसपास लाल हो, पके नहीं पर पीड़ा अधिक हो तो काकणकुष्ठ जानो।

८ एककुष्ठ लक्षण--त्वचामें पसीना न आवे और मछलीके टुकड़ेके समान बड़ी हो जावे वह एककुष्ठ कहलाता है।

९ गजचर्मकुष्ठ लक्षण--त्वचा हाथीके चमड़े सदृश मोटी हो जावे उसे गजचर्मकुष्ठ कहते हैं।

१० चर्मदलकुष्ठ लक्षण--त्वचाका वर्ण लाल हो, शूल, खाज और फोडोंसे पूरित हो फटजावे और वस्त्रका स्पर्श भी सहन न करसके उसे चर्मदलकुष्ठ कहते हैं।

११ किटिभ लक्षण--त्वचा सूखे हुवे व्रणके समान काली और कठोर हो उसे किटिभकुष्ठ जानो।

१२ वैपादिक लक्षण--हाथ पांवका चर्म फटकर दरारें पड़ जावें और पीड़ा देवें उसे वैपादिक (बिवाई) कहते हैं।

१३ अलस लक्षण--त्वचामें खुजालयुक्त बड़ी बड़ी फुन्सी हो जाती हैं उसे असलकुष्ठ कहते हैं।

१४ दद्रुकुष्ठ लक्षण--त्वचापर ऊँची, लाल खुजालयुक्त फुन्सियां हो जाती हैं उसे दद्रु (दाद) कहते हैं इसीका नाम एक भेद कच्छ दाद है जो हाथ पांव, कूले और काछोंमें होती है।

१५ पामा लक्षण--त्वचापर छोटी छोटी, खुजालयुक्त चेप और दाह सहित लाल अनेक फुन्सियां होती हैं उसे पामा (खुजली) कुष्ठ जानो।

१६ विस्फोटक लक्षण--त्वचामें काली, लाल तथा छोटी छोटी फुन्सियां हो जाती हैं उन्हें विस्फोटक कुष्ठ कहते हैं।

१७ सतारुकुष्ठ लक्षण--त्वचामें लाल, काली और दाहयुक्त फुन्सियां होवें उसे सतारुकुष्ठ जानो।

१८ विचर्चिका लक्षण--हाथ पांवकी त्वचापर खुजालयुक्त, काली तथा चेपयुक्त फुंसियां हों उन्हें विचर्चिका (ब्योंची) कहते हैं।

सप्तधातुगतकुष्ठ निर्णय--रसधातुगत कुष्ठसे कुरूप, शरीर रूखा, चर्मशून्य, रोमांच और पसीनेकी विशेषता होती है, रक्तगतकुष्ठ से शरीरमें खाज और पीबकी विपुलता होती है, मांसगत कुष्ठके व्रणकी बृहत्ता, मुख सूखना, कठोर फुंसियां होना, सुई चुभाने सदृश पीड़ा

होना, चर्म फटना और घावकी अचलता होती है, मेदोगत कुष्ठसे हाथोंका टेढ़ापन, चलनेमें अशक्ति, अङ्गोंका फूटना, घावोंका फैलाव, तथा रस, रक्त, मांसगत कुष्ठके लक्षण भी होते हैं। अस्थि और मज्जागत कुष्ठसे नाक बैठजाना, नेत्रोंमें ललाई, स्वरभंग और व्रणोंमें कीड़े पड़ जाते हैं, और वीर्यगत कुष्ठमें पूर्वोक्त छहों धातुगत कुष्ठके लक्षण होते हैं, यदि पुरुषके वीर्य और स्त्रीके रज दोनोंमें कुष्ठका प्रवेश हो तो उनकी सन्तान भी कुष्ठयुक्त ही होवें।

कुष्ठ साध्यासाध्य लक्षण–जो कुष्ठ वात, कफसे होकर त्वचा रक्त और मांसमेंही रहे तो साध्य, द्वन्द्वजन्य होकर मेदतक प्राप्त हो जावें तो याप्य और त्रिदोषजन्य होकर मज्जा तक जा पहुचे, कृमि पडजावें मन्दाग्नि और दाह हो जावे तो असाध्य जानो तथा जो कुष्ठ वीर्य तक जापँहुचे, विखरजावे, चूने लगे, स्वरभंग हो जावे और वमन विरेचनादि पञ्च कर्म भी अपना प्रभाव न दिखासकें उसे महा असाध्य जानो. यह गलितकुष्ठ प्राणनाशक ही होता है।

कुष्ठभेद श्वित्र तथा किलास लक्षण–श्वित्र श्वेत और किलास कुछ लाल होता हैं, ये पकनेपर बहते नहीं, रक्त, मांस और मेदमें रहते हैं पर विशेष पीड़ा नहीं देते, ये दोनों त्रिदोषसे ही होते हैं इनका सम्प्रातिकारण कुष्ठके समानही जानो।

श्वित्रकिलासके साध्यासाध्य लक्षण–श्वित्रमें रोम श्वेतहो जावें उनकी श्वेतताभी महीनही हो, श्वित्र एक दूसरे से न मिले हों, नवीन (अल्पकालिक) हो, अग्निदग्धसे उत्पन्न न हुआ हो तो यह श्वित्र साध्य तथा जो गुदा, योनि, हथेली, तलुवे, ओष्ठमें हुआ प्राचीन (बहुतकालिक) हो तो असाध्य श्वित्र जानो और किलास कुष्ठतो सर्वथा असाध्यही होता है।

स्पर्शजन्यरोग–इस प्रसंगपर स्पर्शसे उत्पन्न होनेवाले रोग जैसे १ कुष्ठ, २ शोष, ३ ज्वर, ४ राजरोग, ५ नेत्र पीड़ा (आंखें आना), ६ शीतला भी लिखते हैं ये छहों रोगवाले रोगीके शरीरसे शरीर मिलाने, एक ठांव भोजन करने, एक ठांव सोने, एक दूसरेके वस्त्र बदलकर पहिनेने एक दूसरेका लगाया हुआ अवशिष्ट चंदनादि लेप लगाने और मैथुनसे निरोगीको भी उत्पन्न हो जाते हैं, इसलिये सबको इनका बचाव रखनाही योग्य है।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे कुष्ठ रोगलक्षण निरूपणं नाम चतुस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३४ ॥

शीतपित्त-उदर्द-कोढ़-उत्कोढ़-अम्लपित्त विसर्परोग ।

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ।
पञ्चत्रिंशमिते भंगे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

इस पैंतीसवें तरंगमें शीतपित्त, उदर्द, कोढ़, उत्कोढ़, अम्लपित्त-और विसर्परोगोंका निदान क्रमानुसार लिखते हैं ।

शीतपित्त-उदर्द-कोढ उत्कोढरोगोत्पत्तिकारण-शीतलपवनके स्पर्शसे कफ और वात कुपित होके पित्तसे मिलती हुई भीतर रक्त और बाहर चर्ममें फैलकर शीतपित्त, उदर्द, कोढ़ और उत्कोढको उत्पन्न करते हैं ।

तथा पूर्वरूप-तृषा, अरुचि, उबकाई, मोह (घबराहट), अंगमें शैथिल्य, भारीपन और नेत्रोंमें ललाई ये लक्षण दृष्टि पडें तो विचारलो कि अब उक्तरोग उत्पन्न होनेवाला है ।

शीतपित्त लक्षण-चर्मपर बँर्योंके काटनेके समान ददोरे होकर उनमें खुजाल, सुई चुभानेकीसी वेदना, वमन, ज्वर और दाह हो तो उसे शीतपित्त जानो, इसमें वादी प्रधान है ।

उदर्द लक्षण-जो ददोरे बीचमें गहिरे, किनारोंपर ऊँचे, ललाईयुक्त और खुजालसहित हों उन्हें उदर्द रोग जानो, यह रोग शिशिर ऋतुमें कफकी विशेषतासे होता है ।

कोढ़ लक्षण-आते हुये वमनको रोकनेसे पित्त कफ कुपित होकर त्वचापर खुजालयुक्त लाल ददोरे उत्पन्न करते हैं उन्हें कोढ़ कहते हैं ।

उत्कोढ लक्षण-जो यही कोढ़ विशेष काल तक रहे तो उसीको उत्कोढ कहते हैं ।

अम्लपित्तरोगोत्पत्तिकारण-रूखी, खट्टी, कटु, उष्ण वस्तुओंके भक्षणसे पित्त कुपित होकर अम्लपित्तरोगको उत्पन्न करता है ।

अम्लपित्तसामान्य लक्षण-अन्न न पचे, विना श्रम थकावट हो, वमन हो, खट्टी डकार आवें, शरीर भारी हो, हृदय तथा कंठमें दाह हो और भोजनपर अरुचि हो तो अम्लपित्त प्राप्त हुआ जानो, यह रोग १ ऊर्ध्वगामी और २ अधोगामी दो प्रकारका है ।

ऊर्ध्वगामी अम्लपित्त लक्षण-जो हरा, पीला, काला, अतिनिर्मल तथा मांसजलसदृश, चिकना, दृढ़, कडुवा, खारा तीखा, कफयुक्त

और बहुतसा वमन करे तो मुखद्वारसे निकलने वाला अम्ल-पित्त जानो ।

अधोगामी अम्लपित्त लक्षण–नानाप्रकारके वर्णयुक्त मल उतरे, दाह; मूर्छा, वमन और मोह होवे हृदयमें पीडा, शरीरमें ददोरे और ज्वर, भोजनमें अरुचि, कंठ, कुक्षि, हृदय, हाथ और पांवमें दाह होकर बहुत डकारें आवें तो उसे मलद्वारसे निकलनेवाला अम्ल-पित्त जानो ।

वातयुक्त अम्लपित्त लक्षण–शरीरमें कंप, मूर्छा, प्रलाप, चिमचि-माहट, पीड़ा, शूल, मोह और रोमहर्ष होकर अन्धेरी तथा चक्कर आवे तो अम्लपित्तमें वातका संसर्ग जानो ।

कफयुक्त अम्लपित्त लक्षण–थूकमें कफ, शरीरमें भारीपन अरुचि, ठंढ, वमन, निस्तेज (कांतिरहित), निर्बलता, खुजाल होकर निद्राकी बहुतायत हो तो अम्लपित्तमें कफका संसर्ग जानो ।

अम्लपित्त साध्यासाध्य लक्षण-यह रोग नवीनदशामें साध्य मध्यम दशामें याप्य और प्राचीन दशामें कुपथ्य होनेसे असाध्य हो जाता है ।

विसर्परोगोत्पत्तिकारण–नमक, खटाई और उष्ण वस्तुके विशेष भक्षणसे १ वातज २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ५ वातपित्तज, ६ वातकफज और ७ कफपित्तज एवं सात प्रकारके विसर्परोग उत्पन्न होते हैं ।

विसर्परोग सामान्य लक्षण–उपर्युक्त कारणोंसे त्रिदोष कुपित होकर शरीरके रक्तादि सप्तधातुओंको दूषित करके त्वचापर छोटी छोटी फुन्सियोंके मंडलको फैला देते हैं इसलिये इस रोगको विसर्परोग कहते हैं ।

१ वातजविसर्प लक्षण–अपने कारणोंसे वात कुपित होकर शरीरमें कहीं भी छोटी छोटी फुन्सियां उत्पन्न करता है तब शरीरमें वातज्वरके समस्त लक्षण, शोथ, पीडा और खुजाल होकर वे फुन्सियां फटने लगती हैं । ये लक्षण हों तो वातका विसर्प जानो ।

२ पित्तजविसर्प लक्षण–स्वकारणोंसे पित्त कुपित होकर शरीरमें छोटी बडी लाल फुन्सियां करके फैला देता है तब शरीरमें पित्तज्वरके समस्त लक्षण होते हैं उसे पित्तविसर्प कहते हैं ।

३ कफजविसर्प लक्षण--स्वकारणोंसे कुपित कफ शरीरमें छोटी मोटी खुजालयुक्त तथा चिकनी फुन्सियोंको फैलाकर कफज्वरके सब लक्षण दर्शाता है उसे कफजविसर्प कहते हैं।

४ सन्निपातजविसर्प लक्षण--स्वकारणोंसे कुपित सन्निपात शरीरमें छोटी बडी, पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त फुन्सियां उत्पन्न करके फलाता और सन्निपातज्वरके लक्षण करता है उसे सन्निपातज विसर्प जानो।

५ वातपित्तजअग्निविसर्प लक्षण--स्वकारणोंसे वात, पित्तकुपित होकर शरीरमें छोटी बड़ी अग्निके वर्णसदृश लाल फुन्सियां उत्पन्न करके फैला देता है, तब शरीरमें वातपित्तज्वर लक्षण वमन, मूर्छा, अतिसार, तृषा, भ्रम, अंगपीड़ा हड़फूटन, अंधेरी, अरुचि,दाह, श्वास, हिचकी, विकलता होती और विसर्पस्थान का चर्म काला, नीला अथवा लाल होजाता है, संज्ञा और निद्राका अभाव रहता और मन देते देहादि बिगड़ जाते हैं, ये) लक्षण हों तो वातपित्तज - अग्निविसर्प जानो, यह महाअसाध्य है।

६ वातकफजग्रंथिविसर्प लक्षण--विशेष रक्तवाले मनुष्यका कफसे सूखा हुआ वायु कुपित होकर कफ, त्वचा,शिरा और मांस गत रक्तको दूषित करके शरीरपर लम्बी, छोटी, गोल, मोटी, खरखरी और लाल आदि गठानोंकी मालासी उत्पन्न करता है तब रोगीको ज्वर, श्वास, कास, अतिसार, मुखशोष, हिचकी, मोह, वांति, मूर्च्छा, विवर्णता, अंगफूटन और मंदाग्नि ये विकार होते हैं, ये लक्षण हों तो वातकफज-ग्रंथिविसर्प जानो।

७ कफपित्तजकर्दमविसर्प लक्षण--स्वकारणोंसे कुपित कफ पित्तसे कर्दमविसर्प उत्पन्न होकर शरीरमें जकड़ाव, निद्रा, तंद्रा, शिरोरुक्, शिथिलता, विकलता, प्रलाप, अरुंचि, भ्रम, मंदाग्नि, मूर्च्छा, हड़फूटन, तृषा, भारीपन, आममिश्रित मल, नासिकादि छिद्रोंका पकाव, सब शरीरमें काली, लाल, मली, चिकनी, भारी शोथयुक्त, विशेष, पीवयुक्त फुन्सियां होकर फैलना, कंप आना, शरीरकी नसोंका निकलना और मृतकके समान दुर्गंधिका आना ये लक्षण होजाते हैं उसे कर्दमविसर्प कहते हैं।

क्षतजविसर्प लक्षण--शस्त्रादिकी चोट लगनेसे वात कुपित होकर रक्त और पित्तको बिगाड़ देता है इसलिये शरीरमें कुलथीके समान

फुन्सियां उत्पन्न होकर पश्चात् वेही फुन्सियां फोड़ेकी आकृतिमें होजाती हैं तब फुन्सियोंमें शोथ, शरीरमें ज्वर और रक्त काला पड़ जाता है, ये लक्षण- हों तो क्षतज (चोट लगनेका) विसर्प जानो।

विसर्पोपद्रव-रोगीके शरीरमें ज्वर, अतिसार, वमन, तृषा, अरुचि, अन्नका निष्पचन, बुद्धिकी स्थिरता न रहकर मांस बिखर जाता है।

विसर्परोगसाध्यासाध्य लक्षण-वातज, पित्तज और कफजविसर्प साध्य, सन्निपातज और क्षतज तथा काले रंगका पित्तजविसर्प असाध्य और मर्मस्थानमें उत्पन्न हुआ विसर्प अतिकष्टसाध्य होता है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे शीतपित्तोपदर्दकुष्ठोत्कुष्ठाम्लपित्तरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम पंचत्रिंशस्तरंगः ॥ ३५ ॥

स्नायु, विस्फोटक, मसूरिका, फिरंगवात

निदानं लिख्यते स्नायुविस्फोटकमसूरिकाः ।
फिरंगवातरोगाणां भंगे रसधनञ्जये ॥ २ ॥

अब हम इस ३६ छत्तीसवें तरंगमें स्नायु, विस्फोटक,, मसूरिका और फिरंगवात रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं।

स्नायुरोगोत्पत्तिकारण-मलिन जलपान, और दुष्टान्न भक्षणसे वायु कुपित होकर हाथ पांवके किसी भागमें फफोला या शोथ उत्पन्न करके उसे फोड़ डालता है तब उस स्थानकी नसोंको कुपित पित्त सुखाकर तांतके समान तारको उत्पन्न करता और कुपित वायुको बढाता है जिससे इस स्नायुरोगवाला रोगी अत्यंत क्लेशग्रस्त रहता है, जब तक वह धागा (तार) उस स्थानसे समस्त बाहर न निकले तब वैद्य उसे स्नायु तथा लोकमें नहरुआ और मारवाड देशमें बालारोग कहते हैं।

विस्फोटकरोगोत्पत्ति कारण-कडुवी, खट्टी, तीखी, उष्ण, दाहकारक, रूखी, खारी वस्तुके विशेष सेवन, अजीर्ण, भोजनपर भोजन करने, धूपमें फिरने और ऋतुके विपर्ययसे तीनों दोष कुपित होकर शरीरकी त्वचामें प्राप्त होते हैं तब रक्त, मांस और अस्थिको दूषित करके प्रथम

ज्वर और फिर उसी ज्वरके साथही शरीरपर भयंकर विस्फोटक रोगके फोड़ोंको उत्पन्न करते हैं।

विस्फोटकसामान्यरूप–शरीरमें कहीं कहीं अथवा सर्वत्र रक्तपित्तसे तथा अग्निसे जलनेके समान फफोले आजाते हैं उन्हें विस्फोटक रोग जानो।

१ वातजाविस्फोटक लक्षण–फोडोंमें पीडा, शरीरमें ज्वर, तृषा, हडफूटन, शिरोग्रह और फफोलोंका रंग कालासा हो तो वातजविस्फोटक रोग जानो।

२ पित्तजविस्फोटक लक्षण–शरीरमें दाह, ज्वर, पीड़ा, तृषा, फफोलोंका पकाव तथा बहाव और वर्ण नारंगी (संतरा) के समान हो तो पित्तज विस्फोटक जानो।

३ कफजविस्फोटक लक्षण–शरीरमें दाह, वांति, अन्नपर अरुचि, भारीपन, खुजाल, व्रणोंकी कठोरता, पाण्डुवर्ण, निर्वेदना और विलंबसे पकाव हो तो कफजविस्फोटक जानो।

४ द्वंद्वजविस्फोटक लक्षण–वातपित्तज विस्फोटकमें तीव्र वेदना होती है।

५ कफपित्तजविस्फोटक लक्षण–इसमें खाज, दाह, ज्वर और वांति होती हैं।

६ वातकफजविस्फोटक लक्षण–इसमें खाज, आलस्य और भारीपन होता है।

७ सन्निपातजविस्फोटक लक्षण–फफोले बीचमें गहरे, किनारों पर ऊँचे, कठोर और अल्पपाकी हों, शरीरमें दाह, तृषा, मोह, वांति, मूर्छा, वेदना, ज्वर, प्रलाप, कम्प और तंद्रा ये लक्षण हों तो त्रिदोषका विस्फोटक जानो।

८ रक्तजविस्फोटक लक्षण–जो फफोले घुंघुची (गुंजा) के समान हों उसे रक्तजविस्फोटक जानो, इसके कारण भी पित्तज विस्फोटकके समान होते हैं, अनेक यत्नोंने भी नहीं मिटता।

विस्फोटकके उपद्रव–इस रोगमें हिचकी, अरुचि, तृषा, आलस्य, शरीरमें वेदना, विसर्प, ज्वर और उबकाई आना ये उपद्रव होते हैं।

१ इसमें विस्फोटकरोग लोकमें शीतला, माता, देवी आदि नामोंसे प्रख्यात हैं।

विस्फोटक साध्यासाध्य लक्षण-एकदोषज विस्फोटक साध्य, द्वंद्वज कष्टसाध्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त हो उसे घोर असाध्य जानो ।

मसुरिकारोगोत्पत्तिकारण-कटु, खट्टा, नौन, खारा, विरुद्ध भोजन, दुष्ट अन्न और मटरका शाक खाने, भोजनपर भोजन करने, जल, पवनके विकार तथा सूर्यादि ग्रहोंके प्रकोपसे तीनों दोष कुपित रक्तके संयोगसे मसूराकृति फुन्सियां उत्पन्न करते हैं, इसे मसूरिका रोग कहते हैं ।

मसूरिका पूर्वरूप-ज्वर, कंडू, अंगमर्दन, अरुचि, चित्तभ्रम, त्वचापर शोथ, नेत्रमें ललाई होकर शरीरका वर्ण बिगड़जावे तो जानो कि इसे मसूरिका निकलेगी ।

१ वातजमसूरिकालक्षण--मसूरिकाकी फुंसियां कालापन लिये लाल, रूखी, कठोर, तीव्र पीड़ायुक्त और विलम्बसे पकनेवाली हों, सन्धि, हाड और अँगुलियोंके पोरोंमें फूटन हो, शरीरमें कंप कास, बिकलता, तृषा और अरुचि हो, तथा जीभ, तालु और ओष्ठ सूखजावें तो वादीकी मसूरिका जानो ।

२ पित्तजमसूरिका लक्षण--जो लाल, पीला, श्वेत कोमल, शीघ्रपकनेवाली, पीड़ायुक्त फुंसियां हों तो पित्तसे उत्पन्न हुई मसूरिका जानो, इसके रोगीको प्यास, दाह, अरुचि मुख नत्रोंका पकना, तीव्र, ज्वर, अन्न न पचना और फूटा हुआ मल होना ये लक्षण होते हैं ।

३ रक्तजमसूरिका लक्षण--इसके लक्षण भी पित्तजके समानही होते हैं, केवल इसमें अङ्गफूटन विशेष होती है ।

४ कफजमसूरिका लक्षण--रोगीके मुखसे कफ गिरे, अङ्ग गीलासा रहे, शिरमें पीड़ा हो, शरीरभारीहो, अरुचिहो, उबकाई आवे, तन्द्रा आलस्यहो, श्वेत, चिकनी अति मोटी, खाज, मंद वेदनायुक्त और चिरपाकी फुंसियांहों तो कफकी मसूरिका जानो ।

५ त्रिदोषजमसूरिका लक्षण-जो नीले रंगकी चिपकी हुई, फैली, बीचमें गहरी, अति पीड़ायुक्त बहुत दिनोंमें पकनेवाली फुसियां हों, जिनमेंसे दुर्गंधित पीब सदैव बहती रहे तसे त्रिदोष की मसूरिका जानो ।

---

१ मसूरिका बोदरी माता या छोटी माता नामसे प्रख्यात है ।

६ चर्ममसूरिका लक्षण- कंठ रुक जावे, अरुचि, तन्द्रा, प्रलाप और विकलता हो तो तो चर्ममसूरिका जानो ।

७ रोमांतिकमसूरिका लक्षण--जो रोमकूपके समान ऊँची, लाल, कास और अरुचियुक्त फुंसियां हों तो रोमांतिक मसूरिका जानो, इससे प्रथम ज्वर आता है और ये कफपित्तके विकारसे होती हैं ।

सप्तधातुगत मसूरिका लक्षण--पानीके बबूलोंके आकारकी फुन्सियां अल्प दोषसे उत्पन्न होकर फुटनेपर पानी निकले तो रसगत, लाल शीघ्रपाकी, पतली त्वचावाली, अतिदोषयुक्त फुन्सियां होकर उनके फूटनेपर रक्त बहे तो रक्तगत जानो जो कठोर, चिकनी, मोटी, त्वचावाली, चिरपाकी फुन्सियां हों, जिनसे शरीरमें शूल, विकलता, खाज, मूर्च्छा, दाह और तृषा हो तो मांसगत जानो, जो गोल, कोमल, कुछ ऊँची घोरज्वर युक्त, चिकनी और बड़ी २ फुन्सियां हो जिनसे शरीरमें पीड़ा, मोह, विकलता और सन्ताप हो तो मेदोगत जानो, जो छोटी छोटी शरीरके वर्ण समान, रूखी, चिपटी, कुछ ऊँची फुन्सियां होकर भ्रम, मोह, पीडा, विकलता, मर्मस्थानपर छेदनेकीसी पीडा और हाडोंमें भौंराके काटने सदृश वेदना हो तो अस्ति तथा मज्जागत जानो और जो पकनेके समान चिकनी, बुलबुलित फुन्सियां होकर पीड़ा, आलस्य, विकलता, मोह, दाह और उन्माद हो तो शुक्रगत मसूरिका जानना चाहिये ।

मसूरिका साध्यासाध्य लक्षण -रक्त, पित्त, कफ, और कफपित्तज तथा रक्तगत मसूरिका साध्य, वातजा, वातपित्तजा और वातकफजाको कष्टसाध्य तथा त्रिदोषजा मेद अस्थि मज्जा और शुक्रगत मसूरिकाको असाध्य जानो, जो मसूरिकावाले रोगीको कास, हिचकी, मोह, तीव्रज्वर, प्रलाप विकलता, मूर्च्छा, तृषा, दाह और चक्कर आके मुखसे रक्त गिरे, कण्ठमें घुरघुर शब्दहो और श्वास बहुत चले तो असाध्य मसूरिका जानो ।

मसूरिका उपद्रव -मसूरिका निकलनेपर रोगीके पांव, जाँघ, पहुँचे और कांधोंपर शोथ आजावे तो यह उपद्रव दुश्चिकित्स्य अर्थात् दारुण है ।

फिरंगवातरोगोत्पत्तिकारण--उपदंशरोगयुक्त स्त्रीसे मैथुन करनेसे उपदंशरोगीके मूत्रपर लघुशंका करनेसे, उपदंशरोगीके साथ भोजनादि

संसर्गसे वात कुपित होकर फिरंगवातको उत्पन्न करता है, अथवा क्षीण पुरुष अत्यंत मैथुन करे तो त्रिदोष कुपित होकर आगंतुक फिरंगवातको उत्पन्न करते हैं।

फिरंगवातसामान्य लक्षण--१ जो शरीरमें चीटीकाटनेके सदृश ददोरे आकर पीठ और जांघमें पीडा तथा शोथ हो तो जानो कि अभी फिरंगवातका शरीरकी संधि और नसोंमें प्रवेश हुआ है। २ जो लिंगेंद्रियपर थोडी फुन्सियां और फटनेकेसे चिह्न हों तो जानो कि, फिरंगवात त्वचापर है। ३ और जो ये सब लक्षण होकर बहुत काल- तक रहें तो जानो कि- अब फिरंगवात त्वचाके बाहर और भीतर दोनों ओर प्राप्त हो गया है।

फिरंगवात उपद्रव-शरीरक्षीणता, बलनाश, अग्निमांद्य और मांस रुधिर नष्ट होकर हड्डीमात्र रहजावें तथा नाक गलजावे तो इन उप- द्रवोंसे युक्त रोगीका बचना कठिन है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे मेदोरोगकार्श्यरोगोदररोगलक्षणनिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

अथ क्षुद्ररोगः

अजगलिकादिक्षुद्राणां रोगाणां च यथाक्रमम्।
तरंगे मुनिरामेऽस्मिन्निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस सैंतीसवें तरंगमें अजगलिका आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं।

१ अजगलिकालक्षण–कफ वातके प्रकोपसे शरीरपर चिकनी शरीरके वर्ण सदृश, पीडारहित, मूँग प्रमाणकी जो फुन्सियां हों तो उन्हें अजगलिका जानो।

२ यवप्रख्यालक्षण–कफ वातके प्रकोपसे यवके समान बड़ी गठीली फुन्सियां मांसमें हो जाती हैं उन्हें यवप्रख्या कहते हैं।

३ अंत्रालजी लक्षण–कफ वातके प्रकोपसे भारी, सीधी, ऊँची, मण्डलाकार और पीबयुक्त फुन्सियां हों वह अंत्रालजी कहलाती हैं।

४ विवृता लक्षण–फटे हुए शिरवाली, विशेष दाहयुक्त, गूलरके पके फलसदृश, मंडलाकार फुन्सियां हों तो उन्हें विवृता जानो।

५ कच्छपिका लक्षण–कफ वातके प्रकोपसे कछुवेके समान ऊँची, पांच छः भयंकर गांठें होती हैं उन्हें कच्छपिका कहते हैं।

६ वल्मीक लक्षण–कुपथ्य करनेसे कंधे, बगल, हाथ, पांव और गलेमें बांबीके समान ऊँची, पीडायुक्त, विसर्पकीसी गांठ उत्पन्न होकर बढें तदनन्तर उनमेंसे अनेक मुखद्वार पीब बहे तो उसे वल्मीक जानो।

७ इन्द्रवृद्ध लक्षण–कमलगट्टेके आकारकी फुन्सी हो तो उसे इन्द्र-वृद्ध कहते हैं।

८ गर्दभिका लक्षण–वात पित्तके प्रकोपसे मण्डलाकार, गाल, ऊँची, लाल और पीडायुक्त जो फुन्सियां होती हैं उन्हें गर्दभिका कहते हैं।

९ पाषाणगर्दभिका लक्षण–दाढीकी संधिमें शोथयुक्त, स्थिर, मंदपी-डित और चिकनीफुन्सियां हों तो उन्हें पाषाणगर्दभिका जानो।

१० पनसिका लक्षण–कानके बीचमें विशेष पीडायुक्त और स्थिर फुन्सियां वातकफसे होती हैं उन्हें पनसिका कहते हैं।

११ जालगर्दभ लक्षण–पित्तप्रकोपसे जो शोथ प्रथम थोडा पश्चात् फैलता हुआ, निष्पाक और दाह, ज्वरकारक हो उसे जालगर्दभ जानो।

१२ इरवेल्लिका लक्षण–सन्निपातप्रकोपसे शिरमें गोल, विशेष पीड़ा और ज्वरयुक्त फुन्सियां होती हैं उन्हें इरवेल्लिका जानो।

१३ कक्षा लक्षण–पित्तप्रकोपसे बाँहें, काँधे और पसुलियोंमें पीडा और फफोलेयुक्त काला फोडा हो वह कक्षा (कांखबिलाई) कहलाती है।

१४ अग्निरोहिणी लक्षण–त्रिदोषके कोपसे मांसको विदीर्ण करने-वाले अन्तर्दाह, ज्वरकारक, प्रज्वलित अग्निके समान फफोले होते हैं उन्हें अग्निरोहिणी जानो, इसका रोगी ७ या १२ या १५ दिनमें मरजावेगा।

१५ चिप्प लक्षण–वातपित्त नखके समीपी मांसमें रहकर अपने दाहसे नखको पका देते हैं उसे चिप्प कहते हैं।

१६ कुनख लक्षण–जो तीनों दोषोंकी अल्पतासे चिप्परोग होवे उसे कुनखरोग कहते हैं, इसमें नख नहीं रहने पाता।

१७ अनुशयी लक्षण-पाँवके ऊपर या भीतर पकनेवाली, अल्पशोथयुक्त, रंगमें देहके समान जो फुन्सी होती है उसे अनुशयी कहते हैं।

१८ विदारिका लक्षण-त्रिदोषसे विदारीकन्दके समान गोल और लाल फुन्सी काँख या कमरकी संधिमें होती है वह विदारिका कहलाती है।

१९ शर्करा लक्षण-कफ, मेद, मांस और वात नसोंमें प्राप्त होकर १ गांठ उत्पन्न करते हैं जिसमें फूटनेपर मधु या घृत या वसा (चर्बी) के समान पीब बहती रहती है तब स्राव होनेसे पुनःवात कुपित होकर शरीरके मांसको सुखाके छोटी रेतके कण सदृश फुन्सियां उत्पन्न करता है उसे शर्करा कहते हैं।

२० शर्करार्बुद लक्षण-यदि शर्करासेही अनेक रंगोंका दुर्गन्धित रक्त बहने लगे तो उसीको शर्करार्बुद कहते हैं।

२१ पाददारिका लक्षण-अधिक चलनेसे वायु कुपित होकर पांव रूखे कर देती है, तब पांवकी एडीमें पीडायुक्त दरारें पडजाती हैं उन्हें पाद-दारिका (ब्यवाँई) कहते हैं।

२२ कदर लक्षण-पाँव हाथमें काँटा या कंकरी चुभनेसे बेरके समान गांठ पडजाती है उसे कदर (चाई या टाकी) कहते हैं।

२३ अलस लक्षण-पांव भीगे रहनेसे या दुष्ट कीचड लगनेसे अँगुलियोंकी संधिमें चर्म सडकर दाह और खुजाल आती है उसे अलस (खरवात) कहते हैं।

२४ इन्द्रलुप्त लक्षण-रोमकूपमें रहनेवाला पित्त वातके संयोगसे बढकर बालोंको झाड़ देता है, तदनंतर कफ रक्तके संयोगसे रोमकूपोंको रोककर दूसरे रोम उत्पन्न नहीं होने देता इसे इन्द्रलुप्त (चांद) कहते हैं।

२५ अरुंषिका लक्षण-कफ, रक्त और कृमिके कोपसे मस्तकपर अनेक मुखवाले व्रण होते हैं उन्हें अरुंषिका कहते हैं।

२६ पलितरोग लक्षण-शोक, क्रोध और परिश्रमकी विशेषतासे शरीरमें उष्णता और पित्त बढ़कर तरुणावस्थामें केशोंको पका देते हैं उसे पलित कहते हैं।

२७ न्यच्छ लक्षण--जो बड़ा, छोटा, या काला, या धूसर, पीडारहित मंडल शरीरके किसी भी स्थानमें हो उसे न्यच्छ कहते हैं।

२८ माष लक्षण—वातप्रकोपसे शरीरपर वेदनारहित, उर्दके समान काला, ऊंचा, मांसका अंकुर हो उसे माषा (मसा) कहते हैं।

२९ तिलकालक लक्षण--जो पीडारहित, काले तिलके समान चर्मके समान मंडल हो उसे तिलकालक (तिल) कते हैं।

३० उग्रगंधा लक्षण—जो कफ रक्तके प्रकोपसे त्वचापर कालाचिकना, पीडारहित मंडल शरीरके साथही उत्पन्न हो उसे उग्रगंधा (लहसुन) कहते हैं।

३१ लिंगवर्ती लक्षण- इन्द्रियके मर्दन तथा चोट लगनेसे विचरता हुआ वायु लिंगेन्द्रियके चर्मको उलटके सुपारीके एक लम्बी गड्डेसहित गांठको उत्पन्न करता है उसे लिंगवर्ती कहते हैं।

३२ अवपाटिका लक्षण- लघुछिद्र योनिवाली, रजस्वलाधर्म रहित स्त्रीसे मैथुन करनेसे, हस्तमैथुनसे लिंगेन्द्रियके बंद मुखको बलात्कारसे खोलनेसे, लिंगको दबाने या मसलनेसे और निकलते हुए वीर्यको रोकनेसे, लिंगको मूचनेवाला चर्म बहुधा फट जाता है, उसे अवपाटिका कहते हैं।

३३ निरुद्धप्रकाश लक्षण- वातप्रकोपसेलिंगका चर्म लिंगकेमाथे (अग्र भाग, सुपारी) पर चिपट जाता है, तब वह मस्तक और मूत्रमार्ग दोनों बंद होकर मूत्रकी धारा धीरे धीरे पीडा रहित गिरती है और लिंगका मस्तक खुलता नहीं उसे निरुद्धप्रकाश कहते हैं।

३४ मणिरोग लक्षण--निरुद्धप्रकाश होनेके पश्चात् पीडारहित महीन मूत्रधार गिरे और मूत्र निकलनेका छिद्र चौड़ा होजावे तो मणिरोग जानो।

३५ वृषणकच्छु लक्षण--जो पुरुष लिंग और अंडकोशको धोकर स्वच्छ नहीं रखता उसके कफ रक्तकोपसे अंडकोशका मैल पसीनेके योगसे फूलकर खाज होती है और यही खाज कुछ कालमें फोडे होकर उनमेंसे पीब और पानी बहने लगता है उसे वृषणकच्छुरोग कहते हैं।

३६ निरुद्धगुद लक्षण—मलका वेग रोकनेसे गुदामें रहनेवावाला वायु मल निकलनेके छिद्रको रोककर छोटा करदेता है तब मल बड़ी कठिनाईसे उतरता है उसे निरुद्धगुद कहते हैं।

३७ गुदभ्रंश लक्षण-रूखे तथा दुर्बल पुरुषके (खाँसने, कूदने और अतिसारसे) गुदा बाहरको निकल जाती है। उसे गुदभ्रंश (रेचन-कालमें कांच निकलना) कहते हैं।

३८ शूकरदंष्ट्र लक्षण-जो लाल किनारेवाला, त्वचाको पकानेवाला, दाह, कण्डू, तीव्र पीड़ा और काला शोथ हो, उसे शूकरदंष्ट्ररोग कहते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे क्षुद्ररोगलक्षणनिरूपणं नाम सप्तत्रिंशस्तरंगः ॥ ३७ ॥

शिरोरोग-नेत्ररोग

वसुवैश्वानरे भंगे कारणं च शिरोरुजाम् ॥
तथा हि नेत्ररोगाणां कथ्यतेऽत्र यथाक्रमम् ॥ १ ॥

अब हम इस ३८ अडतीसवें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं।

शिरोरोगोत्पत्ति कारण-१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ रक्त, ६ क्षीणता, ७ कृमि, ८ सूर्यावर्त्त, ९ अनंतवात, १० शंखक और ११ अर्द्धावभेद इन ग्यारह कारणोंसे ११ प्रकारका शिरोरोग होता है।

१ वातजशिरोरोग लक्षण-मनुष्यके मस्तकमें निष्कारणही अत्यंत पीडा होकर दिनको न्यून और रात्रिको अधिक होने लगे और शिरको बाँधने या तपानेसे पीडा शांत होजाया करे तो बादीका शिरोरोग जानो।

२ पित्तशिरोरोगलक्षण-मस्तक फूट जावे, अग्नि सदृश जलन पडे, नेत्रोंमें भी पीड़ा और नाकमें जलन पड़कर रात्रिको शीत कारणसे पीडा कुछ शांत हो जावे तो पित्तका शिरोरोग जानो।

३ कफजशिरोरोग लक्षण-मस्तक भीतर कफसे भरा हुआ जड़ (भारी) ठंढ़ा हो, नेत्र नासिका और मुखपर शोथ हो तो कफका शिरोरोग जानो।

४ सन्निपातजशिरोरोग लक्षण-जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण पाये जावें उसे त्रिदोषसे उत्पन्न हुई मस्तककी पीडा जानो।

५ रक्तजशिरोरोग लक्षण–पित्तज शिरोरोगके समस्त लक्षण होकर मस्तक हस्तस्पर्शमात्र भी सहन न करसके तो रक्तका शिरोरोग जानो।

६ क्षयजशिरोरोग लक्षण–मस्तकमें रक्त, वसा, कफ और वायुकी न्यूनता होनेसे छीकें आतीं और शिर तपकर अति वेदना होती है। उसे क्षयजशिरोरोग जानो।

७ कृमिजशिरोरोग लक्षण–मस्तकमें सुई चुभानेके समान, या कीड़ा काटनेके समान पीडा और जलन होकर सिर फड़के और नासिका मार्गसे रक्तयुक्त पीवका विशेष बहाव हो तो कृमिका शिरोरोग जानो।

८ सूर्यावर्त्तशिरोरोग लक्षण–सूर्योदय होतेही मस्तकमें मंद मंद पीडा उत्पन्न होकर सूर्यके तेजोवृद्धिके साथ साथ नेत्र, भौंह और शिरकी पीडा भी मध्याह्नकालतक बढती जावे और मध्याह्न पश्चात सूर्यके तेजसदृश क्रमशः न्यून होते होते सूर्यास्तमें समस्त पीडा शांत होजावे तो सूर्यावर्त्त शिरोरोग जानो।

९ अनंतवाताशिरोरोग लक्षण -वात, पित्त, कफ दूषित हो ग्रीवा, नेत्र, भौंह और कनपटीमें अत्यन्त्य पीड़ा करे, डाढ़में स्तभंन, कपोलोंमें फड़क और नेत्ररोग उत्पन्न करके शिरमें अत्यन्त वेदना उत्पन्न करते हैं, उसे अनन्तवात शिरोरोग कहते हैं।

१० शंखकशिरोरोग लक्षण–वात, पित्त, कफ दूषित होकर कनपटीमें तीव्रवेदना दाह और लालवर्णयुक्त शोथ उत्पन्न करके मस्तक और गलेको रोक देते हैं, उसे शंखकशिरोरोग कहते हैं,इसका यत्न ३ दिनके भीतर न करोगे तो बचना कठिन है।

११ अर्द्धावभेदशिरोरोग लक्षण–रूखी वस्तुका विशेष सेवन भोजन-पर भोजन, अतिमैथुन, मलमूत्रावरोध, श्रम, व्यायामकी विशेषता और पूर्वकी वायु सेवनसेकेवल वायु या कफसहित वायु कुपित होकर बलिष्ठहो जाती और ललाटके आधे भागको ग्रहण करके उसभागकी ग्रीवा, भौंह, कनपटी, कान, नाक और उसआधे ललाटमें शस्त्रसे काटने या चीरनेके समान तीव्र वेदना उत्पन्न करता है, उसे अर्धावभेद (आधा शीशी = अधकपाली) शिरोरोग कहते हैं,यह विशेष बढ़ने पर कान या नेत्रको नष्टकर डालता है।

१ नेत्ररोगोत्पत्तिकारण—धूपसे तपा हुआ पानीमें प्रवेश करे दूरकी वस्तु अधिक देखा करे, दिनको शयन करे, रात्रिको जागे नेत्रमें पसीना धूरी या धुआँ प्रवेश होने, वमन अधिक होने तथा वमन, आंसू, मल, मूत्र, अधोवायुके वेग रोकने, पतले अन्नके सेवन करने, शोक तथा क्रोध करने, मस्तकके कूटने, अति मद्यपान करने, ऋतुविरुद्ध आहार विहारके करने, क्लेशप्रद कार्योंके करने, अतिमैथुन तथा अतिरुदन करने और अत्यन्त महीन वस्तु ओंको देखने इन कारणोंसे वातादि दोष कुपित होके नेत्रोंमें अनेक प्रकारके रोगोंको उत्पन्नकरते हैं।

२ नेत्रमण्डलमान—नेत्रमण्ड २॥अढाई अंगुल या अपने अंगुष्ठके उदर प्रमाण होता है, इसमें शार्ङ्गधरके मतसे ९४ सुश्रुतके मतसे ७६ और अनेक आचार्य तथा चरकके मतसे ७८ अठहत्तर रोग होते हैं, जिनकी संख्यानिम्नलिखित क्रमानुसार जानो।

३ नेत्ररोगसंख्या—१४ दृष्टिमें, ४ नेत्रके कालेभागमें, ११ श्वेत भागमें, २१ नेत्रमार्गमें, २ नेत्रपक्ष्मोंमें, ९ नेत्रसंधिमें १७ समस्त नेत्रमात्रमें इस प्रकार ७८ नेत्ररोग हैं।

४ दृष्टिवर्णन—नेत्रमण्डलकी कालीपुतलीमें मसूरकी दालसदृश एक प्रकाशिततारा है वह तारा पंचमहाभूतोंसे उत्पन्न तेजरूप है, यह तारा नेत्र गोलके पलांडु (कांदा, प्याज) के छिलकेके तुल्य ३ पटल (झिल्ली) उत्पन्नकर देता है, जिससे सबनेत्र आच्छादित होता है, इस पटलके अन्तर्गत जल और रुधिरके आधारभूत जो देखनेकी शीतलशक्ति है उसे दृष्टि कहते हैं।

५ पटलवर्णन—दृष्टिका प्रथम पटल तेज और जलके आधार दूसरा मांसके आधार, तीसरा तेज, जल,मांस, मद और अग्निके आधार और चौथा केवल तेजाधार है।

६ प्रथम पटलादिगतदोष वर्णन—प्रथम पटलमें दोषप्राप्त होनेसे वस्तुका यथार्थरूप नहीं दीखता, दूसरे पटलमें दोषप्राप्त होनेसे मक्खी मच्छरके समूह उड़तेसे दिखाई देते, दूरकी वस्तु समीप और समीपकी दूर दिखाई पड़ती है; दृष्टि भ्रमसे विह्वलित रहती यहाँतक कि सुईका छिद्रभी कठिनाईसे दीखता है, तीसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे ऊपरकी वस्तु दीखतीपर नीचेकी नहीं दीखती, वस्तु समूहभी

नहीं दीखता किन्तु सन्मुख वस्त्रकी ओटसी हो आती है, कान, नाक, नेत्र यथार्थ नहींपर विचित्र डौल, केही दीखते हैं यदि इसी पटल (३ परदे) में विशेष दोष होजावे तो नीचेकीऊपर और ऊपरकीवस्तु नीचेदृष्टिपड़ती है, यदिनेत्रकेपार्श्व (बगल) में दोष होजावें तो दाहिनी और बाईं ओरकी वस्तु नहीं दीखती, यदि नेत्रोंमें चकचौंधी आजाती है, यदि दृष्टिमध्यगत दोष हो तो बड़ी वस्तु छोटी दीखती है, यदि समस्त दृष्टिगत दोष हो तो दाहिनी बाँई तरफकी वस्तुएँ एककी दो, दोकी तीन और अधिक हों तो असंख्यात दृष्टि पड़ती हैं, चतुर्थ पटलमें दोष प्राप्त होनेसे आंखकी पुतली नीले कांचके सदृश होकर विशेष दोषसे सूर्य; चन्द्र, नक्षत्र, बिजुली आदि निर्मल तेजोमय वस्तुओंको भी भली भाँति नहीं देख सकता किन्तु ये सब भ्रमसे ही दीखते हैं ।

७ दृष्टिरोग--दृष्टि १ वातजलिंगनाश, २ पित्तज, लिंगनाश, ३ कफजलिंगनाश, ४ सन्निपातजलिंगनाश, ५ रक्तजलिंगनाश, ६ परिम्लायिलिंगनाश, ७ पित्तविदग्धदृष्टि, ८ कफविदग्धदृष्टि, ९ धूमदर्शी १० ह्रस्वजात्य, ११ नकुलान्ध्य और १२ गंभीरदृष्टि ये बारह तथा दो आगन्तुक लिंगनाश जो कि एक निमित्तसे और दूसरा अनिमित्त होता है, इस प्रकार चौदह रोग होते हैं ।

८ षड्विधलिंगनाश लक्षण--सबवस्तु भ्रमित, मलिन, टेढी और लाल दृष्टि पडें तो १ वातजलिंगनाश, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, अग्नि इन्द्रधनुष, बिजली येसब भ्रमते हुए नीले दृष्टि पडें तो २ पित्तज लिंगनाश, नेत्रोंमें जल भरा रहकर सब वस्तुएँ श्वेत तथा चिकनीसी दृष्टि पडें तो ३ कफज लिंगनाश, जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण मिलें तथा वस्तुके आकार नानाप्रकारके छोटे बडे और तेजोरूप दृष्टि पडें तो ४ सन्निपातज लिंगनाश, जिसे प्रत्येक पदार्थ लाल या श्वेत या काले रहे या पीले दृष्टि पडे तो ५ रक्तज लिंगनाश, और जिसे दशोंदिशा पीली, अनेक सूर्योंका उदय, जुगुनुओंसे तथा अग्निसे व्याप्त वृक्ष दृष्टि पडे तो ६ परिम्लायि लिंगनाश जानो ।

विशेषतः--वातसे गुलाबी, पित्तसे पीततायुक्त, नील या शुद्ध नील वर्ण, कफसे श्वेत, रक्तसे लाल, सन्निपातसे अद्भुत रंग और परिम्लायिसे लाल तथा धूसरवर्ण लिंगनाशरोग होनेसे दृष्टि पड़ता है ।

१ परिम्लायि--रक्तमूर्च्छित पित्तसे जो लिंगनाश होता है वह परिम्लायि कहलाता है ।

९ लिंगनाशमेंनेत्रमंडल लक्षण--१ वातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल कठिन और चंचल; २ पित्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर काँसेके समान तथा पीला, ३ कफज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर नीला बड़ा चिकना शंख या कुंदपुष्प अथवा चंद्रसदृश श्वेत वर्णका, चंचल और श्वेत बिंदुयुक्त, ४ सन्निपातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर तीनों दोषोंके उपर्युक्त लक्षणयुक्त तथा विचित्र रंगका, ५ रक्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल और ६ परिम्लायि लिंगनाशमें नेत्रके भीतर मोटे कांचके समान अरुण या नीला मंडल होता है ।

(७) पित्तविदग्धदृष्टि लक्षण--मिथ्याआहारविहारादिसे पित्त दूषित होकर नेत्रोंको पीत करदेता है, जिससे सब वस्तु पीलीही पीली दृष्टि पडती हैं, इसे पित्तविदग्धदृष्टि रोग जानो, इसरोगमें प्रथम तथा दूसरे परदेमें पित्त रहता है और इस पित्तके तृतीय पटलमें प्राप्त होनेसे दिनको नहीं दीखता और रात्रिको चन्द्रमाकी शीतलतासे पित्तकी अल्पता होनेके कारण दीखने लगता है, इसे दिवांध (दिनौंधि) रोग कहते हैं, यह भी पित्तविदग्ध दृष्टिरोगका ही एक विभेद है ।

(८) कफविदग्धदृष्टिलक्षण--दृष्टि कफदूषित होनेसे मनुष्यको सब रूप श्वेतही श्वेत दीखते हैं इसे कफविदग्ध दृष्टिरोग जानो और जब वही कफ तीसरे पटलमें प्राप्त होजाता है तब रात्रिको नहीं दीखता और दिनको सूर्यके तेजसे कफ न्यून होनेके कारण दीखता है, इसे नक्तान्ध (रतौंधी) कहते हैं, यह भी कफविदग्ध दृष्टिका एक विभेद है ।

(९) धूमदर्शीरोग लक्षण--शोक, ज्वर, श्रम, और शिरोरोगके कारण दृष्टि पीडित होकर सब पदार्थ धूमरूप दीखते हैं, इसे धूमदर्शी रोग कहते हैं ।

(१०) ह्रस्वजात्यरोग लक्षण--दिनको बड़ा रूप भी अत्यन्त क्लेशसे छोटासा दीखे और रात्रिको यथार्थ दीखे तो ह्रस्वजात्य रोग जानो ।

(११) नकुलांध्यरोगलक्षण--दोषोंसे दूषित दृष्टि होके नकुल (मुंगस) की दृष्टि समान चमके और उस मनुष्यको दिनको चित्र विचित्र दीखे तो नकुलांध्यरोग जानो ।

(१२) गंभीरदृष्टि लक्षण--वायुदूषित दृष्टि विरूप होकर अतिपीडा-पूर्वक भीतरसे सिकुड़ती जावे उसे गंभीरदृष्टिरोग जानो ।

(१३) निमित्तज आगन्तुकलिंगनाश लक्षण--जो मस्तकपीडासे तथा अभिष्यंदके लक्षणोंसे निश्चय किया जावे, उसे आगन्तुक निमित्तज जानो।

(१४) अनिमित्तज आगन्तुक लिंगनाश लक्षण--जिस मनुष्यकी देव, ऋषि, गंधर्व, बड़े सर्प, सूर्य इनके देखनेसे दृष्टि दूषित होकर प्रत्यक्ष सुन्दर तथा निर्मल भी रहे और उसे कुछ न दीखपडे तो अनिमित्तज आगन्तुकलिंगनाश जानो, यह १४ चौदह रोग दृष्टिमें होते हैं।

१० वाग्भटके मतसे लिंगनाशका लक्षण--लिंगनाशरोगको लोकमें नजला तथा मोतियाबिंदु भी कहते हैं, यह मोतियाबिंदु कच्चा और पक्का ऐसे दो प्रकारका होता है।

१ कच्चा मोतियाबिन्दु--कुछकुछ धूमरसा दीखे, नेत्रोंमें पीडा हो और सब लक्षण पक्के मोतियाबिंदुसे विरुद्ध दृष्टि पड़े तो कच्चा मोतियाबिंदु जानो।

२ पक्का मोतियाबिंदु- पुतलीपर दही तथा मट्ठेके समान बूंद होकर उसे कुछ भी न दीख पड़े और नेत्रोंमें किसी प्रकारकी पीड़ा न हो तो पक्का मोतियाबिंदु जानो। इति दृष्टिरोगाः।

अथ श्यामभागरोगाः

नेत्रके श्यामभागमें--१ सव्रणशुक, २ सव्रणशुक ३ अक्षिपाकात्यय और ४ अजकाजात ये चार रोग होते हैं।

१ सव्रणशुक्र लक्षण--नेत्रके काले भागपर सुईसे किये हुए छिद्रसमान गहरी फूली पड़कर जिससे उष्ण अश्रुपात होते रहे उसे सव्रणशुक्र कहते हैं। यदि वह फूली नेत्रकी पुतलीसे दूर, गाँठ तथा पीड़ा और बहुस्रावरहित हो तो साध्य, इसके व्यतिरिक्त हो तो असाध्य जानना चाहिये।

२ अव्रणशुक्र लक्षण--नेत्र दुखनेसे काले भागमें फूली उत्पन्न होके चुभनेके समान पीडायुक्त तथा शंख, चंद्र, कुन्दपुष्प अथवा मेघके समान हो तो उसे अव्रणशुक्र जानो। यद्यपि अव्रणशुक्र साध्य है परंतु जो फूली दूसरे पटलादिमें प्राप्त होकर मोटी बड़ी और बहुतकालिक हो तो कष्टसाध्य जानो। और जो फूलीके बीचमें छिद्रसा होकर चारों

तरफसे मांस घिर आवे तथा संचारी महीन नसगत दृष्टिनाशक, द्वितीय पटलके किनारेपर लाल और बहुत दिनोंकी हो तथा नेत्रसे उष्ण अश्रुपात हों, नेत्रमें मूँगके समान फुन्सी हो और तीतरके पंखके समान वर्ण और मूंगके आकारवाली फूली हो तो अव्रणशुक्र साध्य जानो।

३ अक्षिपाकात्ययरोग लक्षण–नेत्रके काले भागपर चारों तरफसे श्वेत वर्ण हो जावे उसे अक्षिपाकात्ययरोग कहते हैं; यह त्रिदोष हो तो असाध्य अन्यथा कष्टसाध्य साध्य जानो।

४ अजकाजात लक्षण–बकरीकी मेंगनीके समान पीडायुक्त लाल फूली होकर काले भागको ढ़ाँककर बढ़े और उसमेंसे लाल तथा चिकने आँसू बहते रहें तो अजकाजात रोग जानो। इति श्याम-भागरोगाः ४।

अथ श्वेतभागरोगः

नेत्रके श्वेत भागमें–१प्रस्तार्यर्म, २ शुक्लार्म, ३ रक्तार्म, ४ अधि-मांसार्म, ५ स्नाय्वर्म, ६ शुक्तिका, ७ अर्जुन, ८ पिष्टक, ९ शिराजाल, १० शिरापिडिका और ११ बलासग्रथित ये ग्यारह रोग होते हैं।

१ प्रस्तार्यर्म लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें पतला, विस्तृत, काला या लाल मण्डल हो उसे प्रस्तार्यर्मरोग जानो।

२ शुक्लार्म लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें श्वेत और कोमल मण्डल होकर बहुत दिनोंमें बढे उसे शुक्लार्म रोग जानो।

३ रक्तार्म लक्षण–नेत्रके श्वेत भागमें मांसके संचयसे लाल कमल सदृश तथा कोमल मण्डल हो उसे रक्तार्म कहते हैं।

४ अधिमांसार्म लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें विस्तृत, कोमल, मोटा लाल मिश्रित श्याम (लाखी) मंडल हो तो अधि मांसार्मरोग जानो।

५ स्नाय्वर्म लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें स्थिर, विस्तृत, मांसयुक्त और सूना मंडल हो उसे स्नाय्वर्मरोग जानो।

६ शुक्तिका लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमे काले और सीपके आकार माँस बिन्दु हो तो शुक्तिका रोग जानो।

७ अर्जुनरोग लक्षण–नेत्रके श्वेतभागमें शशेके रक्त सदृश एक बिन्दु हो उसे अर्जुनरोग जानो।

८ पिष्टक लक्षण–वातकफके कोपसे नेत्रके श्वेत भागमें आटेके समान मांस ऊँचा होकर मैले दर्पण सदृश दृष्टि पड़े उसे पिष्टक-रोग जानो ।

९ शिराजाल लक्षण–नेत्रके-श्वेत भागमें कठोर नसोंसे बना हुआ विस्तृत लाल जाला (फन्दा) सा हो उसे शिराजाल रोग जानो ।

१० शिरापिडिकारोग लक्षण–नेत्रके श्वेत भागमें श्याम मंडलके समीप श्वेत नसोंसे आच्छादित जो फुन्सियां हों उसे शिरापिडि-कारोग जानो ।

११ बलासग्रथितरोग लक्षण–नेत्रके श्वेत भागमें काँसेके पात्र वर्ण सदृश पानीके बूँदकी आकार और कठोर चिह्न हों उसे बलास ग्रथितरोग जानो इति श्वेतभागरोगाः ११ ।

अथ वर्त्मस्थानरोगाः

नेत्रमार्ग–१ उत्संगिनीपिडिका, २ कुंभिका, ३ पोथिकी, ४ वर्त्मश-र्करा, ५ अर्शोवर्त्म, ६ शुष्कार्श, ७ अञ्जना, ८ बहुलवर्त्म, ९ वर्त्म-बन्धका, १० क्लिष्टवर्त्म, ११ वर्त्मकर्दम, १२ श्यामवर्त्म, १३ प्रक्लि-न्नवर्त्म, १४ अक्लिन्नवर्त्म, १५ वातहतवर्त्म, १६ वर्मार्बुद, १७ निमेष, १८ शोणितार्श, १९ लगण, २० बिसवर्त्म और २१ कुंचन ये इक्कीस रोग होते हैं ।

१ उत्संगिनीपिडिका लक्षण–पलकके भीतर मुखवाली, लाल, छोटी फुन्सियोंके मध्य जो खाजयुक्त एक बड़ी फुन्सी बाहरको ऊँचीसी दृष्टि पड़े उसे उत्संगिनीपिडिका जानो ।

२ कुंभिका लक्षण–पलकके किनारेपर कुम्हडेके बीजके समान श्वेत और प्रवाहिनी फुन्सी हो उसे कुंभिका जानो ये दोनों त्रिदोषसे होती हैं ।

३ पोथिकी लक्षण–पलकमें लाल सरसोंके बीजसमान भारी बहने-वाली, खाजयुक्त और पीडाकारिणी फुन्सियां हों उन्हें पोथिकी जानो ।

४ वर्त्मशर्करा लक्षण–पलकमें कठिन तथा दूसरी छोटी फुन्सियां युक्त जो बड़ी फुन्सी हो उसे वर्त्मशर्करा जानो ।

५ अर्शोवर्त्म लक्षण–ककडीके बीजसमान नुकीली, चिकनी, किंचित् पीडायुक्त फुन्सियां हों उन्हें अर्शोवर्त्म जानो ।

६ शुष्कार्श लक्षण–पलकके भीतर लम्बी, अंकुरवाली, कर्कश, कठिन, दारुण–दुःखदायिनी फुन्सी हो उसे शुष्कार्श रोग जानो ।

७ अंजना लक्षण–पलकमें सुई चुभानेके समान अल्प पीडा–युक्त, लाल, कोमल और दाहदात्री जो फुन्सी हो उसे अंजना जानो ।

८ बहुलवर्त्म लक्षण–पलक चहुँ ओरसे चर्मके रंगकी स्थिर फुन्सियोंसे व्याप्त हो जावे, उसे बहुलवर्त्म रोग जानो ।

९ वर्त्मबन्धरोग लक्षण–पलकमें खाज तथा अल्प वेदनायुक्त शोथ होनेसे वह नेत्रोंको पूर्णरूपसे न ढकसके उसे वर्त्मबन्धरोग जानो ।

१० क्लिष्टवर्त्म लक्षण–पलकमें अकस्मात् किंचित् वेदना, ललाई और कोमलता हो जावे तो उसे क्लिष्टवर्त्मरोग जानो ।

११ वर्त्मकर्दम लक्षण–क्लिष्टवर्त्मरोगको ही पित्तयुक्त रक्त दूषित करके नेत्रोंको कीचड़ (गीड़) युक्त ही किये रहे उसे वर्त्मकर्दम जानो ।

१२ श्यामवर्त्म लक्षण–पलक बाहर भीतरसे काले और वेदना युक्त सूजे रहें उसे श्यामवर्त्म रोग कहते हैं ।

१३ प्रक्लिन्नवर्त्म लक्षण–पलकके बाहर पीड़ा रहित और शोथयुक्त होकर भीतर अधिक कीचड़ युक्त रहे उसे प्रक्लिन्नवर्त्मरोग जानो ।

१४ अक्लिन्नवर्त्म लक्षण–जिसकी पलक निष्पाक, निष्पीड़ित दशामें भी धोनेसे या धोनेपर भी बराबर चिपक जावे उसे तो अक्लिन्नवर्त्म रोग जानो ।

१५ वातहतवर्त्म लक्षण–जिससे पलककी संधि ढीली होकर ज्योंकी त्यों रहजावे उसे वातहतवर्त्म जानो ।

१६ वर्त्मार्बुद लक्षण–पलकके भीतर पीड़ा रहित, टेढ़ी, मोटी, लाल एक गठान होती है उसे वर्त्मार्बुद रोग कहते हैं ।

१७ निमेषरोग लक्षण–पलकको खोलने तथा मीचनेवाला नस निवासी वायु पलकमें प्राप्त होकर उनको बारबार चलाते रहता है इसे निमेषरोग जानो ।

१८ शोणीतार्श लक्षण--पलकके अंतमें मांसका कोमल, लाल अंकुर बढ़कर काटनेपर भी बढ जाता है उसे शोणितार्श जानो ।

१९ लगण लक्षण--पलकमें छोटे बेरके समान, पाक रहित, कठोर, निष्पीडित, कंडूयुक्त जो चिकनी गठान हो उसे लगण रोग जानो ।

२० बिसवर्त्म लक्षण- त्रिदोषकोपसे पलकके ऊपर शोथ उत्पन्न होकर उस पलकके कमलनाल सदृश अनेक छिद्र होजाते हैं जिनसे सदैव पानी बहा करता है उसे बिसवर्त्मरोग जानो ।

२१ कुंचन लक्षण -त्रिदोष पलकको संकुचित करके मनुष्यको देखनेसे असमर्थ कर देते हैं उसे कुंचन रोग जानो । इति वर्त्मरोगाः २१

पक्ष्मरोगाः--नेत्रके पक्ष्म (पाखों) में १ पक्ष्मकोप और २ पक्ष्मशात ये दो रोग हैं ।

१ पक्ष्मकोप लक्षण--वातकोपसे पलकके रोम नेत्रोंमें घुसकर बारम्बार गिसनेसे श्वेत या काले भागमें शोथ होकर, प्रायः रोम झड जाया करते हैं इसे पक्ष्मकोप कहते हैं ।

२ पक्ष्मशातलक्षण–पित्तकोपसे पलकके रोम झड़कर खुजाल और दाह उत्पन्न हो उसे पक्ष्मशात रोग कहते हैं । इतिपक्ष्मरोगाः २

सन्धिरोगाः–नेत्रकी सन्धिमें १ पूयालसक, २ उपनाह, ३ पैत्तिकस्राव, ४ कफस्राव, ५ रक्तस्राव, ६ सन्निपातस्राव, ७ पर्वणी, ८ अलजी और ९ जन्तुग्रंथि ये नव रोग होते हैं ।

१ पूयालसक लक्षण–नेत्रकी पुतलीकी संधिमें शोथ होकर पके, टोचने सदृशपीड़ा होकर दुर्गंधित पीब निकले उसे पूयालसक रोग जानो ।

२ उपनाह लक्षण–नेत्रकी संधिमें क्वचित् पकनेवाली खाजयुक्त पीड़ारहित और बड़ी गांठहो उसे उपनाहरोग जानो ।

३ पित्तस्राव लक्षण–आंसूमार्गोंसे नेत्रोंकी संधिमें वातादिदोष प्राप्त होनेसे अपने लक्षणोंयुक्त नेत्रस्राव उत्पन्न करते हैं । इसके पित्तस्राव, कफस्राव, रक्तस्राव और सन्निपातस्राव ये ४ भेद हैं । जिसमें नेत्रकी सन्धिसे हलदीसमान पीला, उष्ण या केवल जलसदृश झिरता है उसे पित्तस्राव जानो ।

४ कफस्राव लक्षण–जो श्वेत, गाढ़। चिकना बहता रहे उसे कफ स्राव जानो ।

५ रक्तस्राव लक्षण– जो बहुतसा उष्ण रक्त बहता रहे उसे रक्तस्राव जानो ।

६ सन्निपातस्राव लक्षण–संधि पककर अतिदुर्गंधित पीबसे बहे उसे सन्निपातस्राव जानो ।

७ पर्वणी लक्षण--जो नेत्रसंधिमें लाल, दाह और पाकयुक्त पतली तथा गोल सूजन हो उसे पर्वणीरोग जानो।

८ अलजी लक्षण--यदि पर्वणी सफेद और काले भागके मध्य (संधि) में हो तो अलजीरोग जानो।

९ जंतुग्रंथि लक्षण--पलक तथा पक्ष्मके मध्य (संधि) में कीडे उत्पन्न होकर खुजाल चलाते हैं तथा वे फिरते हुए नेत्रोंको बिगाड़ देते हैं इसे जंतुग्रंथिरोग जानो। इति संधिरोगाः ९.

समस्तनेत्ररोगाः--सब नेत्रमें १ वाताभिष्यंद, २ पित्ताभिष्यंद, ३ कफाभिष्यंद, ४ रक्ताभिष्यंद, ५ वाताधिमंथ ६ पित्ताधिमंथ, ७ कफाधिमंथ, ८ रक्ताधिमंथ, ९ सशोथपाक, १० अशोथपाक, ११ हताधिमंथ, १२ वातपर्याय, १३ शुष्काक्षिपाक, १४ अन्यतोवात, १५ अम्लाध्युषित, १६ शिरोत्पात और १७ शिरोहर्ष ये सत्रह नेत्ररोग होते हैं।

१ वाताभिष्यंद[1] लक्षण--नेत्रोंमें सुई टोंचने समान पीड़ा, जड़ता, कर्कराहट, रूखापन, कीचड और ठंढे आंसुओंका बहाव होकर रोमांचहो और शिरतप्त हो तो वाताभिष्यंद (वादीसे नेत्र दुखने आये) जानो।

२ पित्ताभिष्यंदलक्षण--नेत्रोंमें पककर दाह, ठंडे पदार्थोंकीइच्छा धुएँ निकलने समान पीडा, उष्ण आंसुओंका विशेष बहाव होकर नेत्र पीले हों तो पित्ताभिष्यंद (पित्तसे नेत्रोंका दुखना) जानो।

३ कफाभिष्यन्दलक्षण--उष्ण पदार्थोंपरप्रीति, नेत्रोंमें भारीपन शोथ, कंडू, चिकना ठंढाहोकर चिकना कीचड आवे तो कफाभिष्यंद जानो।

४ रक्ताभिष्यंद लक्षण--लाल नेत्र होकर लाल आसूं बहें और नेत्रमण्डल (गार) पर अति लाल रेखा होके पित्ताभिष्यन्दके समस्त लक्षण--हों तो रक्ताभिष्यंन्द जानो।

५—८ वात अभिष्यंदरोग होनेपर उसका यथार्थ यत्न न होकर कुपथ्य हो तो वाताधिमन्थ, पित्ताधिमंथ कफाधिमंथ और रक्ताधिमन्थ होते हैं इन चारोंके लक्षण उक्त चारों अभिष्यंदोंके समान ही जानो।

---

१ अभिष्यन्दको लोकमें आंख दुखनी आई कहते हैं।

विशेषतः--इस रोगपर पूर्णयत्न न हो तो ५ वाताधिमन्थ ६ दिनमें; ६ पित्ताधिमन्थ तत्काल ७ कफाधिमन्थ ७ दिनमें और ८ रक्ताधिमन्थ ५ दिनमें दृष्टिको नाश कर देते हैं।

९ सशोथपाक लक्षण--नेत्रमें आंसू, खाज, ललाई होकर नेत्र गूलरके पक्कफल सदृश हो जावें तो उसे सशोथपाक जानो।

१० अशोथपाक लक्षण--नेत्रोंपर शोथ न हो, खुजाल आवे गूलरके पके फलसमान होकर लाल हो जावें उसे अशोथपाक जानो।

११ हताधिमन्थ लक्षण--जिसके नेत्रोंसे कुछ दिखाई न दे, तीव्र वेदना हो और कमल सूखजावे तो हताधिमंथरोग जानो।

१२ वातपर्याय लक्षण—किसी समयमें भौंहोंमें किसी समय नेत्रोंमें वायु प्राप्त होकर तीव्र वेदना करे तो वातपर्यायरोग जानो।

१३ शुष्काक्षिपाक लक्षण—नेत्र मिचे रहें, पलक कठिन, रूखी और जलती रहें। स्वच्छ न दिखाई देवे और निद्रा खुलनेपर तत्क्षण नेत्र न खोले जावें उसे शुष्काक्षिपाक जानो।

१४ अन्यतोपाक लक्षण--दाढी, कान, भौं और आंखोंमें वातके कारणसे विशेष पीडा हो तो अन्यतोपाक जानो।

१५ अम्लाध्युषित लक्षण--खटाईके विशेष सेवनसे नेत्रोंका मध्यभाग और आसपास लाल होकर नेत्र पके जाते हैं उनमें दाह, शोथ और आंसुओंका बहाव हो तो अमलाध्युषित जानो। इसे लोकमें सबल-वात भी कहते हैं।

१६ शिरोत्पात लक्षण--पीडारहित या पीडासहित नेत्रोंकी नसें लाल होकर बारंबार रंग बदलती रहें उसे शिरोत्पातरोग जानो।

१७ शिरोहर्ष लक्षण—शिरोत्पातका उपाय न होनेसे नेत्रोंमेंसे ताम्रवर्ण आँसू बहें, नेत्र रूप देखनेको असमर्थ होजावें तो उसे शिरोहर्ष कहते हैं।

नेत्ररोगमुक्तलक्षण—जबतक नेत्रोंमे पीडा, ललाई, शोथ, खुजाल और वेदना बनी रहे, तबतक नेत्र रोगयुक्त जानो, परंतु पीडा, ललाई, शोथ, खुजाल वेदनारहित होकर नेत्र सुन्दर होजावें और संपूर्ण वस्तुओंका स्वरूप यथार्थ देख सकें तो जानो कि नेत्र रोगरहित होगये। इति नेत्ररोगनिदानम्।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे शिरोरोगनेत्ररोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरंगः ॥ ३८ ॥

अथ कर्णरोग--नासारोग

निदानं कर्णरोगस्य तथा नासासमस्य च ।
नंदरामे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि यथाक्रमम् ॥ १ ॥

कर्णरोग तथा नासारोगका इस ३९ उनचालीसवें तरंगमें यथाक्रमसे निदान कहते हैं ।

कर्णरोगनिदान- सुश्रुतमें १ कर्णशूल, २ कर्णनाद, ३ बाधिर्य, ४ कर्णक्ष्वेड, ५ कर्णस्राव, ६ कर्णकण्डू, ७ कर्णगूथ, ८ कर्णप्रतिनाह, ९ कृमिकर्ण, १० आगन्तुक कर्णव्रण, ११ दोषज कर्णव्रण, १२ कर्णपाक, १३ पूतिकर्ण, १४ वातकर्णशोथ, १५ पित्तकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ, १७ रक्तकर्णशोथ, १८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श, २१ रक्तकर्णार्श, २२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद, और २८ शिरकर्णार्बुद, ये अट्ठाईस कर्णरोग कहते हैं, परंतु कर्णपालीमें १ परिपाटक, २ उत्पादक, ३ उन्मंथ, ४ दुःखवर्द्धन और ५ परलेहिन ये पांच रोग विशेष होते हैं ।

१ कर्णशूल लक्षण--कानमें कुपित वायु प्रविष्ट हो शूल उत्पन्न करती है इसे कर्णशूल जानो ।

२ कर्णनाद लक्षण--कानमें वात प्राप्त होनेसे उस मनुष्यको भेरी, मृदंग और शंख आदि अनेक शब्द सुनाई पड़ते हैं इसे कर्णनाद रोग जानो ।

३ बाधिर्य लक्षण--शब्द ज्ञाता छिद्रमें कफयुक्त या केवल वायु प्रवेश होनेसे उस मनुष्यको शब्द सुनाई नहीं पड़ता, इसे बाधिर्यरोग कहते हैं. यह बहरेपनका रोग बाल या वृद्धावस्थामें होकर बहुत कालतक रहनेसे महा असाध्य हो जाता है, यत्नसे भी अच्छा नहीं होता ।

४ कर्णक्ष्वेड लक्षण--कानमें पित्त कफयुक्त वायु प्राप्त होके बांसुरीका शब्द करता है उसे कर्णक्ष्वेड कहते हैं ।

५ कर्णस्राव लक्षण--मस्तकमें चोट लगने या कानोंमें जल भर जानेसे तथा कर्णविद्रधि पकनेसे पीब बहा करती है, इसे कर्णस्राव कहते हैं ।

६ कर्णकण्डू लक्षण--कफयुक्त वायु कानमें प्राप्त होकर खाज उत्पन्न करता है उसे कर्णकण्डू कहते हैं।

७ कर्णगूथ लक्षण--पित्तकी उष्णतासे कानमें कफ सूखनेसे मैल अधिक निकले उसे कर्णगूथ जानो।

८ कर्णप्रतिनाह लक्षण--जब वही कर्णगूथ तलादिके योगसे पतला होकर नाकमें प्राप्त हो जाता है, तो उसे कर्णप्रतिनाह कहते हैं, इसीसे अर्धावभेद (आधाशीशी भी) उत्पन्न होती है।

९ कृमिकर्ण लक्षण--कानमें कीड़े पड़के या बुग, पतंग, कनखजूरा आदि प्रवेश होके जब फड़फड़ाते हैं तब अत्यंत वेदना, व्याकुलता और कुरकुराहट होती है और उनका फड़फड़ाना या चलना बन्द होनेपर पीडा न्यून होजाती है, उसे कृमिकर्ण रोग जानो।

१० आगंतुककर्णव्रण लक्षण--कानमें किसी प्रकारकी चोट आदि लगनेसे व्रण होकर रक्त, पीब आदि बहे उसे आगंतुक कर्णव्रण जानो।

११ दोषजकर्णव्रण लक्षण--कानमें वातादि दोषोंसे व्रण उत्पन्न होकर उससे रक्त, पीब आदि बहे तो दोषज कर्णव्रण जानो।

१२ कर्णपाक लक्षण- पित्तकोपसे कान पककर उससे गाढा पीब बहे तो उसे कर्णपाक जानो।

१३ पूतिकर्ण लक्षण--कान पककर गंध आवे या उससे दुर्गंधित पीब बहे तो उसे पूतिकर्ण रोग कहते हैं।

१४ वातकर्णशोथ, १५ पित्तकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ और १७ रक्तकर्णशोथ--इन चारोंके लक्षण सूजे हुए कानको देखकर पूर्वोक्त शोथ रोगके समान जानो।

१८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श और २१ रक्त-कर्णार्श इन चारोंके लक्षण--कानमें अर्श (मसा) देखकर पूर्वोक्त अर्श-रोगके समान जानो।

२२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद, और २८ शिराकर्णार्बुद, इन सातोंके लक्षण--कानमें गठान देखके पूर्वोक्त अर्बुदरोगके समान जान लो, ये समस्त २८ रोग कानके होते हैं।

कर्णपासी (कानकी लोलकके) रोगोंको लिखते हैं।

१ परिपाटक रोग लक्षण—कानकी कोमल लोलकके छिद्रको शीघ्र बढ़ानेसे वहां शोथ होकर चर्म छिल जाता है, तब वहाँ पीडा और कुछ श्यामतायुक्त होकर लाल रंग होता है, उसे परिपाटक जानो ।

२ उत्पातक लक्षण--लोलकके छिद्रमें भारी आभूषणके पहनने या किसी प्रकारके खिचावसे लोलकमें शोथ, दाह, पाक और पीडा उत्पन्न होती हैं, उसे उत्पातक कहते हैं ।

३ उन्मंथ लक्षण—बलात्कार (जबरी) से कान बढानेसे कफयुक्त कुपित वात वहाँ प्राप्त होकर शोथ और खाज उत्पन्न करती है, उसे उन्मंथ कहते हैं ।

४ दुःखवर्द्धन लक्षण--कानकी लोलक कर्णवेधके समय अनुचित छेदनेसे पककर पीडित हो, उसे दुःखवर्द्धन रोग कहते हैं ।

५ परिलेहिन लक्षण--कफ, रक्तके कोपसे लोलकपर सरसों समान फुन्सियां होकर खाज, दाह और पाक उत्पन्न कर देती हैं उसे परिलेहिन कहते हैं ।

नासारोग लक्षण--नाकमें १ पीनस, २ पूतिनस्य, ३ नासापाक, ४ पूयरक्त, ५ क्षवथु, ६ क्षवथुभ्रंश, ७ दीप्त, ८ प्रतिनाह, ९ प्रतिस्राव, १० नासाशोष, पांच प्रतिश्याय ॥ १५ सप्त नासार्बुद ॥ २२, चार नसार्श=२६, चार नासाशोथ=३०और चारनासा रक्तपित्त ये ३४ चौंतीस रोग होते हैं।

१ पीनस लक्षण--कफकोपसे नाकमें श्वास आकर नाक रुक जावे और रुककर धुवाँ निकलता रहे और नासाको सुगन्ध दुर्गंधका ज्ञान न हो उसे पीनसरोग कहते हैं ।

२ पूतिनस्य लक्षण--कफ, पित्त और रक्तके दग्ध होनेसे गले और तालुमें वायु बढ़कर मुख और नासिकासे दुर्गंधि निकलने लगती है, उसे पूतिनस्य कहते हैं ।

३ नासापाक लक्षण--नासास्थित पित्त दूषित होकर नाकमें फुन्सियां उत्पन्न करता है इसे नासापाकरोग कहते हैं।

४ पूयरक्तलक्षण—वातादि दोषके या ललाटकी चोटसे नासिकाद्वारा रक्तमिश्रित पीब बहा करती है उसे पूयरक्त कहते हैं।

५ क्षवथु लक्षण--कुपित पवन नाकके मर्मस्थानको दूषित कर कफ-युक्त होकर विशेष छींकें उत्पन्न करता है इसे क्षवथु (छींक) रोग कहते हैं।

और मिरची, राई, नास आदि तीक्ष्ण वस्तुओंके सूंघनेसे या सूर्यकी ओर देखनेसे या बत्ती, तृण आदि नाकमें चलानेसे जो छींकें आवें उसे आगंतुक क्षवथुरोग जानो, यह भी क्षवथुका ही एक विभेद है।

६ क्षवथुभ्रंश लक्षण--पित्तसे नाकका कफ दग्ध होकर छींकें नहीं आवें तो क्षवथुभ्रंश जानो।

७ दीप्तरोग लक्षण--पित्तकोपसे नाकमें दाह होकर धुवाँ निकला करे उसे दीप्तरोग कहते हैं।

८ प्रतिनाह लक्षण--वातयुक्त कफ नाकका छिद्र रोककर श्वास नहीं आने देता उसे प्रतिनाह जानो।

९ प्रतिस्राव लक्षण—नाकसे गाढा, पीला, या श्वेत कफ गिरे उसे प्रतिस्राव कहते हैं।

१० नासाशोष लक्षण—वात, पित्त और कफके कोपसे नाक सूखकर श्वास न आवें तो नासाशोष रोग जानो।

अथ प्रतिश्यायरोगोत्पति—पीनसरोग होनेपर यत्न न किया जावे तो उसके बढ़नेसे प्रतिश्याय रोग उत्पन्न होता है। यह १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, और ५ रक्तज होनेसे पाँच प्रकारका होता है।

प्रतिश्यायपूर्वरूप—छींकें आवें, मस्तक भारी हो जावे, रोमांचहो, जकड़ जावे इत्यादि उपद्रव हों तो जानो कि प्रतिश्याय उत्पन्न होगा।

१ वातजप्रतिश्याय लक्षण—नाक भरी रहकर थोडी थोडी बहे, तालु और ओष्ठ सूखकर कनपटीमें सुई कोंचने समान पीड़ा और स्वरभंग हो जावे तो वातजप्रतिश्याय जानो।

२ पित्तजप्रतिश्याय लक्षण—नाकसे तप्त और पीला कफगिरकर स्वरभंग होजावे, यह रोगी कृश, पाण्डुवर्ण, सन्तापयुक्त और उष्णतासे पीड़ित होकर उसके नाकसे धुआंसा निकले तो पित्तजप्रतिश्याय जानो।

३ कफजप्रतिश्याय लक्षण–नाकसे श्वेत ठंढा और बहुतसा कफ गिरकर नेत्रोंपर सूजनआजावे, मस्तक भारी, कंठ, तालु, ओष्ठोंमें खुजालहोकर मनुष्य श्वेतसा दृष्टिपड़े उसे कफजप्रतिश्यायजानो।

४ सन्निपातजप्रतिश्याय लक्षण–प्रतिश्याय होकर पक्का या कच्चाही मिटजावे तथा तीनों दोषोंके पूर्वोक्त लक्षण हों, तो सन्निपातजप्रतिश्याय जानो।

५ रक्तजप्रतिश्याय लक्षण–नासिकासे रक्त गिरे, नेत्र लाल हो जावें, श्वास और मुखमें दुर्गंधि आवे, सुगंधि दुर्गंधि ज्ञानहीन होजावे, छातीमें प्रहार करनेके सदृश पीडा हो तो रक्तजप्रतिश्यायरोग जानो।

दुष्टप्रतिश्याय लक्षण–बारबार नासिका बहे तथा सूखजावे और बन्द हो जावे, पुनः खुलजावे, श्वासमें दुर्गंधिआवे, गन्धज्ञान न हो तो दुष्टप्रतिश्याय जानो, यह कष्टसाध्य है।

असाध्यप्रतिश्याय लक्षण–आलस्य वश होकर प्रतिश्यायका यत्न न करे तो प्रतिश्याय मात्र असाध्य हो जाते हैं, विशेषतः–प्रतिश्यायसे नाकमें श्वेत चिकने और छोटे कृमि उत्पन्न होजावें तो शिरोरोग, वाधिर्य, नेत्ररोग, शोथ, अग्निमांद्य और कास ये रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं।

सात नासार्वुद २२ चार नासार्श २६, चार नासाशोथ ३० और चार नासारक्तपित्त ३४ इन उन्नेसोंके लक्षण इनके निदानोक्त जानो।

इति ३४ नासारोगनिदानम्

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे कर्णरोगनासारोगलक्षणनिरूपणं नामैकोनचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ३९ ॥

अथ मुखरोगोत्पत्ति

क्रमान्मुखामयानां हि दृष्ट्वा ग्रन्थाननेकशः।
वियद्वेदे तरंगेऽत्र निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

वैद्यकके अनेक ग्रन्थोंको देखके मुखरोगोंका निदान इस ४० चालीसवें तरंगमें यथाक्रमसे कहते हैंः—

अनूपदेशज जीवोंके मांसभक्षणसे, दूध, दही, उड़द आदिके अधिक सेवनसे दोष कुपित होकर मुखरोगको उत्पन्न करता है।

मुखके-१ ओष्ठ, २ मसूढे, ३ दांत, ४ जिह्वा, ५ तालु, ६ कण्ठ और कंठस्थानसे लेके समस्त मुख ये सात अंग हैं, इन सातों अंगोंमें ८ ओष्ठके, १६ मसूढोंके, ८ दांतोंके, ५ जिह्वाके, ९ तालुके, १८ कंठके, ३ सब मुखके ऐसे ६७ सरसठ रोग होते हैं, ओष्ठरोग-१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ५ रक्तज, मांसज, ७ मेदोज और ८ क्षतज ऐसे ८ प्रकारके ओष्ठरोग हैं।

१ वातजओष्ठरोग लक्षण-ओष्ठ कठिन, खरदरे, गाढ़े, काले, चिरे हुए और तीव्र वेदनायुक्तहों तो वातसे हुआ ओष्ठरोग जानो।

२ पित्तजओष्ठरोग लक्षण-ओष्ठोंमें फुन्सियां होकर टपकने लगे और उसमें चहुँओरसे पीड़ा, दाह, पाक होकर पीलीहोजावे तो पित्तसे ओष्ठरोग हुआ जानो।

३ कफज ओष्ठरोग लक्षण-ओष्ठ देहके वर्णसदृश होकर चूने लगें और उनमें पीडारहित फुन्सियां होकर खुजाल आवे, उसमेंसे ठंढा तथा गाढ़ा पीव निकले तो कफजन्य ओष्ठरोग जानो।

४ सन्निपातज ओष्ठरोग लक्षण-ओष्ठ कभी काले, कभी पीले और कभी श्वेत तथा फुन्सियोंसे पूरित रहें तो सन्निपातज ओष्ठरोग जानो।

५ रक्तजओष्ठरोग लक्षण-खजूरके फल समान फुन्सियां होकर लाल वर्ण और पीडायुक्त होजावें तो रक्तसे हुआ ओष्ठरोग जानो।

६ मांसजओष्ठरोग लक्षण-जो ओष्ठ भारी मांसके पिंडसमान ऊँचे होजावें और दोनों गलफरोंमें कीड़े उत्पन्न होकर निकलें तो मांससे हुआ ओष्ठरोग जानो।

७ मेदोजओष्ठरोग लक्षण-ओष्ठ घी या मांड (चावलोंका उबाला हुआ पानी) के समान दीखे, खाजयुक्तभारी रहें, स्वच्छस्फटिकमणि सदृश जलभरे और ओष्ठव्रण कठोर होकर अच्छे न हों ये लक्षण हों तो मेदसे ओष्ठरोग हुआ जानो।

८ क्षतजओष्ठरोग लक्षण-चोट आदिके लगनेसे ओष्ठ चिरने या फटनेसे उनमें गठान होकर खुजाल और आर्द्र (गीले) रहें तो चोट लगनेसे हुआ ओष्ठरोगजानो, इति ओष्ठरोगाः।

दन्तमूल (मसूढोंके) रोग

मसूढोंमें–१ शीतोद, २ दन्तपुप्पुट, ३ दंतवेष्ट, ४ सौषिर, ५ महासौषिर; ६ परिदर, ७ उपकुश, ८ वैदर्भ ९ खलिवर्द्धन, १० अधिमांस, ११ वातनाडीराह, १२ पित्तनाडीराह, १३ कफनाडीराह, १४ सन्निपातनाड़ीराह, १५ क्षतजनाड़ीराह, और १६ दंतविद्रधि ये सोलह रोग दांतोंके मसूढोंमें होते हैं।

१ शीतोद लक्षण–मसूढोंमें निष्कारण ही दुर्गंधित काला रक्त निकलने लगे, मसूढ़े कोमल होकर सड़ने लगें और एकके लगनेसे दूसरा सड़ने लगे तो शीतोदरोग जानो।

२ दंतपुप्पुट लक्षण- कफ, रक्तसे दो या तीन दांतोंमें बहुत सूजन हो जावे उसे दंतपुप्पुट जानो।

३ दंतवेष्ट लक्षण--मसूढ़ोंसे रक्तयुक्त पीब निकलकर हिलने लगें उसे दंतवेष्ट जानो।

४ सौषिर लक्षण--कफ, रक्तविकारसे दाँतोंकी जड़ोंमें वेदना सहित शोथ होकर लार गिरे तो सौषिर रोग जानो।

५ महासौषिर लक्षण -त्रिदोषसे दांत मसूढोंको छोड़ देवें,तालुमें छिद्र पड़ जावे, उसे महासौषिर जानो।

६ परिदर लक्षण--पित्त, रक्त, या कफके कारणसे मसूढे बिखर जावें, पर रक्त न निकले उसे परिदर जानो।

७ उपकुश लक्षण- पित्तरक्तसे मसूढोंमें दाह, पाक होकर दांत हिलने लगे, परस्पर दबानेसे रक्त गिरकर मसूढे पुनः फूलजावे, वेदना अल्प हो परंतु मुखसे दुर्गंध आने लगे तो उपकुश जानो।

८ वैदर्भलक्षण--मसूढोंमें किसी प्रकारकी चोट लगनेसे या दतोंन आदिकी रगडसे सूजकर दांत हिलने लगें उसे वैदर्भरोग कहते हैं।

९ खलिवर्द्धन लक्षण--वातप्रकोपसे मसूढ़ोंमें दांत बढ़कर विशेष पीडा करता है उसे खलिवर्द्धन जानो।

१० अधिमांस लक्षण--कफसे नीचेकी दाढ़के अंतमें विशेष सूजन और पीडा होकर मुखसे लार गिरे तो अधिमांसरोग जानो।

११ वातनाड़ीराह १२ पित्तनाड़ीराह १३ कफनाड़ीराह १४ सन्निपातनाड़ीराह और १५ क्षतजनाडीराह--इन रोगोंमें मसूढोंमें नासूर पड जाते हैं इस लिये इनके लक्षण पूर्वोक्त नाडीव्रणके सदृश जानो।

१६ दंतविद्रधि लक्षण-मसूढोंमें पीवयुक्त रक्त बहकर कुछ सूजन, दाह और पीड़ा होवे उसे दंतविद्रधि जानो।

दंतरोग-दाँतोमें १ दालन, २ कृमिदंत, ३ भंजन, ४ दंतहर्ष, ५ दंतशर्करा, ६ कपाली, ७ श्यावंदत और ८ कराल ये आठ रोग होते हैं,

१ दालन लक्षण--बादीसे दांतोंमें टूटनेके सदृश पीडा हो तो दालन-रोग जानो।

कृमिदंत लक्षण-वातकोपसे दांतोंमें काले छिद्र पड़कर हिलने लगें, शोथ होकर उनमेंसे रुधिर बहे और विनाकारण ही पीडा हो तो कृमिदंतरोग जानो।

३ भंजन लक्षण-वातकफसे मुख टेढ़ा होकर दांत टूट जावें उसे भंजनरोग जानो।

४ दंतहर्ष लक्षण-वातकोपसे दांतको शीतल जल, खारी वस्तु शीतल पवन, खटाई आदिका स्पर्श न सहसके उसे दंतहर्ष कहते हैं।

५ दंतशर्करा लक्षण--वातपित्तके कारणसे दांतोंका मैल सूख कर बालूके समान खरखराने लगे तो दंतशर्करा रोग जानो।

६ कपालिका लक्षण--शर्करारोगमें मैलयुक्त दाँत ठिकरेके समान फूटने लगें तो कपालिकारोग जानो।

७ श्यावदंतलक्षण-रक्तमिश्रित पित्तसे दांत जलकर पीले या काले, या नीले हो जावें तो उसे श्यावदंत रोग कहते हैं।

८ कराल लक्षण--वात दांतोंको धीरे धीरे भयंकर कुडौल ऊँचे नीचे कर दे तो कराल रोग जानो। यह असाध्य होता है।

विशेषतःग्रन्थान्तरसे हनुमोक्षरोगको लिखते हैं।

कुपितवात--दाढ या दांतोंमें प्रविष्ट होकर पीड़ा करे और अर्दितरोग के भी लक्षण मिलें तो हनुमोक्ष रोग जानो।

जिह्वरोग-जिह्वामें १ वातज जिह्वारोग, २ पित्तज जिह्वारोग, ३ कफज जिह्वारोग, ४ अलास और ५ उपजिह्वा ये पांच रोग होते हैं।

१ वातजजिह्वारोग लक्षण-जिह्वा फटकर सूज जावें, हरी होकर काँटे पड़ जावें और स्वादका ज्ञान न रहे तो वातज जिह्वा-रोग जानो।

२ पित्तज जिह्वारोग लक्षण–जीभमें दाह, काँटे होकर लाल वर्ण हो-जावें तो पित्तजजिह्वारोग जानो।

३ कफजजिह्वारोग लक्षण–जीभ भारी और मोटी होकर श्वेत काँटे पड़ जावें तो कफज जिह्वारोग जानो।

४ अलास लक्षण–जिह्वाके नीचे विशेष शोथ और पाक होकर जीभ और दाढी अकड जावे इसे अलास जानो।

५ उपजिह्वा लक्षण––जीभके अग्रभागपर शोथ होकर दूसरी जीभके समान जान पडे और लार, खाज, दाहयुक्त हो तो उप-जिह्वारोग जानो।

इति जिह्वारोग

तालुरोग–तालुमें १ गलसुंडी, २ तुंडकेशरी, ३ ध्रुव, ४ कच्छप, ५ तालवर्बुद, ६ मांससंघात, ७ तालपुप्पुट, ८ तालुशोष और ९ तालुपाक ये नौ रोग होते हैं।

१ गलसुंडी ल०––कफरक्तके कोपसे तालुकी जड़से शोथ बढकर फूली हुई भाथीके समान हो जावे और तृषा, श्वास कास उत्पन्न करे तो गलसुंडी जानो।

२ तुंडकेशरी लक्षण––जो कफ लोहीसे तालुकी जड़से उत्पन्न हुआ शोथ दाह, पीडा और पाकको उत्पन्न करता है उसे तुंड केशरी रोग जानो।

३ ध्रुवलक्षण–तालुमें लाल शोथ होकर ज्वर उत्पन्न करे उसे ध्रुवरोग जानो।

४ कच्छप रोग लक्षण–कफके कारणसे तालुमें कछुएके आकारकी वेदनारहित शोथ हो उसे कच्छपरोग जानो।

५ तालवर्बुदलक्षण–तालुमें कमलाकार बड़ा अंकुर हो जावे उसे तालवर्बुद जानो।

६ मांससंघात लक्षण–तालुमें पीड़ारहित विकारी मांस बढ़े उसे मांससंघातरोग जानो।

७ तालुपुप्पुट लक्षण–तालुमें पीडारहित बेरके समान शोथ होजावे उसे तालुपुप्पुट रोग जानो।

८ तालुशोषल०–तालु सूखकर फूट जावे और श्वास चढे तो तालु-शोष जानो।

९ तालुपाकल०--गर्मीसे तालु विशेष पक जाता है उसे तालुपाकरोग जानो।

इति तालुरोगाः

कंठरोग--कंठमें १ वातजारोहिणी, २ पित्तजारोहिणी; ३ कफजारोहिणी, ४ सन्निपातजारोहिणी, ५ रक्तजारोहिणी, ६ कंठशालुक, ७ अधिजिह्वा, ८ वलय, ९ बलास १० एकवृंद, ११ वृंद, १२ शतघ्नी १३ गिलायु १४ गलविद्रधि १५ गलौघ, १६ स्वरघ्न १७ मांसतान और १८ विदारी ये अठारह रोग होते हैं।

१ वातजारोहिणी लक्षण--सब जिह्वामें विशेष पीड़ा होकर मांसांकुर निकल आवें इस कारणसे कंठ रुककर वातके समस्त उपद्रव हों तो वातजारोहिणी जानो।

२ पित्तजारोहिणी लक्षण--जिसका गला पककर दाह और ज्वरयुक्त हो तो पित्तजारोहिणी जानो।

३ कफजारोहिणी लक्षण--जो कंठको रोककर गलेमें अचलांकुरयुक्त धीरे धीरे पकनेवाली फुन्सी हो उसे कफजारोहिणी जानो।

४ सन्निपातजारोहिणी लक्षण--गलेके भीतर ही भीतर पकनेवाली और उक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त ग्रंथि हो तो सन्निपातजारोहिणी जानो, यह असाध्य होती है।

५ रक्तजारोहिणी लक्षण--जो गलेमें शीघ्रपाकी छोटे छोटे फोड हों और पित्तजारोहिणीके भी लक्षण दृष्टि पडें तो रक्तजा रोहिणी जानो।

६ कंठशालूक लक्षण--कफसे गलेमें जंगली बेरकी गुठली समान खरखरी, अचल, कांटेसी गड़नेवाली गठान हो उसे कंठशालूरोग जानो।

७ अधिजिह्वा लक्षण--रक्तमिश्रित जिह्वापर जिह्वाकी अनीसमान सूजन उत्पन्न हो उसे अधिजिह्वा कहते हैं, यदियह सूजन पक जावे तो अच्छा होना ईश्वराधीन है।

८ वलय लक्षण--कंठमें रहनेवाला कफ लंबी, चौड़ी, ऊंची अन्नजल जानेके मार्गको रोकनेवाली गठान उत्पन्न करता है उसे वलयरोग कहते हैं।

९ बलासरोग लक्षण--वर्द्धित कफ और वायु गलेमें श्वास तथा पीडायुक्त सूजन उत्पन्न करते हैं उसे बलास कहते हैं यह मर्मस्थानको छेदनेवाला कठिन रोग होता है।

१० एकवृन्द लक्षण--कफ और रक्तके कोपसे गलेमें गोल, ऊंचे किनारोंकी, दाह तथा खुजालयुक्त, पकनेवाली कठिन ऐसी एक सूजन उत्पन्न होती है इसे एकवृन्दरोग कहते हैं।

११ वृन्दरोग लक्षण-पित्तरक्तके कोपसे गलेमें ऊंचा अतिदाह तथा ज्वर युक्त पीडारहित सूजन उत्पन्न हो उसे वृन्दरोग कहते हैं, यदि इसमें सुई चुभानेके समान पीडा हो तो वातज जानो।

१२ शतघ्नीरोग लक्षण--त्रिदोषसे गलेमें बत्तीके समान, कंठ रोकनेवाली, मांसके अंकुरोंसे घिरी हुई, कठिन, अनेक प्रकारकी पीड़ा देनेवाली, जो सूजन हो उसे शतघ्नी कहते हैं, यह प्राणहारिणी होती है।

१३ गिलायुरोग लक्षण--कफ और रुधिरसे गलेमें आंवलेकी गुठली समान, अचल, अल्पपीडायुक्त एक गठान होती है जिससे गलेमें कुछ अटकासा जान पड़ता है, ये लक्षण हों तो गिलायु रोग जानो।

१४ गलविद्रधिल० -गलेमें त्रिदोषसे सब प्रकारकी पीडा करनेवाली शोथ हो उसे गलविद्रधि कहते हैं, इसके सब लक्षण त्रिदोषविद्रधिके समान होते हैं।

१५ गलौघ लक्षण--कफ, रक्तसे गलेमें अग्नि, जल और श्वासको भी रोकनेवाला तीव्र ज्वरयुक्त बड़ा शोथ (सूजन) हो उसे गलौघ रोग कहते हैं।

१६ स्वरघ्नरोग लक्षण--गलेमें वायु (हवा) के निकलनेका मार्ग कफसे रुक गला घरघराने लगे और श्वास लेनेमें भी क्लेश हो उसे स्वरघ्नरोग जानो।

१७ मांसतानरोग ल०--त्रिदोषसे सब गलेमें फैलनेवाला अतिकष्ट-कारक, लटकता हुआ शोथ होकर गलेको रोक लेता है उसे मांसतान कहते हैं।

१८ विदारी लक्षण--पित्तसे गलेके भीतर दाह, तीव्र वेदनायुक्त (सूजन) होकर दुर्गंधियुक्त मांसको गला गलाकर गिराता है, जिससे रोगी किसी करवटपर ही सोते रहता है, उसे विदारीरोग कहते हैं।

इति कंठरोगाः

सर्वमुखरोग--सब मुखके भीतर १ वातजसर्वसर, २ पित्तजसर्वसर और ३ कफजसर्वसर ये तीन रोग होते हैं।

१ वातजसर्वसर लक्षण--मुखमें सुई कोचनेकीसी पीडायुक्त छाले सब मुखभरमें हो जावें उसे वातज सर्वसर जानो।

२ पितजसर्वसर लक्षण--पीले तथा लालवर्णवाले दाहयुक्त छाले सब मुखभरमें हो जावें तो पित्तज सर्वसर रोग जानो।

३ कफजसर्वसर ल०--पीडारहित, खुजाल सहित, चर्मके वर्णसमान वर्णवाले छालोंसे मुख भर जावे तो कफज सर्वसररोग जानो, इस प्रकार सब ६७ मुखरोग हैं, मुखरोग असाध्य लक्षण--ओष्ठ रोगोंमें १ मांसज, २ रक्तज और ३ त्रिदोषज, दंतमूलरोगोंमें—१ सन्निपात, २ नाडीव्रण और ३ सौषिर, दंतरोगोंमें—१ श्यावदंत, २ दालन और ३ भंजन, जिह्वारोगोंमें--१ बलास, तालुरोगमें--१अर्बुद, गलरोगोंमें--१ स्वरघ्न, २ वलय, ३ वृन्द, ४ बलास, ५ विदारी, ६ गलौघ, ७ मांसतान, ८ शतघ्नी और ९ रोहिणी ये रोग असाध्य हैं, इनपर चिकित्सा करो तो भी प्रथम कहदो कि ये रोग अच्छे न होंगे, इति मुखरोगनिदानम्।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे मुखरोगलक्षण निरूपणं नाम चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४० ॥

स्त्रीरोगनिदानम्

अथात्र प्रदरादीनां स्त्रीरोगाणां यथाक्रमम्।
विधुवेदे तरंगे वै निदानं कथ्यते मया ॥१॥

अब हम इस इकतालीसवें तरंगमें स्त्रियोंके प्रदर आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे कहते हैं।

प्रदररोगोत्पत्ति--भोजनपर भोजन, अति मैथुन, अति शोक, अति सवारी (बाहनारोहण), लंघन, उपवास, भार उठाना, दिनको सोना इन कार्योंके विशेष करनेसे और गर्भपात तथा चोट लगनेसे स्त्रियोंके १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, और ४ सन्निपातज ऐसे चार प्रकारका प्रदररोग होता है।

प्रदरसामान्य लक्षण--योनिसे बिना मासिकधर्मही नानाप्रकार का रुधिर (लोहू) निकले और उसके निकलनेसे हड़फूटन पीड़ा हो तो प्रदररोग जानो।

१ वातजप्रदर लक्षण—योनिसे रूखा, फेनयुक्त, मांसके धोवन सदृश रक्तबहे तो उसे वातज प्रदररोग जानो।

२ पित्तजप्रदर लक्षण–योनिसे उष्ण, लाल, पीला या नीला तथा काले वर्णका शरीरमें दाह तथा पित्तजन्य व्याधिकारक अधिक लोहू बहे तो पित्तजप्रदर जानो।

३ कफजप्रदर लक्षण--योनिसे आंवके, या चावलोंके मांडके तथा कुदई तथा सांठी चावलोंके धोवन सदृश पांडु वर्णवाला रुधिर बहे तो कफजप्रदर जानो।

४ सन्निपातजप्रदर लक्षण–योनिसे मधु या घी या मज्जा (चर्बी) के समान दुर्गंधित हरतालसदृश वर्णवाला लोहू बहे तो सन्निपातज प्रदर जानो यह असाध्य है।

प्रदरके उपद्रव—प्रदररोगयुक्त स्त्रीको दुर्बलता, थकवाय, मूर्छा तृषा, दाह, प्रलाप, देहका वर्णपीला, तंद्रा और वातरोग हो तो निश्चय करो कि अब प्रदरका अतिवेग है।

प्रदरके असाध्य लक्षण–योनिसे निरन्तर रुधिर बहता ही रहे और उक्त उपद्रवसहित हो तो असाध्य जानो। इसका अच्छा होना कठिन है।

शुद्धार्त्तव लक्षण--योनिसे यथार्थ मासानुमास, चिकनाई, जलन और पीड़ारहित; न थोड़ा न बहुत, किंतु यथायोग्य लोहू बहता हुआ पांचदिन तक दृष्टि पड़े तो शुद्धार्तव (रोगरहित शुद्ध रज) जानो। तथा योनिसे शशा (खरगोश) के रक्त समान या लाखके रसके समान वर्णवाला जो कि पानीसे धोनेपर कपड़ेसे निकल जावे, जिसका चिह्न (दाग) कुछभी न रहे ऐसा दाहरहित लोहू प्रथम कथित नियत दिनोंतक बहे तो अति शुद्ध रज विकाररहित जानो। इति प्रदररोग।

अथ सोमरोग

सोमरोगोत्पत्ति कारण–अति मैथुन, अति शोक, अति श्रम, अति रेचक सेवनसे, गर (कृतिम विष) के संयोगसे सब शरीर का जल क्षुभित होकर योनिद्वारसे बहने लगता है जिससे स्त्री बारंबार अत्यन्त मूतने लगती है, इसे सोमरोग कहते हैं।

सोमरोग लक्षण–योनिसे स्वच्छ, निर्मल, ठंढा, निर्गंध, पीड़ा रहित और श्वेतमूत्र बारबार उतरे जिससे वह स्त्री सर्वदा सुखहीन, दुर्बल,

१ सोमरोग पुरुषकेभी होजाताहै जिसे रत्नावली ग्रन्थमें बहुमूत्र तथा मूत्रातिसारभीमाना है।

मस्तक शिथिल, मुख तालुका सूखना, मूर्च्छा, जमुहाई, प्रलाप (बड़बड़ाना), त्वचा रूखी तथा भक्ष्य भोज्य और जलपानसे अतृप्ति इन लक्षणों युक्त होजाती है, ये लक्षण दृष्टि पड़ें तो सोमरोग जानो, शरीरस्थ जलने शरीरको धारण कर रक्खा है इसलिये उस जलकी सोमसंज्ञा है, उसके क्षीणहोनेसे स्त्रियोंके सोमरोग होता है।

मिथ्या आहार विहार करनेसे वात, पित्त कफ कुपित होकर स्त्रियोंकी योनिमें २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं, उन रोगोंसे युक्त होनेसे यह योनि १ उदावृत्ता २ वन्ध्या, ३ विप्लुता, ४ परिप्लुता, ५ वातला; ६ लोहितक्षरा, ७ दुष्प्रजाविनी, ८ वामिनी, ९ पुत्रघ्नी, १० पित्तला, ११ अत्यानंदा, १२ कर्णिनी, १३ चरणा, १४ अतिचरणा, १५ श्लेष्मला, १६ स्तनी, १७ षंडी, १८ अंडिनी, १९ विवृता और २० सूचीवक्त्रा कहलाती हैं।

१ उदावृत्तायोनि लक्षण--जिस योनिसे रजोधर्मके समय अतिकष्टसे झाग (फेन) युक्त रुधिर निकले उसे उदावृत्ता योनि जानो।

२ वंध्यायोनि लक्षण--जिस योनिसे महीनेके महीने रुधिर न बहे (रजोधर्म न हो) तो उसे वंध्यायोनि जानो। वंध्यायोनिवाली स्त्रीके बालक न होनेसे वह स्त्री भी वंध्या (बांझ) कहलाती है।

३ विप्लुतायोनि लक्षण--जिस योनिमें नित्य ही पीडा होती रहे, उसे विप्लुतायोनि जानो।

४ परिप्लुतायोनि लक्षण--जिस योनिमें मासिक रज (लोहू) बहते समय अत्यंत पीडा हो उसे परिप्लुता योनि जानो।

५ वातलायोनि लक्षण--जो योनि कठोरहो और उसमें शूल चले तो वातलायोनि जानो ये पांचों योनिरोग दूषित बादीसे होते हैं।

६ लोहितक्षरायोनि लक्षण जिस योनिसे दाहयुक्त रुधिर निकलता रहे उसे लोहितक्षरा योनि जानो।

७ दुष्प्रजाविनीयोनि लक्षण-जो योनि झरती, रहे और मैथुनके समय अतिघर्षण होनेसे बाहरको निकल आवे वह दुष्प्रजाविनीयोनि कहलाती है। इस योनिवाली स्त्रीको संतान होनेमें बड़ा कष्ट होता है, इसे प्रस्रविणीयोनि भी कहते हैं।

८ वामिनीयोनि लक्षण-जिस योनिसे पवन और रुधिर युक्त वीर्य निकले इसे वामिनीयोनि जानो।

९ पुत्रघ्नीयोनि लक्षण–जो योनि रक्तक्षयसे रहे गर्भको गिरा देती है वह पुत्रघ्नीयोनि कहलाती है ।

१० पित्तलायोनि लक्षण -जो योनि दाहयुक्त होकर पक जावे और शरीरमें ज्वर उत्पन्न कर दे उसे पित्तलायोनि कहते हैं । ये पांचों योनि-रोग दूषित पित्तसे होते हैं।

११ अत्यानन्दा योनि लक्षण--जो योनि अत्यन्त मैथुनसे भी सन्तुष्ट न हो उसे अत्यानन्दा जानो ।

१२ कर्णिनीयोनि लक्षण--जिस योनिमें कमल (योनिफूल) के चारों ओर कर्णफूलके समान मांसकी ककनी किनारी सी बन जावे उसे कर्णिनीयोनि जानो ।

१३ चरणायोनि लक्षण–जो योनि मैथुन करनेमें पुरुषसे पहिले ही स्खलित हो जाती है वह चरणायोनि कहलाती है ।

१४ अतिचरणायोनि लक्षण–जो योनि अत्यंत मैथुन करनेपर भी पुरुषसे पीछे खलास (स्खलित) हो वह अतिचरणायोनि कह-लाती है।

१५ श्लेष्मलायोनि लक्षण–जो योनि अति चिकनी, खुजालयुक्त और ठंढी रहे उसे श्लेष्मला योनि जानो, ये पांचों योनिरोग दूषित कफसे होते हैं।

१६ स्तनीयोनि लक्षण–जो स्त्री रजस्वला न हो और स्तन छोटे छोटे होवें इसे स्तनी योनि जानो, बहुतसी स्त्रियोंको मासिकधर्म होकर भी स्तनीयोनि रोगसे छोटे ही स्तन रह जाते है।

१७ षंडीयोनि लक्षण--जो योनि मैथुन करनेमें खरखरी मालूम हो इसे षंडीयोनि जानो।

१८ अंडिनीयोनि लक्षण--छोटी अवस्थावाली स्त्रीकी योनिमें बड़े लिंगवाले पुरुषके संगसे जो योनि अंडके समान लटकआवे उसे अंडिनीयोनि जानो ।

१९ विवृतायोनि लक्षण--जो योनि बड़ी हो और फैली रहे उसे विवृता या महती योनि जानो ।

२० सूचिवाक्त्रयोनि लक्षण--जिस योनिका बारीक छेद हो उसे सूची-वक्त्रायोनि जानो, इति स्त्रीयोनिरोगाः

योनिकन्दरोगोत्पत्ति--दिनको अति शयन, अतिक्रोध, अतिश्रम, अति मैथुन इनके करनेसे तथा योनिमें नख दंत आदिके लगनेसे वातादिदोष कुपित होकर योनिकन्द रोगको उत्पन्न करते हैं।

योनिकन्दरोग स्वरूप- योनिमें रुधिरयुक्त, पीववाली, गूलरके फल-समान एक गठान उत्पन्न होती है उसे योनिकन्द कहते हैं, यह रोग १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ऐसे चार प्रकारका है।

१ वातजयोनिकन्द लक्षण -योनिमें रूखी, विवर्ण (फूटी फटीसी) जो गठान हो तो उसे वातजयोनिकन्दरोग जानो।

२ पित्तजयोनिकन्दरोग लक्षण--योनिमें दाह, ललाई और ज्वरयुक्त जो गठान हो तो उसे पित्तजयोनिकन्दरोग जानो।

३ कफजयोनिकन्द लक्षण--योनिमें अलसीके नीले पुष्पसमान खुजालयुक्त जो गठान हो उसे कफजयोनिकंदरोग जानो।

४ सन्निपातजयोनिकन्द लक्षण--योनिमें उक्त तीनों दोषोंके लक्षण युक्त गठान हो तो सन्निपातज योनिकन्द रोग जानो, इस रोगवाली स्त्रीका भी रजोधर्म बन्द हो जानेसे वह वन्ध्या (बांझ) होजाती है, इति योनिकंदरोगनिदानम्।

अथ गर्भस्राव तथा गर्भपातरोगोत्पत्ति

अति मैथुन, मार्ग गमन, सवारीपर चढ़ना, दौड़ना, उपवास, अजीर्णपर भोजन करनेसे, वमन या विरेचनके लेनेसे, ज्वरके आने तथा उदर-पीड़ासे तथा तीक्ष्ण, कटु, उष्ण, रूखी, विषसमान वस्तुओंके भक्षण और भय इन कारणोंसे पेटमें शूल चलकर स्त्रीका गर्भपात होता है।

गर्भस्राव तथा गर्भपात लक्षण--गर्भ रहनेके दिनसे चार मास पर्यंतका गर्भ गिरनेको गर्भस्राव कहते हैं १ और चार मास उपरांत पांचवें तथा छठे महीनेमें गर्भ गिरे तो गर्भपात कहलाता है २ जैसे वृक्षके लगे हुए कच्चे या पक्के फल हवाके वेगसे या वृक्षके हिलानेसे अपने गिरनेके समयसे पूर्व ही तत्क्षण गिर पड़ते हैं उसी प्रकार उक्त कारणोंसे गर्भ भी उत्पन्न होनेके समयसे पूर्व ही गिर पड़ता है इसलिये स्त्रियोंको चाहिये कि उक्त मिथ्या आहार विहार न करें। इति गर्भस्रावगर्भपातनिदानम्।

शुष्कगर्भ लक्षण--जिस स्त्रीका उदर पूर्ण दृष्टि न पड़े तो जानो कि, इसका गर्भ वायुसे सूख गया।

मूढगर्भरोगोत्पत्ति- अपने कारणोंसे कुपित वायु गर्भाशयमें रुककर गर्भकी गतिको रोकता है उसेमूढ गर्भ कहते हैं, इससे योनि, पेट, कमर आदिमें शूल और मूत्र भी रुक जाता है, तब वह गर्भ दूषित वायुसे टेढा होकर योनिसे निकलनेके समय योनिद्वारको १ मस्तकसे, या २ पांवसे या ३ शरीरके कुबडेपनसे तथा ४ एक हाथसे या ५ दोनों हाथोंसे तथा ६ टेढे होनेसे ७ नीचेको मुख होनेसे और ८ पसुरियोंके टेढे होनेसे ऐसी अपनी आठ प्रकारकी गतिसे रोकता है, इस मूढगर्भकी इन उक्त गतियोंसे व्यतिरिक्त १ कीलक, २ प्रतिखुर, ३ परिघ और ४ बीजक, ये चार गति और होनेसे इन नामोंयुक्त मूढगर्भ कहलाता है।

१ कीलकमूढगर्भ लक्षण--जो हाथ पांव ऊँचे करके मस्तकसे योनिमुखको कीलसदृश रोक लेता है वह कीलक मूढगर्भ कहलाता है।

२ प्रतिखुरमूढगर्भ लक्षण--जो दोनों हाथ पांव बाहर निकालकर कर मध्य शिरसे योनिमुखपर रुक जाता है वह प्रतिखुर-मूढगर्भ कहलाता है।

३ परिघमूढगर्भ लक्षण-जो द्वार (दरवाजे) की अर्गलाके समान आडा होकर योनिद्वारपर अड जाता है वह परिघमूढ़गर्भ कहलाता है।

४ बीजकमूढ़गर्भ लक्षण-जो दोनों भुजाओंके मध्यमें मस्तक रखकर योनिमुखपर अड जाता है वह बीजकमूढ़गर्भ कहलाता है।

मूढगर्भअसाध्य लक्षण-जिस गर्भिणीका मस्तक झुका, शरीर ठण्ढा, लज्जाका अभाव और कुक्षि (कूख) की नसें नीली होगई हों तो जान लो कि, इसके गर्भका बालक और ये दोनों नष्ट हो जावेंगे।

गर्भमें बालकके मर जानेके लक्षण-पेटमें बालक हिलना, चलना, प्रसूतिकालके चिह्नके जैसे बारंबार योनिसे मूत्रादिका स्राव तथा पीडोंका चलना ये न हों, गर्भिणीके शरीरका वर्णकाला, पीला या पाण्डु हो जावे और उसके मुखकी श्वासमें मुर्देकीसी दुर्गंध आवे तथा पेटमें शूल चले तो जान लो कि उसके गर्भमें बालक मर गया।

गर्भमें बालक मरनेके कारण-माताको बन्धु धनादिके नाश तथा वियोगजन्य मानसी दुःख होनेसे या चोट लगने सम्बन्धी आग-

न्तुक दुःख होनेसे या रोगोंसे गर्भ पीडित होकर वह बालक कूखमें मर जाता है।

गर्भिणीके असाध्य लक्षण–कूखमें गर्भका चिपटना, योनिसंवरण-रोग, मक्कलरोग और श्वासादि उपद्रवयुक्त मूढ़गर्भ ये सब स्त्रियोंके नाश करनेवाले हैं।

१ योनिसंवरणरोग लक्षण–वातल अन्नपान, मैथुन, रात्रिजागरणादिके करनेसे गर्भिणी स्त्रीका योनिनिवासी वायु कुपित होके योनिमार्गको संकुचित कर देता है और ऊर्ध्वगतिसे कोठमें जाके गर्भको पीडित करता हुआ गर्भाशयका द्वार रोक लेता है, तब गर्भका मुख बन्द होनेसे श्वास रुकके वह बालक मर जाता है, पेटमें उस मृत बालकके फूलनेसे गर्भिणीके सब मार्ग रुकनेसे उसका हृदय रुककर वह मर जाती है, इसे योनिसंवरणरोग जानो, किसी ग्रन्थमें लिखा है कि यह मृत्युरूप रोग है।

२ मक्कलरोग लक्षण–प्रसूता स्त्रीके मिथ्या आहार विहारसे वायु कुपित होकर गर्भाशयसे निकले हुए रुधिरको रोकके उसके हृदय, मस्तक और पेडूमें शूल उत्पन्न करता है, इसे मक्कलरोग कहते हैं, इति मूढगर्भनिदानम्।

अथ सूतिकारोगोत्पत्ति

मिथ्या आहार विहारसे; क्लेशसे; विषमासनसे और अजीर्णमें भोजन करनेसे प्रसूता स्त्री (जिसके बालक उत्पन्न होगया हो उस स्त्री) को प्रसूति रोग उत्पन्न होता है, जिसे लोकमें जापेका तथा प्रसूतिकारोग भी कहते हैं।

सूतिकारोगलक्षण–प्रसूता स्त्रीके अंगका टूटना, ज्वर, शरीरका काँपना, तृषा, जडता, सूजन, पेटमें शूल, खाँसी और अतिसार ये लक्षण हों तो जानलो कि इसे सूतिकारोग होगया।

विशेषतः–पेटका अफरना, तन्द्रा, बलनाश, अन्नपर अरुचि, पसीनेका छूटना ये तथा सूतिकारोगोक्त ज्वरादि और कफ वात सम्बन्धी रोग, मांस जठराग्नि और बलके नाश होनेसे कष्टसाध्य ही होजाते हैं, इसी लिये इनको सूतिकाके उपद्रव भी कहते हैं। इति सूतिकारोगनिदानम्।

स्तनरोगोत्पत्ति–दुग्धयुक्त या दुग्धरहित स्त्रीके स्तनोंमें स्वकारणोंसे कुपित वायु, पित्त और कफ प्राप्त हो मांसको दूषित करके १ वातज,

२ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ आगंतुक ऐसे पांच ग्रंथिरूप स्तनरोग उत्पन्न करते हैं, इन पाचोंके लक्षण रक्तविद्रधिके बिना बाह्य-विद्रधियोंके समान जानो, इति स्तनरोगाः ।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे स्त्रीरोगलक्षणनिरूपणं
नामैकचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४१ ॥

अथ बालरोग-मंथज्वर

हेतुः कुमाररोगाणां तथा मंथज्वरस्य च ।
नेत्रवेदे तरंगेऽस्मिन्कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

अब हम इस ४२ बयालीसवें तरङ्ग बालरोग और मंथज्वर (मोती-बरे पानीझरे) का निदान क्रमसे कहते हैं ।

बालरोगोत्पत्ति–धात्री (धाय, दूध पिलानेवाली माता या कोई अन्य स्त्री) के गरिष्ठादि मिथ्या आहार, विहारसे वातादि दोष कुपित होकर दूधको बिगाड देते हैं तब उस दूधसे बालकको अनेक रोग उत्पन्न होते हैं; जिनमें वातदूषित दुग्धपानसे वातरोग, पित्त दूषित दुग्ध-पानसे पित्तरोग और कफदूषित दुग्धपानसे कफरोग होता है ।

अथ दुग्धपरीक्षा

१ वातदूषित दुग्ध लक्षण–जो दूध स्वादमें कसैला और पानी पर तिरजावे उसे वातदूषित दुग्ध जानो ।

२ पित्तदूषित लक्षण–जो दुध कडुआ, खट्टा, सलोना और पीली रेखाओंसे युक्त हो उसे पित्तदूषित दुग्ध जानो ।

३ कफदूषित दुग्ध लक्षण–जो दुग्ध चिकना और भारी (पानीमें डूबनेवाला) हो उसे कफदूषित दुग्ध जानो, इसीप्रकार दोषोंके लक्षणायुक्त होनेसे द्विदोषित और तीनों दोषोंके लक्षणयुक्तको त्रिदो-षदूषित जानो ।

४ शुद्धदुग्ध लक्षण–जो दुग्ध मीठा, श्वेत, पानीमें मिलनेसे भी अपने रङ्गको न छोड़के, एकसा होजानेवाला, देखनेमें भी निर्मल वर्णका हो उसे दोष रहित शुद्ध दुग्ध जानो, शुद्ध दुग्धपानसे बालक बलयुक्त और रोगरहित तथा दूषित दुग्धसे बलहीन रोग युक्त हो जाता है, यह दुग्धकी परीक्षा पुराने अमृतसागरमें कुछ भी नहीं थी, परन्तु

हमने अन्य अन्य वैद्यक ग्रंथोंसे लिखी, इसी प्रकार अनेक बातें जो कि पुराने अमृतसागरमें कुछ भी नहीं थीं उन्हें हमने इस अमृतसागरमें ग्रंथांतरोंसे लिखी हैं, जिनकी सूचना कहीं दी और कहीं नहीं दी है, परन्तु विद्वान् पुरुष स्वयं जान लेवेंगे, अब वातादिदोषदूषित दुग्ध पीनेसे जो जो रोगबालकको हो जाता है सो दर्शाते हैं जिसे निम्नलिखित प्रकारसे जानो।

१ वातदूषितदुग्धपान लक्षण-क्षीण, श्वेतमुख, कृशशरीर, मलमूत्रका रुकना आदि और भी बादीके रोगोंयुक्त लक्षण दृष्टि पड़ें तो जान लो कि इसे वातदूषित दुग्धपानसे ये रोग हुए हैं।

२ पित्तदूषितदुग्धपान लक्षण-पसीना, मल पतला, शरीर पीला अति तृषा और अंग उष्ण आदि पित्तरोगयुक्त लक्षण दृष्टि पड़ें तो जानो कि पित्तदूषित दुग्धपानसे यह ऐसा रोगी है।

३ कफदूषितदुग्धपान लक्षण-लार अधिक गिरे, नींद अधिक आवे, शरीर सूना, भारी, श्वेत नेत्र, वमन, कास, श्वास आदि कफरोगयुक्त लक्षण दृष्टि पड़ें तो जान लो कि कफदूषित दुग्ध पानसे यह बालक ऐसा रोगी हुआ है।

इसी प्रकार दो दोषदूषित दुग्धपानसे दोषोंके लक्षण और तीनदोषदूषित दुग्धपानसे तीनों दोषोंके लक्षणोंको विचारलो, विशेषतः ज्वरादि समस्तरोग बालकोंकोभी बड़े मनुष्योंके समानही होते हैं, परन्तु उनसे व्यतिरिक्त जो जो रोग बालकोंको होते हैं उनको दरशाते हैं।

बालकोंको-१ कृमिजन्यज्वर, २ कुकूण, ३ पारिगर्भिक, ४ तालुकंटक, ५ महापद्म, ६ तुण्डिगुदापाक, ७ अहिपूतना, ८ अजगल्ली, ९ दंतरोग, १० बालग्रह और ११ मातृकादोष ये ११ रोग प्रायः होते हैं।

१ कृमिजन्यज्वर लक्षण-बालकोंको सामान्य ज्वरादि रोग उसके रुदनादिसेही ज्ञात होते हैं, परंतु शरीर विवर्ण, पेटमें शूल, हृदय पीडा, वमन, भ्रम, भोजनमें अरुचि और अतिसार इन सहित ज्वरहो तो कृमिसे उत्पन्न हुआ ज्वर जानो।

२ कुकूणरोग लक्षण-दुग्धदोषसे बालकोंके नेत्रकी पलकोंमें कुकूणरोग होता है, इसके होनेसे नेत्रोंमें खुजाल और उनसे पानीका बहाव होकर बालक ललाट, नेत्र, पीठ और नासिकाको घिसता तथा

सूर्यादिके तेजको देखने और नेत्रोंको खोलने मीचनेमें वह असमर्थ होता है ।

३ पारिगर्भिकरोग लक्षण–गर्भवती माताके दुग्ध पीनेसे बालकको कास, मंदाग्नि, उल्टी, तंद्रा, कृशता, अरुचि और भारीपन होजाता है, ये लक्षण हों तों पारिगर्भिकरोग जानो ।

४ तालुकंटक लक्षण–कुपित कफसे तालुके मांसमें तालुकंटक रोग होता है, जिससे तालुके ऊपर कांटे होके तालुबैठ जानेसे वह बालक माताके स्तनोंको नहीं पीता, यदि पीये भी तो बड़े कष्टसे पीता है, उसका मल पतला, वांति, तृषा, नेत्र, कंठ और मुखरोगयुक्त होकर अपनी गर्दनभी नहीं सँभाल सकता, ये लक्षणहों तो तालुकंटकरोग जानो ।

५ महापद्मविसर्पलक्षण–त्रिदोषसे बालकके पेडू या मस्तकमें कमलकेआकार कनपटीसे हृदयपर्यंत जानेवाले,हृदयसे गुदापर्यंत जानेवाला ऐसा महापद्मविसर्परोग होता है, इस रोगसे बालक नहीं बचता ।

६ तुण्डीगुदापाकरोग लक्षण–बालककी गुदा पककर नाभिमें पीड़ा अधिकहो तो तुण्डीगुदापाक जानो ।

७ अहिपूतनारोग लक्षण--जिस बालककी गुदा सर्वदा मलमूत्र युक्त तथा लालही रहे जिसके धोने या पोंछने तथा तपानेसे उसमें खुजाल उठकर फोड़ होजावें और गुदासे पानी झरता रहे तो अहिपूतनारोग जानो ।

८ अजगल्लीरोग लक्षण--जिसके शरीरमें चिकनी, लाल मूंगे प्रमाण पीड़ारहित बहुतसी फुंसियां होजावें उसे अजगल्लीरोग कहते हैं, अहिपूतना और अजगल्लीके विशेष लक्षण देखना चाहो तो क्षुद्ररोगके निदानमें देखो ।

दंतरोग लक्षण- बालकके दांत निकलते समय ज्वर, अनेक वर्णका विरेचन, वमन, क्षीणता, मस्तकपीड़ा, नेत्रपीड़ा और चक्करआना इत्यादि लक्षण दृष्टिपड़े तो जानो कि दंतरोग है, ये सब लक्षण प्रत्येक बालकको दांत निकलनेके समय होते और प्रत्येकके दंत निकलजानेपर शांतभी हो जाते हैं ।

बालरोग निश्चय--बालक बोलनेको असमर्थ होता है इसलिये उसके रोगोंके जाननेका उपाय कहते हैं ।

१ बालकपीड़ाकी न्यूनाधिकताको बालकके थोड़े बहुत रोनेसे जानो, थोड़ा रोवे तो थोड़ी पीड़ा और बहुत रोवे तो अधिक पीड़ा जानो।

२ बालकके जिस अंगमें हाथ लगानेसे वह रोवे या चमके उसके उसी अंगमें पीड़ा जानो ।

३ बालक नेत्र न खोले तो उसके मस्तकमें पीड़ा जानो ।

४ जीभ और ओठोंको दबावे, दांत पीसे, श्वास ले औरमूठी बांधे तो बालकके हृदयमें पीड़ा जानो ।

५ मलमूत्रका रुकना, उलटी, आँतोंका बोलना, पेटका फूलना या नवना और माताके स्तनोंको काटना ये लक्षण हों तो बालकके कोठेमें पीड़ा जानो ।

६ मलमूत्रका अवरोध होकर बालक घबराके चहुँ ओर देखे तो उसके पेडू (मूत्राशय) अथवा इंद्रिय तथा गुदादि गुह्य स्थानमें पीडा जानो ।

विशेषतः-इंद्रियोंको तथा हाथ पांव आदि अंगोंको और समस्त संधियोंको बड़े यत्नसे बारंबार देखके रोगोंका निश्चय करो यदि बाल-रोगोंसे तथा उनकी चिकित्सासे अधिक ज्ञान होना हो तो सुश्रुतमें देखो, ये बालरोग जाननेके उपाय माधवनिदानादि ग्रन्थोंसे हमने लिखा है ।

१० बालग्रहरोग

बालकोंको-१ स्कंदग्रह, २ स्कंदापस्मार, ३ शकुनी, ४ रेवती ५ पूतना, ६ अंध पूतना, ७ शीत पूतना, ७ मुखमंडिका और ९ नैगमेय ये नव बालग्रह ग्रहण करके पीडित करते हैं ।

ग्रहगृहीत बालकके सामान्य लक्षण-बालक चमके; डरे, रोवे, नख तथा दाँतोंसे अपने तथा माताके शरीरको विदीर्ण करे, ऊपरको देखे, दाँत चावे, कूल्हे (कांखे) जँमुहाई ले, भौंहें तथा होठ चलावे मुखसे बराबर फेन गिरावे, शरीर कृश, रात्रिमें निद्रा नाश, शोथ, मलका फूटना स्वरका बैठना, अल्प आहार और शरीरमें मांस तथा रक्तके तुल्य दुर्गंध ये लक्षण हों तो जानो कि इस बालकको उक्त नव बाल ग्रहोंमेंसे किसी भी बालग्रहका कोप है ।

१ स्कंदग्रहगृहीत लक्षण-जिस बालकका एक नेत्र बहे. एक कोरका अंग फरके, कांपे, ऊपरको टेढ़ा मुख कर देखे, शरीरसे रक्तकीसी बास

आवे, दांत किरकिरावे, शिथिलता और दूधपर अरुचि हो उसे स्कंदग्रहगृहीत जानो ।

२ स्कंदापस्मारगृहीत लक्षण–अचेत पड़ा हुआ मुखसे फेन उगले, सचेत होनेपर अत्यन्त रुदन करे और शरीरसे रक्तपीव कीसी दुर्गंध आवे तो उस बालकको स्कंदापस्मारग्रहगृहीत जानो ।

३ शकुनीग्रहगृहीत लक्षण–जो बालक अंग शिथिल, भयसे चकित, सर्व शरीर व्याधि, दाह, पाक और स्रान युक्त फोडोंसे क्लेशित हो तो शकुनी ग्रहगृहीत जानो ।

४ रेवतीग्रहगृहीत लक्षण–जिसका शरीर फूटे हुए प्राचीन या नवीन फोडोंसे पूरित हो जिनसे कर्दमकीसी दुर्गंधयुक्त रक्तवहे, नल फूटा हो, दाह और ज्वर भी हो उस बालकको रेवतीग्रहगृहीत जानो ।

५ पूतनाग्रहगृहीत लक्षण– जो बालक अतिसार, तृषा, ज्वर, तिरछा देखना और निद्रानाश इन लक्षणोंसे युक्त हो तो उसे पूतनाग्रहगृहीत जानो ।

६ अंधपूतनाग्रहगृहीत लक्षण–जो बालक वमन, ज्वर, कास, तृषा, शरीरमें मज्जा (चरबी) कीसी वास और अत्यन्त रुदन युक्त हो उसे अंधपूतनाग्रहगृहीत जानो ।

७ शीतपूतनाग्रहगृहीत लक्षण–जो बालक कम्प, कास, क्षीणता, नेत्ररोग, दुर्गंध, वमन और अतिसारयुक्त हो उसे शीतपूतनाग्रहगृहीत जानो ।

८ मुखमंडिकाग्रहगृहीत लक्षण–जो बालक प्रसन्नमुख, सुन्दर वर्ण, उघड़ी हुई नसोंसे व्याप्त, बह्वाशी (बहुत खानेवाला) हो और जिसके शरीरसे मूत्रकी दुर्गंध आवे तो उसे मुखमंडिकाग्रहगृहीत जानो ।

९ नैगमेयग्रहगृहीत लक्षण–जो बालक वमन, पसीना, कंठ और मुखशोष, मूर्च्छा, दुर्गन्धयुक्त होकर ऊपरको देखता रहे उसे नैगमेयग्रहगृहीत जानो । और इन्हीं लक्षणों युक्त डाकिनीदोषवाला बालक भी होता है । इति बालग्रहनिदानम् ।

अथ द्वादशमातृका दोष निदानम्

१ नन्दामातृकादोष लक्षण–बालकके जन्म होने पश्चात् १ दिन १ मास १ वर्षमें ज्वर होकर वह बालक अधिक रोवे या अचेत हो जावे तो नन्दामातृकादोष जानो ।

२ शुभदामातृकादोष लक्षण–जन्मसे दूसरे दिन, दूसरे मास दूसरे वर्ष बालकको ज्वर हो, नेत्र नहीं मीचे, शरीर कंपे, निद्राका नाश हो, अत्यन्त चिल्लावे और निश्चेष्टा ये लक्षण हों तो शुभका मातृकादोष जानो।

३ पूतनामातृकादोष लक्षण–तीसरे दिन, तीसरे मास, तीसरे वर्ष बालक ज्वर, कंप, भाषणरहित, मुष्टिका बांधना, चिल्लाना और आकाशकी ओर देखना इन लक्षणों युक्त हो तो पूतनामातृकादोष जानो।

४ मुखमंडिकामा० दोषल०–चौथे दिन, चौथे मास, चौथे वर्ष बालकके ज्वर हो, ग्रीवा न झुके, नेत्र फटे रहैं, मुखसे नहीं बोले, रोता रहे या अत्यन्त सोवे, हाथकी मुठ्ठी बंदी रक्खे, ये लक्षण हों तो मुखमंडिकामातृकादोष जानो।

५ पूतना[1]मातृकादोष लक्षण–५ वें दिन ५ वें मास, ५ वें वर्ष बालकको ज्वर, कम्प, भाषणाभाव, मुष्टिबन्धन ये लक्षण हों तो पूतनामातृकादोष जानो।

६ शकुनीमातृकादोष ल०–६ वें मास, ६ वें वर्ष बालकको ज्वर, कंप रात्रिदिन क्लेश और ऊर्ध्वदृष्टि ये लक्षण हों तो शकुनी मातृकादोष जानो।

७ शुष्करेवतीमातृकादोष लक्षण–७ वें दिन, ७ वें मास, ७ वें वर्ष बालकको ज्वर, गात्रकम्प, मुष्टिबन्धन, अधिक रुदन ये लक्षण हों तो शुष्करेवती मातृकादोष जानो।

८ नानामातृकादोष लक्षण–८ वें दिन, ८ वें मास, ८ वें वर्ष बालकको ज्वर, शरीरमें दुग्ध, आहारनाश और गात्रकम्प ये लक्षण हों तो नानामा० जानो।

९ सूतिकामातृकादोष लक्षण–९ वें दिन, ९ वें मास, ९ वें वर्ष बालकको ज्वर, शरीरमें पीड़ा, और वमन हो तो सूतिकामातृकादोष जानो।

१० क्रियामातृकादोष लक्षण–१० वें दिन, १० वें मास, १० वें वर्ष बालकको ज्वर, कम्प, रुदन और मलमूत्र त्याग हो तो क्रियामातृकादोष जानो।

---

१ ये पूतना मातृका पंचम दिनादिमें दोषकारिणी और पूर्वोक्त पूतना तीसरे दिन आदिमें दोषकारिणी होनेसे इन दोषोंको पृथक् पृथक् जानो।

११ पिपीलिकामातृकादोष लक्षण—११ वें दिन, ११ वें मास, ११ वें वर्ष बालक ज्वरयुक्त हो और आहारहीन हो तो पिपीलिकामातृकादोष जानो ।

१२ कामुकामातृकादोष लक्षण—१२ वें दिन, १२ वें मास, १२ वें वर्ष बालक ज्वरयुक्त हो, हँसे, वस्त्र आदिको हाथसे फेंकने लगे, पुकारे और अधिक श्वास ले तो कामुकामातृकादोष जानो । यह रावणकृत कुमारतन्त्र चक्रदत्तमें लिखा है । इति मातृका दोषः । इति बालरोगनिदानम् ।

अथ मंथज्वरलक्षणम्

ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यतिसारो वमिस्तृषा ।
अनिद्रा च मुखं रक्तं तालु जिह्वा च शुष्यति ॥ १ ॥
ग्रीवादिषु च दृश्यंते स्फोटकाः सर्षपोपमाः ।
घृताशनात्स्वेदरोधान्मंथरो जायते नृणाम् ॥ २ ॥

इत्याह क्षीरपाणिः ।

हारीतोऽप्याह-

ज्वरस्तंद्रा च वै यस्य दन्तोष्ठेषु च श्यामता ।
घ्राणजिह्वास्यकंठेषु रक्तताक्षि च कर्बुरम् ॥ १ ॥
मुक्ताहारो गले यस्य सप्ताहाद्धार्यते न चेत् ।
तत्रिसप्तदिनादर्वाक् स्फोटाः स्युः सर्षपोपमाः ॥ २ ॥

अब मंथज्वरके लक्षण लिखते हैं—जिसे लोकमें मोतीझिरा, मधूरा, मोतीमाता, या मोतीज्वर भी कहते हैं. यद्यपि यह रोग ज्वरप्रकरणमें ही लिखने योग्य था परंतु यह बालकोंकोही विशेष करके निकला करता है, इस लिये बालरोगके अंतमें लिखते हैं. तरुण ज्वरमें घी खाने और पसीनेके रोकनेसे ज्वर, दाह भ्रम अतिसार, वांती, तृषा, निद्रानाश, मुखरक्तता, तालु, जिह्वाशोष इन सहित गलेसे नीचे २ उतरते हुए सरसों समान मोंतीसे दाने दृष्टि पड़ते हैं, उन्हें मंथज्वर कहते हैं, ऐसा क्षीरपाणिने कहा है, और हारीत ऋषि भी कहते हैं कि ज्वर, तद्रा, दंत, ओष्ठोंमें श्यामता, नासिका, जिह्वा, मुख और कंठमें रक्तता और नेत्र कर्बुर इन लक्षणोंयुक्त गलेमें

मोतियोंके हारसदृश दानोंकी पंक्ति निकलती है उस समय उस रोगीको ७ दिन पर्यंत मोतियोंका हार पहनाना चाहिये यदि न पहनावे और स्वच्छतादि ठीक ठीक प्रयत्न न रक्खे तो उसके २१ दिनके भीतर २ अंगभरमें सरसोंके समान मोतीसे दाने हो जाते हैं, ये लक्षण हों तो मंथज्वर (बड़ा मोतीझिरा) जानो। इसे लोकमें पानीझिरा भी कहते हैं, ये तीनों दोषोंके कोपसे होनेके कारण कठिन रोग होता है, विशेष उपद्रव न उठें तो कष्टसाध्य और उपद्रवयुक्त होनेसे असाध्य जानो, उससे आरोग्य होना परमेश्वरके आधीन है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे बालरोगमंथज्वरलक्षण-
निरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४२ ॥

क्लीबरोग

कारण क्लीबरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य व।
रामवेदे तरंगेऽस्मिन्कथ्यते च मया क्रमात् ॥ १ ॥

मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करानेवाला क्लीब (नपुंसक) षण्ढ रोगका इस ४३ तेतालीसवें तरंगमें क्रमसे निदान कहते हैं।

अथ नपुंसकानाह

आसेक्यश्च सुगन्धी च कुम्भीकश्चेर्ष्यकस्तथा।
अमी सशुक्रा बोद्धव्या अशुक्रःषण्ढसंज्ञकः ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे

अब जन्मसेही जो नपुंसक होते हैं उनको दर्शाते हैं, गर्भाधानके समय स्त्रीका रज (रक्त) और पुरुषका वीर्य दोनों समान (बराबर) होनेसे गर्भ नहीं रहता है, यदि दैववशात् रह भी जावे तो वह बालक नपुंसक (स्त्री और पुरुषसे भिन्न) होता है, जो जन्मसे नपुंसक होते हैं वे १ आसेक्य, २ सुगंधि, ३ कुंभीक, ४ ईर्ष्यक, ५ षँढ ऐसे पांच प्रकारके होते हैं, इन्होंमें पहले चार वीर्य सहित और पिछला (षंढ) निर्वीर्यही होता है और जो वातादि दोषोंसे तथा मनके विकारसे नपुंसक हो जाते हैं वे ७ प्रकारके होते हैं।

---

१ यह रोगोंमें राजाके समान है इसलिये मोतियोंका हार पहिनाना लिखा है।

१ आसेक्यनपुंसक लक्षण--माता पिताके अत्यल्प (अतिन्यून) रज वीर्यके कारण आसेक्य नपुंसक होता है, जोकि अपने मुखमें दूसरेसे मैथुन कराके आप उसके वीर्यको पीजाता है, तब उसका लिंग चैतन्य होता है इसका दूसरा नाम मुखयोनि भी है।

२ सौगंधिकनपुंसक लक्षण--जो दुर्गंधियुक्त योनिसे उत्पन्न होता है वह सौगंधिकनपुन्सक कहलाता है, वह जब योनि और लिंगको सूँघता है तब मैथुन करनेको समर्थ होता है। इसका दूसरा नाम नासायोनिभी है।

३ कुम्भीकनपुंसक लक्षण—जो अपनी गुदामें दूसरेसे मैथुन करवानेपर स्त्रीसे मैथुन करनेको समर्थ होता है उसे कुम्भीक नपुंसक तथा गुदायोनिभी कहते हैं।

४ ईर्ष्यकनपुन्सक लक्षण—जो दूसरेको मैथुन करता देखे तब आप भी मैथुन करनेको समर्थ हो वह ईर्ष्यक या दृष्टियोनि नपुन्सक कहलाता है।

५ षंढनपुन्सक लक्षण—जो पुरुष आज्ञानतासे ऋतुदान (गर्भाधान) के समय आप नीचे और स्त्रीको ऊपर करके मैथुन करता है उसके द्वारा उत्पन्न हुआ बालक षंढ नपुन्सक कहलाता है, जिसका स्त्रीके समान (दाढ़ी मूँछरहित) आकार और स्त्रीकीसी चेष्टा (चटकमटक) तथा दूसरेसे अपनी गुदामें मैथुन भी कराता है। इसके वीर्यका लेशमात्र भी न होनेके कारण आप किसी प्रकार मैथुन नहीं कर सकता। ये पांच प्रकारके नपुन्सक जन्मसे ही होते हैं।

षण्ढास्त्री लक्षण—ऋतुसमयमें जो स्त्री पुरुषको नीचे सुलाके आप ऊपर होके पुरुषके समान मैथुन करे उसके गर्भसे यदि कन्या उत्पन्न हो तो वह पुरुषके सदृश बोलचाल करनेवाली, दूसरी स्त्रीको नीचे सुलाके उसकी योनिसे योनि घिसनेवाली होती है। ऐसे लक्षणोंवाली स्त्रीको षंढा कहते हैं।

अथ दोषमानसान्नपुन्सकानाह

क्लीबः स्यात्सुरताशक्तस्तद्भवः क्लैब्यमुच्यते।
तच्च सप्तविधं प्रोक्तं निदानं तस्य कथ्यते॥

इत्युक्तं भावप्रकाशस्योत्तरखण्डे

जन्मसे जो ५ प्रकारके नपुन्सक होते हैं उनको पहिले कह चुके, अब वातादिदोषोंसे तथा मनके बिगाड़से जो नपुन्सक होते हैं उनको दरशाते हैं। जो पुरुष (स्त्रीसङ्ग) करनेमें समर्थ न हो उसे क्लीब और उस क्लीबके भावको क्लैब्य कहते हैं। अर्थात् जन्मसे नपुन्सक न होके और पश्चात् नपुन्सकताको प्राप्त हो जावे सो क्लैब्य ७ प्रकारके होते हैं, उसका निदान हम कहते हैं।

१ मानसक्लैब्यलक्षण–मैथुनके समय भय, शोक, क्रोध, लज्जा और शंका इन कारणोंसे अथवा मनको ग्लानि उत्पन्न करनेवाली स्त्रीसे मनका उत्साह (हर्ष) नष्ट होकर लिंग शिथिल पड़ जाता है, इसे मानसक्लैब्य कहते हैं।

२ पित्तजक्लैब्य लक्षण--पित्त बढ़कर वीर्यको नष्टकर देता है, जिससे मनुष्यका लिंग शिथिल पड़ जात हैं, इसे पित्तजक्लैब्य कहते हैं।

३ शुक्रक्षयहेतुकक्लैब्य लक्षण–जो पुरुष अत्यंत मैथुन करे और बाजीकरण औषधियोंका सेवन न करे वह वीर्यकी क्षीणतासे नपुंसक हो जाता है उसे शुक्रक्षयहेतुकक्लैब्य जानो।

४ लिंगरोगजक्लैब्य लक्षण–लिंगमें उपदंशादि रोग होनेसे जो नपुंसकताको प्राप्त होजाता है वह लिंगरोगजक्लैब्य कहलाता है।

५ वीर्यवाही शिराछेदजक्लैब्य लक्षण–वीर्यको बहानेवाली नसके छिद जानेसे जो नपुंसक हो जाता है वह वीर्यवाही शिराछेदजक्लैब्य कहलाता है।

६ शुक्रस्तंभजक्लैब्य लक्षण–जो बलवान् पुरुष मैथुनकी इच्छासे मन चंचल होनेपर भी वीर्यको रोकके ब्रह्मचर्यमें रहता है वह वीर्यनिरोधनिमित्तसे नपुंसकताको प्राप्त होता है इसे शुक्रस्तम्भजक्लैब्य कहते हैं।

७ सहजक्लैब्य लक्षण--जो जन्मसेही नपुंसक होताहै वह सहज क्लैब्य कहलाता है, इस सहक्लैब्यके ५ भेद प्रथम कह चुके हैं।

असाध्य क्लैब्यलक्षण--वीर्यवाहीशिराछेदज क्लैब्य और सहजक्लैब्य ये दोनों असाध्य और शेष क्लैब्य कष्टसाध्य जानो, यह नपुंसकरोगका निदान हमने भावप्रकाशसे लिखा है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे नपुंसकरोगलक्षणनिरूपणं नाम त्रिचत्वारिंशतरंगः ॥ ४३ ॥

अथ स्थावरजंगमविषनिदानम्

द्विविधस्य विषस्यात्र स्थावरस्य चरस्य च ।
तरंगे सिन्धुवेदे हि निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

स्थावर और जंगम विषका इस ४४ चवालीसवें अन्तिम तरंगमें निदान कहते हैं ।

स्थावरं जगमं चैव द्विविध विषमुच्यते ।
मूलात्मकं तदाद्य स्यात्परं सर्पादिसम्भवम् ॥ २ ॥

अब विषका निदान लिखते हैं स्थावर और जंगम भेदसे विष दो प्रकारका होता है, जिसमें वृक्षादिसे उत्पन्न हो तो स्थावर विष और सर्पादिजनित जंगम विष कहलाता है।

१ स्थावरविषस्थिति--स्थावर विष १ वृक्षकी जड़, २ पत्र, ३ पुष्प, ४ फल, ५ छाल, ६ दुग्ध ७ सार, ८ रस (गोंद), ९ धातुमात्र (हरतालादि) और कन्द (सींगी मोहरा आदि) में रहता है ।

२ जंगमविषस्थिति--जंगमविष १ मनुष्योंकी दृष्टि, २ सर्पादिकी श्वास तथा हाड़, ३ श्वान श्वान श्रृगाल आदिकी दाढ़ ४ सिंह व्याघ्रादिके नख तथा रोम, ५ विषहरा (छिपकली) आदिके मलमूत्र, ६ बन्दर आदिके वीर्य, ७ बावरे (पागल) श्वान तथा श्रृगालादिकी लार, ८ उष्ण वस्तु खानेवाली स्त्रीकी योनि, ९ उष्ण वस्तु खानेवाली मनुष्यकी गुदा १० नकुल (मुङ्गस) तथा मछलीके पित्त, ११ भँवरे आदिके डंक और मूषक (चूहा) के दाँतमें रहता है ।

स्थावर विषसामान्य लक्षण--हिचकी, दंत खट्टे होना, गला घुटना, वमन, फेनोंका गिरना, अरुचि, श्वास और मूर्छा ये उपद्रव हों तो स्थावर विष संसर्ग जानो।

स्थावरविषभक्षणविशेष लक्षण

१ मूलविष लक्षण--विषहरे मूल (कनेर आदिकी जड़) भक्षणसे देह ऐंठन प्रलाप और मोह होता है ।

२ पत्रविष लक्षण--विषहरे पत्र भक्षणसे जमुहाई, कंप, श्वास और मोह होता हैं ।

३ पुष्पविष लक्षण–विषहरे पुष्पभक्षणसे वमन, आध्मान और श्वास होता है।

४ फलविष लक्षण–विषहरे फलभक्षणसे मुखपर शोथ, दाह और अन्न-द्रोह होता है।

५ त्वचा, ६ सार, ७ रसविषके लक्षण–विषहरे त्वचा, सार और रस भक्षणसे, मुखदुर्गंध, शरीरमें खरखराहट, शिरमें पीड़ा और कफ गिरता है।

८ दूधविष लक्षण–विषहरे वृक्षके दूध भक्षणसे मुखसे फेनोंका गिरना, मल फूटना और जिह्वाका ऐंठना ये उपद्रव होते हैं।

९ धातुविष लक्षण--अशुद्ध हरतालादि धातु भक्षणसे हृदयमें पीडा, मूर्छा और तालुमें दाह ये उपद्रव होते हैं, ये पूर्वोक्त सब विष कुछ काल पर्यंत क्लेश देके नष्ट करते हैं।

१० कन्द विष लक्षण -कन्दविष (अशुद्ध बचनाग,, सिंगीमोहरा) आदिके भक्षणसे हरतालादि धातु विषभक्षणसमान उपद्रव होकर वह पुरुष तत्कालही मर जाना है।

विशेषतः--उक्त स्थावर विषको वैद्यकशास्त्रोक्त रीतिसे शुद्ध करके खिलाया जावे तो अमृतके समान गुण करता है।

१ विषबल- विषमें रूखापन होनेसे यह बुद्धिको बिगाड़ता और सब शरीरके बंधनोंको ढीला कर देता है।

२ विषमें सूक्ष्मता होनेसे शरीरके अंग अंगपर बढ़ जाता है।

३ विषमें प्रबलता होनेसे यहस्त्रीसंग अधिक कराता है।

४ विषमें नाशक शक्ति होनेसे यह शरीरके वातादि दोषोंके सप्तधातु और मलको बिगाड़ देता है।

५ विषमें शीघ्रता शक्ति होनेसे यह शरीरको क्लेश देता है।

१ विषयुक्त शस्त्रप्रहार लक्षण--जिस मनुष्यका घाव शस्त्र प्रहार होतेही पकजावे और उसमें से काला रक्त बारंबार निकले वह घाव सदा भीगा हुआ रहे, तथा उस घावके मांस गल गलकर गिरने लगे और उस प्रहारयुक्त मनुष्यको तृषा, मूर्छा, ज्वर तथा, दाह होवे तो जान लो कि विषमें बुझाया हुआ शस्त्र लगा है।

विशेषतः--यदि कोई शस्त्रके साधारण घावपर भी किसी प्रकारसे विष डालदे तो भी यह लक्षण होजाते हैं, इसलिये घावका यत्न अपने विश्वासी पुरुषसे ही कराओ।

अथ जंगमविष लक्षण

प्रथम सर्पके काटनेके विषका लक्षण लिखते हैं- सर्प भी कई प्रकारके होते हैं जिनको अग्रलिखित लक्षणोंसे जानो।

वातपित्तकफात्मानो भोगिमंडलिराजिलाः।
यथाक्रमं समाख्याता द्व्यन्तरा द्वन्द्वरूपिणः॥ १॥

१ फणवाले सर्पोंको भोगी जानो, ये वातप्रकृतिवाले होते हैं, जिन सर्पोंके अंगपर मंडल होते हैं उनको मंडली जानो ये पित्तप्रकृतिवाले होते हैं।

२ जिन सर्पोंके शरीपर रेखा होती हैं उनको राजिल सर्प जानो, ये कफप्रकृतिवाले होते हैं।

इसी प्रकार माता पिताके जातिविपर्ययसे जो संकर (दोगले) जातिके सर्प होते हैं।

१ भोगी सर्पके काटनेका लक्षण-भोगी सर्प जहां काटता है वहां काला चिह्नहोकर उसको सर्व वातरोग उत्पन्न होता है।

२ मण्डली काटनेका लक्षण-दंश सूजा हुआ, पीला, कोमल और पित्तविकारका हो तो जानो कि इसे मण्डली सर्पने काटा है।

३ राजिलसर्प काटनेका लक्षण-स्थिर, शोथयुक्त, चिकनार फेनके सदृश श्वेत आर्द्र, रक्तयुक्त दंश हो और कफके विकार दृष्टि पड़ें तो राजिलसर्पका काटा जानो।

सर्पकाटेके असाध्य लक्षण-पीपलके नीचे, देवमंदिर, श्मशान चौमार्ग, बांबीपर तथा सन्ध्या समयमें, भरणी, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका इन नक्षत्रोंमें, पञ्चमी आदि तिथिमें, शरीरके मर्मस्थानमें सर्प काटे तो असाध्य होनेसे उस मनुष्यका बचना कठिन है।

यदि अजीर्ण, उष्णता, घाव, प्रमेह, क्षीणता और क्षुधायुक्त मनुष्योंको, बालक, वृद्ध, गर्भवती स्त्रीको तथा जिनके मुख, इंद्रिय गुदासे

रुधिर गिरता हो ऐसेको सर्प काटे तो असाध्य जानकर यत्न मत करो ये नहीं बचते।

दूषीविषभक्षण लक्षण–दूषीविष भक्षणसे मनुष्य मूर्छा, भ्रम, और वमनादिद्वारा क्लेशित होकर बच जाता है, अर्थात् मरता नहीं।

दूषीविष लक्षण

जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा दावाग्निवातातपशोषितंवा।
स्वभावतो वा गुणविप्रहीनं विषं हि दूषीविषतामुपैति १

पुराना अथवा विशनाशक औषधियोंसे तेजहीन या दावाग्नि धूप पवनसे सूखा हुआ अथवा स्वभावसे ही जो अपने गुणसे हीन हो जावे सो दूषीविष कहलाता है, अल्प पराक्रम होनेसे यह मनुष्यको मार नहीं सकता।

१ दूषीविषमूषकदष्ट लक्षण–मूषकके काटनेसे तत्क्षणही उस स्थानमें रक्तका बहाव, शरीरमें पांडुवर्णका मण्डल, ज्वर, अरुचि रोमांच और दाह ये लक्षण हों तो दूषीविषमूषक-काटा जानो, इसके काटनेसे प्राणहानि नहीं होती।

२ प्राणहरमूषकदष्ट लक्षण–मूर्च्छा, शरीरमें शोथ, कुरूपता उबकाई, बधिरता, ज्वर, शरीरमें भारीपन, लारका बहाव और रक्तकी वांति (वमन) हो तो प्राणहर मूषकके काटनेका विष जानो, इन लक्षणोंयुक्त रोगी असाध्य होता है।

३ कृकलासदष्ट लक्षण–जहां काटे वहां काला धूसर या अनेक रंगका दंश, मोह और मलका फूटना हो तो कृकलास (किर-कांटा = गिरगिट) के काटनेका विष जानो।

४ वृश्चिकदष्ट लक्षण–जिसके डंकमारतेही अंगारसी जलने लगे तदनंतर ऊपरको विदीर्ण करता हुआ चढ़के बहुत काल पश्चात् डंकहीपर आके ठहर जावे तो वृश्चिक (बिच्छू) के काटनेका विषजानो।

असाध्य लक्षण–जिसके हृदय, नाक और जीभमें बिच्छू काटे और वहांसेमांसगिरने लगे तथा अत्यंत पीडा हो तो असाध्य जानो।

५ मेंढकदष्ट लक्षण–जहाँ काटे वहाँ पीडायुक्त शोथ, तृषा, निद्राधिकता और वमन हो तो विषहरे मेंढकका काटा जानो।

६ नक्रदष्ट लक्षण–शरीरमें दाह, और दंशस्थानपर पीडा युक्त शोथ हो तो विषहरे मगरका काटा जानो।

७ जलौकादष्ट लक्षण–दंशस्थानपर कंडू युक्त शोथ, ज्वर और मूर्च्छा हो तो जलौका (जोक) के काटनेका विष जानो।

८ पल्लिदष्ट लक्षण–दंशस्थानपर दाह तथा पीडायुक्त शोथ होकर शरीरसे पसीना निकले तो पल्ली (छिपकली = विषमरा) के काटनेका विष जानो।

९ शतपददष्ट लक्षण–कनखजूरेके दंशमें पसीना, पीड़ा और दाह होती है।

१० मशकदष्ट लक्षण–दंशस्थानपर खाज, शोथ और मन्द मन्द पीडा हो तो मच्छरका काटा जानो।

११ वनमशकदष्ट लक्षण–विषहरे वनमच्छरके काटनेसे दंशस्थानपर पित्तीके समान लाल घाव सदृश गहरी पीड़ा युक्त मण्डल होता है।

१२ सविषमक्षिकादष्ट लक्षण-विषहरी मक्खी या भौंरे मक्खीके काटनेसे दंशस्थानपर दाहयुक्त कालाव्रण, ज्वर, मूर्च्छा होती है, इसका काटा हुआ मनुष्यमरणप्राय अरिष्ट पाता है या मरजाता है।

१३ सिंहव्याघ्रादिदष्ट लक्षण–सिंहव्याघ्रादिके काटनेसे दंशस्थानमें घाव पककर उसमेंसे पीवका बहाव और ज्वर होता है।

१४ उन्मत्तश्वानादिदष्ट लक्षण–पागल कुत्ते तथा स्यारके काटनेसे उस दंशस्थानसे श्यामरक्तका बहाव, हृदय तथा शरीरमें पीड़ा, ज्वर, अंगमें जकड़ाव, तृषा, वर्णविपर्यय, चक्कर, दाह, दंशस्थानपर खाज, शोथ, पीडा और पाकयुक्त गांठ तथा फोड़े होजाते हैं।

उन्मत्त श्वानादिपरीक्षा–जिस श्वान या शृगालके मुखसेलार गिरे, अंध तथा बहिरहोकर चहुँ ओर भागता फिरे, पूँछ सीधी होजावे, जिसकी ठुड्डी, गर्दन, शिर अधिक पीडितहोनेसे मुख नीचे को ही रहे तो उसे उन्मत्त (पागल = बावरा = दिवाना) जानो।

श्वानदष्टअसाध्य लक्षण–जिसको पागल कुत्ता काटे, उस पुरुषको जल, काच, तैलादिमें कुत्ता दीख पड़े, उसके देखतेही पुकारने लगे,

श्वानकीसी चेष्टा करने लगे और पानीसे डरेतो जानो कि, यह रोगी असाध्य है, नहीं बचेगा।

विषभक्षण करनेवालेकी परीक्षा-मुखकी चेष्टा तथावाणी बदल जावे, प्रश्नका उत्तर न दे सके, जिसके ठीक ठीक वाक्य न निकले, इधर उधर देखने लगे, पृथ्वीको अपनी अंगुलीसे खोदने लगे, घरके बाहर निकलनाचाहे, हँसने लगे और चित्त घबराय जावे इत्यादि लक्षण जिसमें दृष्टिपडें उसे जानलो कि उस मनुष्यने अवश्य विष (जहर) खाया है।

इति श्रीअमृतसागरे निदानखण्डे स्थावरजंगमविषलक्षणनिरूपणं नाम चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४४ ॥

सकलरोगनिर्णययुतोऽयं निदानखण्डः समाप्तः

सूचना

★

वाचक-महात्मागण ?

विदित हो कि, अमृतसागरके इस चतुर्थ खण्डमें निदानखण्डोक्त समस्त रोगोंकी चिकित्सा (रोगकी नाशकारिणी क्रिया) भली भांति विस्तारपूर्वक वर्णनकी गई है; इसी लिये 'चिकित्सा खंड'' संज्ञा दी गई है, इस खण्डमें ४४ तरङ्ग हैं, जिनमेंसे जिन जिन तरंगोंमें जिन जिन रोगोंकी चिकित्सा उल्लिखितकी गई है, तिसका व्योरा तो आप तरंगके शीर्षकश्लोकसे ज्ञात करही लेवेंगे, परन्तु विशेषता यह है कि जहां कहीं श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्द भी योजित दृष्टिगोचर हो तहां स्वयं विचार लीजियेगा कि, इस तरंगमें श्लोककथित रोगोंसे भी कुछ अधिक रोगोंकी चिकित्सा दी गई है, किं बहुनोल्लेखेन ।

शंखं चक्रं जलौकं दधदमृतघटं चापि दोर्भिश्चतुर्भिः
सूक्ष्मस्वच्छातिहृद्यांशुकपरविलसन्माल्यमम्भोजनेत्रम् ।
कालांमोदोज्वलांगं कटितटविलसच्चारुपीतांबराढयं वन्दे
धन्वंतरिं तं निखिलगदवनप्रौढदावाग्निनीलम् ॥ १ ॥

श्रीः

अथ चिकित्साखण्डः ४.

तत्रादौ चिकित्सालक्षणम्

या क्रिया व्याधिहरणी सा चिकित्सा निगद्यते ।
दोषधातुमलानां या साध्यकृत्सैव रोगहृत् ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

जो क्रिया व्याधि[1]को हरण करनेवाली हो सो चिकित्सा कहाती है क्योंकि जो चिकित्सा वात, पित्त, कफ तथा सप्तधातु और मलको यथा योग्य करनेवाली होगी वहीरोगको दूर करेगी ऐसा(भावप्रकाशमें) लिखा है ।

पृथग्दोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमम् ।
तरंगे प्रथमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

वातादि पृथक् पृथक् दोषोंसे उत्पन्न हुआ जो वात, पित्त, कफ, ज्वर तिनकी चिकित्सा हम पहिले तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं ।

ज्वरयत्न

अथ-प्रथम ज्वरादि रोगोंके यत्न अमृतसागर मूलग्रंथमें लिखे अनुसार दरशाते हैं ।

सामान्यज्वर यत्न-१ उष्ण जल पिलाना, हलके लघन कराना; मलके बलानुसार हलका पथ्य कराना, वायुविबन्धक[2] स्थानमें रखना, उत्तम महीन वस्त्रपर सुलाना, ज्वर आनेसे तीन दिन तक कड़वी, कषैली औषध तथा विरेचन (जुलाब) न देना पश्चात "२ मासे सोंठ और १ मासे धनियांका ' काथ बनाकर पिलावे तो सामान्यज्वर दूर होकर भूंख लगेगी ।

---

१ वात, पित्त, कफसे जो पीड़ा उत्पन्न हो सो व्याधि और मानसी चिंताको आधि कहते हैं २ जिस घरमें वायुका समावेश अधिक न हो

१ वातज्वर यत्न–वातज्वरवालोंको लंघन मत कराओ, पर हलकी वस्तु खानेको दो और चिरायता, नागरमोथा, नेत्रवाला (कमलतन्तु), दोनों कटाई, गिलोय (गुर्वेल) और सोंठ ये सब औषध छदाम छदाम भर लेकर क्वाथ बनाओ और ५ दिनतक पिलावो तो वातज्वर दूर होगा।

अथवा २–सोंठ, नीमकी छाल, धमासा, पाठ, कचूर, अडूसा, अरंडीकी जड़ और पोहकरमूल छदाम छदाम भर लेके क्वाथ बनाकर दो।

तथा ३–छोटी पीपल और शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा पानीमें खरल करके आधी रत्ती प्रमानकी गोलियां बनाके नित्य १ गोली ५ दिनतक खिलाओ, यह हिंगलेश्वर रस है।

तथा ४–२ छदाम भर शतावरी और १ छदाम भर गुर्वेलका क्वाथ बनाके उसीमें छदामभर पुराना गुड़ मिलाओ और पांच दिनतक पिलाओ।

तथा ५–बड़ी दाख, पीपल, पित्तपापड़ा और सौंफ ये सब छदाम छदाम भर लो और बनाकर पिलाओ।

उक्त ५ उपायोंमेंसे एक एक यत्नही वातज्वरको नष्टकर सकता है।

२ पित्तज्वर यत्न–निम्नलिखित २१ यत्नोंसे पित्तज्वर नष्ट होगा।

यत्न १ नागर मोथा, धमासा, पित्तपापड़ा, कमलतंतु चिरायता और नीमकी छाल छदाम छदाम भरका क्वाथ बनाकर पिलाओ।

तथा २–छदाम भर खैरसारका चूर्ण, २ मासे कुटकी और २ टंक मिश्रीका चूर्ण बनाके सेवन करो।

तथा ३–१ टंक चन्दन १ टंक खस और दो पैसेभर मिश्रीका चूर्ण बनाके ४ पैसेभर फालसेके रसमें डालके पिओ, यह त्रिशतग्रन्थमें लिखा है।

तथा ४–चावलकी खीलोंके पानीमें मिश्री डालकर पिओ।

तथा ५ कुटकी, किरबारेकी गिरी, नागरमोथा, हर्रकी छाल और पितपापड़ा छदाम छदाम भरका क्वाथ बनाकर पिओ तो उक्त ज्वर, प्यास, दाह, प्रलाप (बकवाद), मूर्च्छा सब नष्ट होवे, वैद्यविनोदमें लिखा है।

तथा ६-गेहूँका आटा और मिश्री पानीमें डालकर पकाओ पूर्णपरिपक्व होनेसे उतारके ठंढा होनेके पश्चात् पी जाओ यह हरीरा कहलाता है।

तथा ७- मीठे अनारका शर्बत (रस) पिओ तो दाह भी शांत होगी।

तथा ८-यदि केवल दाहरूपी ज्वर हो तो अतिसुन्दर, चतुर, स्वरूपवती, पुष्पहार तथा महीन वस्त्रधारिणी, श्यामा (१६ वर्षकी अवस्था वाली) स्त्रीसे मैथुन करना, यों ही तोता, मैना किंवा बालककी मधुरवाणी सुनना, पुष्पवाटिकाकी वायु सेवन करना, पुष्पहार तथा कमलपुष्पादि धारण करना, कपूरादि सुगन्धित पदार्थ सूँघना, मनोहर शृंगार-रसयुक्त कथा सुनना, सुन्दर स्त्रियोंके समीप वार्तालाप करना और जलके फुहारोंके समीप बैठना इत्यादि उपायोंसे भी दाहज्वर नष्ट होकर शीतलता होती है।

तथा ९-फालसेके रसमें सेंधानमक मिलाकर पिओ।

तथा १०-मूँगकी दालके पानीमें मिश्री मिलाकर पिओ।

११-दाखके रसमें मिश्री मिलाकर पिओ।

१२-पित्तपापड़ा, नागरमोथा और चिरायता ये तीनों ९ टंक लेके क्वाथ बनाकर ३ दिन पिओ ये सब यत्न ज्वरतिमिरभास्करमें लिखे हैं।

तथा १३-रक्तचन्दन, पद्मकाष्ठ, धनियां, गिलोय और नीमकी छाल छदाम भर लेकर क्वाथ बनाकर ६ दिन पिओ तो पित्तज्वरके व्यतिरिक्त दाह, प्यास और वमन भी नष्ट होवे, यह यत्न लोलीम्बराजमें लिखा है।

तथा १४-यदि पित्तज्वर अतिदाहयुक्त हो तो रोगीको कमलपुष्पशय्यापर सुलाओ।

तथा १५-अथवा केलेके कोमल पत्रों पर सुलाओ।

तथा १६-अथवा उत्तम पुष्पवाटिकामें रक्खो।

तथा १७-अथवा खसकी टट्टियोंकी शीतलतामें रक्खो।

तथा १८-अथवा गुलाब का तेल मर्दन करो।

तथा १९-अथवा १०० या १००० बारके धोये हुए घृतका मर्दन करो।

तथा २०- नीमके कोमल पत्तोंको पीसके पानी डालो, इस जलको मट्ठेकी रीतिसे मंथन करो तब इसमें जो फेन निकलेगा उस फेनको रोगीके शरीरमें मर्दन करो।

तथा २१--किंवा उक्त फेनमेंही बहेडेकी बीजीको पीसके शरीरपर लेप करो, ये यत्न वैद्यजीवनसे लिखे हैं।

उपर्युक्त २१ एक्कीसों उपायों मेंसे एक एक भी पित्तज्वरकी शांतिके लिये विशेष उपकारी हो सकता है। इति पित्तज्वरयत्न।

२ कफज्वरयत्न- निम्नलिखित ८ उपायोंसे कफज्वर नष्ट होगा।

कफज्वरयत्न--१ नीमकी छाल, सोंठ, गिलोय, पसरकटाली, पोहकरमूल, कुटकी, कचूरा, अडूसा, कायफल, छोटी पीपल और शतावरी छदाम छदाम भर लेके क्वाथ बनाकर ७ दिन पिओ।

तथा २–कायफल, पीपल, काकडासिंगी और पोहकरमूलका चूर्ण छदाम छदाम भर लेके मधुमें मिलाके चाटो, वैद्यविनोदमें लिखा है कि उक्तौषधसे श्वास और खांसीके विकार भी नष्ट होंगे,

तथा ३–सेरभर पानी औटाते हुए तीन पाव रखकर पीनेको दो, बल देखकर लंघन करावो, लंगनके पश्चात् जब लंघन तोड़ो तब मूँग, मोठ या कुलथीकी दालका पानी पिलाओ, दिनको मत सोने दो, पथ्यके साथ ही विजौरेकी केसर (खट्टी कली) में सेंधानमक मिलाकर खिलाओ।

तथा ४–सोंठ, काली मिर्च, छोटी पीपल, चित्रक, पीपलामूल, श्वेतजीरा, श्यामजीरा, लौंग, इलायची, सेंकी हुई हींग, अजवायन और अजमोद बराबर लेके चूर्ण बनाओ इस चूर्णकी छदाम छदाम भरकी मात्रा उष्ण जलके साथ खिलाओ तो कफज्वर नष्ट होगा इसके व्यतिरिक्त अन्नपाचन होकर भूख बढेगी।

तथा ५–कटियाली, गिलोय, सोंठ, पोहकरमूल और अडूसा धेले धेले भर लेके क्वाथ बनाकर सात दिन पिओ।

तथा ६–कटियाली, पीपल, काकडासिंगी, गिलोय और अडूसा दो-दो टंक लेके क्वाथ बनाओ और इसे १० दिन पर्यंत पिओ।

तथा ७–केवल अडूसेका क्वाथ छदाम भरकी मात्रासे १० दिनपर्यंत पिओ।

तथा ८–शीतभंजीरस २ रत्तीको अडूसा और सोंठके काढेके अनुपानसे सात दिन पिओ।

शीतभंजीररसविधान–शोधा हुआ पारा ५ टंक, शोधा हुआ गंधक ५ टंक, तांबेश्वर ५ टंक, शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा २ टंक, सोंठ ३ टंक, मिर्च ५ टंक, पीपल ५ टंक और शुद्ध सुहागा ५ टंक इन सबको बारीक पीसके चित्रकके रसकी ३ पुट दो, फिर अदरखके रसकी ७ पुट, तदनन्तर पानके रसकी ३ पुट देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनावे, इसे ही शीतभंजीर रस कहते हैं, उक्त विकारके व्यतिरिक्त बादी और शीतांगके रोगोंको भी नाशकारी है. उक्त उपायोंसे कफज्वर नष्ट हो जावेगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे वातादिज्वरत्रययत्ननिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

द्वन्द्वजज्वर

द्वन्द्वदोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमम्।
तरंगे द्वितीये चात्रचिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न,हुए जो द्वन्द्वज (वातपित्त, वातकफ और पित्तकफ) ज्वर उनका इस दूसरे तरङ्गमें यथाक्रमसे यत्न लिखते हैं।

४ वातपित्तज्वर यत्न–निम्नोपाय उक्त रोगकी निवृत्ति हेतु करो

तथा १–खरेटी (बला), गिलोय एरण्डकी जड़, नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, भारंगी, छोटी पीपल, खश और रक्तचन्दन पांच पांच मासे लेके क्वाथ बनाओ छदाम छदामभर १५ दिवसतक पिओ।

तथा २–गिलोय, पित्तपापड़ा, चिरायता, नागरमोथा और सोंठको पीसकर चूर्ण बनावे, इस चूर्णका प्रतिदिन छदाम भरका क्वाथ बनाके १२ दिन पर्यंत पियो, यह पंचभद्र क्वाथ कहलाता है।

तथा ३–गिलोय, पित्तपापड़ा, सोंठ, नागरमोथा, अडूसा उनको समान भाग लेके चूर्ण बनालो, इस चूर्णमेंसे छदाम भरका क्वाथ बना कर पिओ।

तथा ४–पटोल, नीमकी छाल, गिलोय और कुटकी समान भाग ले चूर्ण बनाओ और छदामभर चूर्णका क्वाथ बनाकर १२ दिनपर्यंत पिलाओ।

तथा ५–महुआ, मुलैठी, लोध, गौरीसर (हंसराज), नागरमोथा और किरवारेकी गिरी (गूदा) समान भाग लेके छदामभरका क्वाथ बनाकर १२ दिन पर्यंत पिओ ।

तथा ६–चावलोंकी खीलोंमें मिश्री और मधु मिलाकर १२ दिन पिलाओ ।

तथा ७–सोंठ, मिर्च, पीपल, परस्पर तुल्य और इन्हीं तीनोंके तुल्य मिश्रीका चूर्ण बनाकर प्रतिदिन अधेलेभर चूर्ण मधुके साथ मिलाकर १० दिन पर्यंत सेवन करें ।

उक्त ७ उपायोंसे वातपित्तज्वर शांत हो जावेगा ।

५ वातकफज्वरयत्न १–इस रोगवालेको १० दिन लंघनकराओ, औटाया हुआ जल (जो कि सेरभरका आधासेर रहा हो) पीनेको दो, १० दिनके पश्चात् चिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ बराबरका चूर्ण बनाके इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पिलाओ, फिर पथ्य दो और जो इस ज्वरवालेको कुछ उपद्रव उत्पन्न न हो तो ३ दिन पश्चात् फिरसे यह क्वाथ दो ।

तथा २–कायफल, देवदारु, भारंगी नागरमोथा, धनियां, पित्तपापडा, हर्रेकी छाल, शुंठी और कणांचकी जड़ समान भागके चूर्णमेंसे २ टकेभरका क्वाथ पिलाओ तो वातकफज्वर खांसी और सूजन भी नष्ट होगी ।

तथा ३–नागरमोथा, पित्तपापड़ा गिलोय, सोंठ और धमासा तुल्य लेकर चूर्ण करो इसमेंसे छदामभरका क्वाथ १० दिनतक पिओ तो वातकफज्वर, उलटी, दाह, मुखशोथ भी दूर होंगे

तथा ४–कटियाली, शुंठी गिलोय और पीपल समान भाग लेके चूर्ण करो इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पिलाओ ।

तथा ५–शालपर्णी (बूटी विशेष), पृष्ठपर्णी (बूटी विशेष) दोनोंकटाईं, गोखरु, बेलकी गिरी, अरंणी, अरॅलू, कुम्भेर और पाठा इनका क्वाथ पीपलयुक्त करके १० दिवस पर्यन्त प्रतिदिन पिलाओ ।

---

१ कंवांच या बहुकंटकी भी कहते हैं ।

२ ऊंटकटाई और पसरकटाई । ३ इसे संस्कृतमें अभिमन्थ और श्रीपर्णी भी कहते हैं । ४ इसे "अलाम्बु तथा आलक" कहते हैं । ५ इन दशों औषधियोंके समूहको "दशमूल" संज्ञा दी है ।

तथा ६–यदि उक्त रोगीका मुख और तालू सूख करके जिह्वा कठोर पड़जावे तो बिजौरेकी कलीमें सेंधानमक और काली मिर्च मिलाकर जिह्वापर लेप करो तो उक्त विकारको नष्ट करेगी।

तथा ७–चिरायता, गिलोय, देवदारु, कायफल और वचको समान भाग लेके चूर्ण करो और इसमेंसे छदामभर चूरेका क्वाथ बनाकर पिलाओ–ये सब यत्न ज्वरतिमिरभास्करमें लिखे हैं।

६--कफपित्तज्वर यत्न--इस रोगवालेको १४ लंघन कराके उष्ण जल (जो कि सेरभरका औटाते हुए आधपाव रहजावे) पिलाओ और यह क्वाथ दो।

तथा १-- रक्तचंदन, सोंठ, कमलतंतु, कायफल और दारुहल्दी समान भाग ले छदामभर चूरेका क्वाथ १० दिनतक पिलाओ।

तथा२--नीमकी छाल, रक्तचंदन, पद्मकाष्ठ, गिलोय और धनियाका क्वाथ १० दिवस पर्यन्त दो तो कफपित्तज्वर, दाह, प्यास, उलटी भी नाश होगी, यह लोलिम्बराजमें लिखा है।

तथा ३–गिलोय, इन्द्रयव, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, सोंठ, अगर, चन्दन, नागरमोथा और पीपलको तुल्य भाग लेके चूर्ण बनाओ उसमेंसे ४ मासे प्रतिदिवस अष्टांवशेष जलके संयोगसे पिलाओ तो कफपित्तज्वर, खांसी, दाह, अरुचि और हृदयपीड़ाभी दूर होगी।

तथा ४–गिलोय, दोनों कटियाली, दारुहल्दी, पीपल, अडूसा पटोल, नीमकी छाल और चिरायताके चूर्णमेंसे प्रतिदिन छदामभरका क्वाथ प्रातःकाल तथा सायंकाल १० दिवस पिलाओ।

तथा ५–दाख, किरवारेकीगिरी, धनियां, कुटकी, नागरमोथा, पीपलामूल, सोंठ, और पीपलके चूर्णमेंसे छदामभरका क्वाथ दोनों समय दश दिनतकपिलाओ तो कफपित्तज्वर, शूल, भ्रम, मूर्च्छा, अरुचि और उलटी ये सब दूर हों।

तथा ६–अथवा यह रस दो, ५ टंक हिंगुलसे निकाला हुआ शुद्ध पारा, ५ टंक शोधा हुआ गंधक, ५ टंक कालीमिर्च और ५ टंक शुद्ध

१-जो जल अपने शीतल रूपकी अपेक्षा औटानेपर एक अष्टमांश रहजावे (जैसे एक सेरका आधापाव) वह अष्टावशेष कहलाता है।

सुहागा इन सबोंको महीन पीसकर अदरखके रसकी ७ पुट और पानके रसकी पुट देकर १ रत्तीप्रमाणकी गोली बना लो, इनमेंसे १ गोली प्रातःकाल और १ संध्याकालकेसमय ७ दिवसपर्यंत दो, उक्त प्रत्येक यत्न कफपित्तज्वरनाशक होगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे वाताद्विद्वन्द्वजज्वरयत्न
निरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

सन्निपातज्वर

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्य हि ।
तरंगेऽस्मिंस्तृतीये च चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

त्रिदोषोंसे उत्पन्न हुआ जो सन्निपातज्वर उसकी चिकित्सा इन तीसरे तरंगमें लिखते हैं।

स्थितिवर्णन–उक्त रोगसे दुःखित पुरुषके लिये उत्तम स्वच्छ कूपके जलमें १ टंक सोंठ डालकर औटाओ, जब वह जल औटकर आधा रहजावे तब छानकर रखलो, जब वह रोगी जल चाहे तब यही दो, परंतु दिनका औटाया हुआ जल रातको और रातका औटाया हुआ दिनको मत पिलाओ अर्थात् रातका रातको और दिनका दिनको ही पिलाना चाहिये, वायुविबंधक स्थानमें रक्खो उसके पास १ दो चतुर मनुष्योंको सदैव रक्खो रोगीको शीतल यत्न कदापि न करो और मणिधारण, दान, हवन, शिवाभिषेक तथा मंत्रजपादि सदैव अवश्य कराओ, फिर निम्नलिखित यत्न करो।

सन्निपात यत्न १–कायफल, पीपलामूल, इन्द्रयव, भारंगी सोंठ, चिरायता, कालीमिर्च, पीपल, काकडासिंगी, पोहकरमूल, रास्ना, दोनों कटाई, अजमोदा, छठीली वच, पाठ और चव्य समान समानका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो सन्निपातके व्यतिरिक्त वस्तु अज्ञान (किसी वस्तुका ज्ञान न रहना), पसीनाकी अधिकाई, शीत, उदरशूल, अफरा, बात और कफके सब रोग इस क्वाथसे नष्ट होंगे।

२–अर्कमूल, जवासा (यवास किंवा दुरालभाभी कहलाता है), चिरायता, देवदारु, रास्ना, (राठ तथा एलापर्णीभी कहलाता है), निर्गुंणी

वच, अर्णी, सहिंजना (शोभांजन और सुगना), पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अतीस और जलभंगराके २ टंक चूरे का क्वाथ दोनों समय दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त धनुर्वात दंतस्तम्भन, शीतांग, प्रसूतरोग, श्वास, कास और वायुव्याध्यादि सब इससे नष्ट होवेंगे. यह लोलिंबराजमें लिखा है ।

तथा ३–जो सन्निपातमें जिह्वास्तम्भन हुआ हो तो बिजोरेकी केशरमें सेंधानोन और कालीमिर्च बारीक पीस करके रोगीकी जिह्वापर लेपन करो तो जडता निकलकर कोमलता प्राप्त होगी ।

तथा ४–जो स्मृतिभ्रंश हुई हो तो बच, महुआ, सेंधानोन, मिर्च और पीपल समान समान पीसे हुए कपड़छान करके उष्ण जलके साथ नासे दो तो ज्ञान प्राप्त होकर सब भ्रांति दूर होगी ।

तथा ५–का और पारा और ५ टंक गंधककी कजलीके तरह तरह की खाण सोंठ, मिर्च पीपलका चूर इन दोनों पदार्थों (काजली और चूर्ण) में धतूरेके फलके रसकी ३ पुट देके एक दिनभर खरल करो और इस रसकी नास दो तो सन्निपात दूर हो । इसे उन्मत्तरस संज्ञा दी गई है ।

तथा ६–भैरवांजनसे भी सन्निपात दूर होगा, पारा, गन्धक, काली मिर्च और पीपली तुल्यतुल्यका चूर्ण बनाओ और रसका चतुर्थांश जमालगोटा लेके पारे और गन्धककी कजली मिलाओ तदनन्तर जम्भीरीके रसमें ८ दिन खरल करके नेत्रोंमें लगाओ यह वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

तथा ७—जमालगोटाकी १० टंक बीजी, १ टंक काली मिर्च और १ टंक पीपलामूल इन तीनोंका जम्भीरीके रसमें सात ७ दिवस पर्यंत खरल करके इस अञ्जनको नेत्रोंमें लगाओ ।

तथा ८-शिरसके बीज, पीपल, कालीमिर्च, सेंधानोन, लहसुन, मैनसिल और बच ये सब बराबर लेके बारीक चूर्ण कर लो, तदनन्तर २१ दिवस गोमूत्रके साथ खरल करके इस अञ्जनको नेत्रोंमें लगाओ ।

---

१ दांत जकडना, दांतकडी बधजाना । २ जीभ कडी पड जाना, जीभ न लौटना ३ किसी बातका ध्यान, ज्ञान न रहना, बेसुध हो जाना, पागलसा हो जाना । ४ सूंघनी नासिसासे ऊपर खींचना । ५ पारा और गंधक दोनोंका साथघर्षण करनेसे एक काला पदार्थ उत्पन्न हो जाता है इसे कज्जली कहते हैं ।

तथा ९–५ टंक हिंगुलसे निकाला हुआ पारा, ५ टंक पीपली, ५ टंक काली मिर्च और ५ टंक कजली (पारे गन्धकके योगसे बना हुआ पदार्थ) इन सबको धतूरेके बीजके तेलमें ४ घड़ी खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बांध लो, इस गोलीको अदरखके रसके साथ दो, परन्तु इसपर दही और चावलके व्यक्तिरिक्त अन्य अन्न मत खिलाओ यह वैद्यरहस्यमें लिखा है और यह पञ्चवक्ररस कहलाता है ।

तथा १०–५ टंक हिंगुलसे निकाला हुआ पारा, ५ टंक शुद्ध किया हुआ गन्धक. १ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक जायफल और १० टंक पीपल जिनमेंसे प्रथम पारे और गन्धकी कजली करके शेष औषधि उसमें डाल दो और अदरखके रसमें एक दिन पर्यंत खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाकर रोगीको दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त शीतज्वर विषमज्वर, बिसूचिका, जीर्णज्वर, मंदाग्नि और मस्तकरोग सब नष्ट हो जावेंगे यह वैद्यरहस्यमें लिखा है, इसका नाम आनंदभैरवरस है ।

तथा ११–यदि सन्निपातमें शीत उत्पन्न हो तो कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, हर्रकी छाल, लोध, पोहकरमूल, चिरायता, कुटकी, कूट, कचूर, और इन्द्रयवका तुल्य भागका कपड़छान चूर्ण करके शरीरमें मर्दन, करो तो पसीना, और शीतांग दूर होवे ।

तथा–१२–१५ टंक पारा, ५ सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्च, ४० टंक धतूरेके फलकी भस्मको बारीक पीसके शरीरमें मर्दन करो तो अत्यंत पसीना, शीतांग और सन्निपात दूर होगा ।

तथा १३–पारा, सिंगीमुहरा, काली मिर्च, नीलाथोथा और नौसादरका बारीक चूर्ण, धतूरे और लहसनके रसमें मसलके टिकिया बनाओ, तदनन्तर रोगीके मस्तकपर क्षौर बनवाके वह टिकिया १ प्रहरपर्यन्त रक्खो तो महासन्निपात दूर हो, इस प्रयत्नमें ध्यान रक्खो कि जो रोगीके शरीरमें ताप प्राप्त होके चैतन्य होजावे तो वह अवश्य बच जावेगा और जो ताप न हो तो अवश्य ही मृत्युको प्राप्त हो जायगा ।

तथा १४–लहसन, राई और मुंगनेकी जड़को पीसके गोमूत्रमें रोटी बनाओ और १३ वें नियमानुसार उपचार करो तो उपर्युक्त फल होगा ।

तथा १५–सन्निपातके रोगीको बिच्छूसे कटावे तो महा भयंकर सन्निपात दूर हो जावेगा ।

तथा १६-एवं उक्त रोगीको सर्पसे कटानाभी वैद्यकशास्त्रमें लिखा है परन्तु लोकविरुद्ध है अतएव विचारके करना चाहिये ।

तथा १७-लोहेकी तप्त शलाका रोगीकी पगथली (पैरोंके तलुए) या भौंहके बीचमें अथवा ललाटके मध्यमें चेक (लगा) देओ यन्त्र मंत्रादिकसे भी सन्निपात नष्ट होता है ।

वैद्यको चाहिये कि इन सब बातोंपर पूर्ण ध्यान देके अपनी बुद्धि-बलके विचारसे जो प्रयत्न योग्य समझे सो करे, परन्तु सन्निपातके रोगीको दिनके समय कदापि निद्रा न लेने देवे और आम तथा कफ-नाशक प्रयत्नोंको अवश्य करे तथा दोषानुसार लंघन करावे ।

सुश्रुतादिग्रंथोंमें सन्निपातको एकही माना है परन्तु अन्यान्य ऋषियोंके मतानुसार संधिगादि १३ प्रकारका सन्निपात है वह अब हम उन तेरहके जुदे जुदे प्रयत्न लिखते हैं ।

१ संधिगसन्निपातके यत्न-हर्रकी छाल, गिलोय, मुंगना, चित्रक लज्जालू, सोंठ, देवदारु, कुटकी, कचूर, अडूसा वायविडङ्ग, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटाई, बेलकी गिरी, अरणी, अरलू, कुंभेर, पाठा और पीपल तुल्यतुल्यके चूर्णमेंसे २ टङ्कका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलावें तो लक्षणयुक्तभी संधिगसन्निपात दूर होगा ।

२ अन्तकसन्निपात-इस रोगावाला रोगी मर जाता है, उसकेलिये कोई यत्न नहीं तथापि किसी वैद्यकी बुद्धिमें आवे तो अवश्य करै ।

३ रुग्दाह-हर्रकी छाल, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, कुटकी, देवदारु, खिरवारेका गूदा, द्राक्षा और नागरमोथा तुल्य तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलाओ ।

४ चित्तभ्रम-ब्राह्मी, बच, लाजवन्ती, (लँजनी)[1], त्रिफला, कुटकी, खरेटी, अमलतासकी गिरी, नीमकी छाल, नागरमोथा,कडवी तुरईकी जड़ द्राक्षा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटाई, गोखरू, बेलकी गिरी, अरलू, अरणी, कुम्भेर और पाठा समानके चूरेमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय ११ दिवसपर्यंत सेवन कराओ ।

---

१ जो बहुधा लोकमें लजनीके नामसे प्रसिद्ध है, इस बूटीमें यह गुण है कि जो इसके एक पत्रको भीछूदोतो सब लताभर कुम्हिलासी जावेगी मानो वह तुम्हारे स्पर्शसे लज्जित होकर सकुचगई हो इसे लजनी ऐसा नाम दिया गया है ।

शीतांगसन्निपात--यह भी महा असाध्य है, इस रोगीका बचना दैवाधारही है तथापि कुछेक यत्न कहते हैं।

यत्न १--उक्त रोगीको बिच्छूसे कटाओ और बारीक पिसा हुआ सिंगीमुहरा मिलाके शरीरमें मर्दन करो।

तथा २--सिंगीमुहरा, लहसन और राईको गोमूत्रमें पीसके टीरी बनाके रोगीके क्षौर किये मस्तकपर धर दो, जब रोगीका शरीर उष्ण होजावे तब उसे निकाल लो और शरीर उष्ण न होता हो तो रोगी निश्चय मरजावेगा।

तथा ३--४ टंक पारा, पांच टंक सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्च और ४० टंक धतूरके फलोंकी भस्म, इन सबोंको बारीक पीसके शरीरमें मर्दन करो तो शीतांगसन्निपात दूर हो।

४ तंद्रिक--भारंगी, गिलोय, नागरमोथा, कटिया, हर्रकी छाल और पोहकरमूल समानके चूर्णमेंसे २ टंकोंका क्काथ बनाकर पिलाओ।

५ कण्ठकुब्ज--काकडासिंगी, चित्रक, हर्रकी छाल, अडूसा, कचूर, चिरायता, भारंगी, दारुहलदी, कटियाली, पोहकरमूल, नागरमोथा, कूडा (इन्द्रवृक्षकी छाल), इन्द्रयव, कुटकी और कालीमिर्च तुल्य-तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय ८ दिन पर्यंत पिलाओ।

६ कर्णिकसन्निपात--रास्ना (रीठा, एलापर्णी और सुगन्धा भी कहते हैं) असगंध, नागरमोथा, दोनों कटाई, भारंगी, काकडासिंगी, हर्रकी छाल, बच, पोहकरमूल और कुटकी बराबरके चूर्णमेंसे २ टंकका क्काथ बनाके दोनों समय ३० दिनतक दो, इस कर्णिक तथा अन्य सन्निपा-तमें भी कानके तले सूजन आजाती है, इसे वैद्यकशास्त्रमें कर्णमूल कहते हैं आगे इसका उपाय देखो।

७ कर्णमूल यत्न--हल्दी, हिंगनबेटके वृक्षकी जड़, कूट, मुंगनेकी जड सेंधानमक, दारुहलदी, देवदारु, और इन्द्रायणकी जडको समान लेके आंकडेके दूधमें खरल करे और कर्णमूलपर ठंढाही लेप करो तो कर्णमूल नष्ट होगा।

८ कर्णमूलके उत्पन्न होते ही जोंक लगाके उसका रुधिर निकलवा डालो तो कर्णमूल नष्ट हो जावेगा।

९ भग्ननेत्रसन्निपात--दारुहल्दी, जंगली या कड़वी तुरई किंवा मडी, पत्रज, नागरमोथा, कटियाली, कुटकी, हल्दी, नीमकी छाल और त्रिफला तुल्य, के चूर्णमेंसे २ टंकका काथदोनों समय १५ दिवस पर्यंत पिलाओ ।

१० रक्तष्ठीवी--नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, पित्तपापडा, रक्तचन्दन, महुआ, कमलतंतु, शतावरी, मलयागिरिचन्दन और बकायनकी छाल तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके १५ दिवसपर्यंत पिलाओ । अथवा--दूबके रस या अनारके रसका नास दो ।

११ प्रलाप-नागरमोथा, कमलतंतु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटियाली, बेलकी गिरि, अरलू, कुम्भेर, पाठा, सोंठ, पित्तपापड़ा चन्दन और अडूसा तुल्यमेंसे प्रतिदिन १ टंकका क्वाथ बनाकर १० दिनपर्यंत पिलाओ ।

१२ जिह्वक--वच, कटियाली, जगासा, रास्ना, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ, कुटकी, काकडासिंगी, पोहकरमूल, ब्राह्मी, भारंगी, नीमकी छाल, अडूसा, और कचूरके चूर्णमेंसे दो टंकका क्वाथ प्रतिदिन १० दिवस-पर्यंत सेवन कराओ ।

१३ अभिन्यासस‌न्निपात-भारंगी, रास्ना, जंगलीतुरई, देवदारु, हल्दी, सोंठ, पीपल, अडूसा, इंद्रायणकी जड़, ब्राह्मी, चिरायता, नीमकी छाल, कमलतंतु, कुटकी, वच, पाठा, आल, दारुहल्दी, कटियाली गिलोय, निसोत, झाऊंवृक्षकी जड़, पोहकरमूल, नागरमोथा, जवासा, इंद्रयव, त्रिफला और कचूर तुल्यतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंक (प्रतिदिन १२ दिनतकदोनों समय) का क्वाथ बनाकर पिलाओ, अथवा यह नास दो ।

अभिन्यासनाशक नास--कालीमिर्चे, महुआ, सेंधानोंन, चित्रक, जायफल और पीपल इन सबोंको बारीक पीसके उष्ण जलमें नास दो ।

अष्टज्वरनाशक चिन्तामणिरस--हिंगुलसे निकाला हुआ शुद्ध पारा, शोधा हुआ गंधक, अभ्रक, तांबेश्वर, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हर्रकी

१ यह एक वृक्ष है जो बहुधा नदियोंके समीपमें होता है ।

छाल आंवला और शुद्ध जमालगोटा तुल्यभाग को दडघंलके पत्तोंके रसमें २ प्रहरतक खरल करके धूपमें सुखाकर १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनालो यह एक गोली देनेसे आठों प्रकारके ज्वर, उदर-शूल, अजीर्ण और आमवात आदि सब रोग नष्ट होंगे ऐसा वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखा है।

अमृतसंजीवनी गुटिका -२टंक हिंगुलसे निकाला हुआ शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टंक पीपल और चार टंक कालीमिर्च लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ उसमें उपर्युक्त औषध मिलाके इन सबों को ब्राह्मीके रसमें १ पुट और १ पुट चित्रककी देके १ रत्ती प्रमाण की गोली बनालो, तदनन्तर इस गोलीको अदरखके संयोगसे दो तो सन्निपात, मूर्च्छा, आमवात वायुशूल, शीतज्वर, विषम ज्वर और मंदाग्नि ये सब रोग दूर होवेंगे, रसमञ्जरीमें लिखा है कि इस अमृतसंजीवनीसे मृतक भी जीवित हो सकता है।

कालारि रस--१२ मासे शुद्ध पारा, २० मासे शुद्ध गंधक, १२ मासे शुद्ध सिंगीमुहरा, २० मासे कालीमिर्च, ४० मासे शुद्धसुहागा १६ मासे लौंग, १३ मासे धतूरे बीज, २० मासे पीपल, २० मासे जायफल और १२ मासे अकरकरा लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ और उसीमें उपर्युक्त औषध पीसकर अदरखके रसमें ३ दिन, नींबूके रसमें तीन दिन और केलीके रसमें तीन दिन खरल करो, तदनंतर १ तथा दो रत्ती प्रमाणकी गोली बनाके १ गोली रोगीको खिलाओ तो बादी और सन्निपातके रोग दूर हों, यह योगचिन्तामणिमें लिखा है।

त्रिपुरभैरवरस–५ पैसेभर कालीमिर्च, ४ पैसेभर सोंठ, ३ पैसे भर शुद्ध तेलिया सुहागा और १ पैसेभर शुद्ध सिंगीमुहराको महीन पीसकर नींबूके रसमें ३ दिन, अदरखके रसमें ५ दिन और पानके रसमें ३ दिन खरल करो और १ रत्ती प्रमाणकी गोली अदरखके रसमें दो तो सन्निपात दूर हो।

---

१ इसे गूमा कहते हैं, यह लंबा हाथ १॥ ऊँचा है, बीचबीचमें इसकी डंडीमें फूल होते हैं और दो दो पत्ते होते हैं यह एक प्रकारका जङ्गली शाक है जो मारवाड़ देशमें " दडघल" नामसे प्रसिद्ध है।

संज्ञाकरण रस–शुद्ध सिंगीमुहरा, सेंधानमक, कालीमिर्च, रुद्राक्ष, कटाली, कायफल, महुआ और समुद्रफल समान महीन पीस छानके आकके खारकी तीन पुट दो तदनंतर १–२ तथा तीन रत्ती (आवश्यकतानुसार) कान नाकके छिद्रमेंसे फूँक द्वारा अंतर प्रविष्ट करो तो संज्ञा होकर सन्निपात दूर हो।

ब्रह्मास्त्ररस--३ टंक पारेकी भस्म, ३ टंक शुद्ध गंधक, ७ टंकशुद्ध सिंगीमुहरा और १२ टंक कालीमिर्च इन सबोंको बारीक पीसके कलिहारी बंदाल और ज्वालामुखी इन तीनोंके रसमें खरल करो तदनंतर अदरखके रसकी २१ पुट देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बांधलो इसकी गोली देनेसे सन्निपात दूर होगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे सन्निपातज्वरयत्ननिरूपणं नाम तृतीयस्तरंगः ॥३॥

आगन्तुक ज्वर

आगन्तुकप्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमम्।
तुर्ये तरंगे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस चौथे तरंगमें शस्त्रादि चोटसे उत्पन्न हुए जो आगन्तुकज्वर तिसका यत्न लिखते हैं।

चोटपर यत्नानुपान- इस ज्वरसे पीड़ित रोगीको लंघन मत कराओ, कसैली और उष्णौषध न दो, मधुर, चिकनी वस्तु (हरीरा और हलुआ) खानेको दो, चोटपर सेको, लेप करो अथवा पट्टी बांधो और सींवन लगाओ।

भूतादिबाधाजन्य ज्वरानुपान–इस ज्वरवालेको बांधके ताड़नादि करो, नास दो, अंजनलगाओ, तथा यंत्र मन्त्रादिका उपयोग करो तो भूतबाधा दूर हो।

भूतबाधानाशक मन्त्र—"ॐ ह्रीं ह्रीं ॐ नमो भूतनायक समस्त भुवन भूतारि साधय २ हुं ३" इस मन्त्रको पढ़के मयूरपक्षसे झाड़ दो तो भूत खड़ा न रहेगा।

---

१ मनुष्य तथा वस्तुओंके नाम पहिचानना बोधमय होना। २ कालाली तथा लांगली नामसे प्रख्यात है। ३ कंटकफल यावनालक फलकरके प्रसिद्ध है। ४ एक बूटी है जो बहुधा तलाइयोंमें उगती है।

नृसिंहरक्षा मन्त्र–"ॐ नमो नारसिंहाय हिरण्यकशिपुवक्षःस्थल विदारणाय त्रिभुवनव्यापकाय भूतप्रेतपिशाचशाकिनीकीलोन्मूलनास्तम्भोद्भवसमस्तदोषान् हन हन, सर सर, चल, चल, कंप कंप मथ मन्थ, हुं, फट् फट् फट् ठःठः महारुद्रो जापयति स्वाहा" इस मन्त्रको पढ़कर मयूरपक्षसे झाड़ दो तो भूत निकल जावे ।

भूतको बुलवाने (भाषण कराने) का मंत्र- "ॐ नमो भगवते भूतेश्वराय कलिकलिताक्ष्यांय रौद्रदंष्ट्राकरालवक्त्राय त्रिनयनभूषिताय धगधगितिपिशंगललाटनेत्राय तीव्रकोपानलायामिततेजसे पाशशूलखट्वांगडमरुकधनुर्बाणमुद्गर भयदंडत्रासमुद्राव्यग्रदशदोर्दंडमंडिताय कपिलजटाजूटकूटार्द्धचन्द्रधारिणे भस्मरागरंजितविग्रहाय उग्रफणिपतिघटाघोषमंडितकंठदेशाय जय जय भूतडामरेश आत्मरूपं दर्शय दर्शय, नृत्यय, नृत्यय, सर सर, बल बल, पाशेन बंध, बंध, हुंकारेण त्रासय त्रासय, वज्रदंडेन हन हन, निशितखड्गेन छिंधि, छिंधि, शूलाग्रेण भिंधि भिंधि, मुद्गरेण चूर्णय चूर्णय, सर्वग्रहाणाम् आवेशय आवेशय" इस मन्त्रसे गऊके घृतमें गूगल मिलाके (जिसे भूत लगाहो उसके पास) धूम दो और इसी मन्त्रसे उर्द मंत्रित कर करके उस पर फेंकते जाओ तो वह बोलने लगेगा तब उससे जो कुछ वृत्तांत पूँछना हो सो पूँछलो और फिर पूर्वोक्त मन्त्रसे उसे निकाल दो ।

भूतबाधानाशकअञ्जन तथा नास--लहसनके रसमें हींग पीसके नाकसे सुंघाओ अथवा नेत्रोंमें अञ्जनलगादो तो भूतभाग जावेगा ।

भूतबाधानाशक तंत्र–८ तुलसीके पत्र, कालीमिर्च और सहदेईकी जड़ (रविवारके दिन पवित्र होकर लो) इनतीनोंको एकत्र करके कंठमें बांध दो तो भूत दूर हो, यह तंत्रोपचार ग्रन्थोंमें लिखा है ।

विषज्वर यत्न–इस ज्वरवालेको लघु वमन, तथा विरेचन दो, विषानुसार उसका उतार दो, उतार इस ग्रंथके अन्तमें लिखेंगे ।

कामज्वर यत्न–कामज्वरित पुरुषको अत्यन्त सुन्दर, रूपवती तरुणी स्त्रीसे सम्भोग कराओ और कामज्वरित स्त्री को पतिसे सम्भोग कराओ ।

१ इस धूनीमें होसके तो नीमके सूखे पत्र और सर्पकी कांचली डाल दो ।

क्रोधज्वर यत्न--उक्त रोगीको प्रिय, मधुर, मनोहर बचनोंसे समझाओ अथवा उसके अपराधीसे प्रार्थना कराओ ।

शोकज्वर यत्न--उक्त रोगीको धैर्य दिलाकर ज्ञानोत्पादनी कथा नित्य सुनाओ, अनेक मिष्टान्न, रुचिवर्द्धक पदार्थ खिलाकर पुष्पवाटिकादिमें भ्रमण कराओ तो शोक निवारण होकर ज्वर जाता रहे ।

भयज्वर यत्न--उक्तरोगीकोवीररससम्मिलित, हर्षोत्पादनी कथा वार्त्ता श्रवण कराके हिम्मत दो तो भयजन्य ज्वर दूर हो ।

शापजन्यज्वर यत्न--जिस योग्यपुरुषके तिरस्कार करनेसे शाप हुआ है उसे मृदु भाषण, द्रव्य, प्रार्थना शांति क्षमादि यत्नोंसे प्रसन्न करनेसे शापजन्यज्वर नष्ट होगा ।

विषमज्वर यत्न--उक्त रोगीको मूंग या मोठकी दालका हलका जल पिलाओ, ठंढ़ा पानी पीनेके न दो और निम्नौषध दो ।

तथा १--पटोल, हर्रकी छाल, इन्द्रयव, गुरुच और जवासा तुल्योपतुल्योंको कूटकर चूर्ण करो, इस चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर दोनों समय ७ दिवस पर्यंत पिलाओ तो संतत ज्वर दूर हो ।

तथा २--कटियाली, धनियां, सुंठी, गिलोय, नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, रक्तचंदन, चिरायता, पटोलपत्र, अडूसा, पुहकरमूल, कुटकी, इंद्रयव, नीमकी छाल, भारंगी और पित्तपापड़ा समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय १० दिन पिलाओ तो संततादि शीतज्वर नष्ट हों, यह क्षुद्रादि क्वाथ है ।

तथा ३--चिरायता, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, हर्रकी छाल, नागरमोथा, धनियां, अडूसा, त्रायमाण, कटियाली, काकडासिंगी, सोंठ, पित्तपापड़ा, प्रियंगुपुष्प, पटोल, पीपली और कचूरको तुल्य महीन पीस छानके इसमेंसे १। सवा टंक प्रतिदिन शीतल जलके संयोगसे ८ दिवसतक पिलाओ तो विषमज्वर नष्ट होगा इसे षोडशांगचूर्ण कहते हैं ।

तथा ४--चिरायता, कुटकी, निसोत, नागरमोथा, पीपली, वायविडंग, सोंठ और नीमकी छाल तुल्यको महीन पीस छानकर चूर्ण बनावे और इसमेंसे १ टंक प्रतिदिन उष्ण जलके साथ ७ दिनतक सेवे तो विषमज्वर नष्ट होकर भूख बढ़ेगी ।

तथा ५--संखियाको पीले पके हुये भांटेमें रखके बन्द करदो फिर उसे अग्निमें दाबकर भरता करलो इसी प्रकार १४ भांटोंके साथ बदल बदलकर १४ बार भरता करलो तदनन्तर उसे निकालकर उसीके समान प्रमाणकी पीपल और समानही हिंगुल ये तीनों पदार्थ (पका-हुआ संखिया १ पीपल २ और हिंगुल ३) बारीक पीसकर पानके रसके साथ राई प्रमाणकी गोली बनालो रोगीको ज्वरका जाड़ा लगनेके पूर्व एक गोली बतासेमें रखकर खिलादो तो अन्येद्यु तृतीयक और चातुर्थिक इत्यादि समस्त ज्वर ३ तथा ५ गोलीके देतेही नष्ट होजावेंगे इसको ज्वरांकुश रस कहते हैं।

जीर्णज्वर यत्न १-१ भाग मोतीका चूर्ण ३ भाग हिंगुल, ४ भाग कालीमिर्च और ८ भाग शुद्ध खपरिया इन सब ओषधोंको पीसके गौके मक्खनमें (जहांतक मक्खनकी चिकनाहट न मिटे) खरल करो, उक्त पदार्थ प्रस्तुत होनेपर बटी बनालो, यह रस जो पीपल और मधुके संयोगसे १ दो रत्ती प्रमाणकी मात्रासे दिया जावे तो जीर्णज्वर धातुजन्य (उपदंश, प्रमेहादि) रोग, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, कास, श्वास और प्रदरादि सब रोगोंको नष्ट कर देगा इसीको वसंतमालिन रस कहते हैं।

तथा २-कटियाली, गिलोय और सोंठ इन तीनोंका क्वाथ दश १० दिन पर्यन्त पिलाओ तो जीर्णज्वर दूर हो।

तथा ३--कचूर, पित्तपापड़ा, सोंठ, नारमोथा, कुटकी, कटियाली और चिरायता समानके चूर्णमेंसे २ टंक क्वाथ प्रतिदिन ११ दिनतक पिलाओ तो जीर्णज्वर और विषमज्वर दोनों दूर होवेंगे।

तथा ४--एक सेरभर पीपलकी लाख, ६ सेर मीठा जल और १० टंक लोह इन सबोंको मृत्तिकाके घटमें रखकर मन्द मन्द आंचसे औटाओ, जब चतुर्थांश रहजावे तब उतारकर छानलो तदनंतर इसी रसमें सेर भर गऊका दही, सेरभर मीठा तेल, २ टंक सौंफ, २ टंक असगंध, २ टंक हलदी, २ टंक देवदारु, २ टंक संभालू, २ टंक पित्तपापड़ा, २ टंक कुटकी, २ टंक मूर्वा, २ टंक मुलहटी, २ टंक नागरमोथा, २ टंक रक्त-चन्दन और १ टंक रास्ना ये सब पदार्थ बारीक पीसकर डाल दो फिर (लाखका रस, घी, तेल, दही और ये सब औषधोंका चूर्ण) उक्त सब

१ इसीको मधूलिका गोकर्णी और पीलुपर्णी भी कहते हैं।

पदार्थोंको हाथसे भलीभांति एकत्र मिलाकर मिट्टीके चिकने घड़ेमें भर दो, इस घटको अग्निपर चढ़ाके मन्द मन्द आंच दो और जब लाखका रसादि सब पदार्थ जलकर केवल तैलही तेल रह जावे तब उतारके छानकर शुद्ध तेल बनालो उसे लाक्षादि तेल कहते हैं, इस तेलके मर्दनसे जीर्णज्वर दूर होता और शरीरमें बल बढ़ता है।

तथा ५-रोगीको प्रथम दिन ३, दूसरे दिन ४, तीसरे दिन ५ इसी प्रकारसे २१ पिप्पली तक बढ़ाओ और इसी प्रकार एक एक प्रतिदिन कमती करते हुए ३ तीनही तक ले आओ तो जीर्णज्वर नाश होजावेगा, इसे वर्द्धमानपिप्पली कहते हैं, कोई २ वैद्य इन्होंको ५ पिप्पलीसे फढ़ाकर ९ ही तक लाते हैं।

तथा ६-बकरीके दूधके फेनको प्रतिदिन पिलाओ।

तथा-नीमके पत्र, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, अजमोद, सेंधानोन, सोंचरनोन, बिडनोन, जवाखार, नोन, चित्रक, चिरायता और पित्तपापडा तुल्यतुल्यके महीन चूर्णमेंसे १ टंक प्रातःकाल जलके साथ दो तो जीर्णज्वर तथा विषम ज्वर भी नष्ट हो इसे निम्बादि चूर्ण कहते हैं।

८-त्रिफला, दारुहल्दी, दोनों कटियाली, कनेर, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, पिप्पलामूल, मूर्वा, गुरुच, धनिया, अडूसा, कुटकी, त्रायमाण, पित्तपापडा, नागरमोथा, कमलतंतु, नीमकी छाल, पोहकरमूल, मुलहटी, अजवायन, इन्द्रयव, भारंगी, मूँगनेके बीज, फिटकरी, वच, तज, कमलगट्टा, पद्मकाष्ठ, चन्दन, अतीस, खरेंटी (बला), वायविडंग चित्रक, देवदारु, पटोल, चव्य, लवंग, वंशलोचन और पत्रज ये सब औषध बराबर लेके इन सबके बोझसे अर्द्ध भाग चिरायता लो इन सबके बारीक चूर्ण १ टंक शीतल जलके साथ प्रतिदिन लो तो समस्त ज्वर मात्र तथा विषमज्वर भी नष्ट होजावे, इसे सुदर्शन चूर्ण कहते हैं।

तथा ९-यही उक्त यत्नोंसे भी जीर्णज्वर न मिटे तो रोगीकी शक्तिके विचारानुसार वमन अथवा विरेचन कराओ तो विषम और अजीर्णज्वर दूर होवेंगे।

अजीर्णज्वरप्रयत्न-अजमोद, हर्रकी छाल, सोंचरनोन और कचूर बराबरका चूर्ण बनाकर १ टंक उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्णज्वर दूर हो।

दृष्टिज्वर १–सेंकी हुई हींग, कालीमिर्च, पिप्पली और सोंठके बारीक चूर्णमेंसे २ टंक उष्ण जलके संयोगसे दो तो दृष्टिज्वर दूर हो।

तथा २–मोहरा आदिको धोके उसका जल पिलाओ तो दृष्टिज्वर दूर हो।

रुधिरप्रकोपज्वर यत्न–द्राक्षा अडूसा, कटियाली, हल्दी, गिलोय, हर्रकी छाल समानके चूर्णमेंसे ४ टंकका क्वाथ बनाकर अधेलेभर मधुके साथ ७ दिनतक दो तो रक्तज्वर नष्ट हो।

मलज्वर यत्न–१ कुटली, पीपलामूल, नागरमोथा, हर्रकी छाल और किरमालेका गूदा समानके चूर्णमेंसे २ टंक क्वाथ बनाके पिलाओ तो मलज्वर दूर हो।

कालज्वर यत्न–गऊ, पृथ्वी, स्वर्ण, अन्न और वस्त्र, निज श्रद्धानुसार दान करो, परमात्माका ध्यान करो, तथा सन्निपातोक्त यत्न करो जो परमेश्वरकी कृपा हो तो आरोग्य प्राप्त होजावेगा नहीं तो कालज्वरसे बचना तो दुर्लभही है॥ इत्यागन्तुक यत्न॥

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे आगन्तुकादिज्वरयत्ननिरूपणं नामचतुर्थस्तरंगः॥ ४॥

ज्वरोपद्रव

ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीनां यथाक्रमम्।
तरंगे पंचमें चात्र चिकित्सा लिख्यते मया॥ १॥

ज्वरके तृट् (प्यास) आदि, १७ उपद्रवोंकी चिकित्सा इस पांचवे तरंगमें यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

तृषोपद्रव यत्न–१ धनियां, नागरमोथा, और पित्तपापड़ाके बारीक चूर्णमसे २ टंकका क्वाथ बनाकर ३ दिनपिलाओ तो प्यास, दाह और अतिसार ये तीनों उपद्रव नष्ट होजावेंगे।

तथा २–बेंड़के अंकुर, चावलोंकी लाही और कमलगट्टाको बारीक पीसके मधुके साथ गोलियां बनाओ और इनमेंसे एक गोली मुँहमें रक्खो तो प्यास न लगेगी।

---

१ एक प्रकारका पत्थर (प्रसिद्ध) है, जिसमें धागा बांधकर अग्निमें डालनेसे नहीं जलता है।

२ जहां किसी प्रकारका प्रमाण न दिया हो वहां उन सब औषधोंको तुल्य समझो प्रतिवार लिखनेकी कोई आवश्यता नहीं।

ज्वरमें उत्पन्न हुई खांसीका यत्न १-पीपल, पीपलामूल, सोंठ, भारंगी, खैरसार, कटियाली, अडूसा, कलंजी और बहेड़ा तुल्यके चूर्णमें १ टंकका क्वाथ बनाके प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो खांसी दूर होगी।

ज्वरमें श्वासका उपाय-सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, काकडा सींगी, भारंगी और पोहकरमूलके १ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन सात दिवसपर्यंत पिलाओ तो ज्वरकी श्वास दूर हो।

ज्वरकी हिचकीका यत्न १-जलमें सेन्धानोन पीसके नास दो तो हिचकी बन्द होजावेगी।

तथा २-मोरके चँदोवेकी राख और पीपल दोनों मधुके साथ चटाओ तो ज्वर और वमन दोनों दूर हों।

ज्वरमें वमनका यत्न १-टंकभर गुर्चका क्वाथ मधुके संग दे तो ज्वर और वमन दोनों नष्ट होवेंगे।

तथा २-चावलोंकी लाही और पीपल मधुके संग चटाओ तो ज्वर और वमन दोनों नष्ट होवेंगे।

ज्वरमें अतिसारका यत्न १--सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और कूडेकी छालके २ टंक चूरेका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिवसपर्यन्त पिलाओ तो ज्वर और अतिसार दोनों बंद हो जावेंगे।

तथा २-पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, बेलकी गिरी, नागरमोथा, चिरायता, कूडेकी छाल, और इन्द्रयवके, २ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिनपर्यन्त पिलाओ तो ज्वरातिसार, हिचकी, मुखशोष, वमन और श्वास कास ये सब रोग दूर होवेंगे।

ज्वरमें अरुचिका यत्न-सेंधानोंन, सेंकी हुई भांग, आलूबुखारा, सोंठ, पीपल और द्राक्षा इन सबकी गोली बनाके मुखमें रक्खो तो अरुचि नष्ट हो।

ज्वरमें बद्धकोष्ठ और अफराका यत्न-साबुनकी बत्ती बनाके मूलद्वार (गुदा) पर रक्खो तो बद्धकोष्ठ और अफरा दोनों नष्ट होंगे।

ज्वरमें मूर्छाका यत्न-किरवारेकी गिरी, द्राक्षा, पित्तपापड़ा, हर्रकी छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ बनाके पिलाओ तो मूर्छा जावेगी।

ज्वरमें मुखशोष और जिह्वाकी नीरसताका यत्न–द्राक्षा, मिश्री तथा अनारदानेसे कुल्ले कराओ तो मुखशोष और नीरसता दोनों मिट जावें।

ज्वरमें निद्राके अभावका यत्न–१ रत्ती आलूबुखारा और एक रत्ती भांगके चूर्णको मधुके संयोगसे चटाओ तो भूख और निद्राकी वृद्धि होकर अतिसार और संग्रहणी नष्ट हो जावेगी।

तथा २–अलसी और अंडी दोनोंके तेलोंको काँसे (फूल) की थालीमें घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगाओ तो निद्रा अवश्य आवेगी।

ज्वरनाश होनेके पश्चात बलपूर्ण होने को रोगीको किस नियमसे रखना चाहिये–

नियम–१ पथ्य रक्खो, मैथुन न करने दो, ३ व्यायाम तथा किसी भी प्रकारका परिश्रम न करने दो, ४ बोझा न उठाने दो, ५ और न अधिक भोजन करने दो, इत्यादि, विपरीत आहार विहारादिपर पूर्ण ध्यान रक्खो, नहीं तो नियम भङ्ग होकर ज्वरकी पुनरावृत्ति हुई तो फिर आरोग्य होना कठिन ही है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे ज्वरोपद्रवयत्ननिरूपणं
नाम पञ्चमस्तरंगः ॥ ५ ॥

अतिसार

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेहि यथाक्रमम्।
षष्ठे तरंगे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस छठवें तरंगमें वातादि ६ प्रकारके अतिसारकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

वातातिसार यत्न १–अतीस, नागरमोथा, इन्द्रयव, और सोंठके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिन पिलाओ तो वातातिसार दूर हो।

तथा २–इन्द्रयव, नागरमोथा, देवदालीकी गिरी, आमकी गुठली और धावड़ेके पुष्प दो टंक चूर्णको भैंसके मट्ठेके साथ सात दिनतक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो।

पित्तातिसार यत्न–१ बेलकी गिरी, इन्द्रयव, नागरमोथा, कमलतन्तु और अतीसके दो टंक चूर्णका क्वाथ आठ दिन पर्यंत पिलाओ तो पित्तातिसार जावे।

तथा २–रसोंत, अतीस, इन्द्रयव, सोंठ, धावड़के फूलका २ टंक चूर्ण चावलोंके पानीके साथ सहता सहता ७ दिनतक पिलाओ तो अति भयंकर पित्तातिसार भी दूर होगा।

तथा ३–बेलकी गिरी, कमलतन्तु, नागरमोथा, इन्द्रयव और अतीस २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिनतक दो तो पित्तातिसार नष्ट हो।

रक्तातिसार यत्न १–इन्द्रवृक्षकी छाल और अनारके छिलके २ टके भरके क्वाथमें ५ टंक मधु मिलाके ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो रक्तातिसार जावे।

तथा २–इन्द्रवृक्षकी छाल, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला, लोध, रक्तचंदन, धावडे के फूल और अनारके छिलकमें से दो टंकके क्याथमें २ टंक मधु मिलाके ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो दाह, मल और रक्तातिसार नष्ट हो।

तथा ३–एक टंक श्वेतचंदन (पीस डालो या घिस लो) २ टंक मधु और २ टंक मिश्री एकत्र कर ८ दिवसपर्यंत चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो।

तथा ४–मीठे अनारका पुटपाक बनाके चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो।

तथा ५–बकरीका दूध, माखन, मधु और मिश्री मिलाकर खिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो।

तथा ६–२ टंक बेलकीगिरी बकरीके दूधके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो।

गुदा पकजानेपर यत्न १–पटोल, मुलहठी, और महुआ इन तीनोंको पानीमें औटाके शीतल होनेपर छान लो इस जलसे गुदा धोओ तो गुदा पाक नष्ट हो।

तथा२–गेहूँके आटेमें घी मिलाके पानीसे उसन डालो तदनन्तर उसे रोटीके समान सेंकके सहता २ सेंको तो गुदापाक नष्ट होगा।

बहुधा उसी औषधको ७ दिनमें यदि पिलाओ तो वही समझी जायेगी, परन्तु ऐसे (उक्त सदृश) प्रसंगपर उतनी २ औषध एक एक दिनके लिये हैं।

कफातिसार यत्न १–उक्त रोगीको २ या चार लंघन कराके अनन्तर थोड़ा २ मूँगका पथ्य दो और निम्न क्वाथ पिलाओ तो कफातिसार दूर हो।

तथा २–चव्य, अतीस, कूट, बेलकी गिरी, सोंठ, कुडेकी छाल अतीसका १ टंक चूरेका क्वाथ बनाकर ७ दिन पर्यन्त खिलाओ तो कफातिसार दूर हो।

तथा ३–सेंकी हुई हींग, सोंचरनोन, कालीमिर्च, पिप्पली और अतीसका १ टंक चूर्ण प्रतिदिन ७ दिन पर्यन्त खिलाओ तो कफातिसार दूर हो।

सन्निपातातिसार यत्न १–पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, खरेंटी, बेलकी गिरी, गिलोय, मोथा, पाठा, चिरायता, कुंडेकी छाल और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन १० दिवस पर्यंत पिलाओ तो सन्निपातिसार दूर हो।

तथा २–बड़ीहर्र, साठ और नागरमोथाका २ टंक चूर्ण प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो त्रिदोष (सन्निपात) अतिसार दूर हो।

तथा ३–कुडेकी छालके (पुटपाककी रीतिसे निकाले हुए) रसमें ५ टंक मधु मिलाकर प्रतिदिन १० दिनतक पिलाओ तो सन्निपातातिसार दूर हो।

शोक तथा भयातिसार–इस तरंगके आदिमें वातातिसारके जो यत्न लिखआये हैं वेही इसकेभी जानो।

आमातिसार यत्न १–हर्रकी छालका २ टंक चूर्ण मधुके संयोगसे ५ दिन पर्यन्त चटाओ तो आमातिसार दूर हो।

तथा २–धनियां, सोंठ, बेलकीगिरी, नागरमोथा और त्रायमाणके २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ या १० तथा १५ दिवस (रोगानुसार) पिलाओ तो आमातिसार और उदरशूल भी बन्द हो जावेगा, इसे धान्य (धना) पंचककहते हैं।

तथा ३–बड़ी हर्र, मोथा, सोंठ अतीस और दारुहल्दीके दो टंक चूर्णका क्वाथ बनाके सात दिनपर्यंत पिलाओ तो आमातिसार दूर हो।

तथा ४–बड़ी हर्र अतीस सेंकी हुई हींग, सोंचरनोन और सैंधानोंनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो आमातिसार दूर हो।

तथा ५ सोंठको जलमें पीसके गोला बनाओ, इस गोलेपर एरंडीके पत्ते लपेटकर धागेसे दृढ बांध दो और ऊपरसे मिट्टी लपेटकर मन्द मन्द आँचसे पकाओ पकनेपर उसे स्वच्छ (निर्मल) कर प्रतिदिन २ टंकके प्रमाणसे मधुयुक्त कर ७ दिनतक खिलाओ तो आमातिसार दूर हो।

पक्वातिसार यत्न १–लोध, धावडेके फूल, बेलकी गिरी, मोथा, आमकी गुठली और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णको भैंसकी छाँछके साथ पिलाओ तो पक्वातिसार जाय।

तथा २ अजमोद, मोचरस, सोंठ, धावडेके फूल, जानमुकी गुठली और आमकी गुठलीका २ टंक चूर्ण गऊके मट्ठेके साथ पिलाओ तो पक्वातिसार नष्ट हो जायगा, यह लघुगंगाधर चूर्ण है।

तथा ३–सोंठ, जायफल, अहिफेन (आफू = अफीम) और कच्चे अनारके बीज इन सबोंको कच्चे अनारमें भरके अनारका पुटपाक करडालो अनन्तर उन चारोंको पीसके गुंज (चिरमी) प्रमाणकी गोलियां बना डालो, जो इनमेंसे प्रतिदिन एक गोली गौकी छाँछके संग सात दिनतक खिलाओ तो पक्वातिसार नष्ट हो जावेगा।

शोथयुक्त अतिसारका यत्न–सांठी (विषखपरेकी जड़) इन्द्रयव, पाठा, वायविडंग, अतीस, नागरमोथा और कालीमिर्चके ५ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिवसपर्यंत पिलाओ तो शोथयुक्त अतिसार दूर हो।

अतिसारमें वमनका उपाय १–आमकी गुठली, बेलकी गिरीके २ टंकका क्वाथ, टंक मधु और २ टंक मिश्री मिलाकर प्रतिदिन ७ दिन तक पिलाओ तो वमन अतिसार दोनों बन्द होजावें।

तथा २–भूँजे हुये मूँग और चावलोंकी लाही दोनोंको पानीमें औटाके उसे मधुके साथ ५ दिनतक पिलाओ तो वमन, अतिसार, दाह और ज्वर ये सब दूर होंगे।

छहों प्रकारका अतिसारमात्र नष्ट करनेका उपाय–१ पांच टंक भृंगराजका रस दहीके संयोगसे सात ७ दिनतक पिलाओ तो छहों प्रकारके अतिसार नष्ट हों।

तथा २–१ टंक राल, १० टंक मिश्री (इसी प्रमाणानुसार) दोनोंका चूर्ण रोगानुसार मात्रासे १० दिनपर्यंत दो तो छहों प्रकारके अतिसार नष्ट हों।

तथा ३--धनियां, सोंठ, पीपल सेंधानोन, अजमोद, भूँजीहुई हींग और जीरके २ टङ्क चूर्ण मट्ठेके साथ पिलाओ तो सबप्रकारका अतिसार, शूल और आम दूर होकर क्षुधा लगे और रुचि बढेगी ऐसा वृन्दमें लिखा है।

तथा ४--नागरमोथा, मोचरस, लोध, धावडेके फूल, बेलकी गिरी, इन्द्रयव आफू और शुद्ध पारे गन्धककी कजलीमें इन सबका चूर्ण मिलाके ३ रत्ती छांछके साथ १० दिनतक पिलाओ तो अतिसार, पेटका मुर्रा और संग्रहणी भी इससे नष्ट होगी, इसे गंगाधर रस कहते हैं।

तथा ५--अफीमको मृत्तिकाके पात्रमें सेंकके खिलाओ।

तथा ६--जायफल, लवंग, धावडेके फूल, बेलकी गिरी, नागरमोथा, मोचरस, सोठ, हिंगुल और अफीम इन सबको पोस्तके रसके संग खरल करके १ या २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, इनमेंसे १ गोली प्रतिदिन चावलके पानी अथवा छांछके साथ ७ दिनतक खिलाओ तो निश्चय है कि, सब प्रकारके अतिसार दूर होवेंगे।

तथा ७--१ भाग अफू, २ भाग हिंगुल, ३ भाग लवंग, ४ भाग मोचरस और ३ भाग मिश्रीका १ या २ रत्ती चूर्ण, साठी तन्दुलका जल अथवा छाछके साथ पिलाओ तो भयंकर अतिसार भी नष्ट होगा।

तथा ८--जायफल, खारिक और अफीम (तीनों समान भाग) को नागवेलके पानके रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाओ, रोगीको उक्त १ गोली प्रतिदिन छांछके साथ ७ दिवसतक खिलाओ तो अतिसार भी नष्ट होगा।

मुर्रा अतिसारका यत्न--१ बेलेकी गिरी, लोध और काली मिर्च ये तीनों एक-एक पैसे भर लेकर महीन पीसकर चूर्ण बनाओ इसमेंसे १ टंक मधुके साथ चटाओ तो मुर्रा अतिसार दूर हो।

तथा २--२ टंक धावड़ेके फूलका चूर्ण दहीके संसर्गसे ७ दिनपर्यन्त खिलाओ तो मुर्रा अतिसार दूर हो।

---

१ शाल्मलि अर्थात् (सेमर) वृक्षकी गोंदको मोचरस कहते हैं।

तथा ३--५ टंक कवीट (कैन्था) का रस मधुके साथ ७ दिनपर्यन्त खिलाओ तो भी मुर्रा नष्ट होगा।

तथा ४--३ टंक लोध ७ दिनतक दहीके साथ खिलाओ, ये मुर्रेके यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

अतिसार रोगमें वर्जित वस्तु—जिस पुरुषको अतिसार रोग हुआ हो वह उष्ण, भारी, चिकना पदार्थ, नवीनान्न भक्षण, घाममें घूमना, परिश्रम, स्नान, मैथुन और चिन्ता इतनी बातोंमें कदापि सम्पर्क न करे ऐसा वैद्यविनोदमें लिखा है।

इति अमृतसागरे चिकित्साखण्डे अतिसारचिकित्सा नि० नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

संग्रहणी

पृथग्दोषैः समस्तैश्च चतुर्धा ग्रहणीगदः।
तरंगे सप्तमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

वात, पित्त, कफ तथा सन्निपातसे जो चार प्रकारका संग्रहणी रोग उत्पन्न होता है उसकी चिकित्सा हम सातवें तरङ्गमें लिखते हैं।

वात संग्रहणी यत्न १--सोंठ, गुर्च, नागरमोथा, और अतीसके २ टंक चूर्णका क्वाथ २९ दिवसपर्यन्त पिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर भूँख बढ़ेगी।

तथा २-सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रकका २ टंक चूर्ण नित्य गौकी छांछके संयोगसे पिलाओ ऊपरसे २ चार बार और भी छांछ ही पिलाओ तो वातसंग्रहणी दूर हो।

तथा ३-२ टंक शुद्ध गन्धक, १ टंक शुद्ध पारदकी कजली, १० मासे सोंठ, २ टंक काली मिर्च, १० मासे पीपली, १० मासे पांचों नोन, ५ टंक सेंका हुआ अजमोद, ५ टंक भुनी हुई हींग, ६ टंक सेंका सुहागा और पैसे भर भुनी हुई भङ्ग इन सबको पीस छानके कजली मिलादो तदनन्तर इसे २ दिनपर्यंत और भी खरल करो तो चूर्ण बन जाय, इसमेंसे २ तथा चार मासे चूर्ण गौकी छांछके संयोगसे पिलाओ

१ यह भी एक अतिसारका भेद है, जिससे पेटमें मरोड़ा उठता है यह चार प्रकारका है जिसमें हम ऊपर चिकित्सा लिख चुके हैं।

तो वातसंग्रहणी, मन्दाग्नि, अतिसार, बवासीर पेटके कृमि और क्षयी ये रोग दूर हो जावेंगे इसीको लाई चूर्ण कहते हैं ।

पित्तसंग्रहणी यत्न १-रसोत, अतीस, इन्द्रयव, तज, धावड़ेके फूल-का २ टंक चूर्ण, गऊकी छांछ या चावलोंके जलके साथ १५ दिनतक पिलाओ तो पित्तसंग्रहणी दूर हो ।

तथा २-जायफल,चित्रक, श्वेतचन्दन,वायविडंग,इलायची भीमसेनी कपूर, वंशलोचन, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, तगर, पत्रज और लवंग तुल्यका चूर्ण बनाकर इन सब चूर्णसे दूनी मिश्री और थोडी विना सेंकी भंग ये सब एकत्र करलो इसमेंसे ४ या छः मासे चूर्ण गऊकी छांछके संग १५ दिवस पिलाओ तो पित्तसंग्रहणी दूर हो ऐसा वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

कफसंग्रहणी यत्न १-हर्रकी छाल, पिप्पली सोंठ, चित्रक, सोचरनोन और कालीमिर्चका २ टङ्क चूर्ण नित्य गऊकी छांछके संग १५ दिवस पर्यंत पिलाओ तो कफसंग्रहणी दूर हो ।

संनिपातसंग्रहणी यत्न १--बेलकी गिरी, मोचरस, नेत्रवाला नागर मोथा, इन्द्रयव, कुडेकी छालका २ टंक चूर्ण नित्य बकरीके दूधके संग २५ दिवस पर्यंत पिलाओ तो संन्निपातसंग्रहणी दूर हो ।

तथा २--१ टङ्क अनारदाना, १ टङ्क जीरा, २५ पैसेभर धनियां, १ टंक भर निशोथ, १ टङ्क भर कालीमिर्च, मिश्रीका २ टङ्क चूर्ण नित्य गौके छांछके संग १ मासपर्यंत पिलाओ तो संनिपातसंग्रहणी, आमातिसार, पार्श्वशूल, अरुचि और पेटका गोला सब दूर होगें ।

तथा-३ गन्धक, पारा, सिंगीमोहरा, (तीनों शोधे हुए चाहिये) सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सेंका सुहागा सार (लोहभस्म अर्थात् कांतीसार) अजमोद और अफीम तुल्य भाग लो और इन समस्तके तुल्य अभ्रककी भस्म लेके इन सबोंको चित्रकके क्वाथमें १ दिन खरल करो और कालीमिर्चके समान गोली बना लो इसको अभ्रकगुटिका कहते हैं। उक्त रोगीको इसकी १ गोली नित्यप्रति १ मासभर खिलाओ तो संनिपातसंग्रहणी दूर हो ।

तथा ४--शुद्ध गन्धक शुद्ध पारेकी कजली, अभ्रक, हिंगुल, जवा खार (खार), जायफल, बेलकी गिरी, मोचरस, शुद्ध सिंगीमुहरा,

अतीस, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल धावडेके फूल, घृतमें सेंकी हर्रकी छाल, कवीट, अजमोद, चित्रक, अनारदाना, इंद्रयव, धतूरेके बीज, कणकच (करंज, केवांच अर्थात् बहुकंटकी) और अफीमं तुल्य भागको चूर्ण (उसीमें कजली) भी पोस्तेके साथ खरल करके कालीमिर्चके सदृश गोली बनालो उक्त रोगीको नित्यप्रति १ गोली १५ दिवस पर्यंत खिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी, शूल, अतिसार और सूचिका ये सब रोग दूर होवें, वैद्यविनोदमें इसका नाम संग्रहणी कटकरस लिखा है।

आमवातसंग्रहणी यत्न, सन्निपातसंग्रहणीके पूर्वोय यत्नहीजानो।

संग्रहणीमात्रपर विशेष यत्न -८ भाग कवीट, ६ भाग मिश्री, ३ भाग अजमोद, ३ भाग पीपली, ३ भाग बेलकी गिरी, ३ भाग धावडेके फूल, ३ भाग अनारदाने, ३ भाग डांसरैया, १ भाग सोंचरनोन, १ भाग नागकेशर, १ भाग धनियां, १ भाग तज, १ भाग पत्रज, १ भाग कालीमिर्च, १ भाग अजवायन १ भाग पीपलामूल, १ भाग नेत्रवाला १ भाग इलायची इन सबको महीन छान कूट २ टंक चूर्ण नित्य गौकी छांछके साथ पिलाओ तो सब संग्रहणी अतिसार और गोला सब दूर होवेंगे इसे कपित्थाष्टक चूर्ण कहते हैं।

संग्रहणी रोगीको वर्जित पदार्थ--भारी, आमोत्पादक, क्षुधानाशक तथा अतिसारमें जो वस्तु बार्जित की गई, इन वस्तुओंसे विशेष अंतर रखके क्षुधावर्धक वस्तुओंका सेवन कराओ।

, इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे संग्रहणीयत्ननिरूपणं नाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

अर्शरोग

निदानखण्डे प्रोक्तस्य षड्विधस्यार्शसोऽत्र वै।
तरंगे चाष्टमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥१॥

निदानखण्डमें जो छः प्रकारका अर्शरोग कहा गया है इस खण्डके ८ वें तरंगमें हम उसकी चिकित्सा लिखते हैं ॥ १ ॥

१ अफीमका डोडा जिसके बीजको खशखश कहते हैं, । २ यह सन्निपातसंग्रहणीका एक भेद है जिसे "डासरफल तथा मारडीबीज" भी कहते हैं।

वातार्श यत्न १–जमीकंदपर मिट्टी लपेटकर भुरता बनाओ उसे घृत या तेलमें लपेटके १ टके भर नित्य प्रति ३१ दिन खिलाओ ।

तथा २–आकके पत्तोंपर पांचोंनोन लगाके इन्हींपर तैल या खटाई लगादो और इन्हीं पत्तोंको जलाके भस्म कर दो, अब इसीमेंसे १। सवा या २॥ अढाई टंक नित्य प्रति १५ दिन खिलाओ तो वातार्श दूर हो । यह वैद्यविनोदमें लिखा है ।

तथा ३–गौकी छांछमें सेंधानोन डालकर बहुत दिनतक पिलाओ तो वातर्श दूर हो ।

तथा ४–५टङ्क हर्रकी छाल, १ टङ्क कालीमिर्च, १ टङ्कपीपलामूल, १ टके भर पीपल, १ टके भर जीरा, १ टके भर चव्य १ टके भर चित्रक, १ टके भर सोंठ १ टके भर शुद्ध भिलावाँ, ऽ। पावभर पकाया हुआ भूकन्द (जमीकंद) और १ टके भर जवाखार इन सबोंको महीन पीसके इन सबके प्रमाणसे दूनागुड़ मिलाकर टके भरकी गोलियां बनालो इनमें १ गोली नित्य प्रति खिलाओ तो वातार्श जावे ।

तथा ५–बनालेकी बेलके पत्र पानीमें औटकर उस जलसे गुदा धोओ तो अर्शके मसे दूर हों ।

तथा ६–बनाले की डोंडोंकी धूनी दो तो मसे दूर हों

तथा ७–बनालेके डोंडे कांजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे दूर हों ।

तथा ८–नीमके पत्ते, कनेरके पत्ते, गुड़ कड़वीतुरईकी जड़ इन सबको कांजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे झड़कर गिरपड़ें ।

तथा ९–हल्दी, कडवी तुरई, अकावके पत्र, मुनगाकी जड़ इनको कांजी पानीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे झड़कर गिर पड़ें ।

तथा १०–एरंडकी जड़, मुलहठी, रास्ना, अजवायन और महुआको कांजीके जलमें पीसकर उष्ण कर सहते हुए मसोंपर लेप करो अथवा उन्हें सेंको तो मसोंकी तड़क (चमकीली पीड़ा)

बनालेके होंड़े जो घोड़ाके मसालेमें डाले जाते है ।

शीघ्र दूर होकर कालान्तरमें मसे झड़ जावेंगे। ये यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा ११–हीराकसीस. सैंधानोन, पीपल, सोंठ, कूट, कलिहारीकी जड़, पाषाणभेद (पथरचटा) कनेरकी जड़, वायविडंग दात्यूणी, चित्रक, हरताल, चौखके चूर्णसे तिगुना तेल और उन तैलसहित औषधोंसे चौगुना थूहर आकका दूध और गोमूत्र लेकर सबको एकत्रित कर पकावो (चुरैलो) जब तेलमात्र रहजावे तब उतारकर छानलो। जो यह तैल मसोंपर मर्दन करो तो मसे गलजावें, बावसीर दूर हो और त्रिवलीकी पीडा मिटजावे। यह क्षारतैल वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा १२–१६ भाग पकायाहुआ जमीकंद, ८ भाग चित्रक, ८ भाग सोंठ ३ भाग त्रिफला, ८ भाग पीपलामूल, ८ भाग शुद्ध भिलावां, ४ भाग इलायची, ८ भाग वायविडंग, ८ भाग शतावरी, १६ भाग विधांयरा और आठ भाग भंग इनको चूर्णमें दूना गुड़ मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोली बांधलो, जो यह १ गोली नित्यप्रति १ मासपर्यंत खिलाओ तो अर्श, हिचकी श्वास, राजरोग और प्रमेह ये सब रोग दूर होवेंगे, यह बृहत सूरणमोदक वैद्यरहस्यमें लिखा है।

पित्तार्श यत्न१–२ टंक रसोतका चूर घड़ी पर्यंत जलमें भिगोकर यही जल नित्य २ मासपर्यंत पिलाओ तो पित्तार्श दूर हो।

तथा २- पीपलकी लाख, मुलहठी, हल्दी, मंजीठ और कमलगट्टेकी बीजीका २ टंक चूर्ण नित्य ४९ दिनतक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो।

तथा ३--नागकेशर, मक्खन, मिश्री, प्रतिदिन ५ टंक भर ४९ दिनतक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो,

तथा ४–१०० टके भर कुडेकी छालको पीसके १६ सेर पानीमें औटाओ, अष्टमांश रहनेपर छान लो तदनन्तर १ टके भर नागरमोथा, १ टके भर सोंठ, १ टके भर काली मिर्च, १ टके भर पीपली, ३ टके भर त्रिफला, २ टकेभर रसोत, २ टकेभर चित्रक १ टकेभर इन्द्रयव और १ टके भर बच उन सबको कूट छानके बारीक चूर्ण करलो तदनन्तर कुडेकी छालके जलमें गुड़की चासनी बनाकर उसमें उक्त चूर्ण,

१ इसे कलाकी और लांगली भी कहते हैं।

२ यह एक प्रकारका काष्ठ है जिसे वृद्धदारु और गर्भ वृद्धिभी कहते हैं।

१ सेर मधु, और १ सेर गऊका घी डालकर इन सब (चानसी, चूर्ण, मधु घृत,) को एकत्रित करलो अब यह कुडेकी छालका अवलेह बन गया, यदि रोगीको इसमेंसे नित्यप्रति १ टके भर खिलाओगे तो पित्तार्श जडसे नष्ट होगा, यही जुदे जुदे अनुमान (जैसे ऊपरसे छाँछ सेवन आदि) से पांडु संग्रहणी, क्षीणता और शोथ ये रोग भी नष्ट कर सकता है।

तथा ५–पारे और गंधककी कजली, बीजाबोल और मोचरस इन तीनोंका महीन चूर्ण बनाके ३ मासे नित्य मधुके संग २१ दिनतक सेवन कराओ तो पित्तार्श, अतिसार, प्रमेह, स्त्रीका प्रदर और भगंदर ये सब नष्ट होंगे।

तथा ६–२ रत्ती वसंतमालतीरस २ तथा ४ पिप्पलीके साथ मधु और मिश्रीके संयोगसे नित्य २९ दिवस चटाओ तो पित्तार्श और संग्रहणी भी दूर हो, वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ७–जो बवासीरमें बद्धकुष्ठ होकर मसे ऊँचे हो जावें, खुजली चले और रक्तस्राव होने लगे तो उन मसोंपर जोंक (जलजन्तु विशेष) लगाकर रुधिर निकाल दो तो बवासीर दूर हो।

कफार्श यत्न १– १ टकेभर अदरखका क्वाथ प्रतिदिन २१ दिवसपर्यंत पिलाओ तो कफार्श दूर हो।

तथा २–हल्दीको थूहरके ७ पुट देके वह हल्दी मसोंपर लेप करो तो कफार्श दूर हो।

तथा ३–त्रिफला, दशमूल, चित्रक, निसोत, दात्यूणी (जमालगोटेकी जड़) ये पांचों औषध सेरभर लेके कूट छान २० बीससेर जल और ७ सेर गुड़के साथ मृत्तिकाके पात्रमें डालदो इस पात्रका मुँह बांधकर २१ दिन धरतीमें गाड़ रक्खो, तदनन्तर डमरूयंत्रद्वारा (मधुसदृश) रस उतार लो, जो रोगीको नित्य १ टंक प्रमाणसे पिलाओ तो कफार्श सर्वथा नष्ट होगा, वृन्दमें इसे दात्यूणीरस नाम दिया है,

सन्निपातार्श यत्न १–२ टके भर अदरख, १ टके भर कालीमिर्च ऽ। पावभर पीपली, १ टकेभर चव्य, ५ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर पीपलामूल, १ टकेभर चित्रक, ५ टकेभर इलायची, ८ टकेभर अजमोद और १ टकेभर जीरेके चूर्णमें ३० टकेभर गुड़ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बना रोगीको प्रातःकाल १ गोली खिलाकर ऊपरसे

१ वैद्यरहस्यमें लिखा है कि उक्त दशामें इससे उत्तम कोई प्रयत्न नहीं है।

पथ्यपूर्वक भोजन कराओ तो, सन्निपातार्श, मूत्रकृच्छ्र, बादीके रोग, विषमज्वर, पांडु, गोला, प्लीहा (फिया तथा तापतिल्ली) कास, श्वास, वमन, अतिसार और हिचकी ये सब रोग जुदे जुदे अनुपानसे नष्ट हो जावेंगे यह प्राणदागुटिका सर्वसंग्रहमें लिखी है।

तथा२-त्रिफला, कालीमिर्च, पीपल, तज, पत्रज, इलायची, वच, सेंकीहींग, पाठा, सज्जी, जवाखार, दारुहल्दी चव्य कुटकी, इन्द्रयव, सौंफ, पांचो नोन, पीपलामूल, बेलकी गिरी और अजमोदका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ पिलाओ तो बवासीर, कास, श्वास, हिचकी, भगन्दर, पार्श्वशूल, गोला, उदररोग प्रमेह, पांडु, अंत्रवृद्धि (पोते बढ़ना) संग्रहणी, विषमज्वर, जीर्णज्वर और उन्माद ये सब रोग जुदे जुदे अनुपानसे दूर होंगे, यह विजयाचूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ३-१ टके भर शुद्धपारा, २ टके भर शुद्ध गन्धक, ३ टके भर ताम्रेश्वर, ३ टके भर लोहसार, ३ टके भर सोंठ, २ टके भर कालीमिर्च, दो २ टके भर पिप्पली, १ टके भर शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टके भर दात्यूणी, २ टके भर चित्रक, २ टके भर बेलकी गिरी, ५ पैसेभर जवाखार, २ पैसभर सुहागा और ५ टके भर सैन्धानोन इनके महीन चूर्णको ३२ टके भर गोमूत्र और ३२ टके भर थूहरके दूधमें मिलाकर मृत्तिकापात्रमें रख मंद मंद आंचसे पकाओ, जब वह द्रवसे दृढ़ दशामें आजावे तब २ मासे प्रमाणकी गोली बाँध लो १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो महाअसाध्य सन्निपातार्शका भी इससे नाश होगा यह हररसकुठार योगतरंगणीमें लिखा है।

तथा ४-शुद्ध पारा, और शुद्ध गन्धक समान लेकर कजली बनाकर उसे घृतसे चुपड़ लो और उससे दूना बीजाबोल उसी कजलीके साथ खरल करके टिकिया बनालो, यह टिकिया लोहेके पात्रमें धरके आँच दो जब वह पिघलकर द्रव होजावे तब केलेके पत्तेपर ढलका दो और जम जानेपर निकाल लो यह पदार्थप्रतिदिन २ रत्ती प्रमाण १५ दिवसतक खिलाओ तो सन्निपातकी बवासीर दूर होगी, यह पर्पटीरस वैद्यविनोदमें लिखा है।

रक्तार्शयत्न-पित्तार्शमें जो यत्न लिख आये हैं वही इसके यत्न भी जानो, विशेषता यह है कि इसमें रक्त बहुत गिरता है वह हम आगे रक्तावरोधक यत्न लिखते हैं जिससे रुधिरगिरनाबन्द होगा।

रक्तार्शरक्तावरोध यत्न-पाव भर गोघृत लोहेकी कडाहीमें तपाकर उसीमें ४ पैसे भर बड़ी बेरीके पान और ४ पैसेभर आँवले डालो जबतक कि यह भलीभाँति औटकर एकरस न हो जावे, यह घृत ४ मासे प्रति प्रभात २१ दिवसपर्यन्त खिलाओ जलके केवल कुल्ले करलेने दो पर पीने न दो, उष्ण वस्तु, बाजरा, करेला, मिर्च, अचार, बैंगन (भांटा), उर्द और केले आदि न खाने दो पर पथ्यसे रक्खो तो मसोंसे रुधिरस्राव बंद हो जावेगा।

तथा २-नीमकी निबोलीके बीज और औलियाको समान ले पानीके साथ खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बांध लो इनमेंसे १ गोली नित्य रसोतके रसके साथ ११ दिनपर्यन्त खिलाओ तो मसोंसे रक्त गिरना बन्द हो।

रक्तार्शके मसोंका यत्न-रसोत, चिनियां, कपूर और नीमकी निबोलीकी बीजी इन तीनोंको महीन पीसके मसोंपर लेप करो तो सब मसे छूंछ निर्जीव पड़ जावेंगे तब उनपर नीलेथोथेका लेप करो तो झडकर सर्वतः गिरपड़ेंगे।

सहजार्श यत्न-मनुष्यके मातापिताके रजवीर्य दोषसे सहजार्श होता है इसपर कोई यत्न नहीं है, रोगीको उचित है कि पथ्यसे रहे, घृतका विशेष सेवन करे और दान, पुण्य, ईश्वरभजन करे तो सहजार्शका क्लेश विशेष न होगा।

सर्व अर्शमात्रके यत्न १-एक समय श्रीनारदमुनिराजजीने मनुष्योंके अर्श (बवासीर) के असाध्य रोगसे अत्यंत दुःखी देखके श्रीमहादेवजीसे प्रश्न किया कि हे महाराज ! अर्शरोगके निवारणार्थ वैद्यक ग्रंथोंमें (शंखिया सम्बल[1]) आदि विषक्रिया कई प्रकारसे वर्णन की है, परंतु विषक्रियाके व्यतिरिक्त आप कोई ऐसा सुगम उपाय बताइये कि, जिससे उक्त रोग मनुष्योंको त्रास न देकर समूल नष्ट हो

१ सम्बलको अर्शनाशक अनेक पदार्थों (जैसे मक्खनादि) के संयोगसेमसोंपर लगानेसे मसे जड़से कटकर गिरपड़ते हैं परंतु इस प्रयोगसेअनेकमनुष्योंकीप्राणहानि होगई है इस लिये ऐसे विषप्रयोगादि उपाय कदापि उचित नहीं है।

जावे, तब महादेवजीने उक्त विनयानुसार लोकोपकारार्थ नारदजीको निम्नलिखित सार बताया कि जिसके सेवनसे अर्शादि अनेक रोगोंसे मनुष्योंका छुटकारा होता है अब हम शिवमतसे कांतिसार बनानेकी विधि लिखते हैं।

कांतिसारविधि–कांति लोहके बारीक २ पत्र बनाके तेल, छाँछ, गोमूत्र, काँजी, त्रिफलाके रसमें यथाक्रमसे ७ सात बार बुझावे, फिर रेतीसे रेतके चूर्ण कर डालो, इसी चूर्णके तुल्य मैनसिल और तुल्यही सोनामक्खी इन तीनोंको अग्निझालके रसमें खरल करके शरावसम्पुटमें बंद कर दो, अब यह सम्पुट लुहारकी भट्टीमें धरके धोंकनीसे तीक्ष्ण आंच दो, जल जानेपर (जब इसकी गंध आना बंद होजावे) निकालकर उसे अष्टमांश परिके क्वाथ आँवलेके रसमें खरल करो और उक्त रीत्यनुसारही उसे चार बार ताव देके खरलमें पीस लो, अब यह जलपर तैरनेवाला उत्तम सार होगया तदनंतर उसपर विषखपरेके रसकी १० पुट, पलासके रसकी १० पुट, थूहरके दूधकी १९ पुट, पुनर्नवाके रसकी १० पुट, शतावरीके रसकी १० पुट, गुरचके २० पुट जामुनके बक्कलके रसकी ७ पुट, गूलरके बक्कलके रसकी ७ पुट, ग्वारपाठेके रसकी १० पुट, तेंदूके रसकी ७ पुट, आंवलासार (गंधक) की २० पुट, नींबूके रसकी २० पुट, पलासके बक्कलकी २० पुट, सारसे बारहवां भाग हिंगुल ग्वारपाठेके रसके साथ १ पुट, घृतकी १० पुट, और मधुकी १० पुट देके लोहसार सिद्ध करलो।

नित्य प्रति प्रातःकालः पिप्पली और मधुके संयोगसे १ रत्ती खिलाओ और क्रमशः बढ़ाते ३ रत्ती पर्यंतकी मात्रा करदो, खानेवालेसे स्वयं शिवजीका पूजन कराओ तथा ब्राह्मण द्वारा वेदमंत्रोंसे होम कराओ औषध देते समय इस मंत्रको पढ़ो या रोगीसे पढाओ "ॐ अमृतं भक्षयामि स्वाहा" ऐसा कह मात्रा दे दो और ऊपरसे खरेटीका क्वाथ सेवनकराओ इसपर पेठा, तेल, उर्द, मद्य और खटाई आदिक कुपत्थी वस्तुयें रोगीको कदापि सेवन न करने दो।

१ अर्थात् गजवेलि, बीड याफौलाद जिसके पात्रमें दूध औटानेसे अधिक आंच देनेपर भी नहीं उफनता है। इसलिये ऐसेही लोहको सार बनानेके उपयोगमें लाओ और अन्यको कदापि न लो।

२ ये इतनी पुट. एक संगही नहीं वरन् एकके पीछे एक क्रमशः देना चाहिये, पुट इस प्रकारसे दीजावे कि, जिसका पुट देना हो उसी वस्तुके साथ सारको खरल करके टिकिया बना कर सुखालो और सम्पुटमें रखके फूंक दो या वैसेही लोहेके पात्रमें रखके गोबरी (कंडा, उपली) की आंच दे दो।

जो उक्तौषध उक्तनियमानुसार दो तो वृद्ध पुरुष भी तारुण्यको प्राप्त हो, सब प्रकारके अर्श, मन्दाग्नि, श्वास, कास, पांडु, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र और अन्त्रवृद्ध्यादि अनेक असाध्यरोग भी नष्ट होंगे।

यह विधि वृहदात्रेय तथा भावप्रकाशमें लिखी है, इति कांतिसार।

तथा २–टंक हर्रकी छालमें ५ टंक पुराना गुड़ मिलाकर नित्यप्रति जलके साथ खिलाओ तो अर्श दूर हो।

तथा ३–अधोपुष्पी, खरैटी, दारुहल्दी, पृष्ठपर्णी, गोखरू, इन्द्रयव, साइलके फूल, वडके अंकुर, गूलर (ऊपर) के अंकुर और पीपलके कोमल पत्र ये सब औषध २ दो टके भर लेके कूटकर चूरा बनाओ, इस चूरेमेंसे नित्य दो टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ, (और उसपर यह-कृत खाने दो तो और भी उत्तम होगा) तो बवासीर मात्र दूर हो

तथा४–जीवन्तीकी जड़,कुटकी,पीपलामूल,कालीमिर्च,सोंठ,देवदारु, शतावरी, चन्दन, रसोत, कायफल, चित्रक, मोथा, प्रियंगु, खरैटी,शाल पर्णी, कमलगट्टा, मँजीठ, कटियाली, बेलकी गिरि, मोचरस और पाठा ये सब औषध अधेले २ भरका चूराकर इनके क्वाथका चार सेर रस लो इन औषधोंका चार सेर क्वाथ १ सेर गोघृतके साथ कड़ाहीमें औटाओ, क्वाथ जल जाने पर घृतको छान लो, यह शुद्धौषध संयोजित घृत नित्य दो टके भर खिलाओ तो बवासीरमात्र दूर होगी।

तथा ५–सीसेकी गोली गौके घृतमें घिस १० दिनतक मसोंपर लगाओ।

तथा ६-२ टंक विष्णुक्रान्ता[1] (बूटी विशेष), २ टंक कालीमिर्च और एक मासे भांगको जलमें घोटके पिलाओ, इस ५ और ६ वें उपायसे बवासीर दबी रहेगी।

अर्शरोगीको वर्जितकार्य--मलमूत्रावरोध, स्त्रीसङ्ग, घोड़ा, ऊँटादि पशुओंकी सवारी दोनों पांवोंके बल अधर बैठक और केले, करेले, बाजरा इत्यादि उष्णवस्तुएँ कदापि सेवन न करे।

---

१ यह नील तूलकी एक बूटी है जिसे अन्धा होली भी कहते हैं।

चर्मकीलरोग यत्न १--अग्नि तथा छार आदि क्रियासे मस्से जला दो। तथा २--चूना (खानेका), सज्जी, सुहागा, और नीलाथोथा इनको समान भाग ले ३ दिनतक नींबूके रसमें भिगाओ तदनन्तर खरल करके चर्मकीलके मसोंपर लगावो तो अवश्य नष्ट हो जोवेंगे।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे अर्शरोगयत्न निरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

मन्दाग्नि-भस्मक-अजीर्ण

मन्दाग्निभस्मकाजीर्णरोगाणां हि यथाक्रमम्।
तरंगे नवमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥१॥

अब हम इस नववें तरंगमें मन्दाग्नि, भस्मक और अजीर्ण रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

मन्दाग्नि यत्न१--अदरखके छोटे छोटे टुकड़े सेंधानोनके साथ नींबूके रस में डालके मृत्तिकाके पात्रमें रख दो, इस अदरखको थोड़ा थोड़ा नित्य खाया करो तो मन्दाग्नि दूर हो। यह वैद्यजीवनमें लिखा है।

तथा २-भोजनके पूर्व सेंधानोन और अदरखकी चटनी नित्य खाया करो तो मन्दाग्नि नष्ट होकर क्षुधा बढ़े और जिह्वा तथा कण्ठकी शुद्धि होगी, भावप्रकाशमें लिखा है कि यह प्रयोग सदा पथ्यरूप ही है।

भस्मकरोग यत्न-यदि भस्मरोग साध्य हो तो रोगीको ऐसे पदार्थ भक्षण कराओ जो बढ़े हुए पित्तको शमन करके कफको विशेष बढावे तो भस्मक रोग नष्ट होगा क्योंकि जो चिकित्सा कफकारक होती है वही पित्तनाशक होती है और जब पित्तका नाश होगा तभीक भस्म भी दूर होगा और जो असाध्य लक्षण हुए तब तो इससे रक्षा पाना दैववशात् ही जानो। भस्मक भस्म किये विना न छोड़ेगा।

अजीर्णरोग यत्न १-हर्रकी छाल और सोंठके २ टंक चूर्णमें १० टंक गुड़ मिलाकर शीतल जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्ण दूर हो और क्षुधा बढ़े।

१ मूल द्वारके व्यतिरिक्त किसी अन्यस्थानपर मसें होना यह चमकीलरोग कहलाता है इसका स्पष्टीकरण निदानखण्डमें देखो ॥

२--३ मंदाग्नि और भस्मकके यत्न प्राचीन अमृतसागरमें नहीं लिखे हैं इसलिये भावप्रकाश और वैद्यजीवनसे लिये हैं ॥

तथा २--हर्रकी छाल और सेंधानोनका नित्य सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र नष्ट होकर क्षुधा बढ़ेगी ।

तथा ३–सेंधानोन, सोंठ, कालीमिर्चका २ टंक चूर्ण नित्य गऊके छाँछके साथ १५ दिवसपर्यंत सेवन कराओ तो अजीर्ण, मंदाग्नि, पांडु और अर्श भी नष्ट होकर भूँख लगेगी ।

तथा ४–सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, अजमोदा, सेंधानोन, श्वेत जीरा, श्याम जीरा और सेंकी हुई हींगका १ तथा २ टंक चूर्ण घृतयुक्त खिचड़ीमें प्रथम ग्रासके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़े तथा गोला और प्लीहा भी दूर होंगे। इसे हिंग्वष्टक चूर्ण कहते हैं ।

तथा ५–जवाखार, सज्जी, चित्रक, पंचनोन, इलायची, पत्रक, भारंगी, पोहकरमूल, कचूर, निसोत, नागरमोथा, इन्द्रयव, डांसर-फल, सेंकी हुई हींग, अमलवेत, जीरा आंवले, हर्रकी छाल, पीपली, अजावायन, तिल्लीका खार और पलाशके खारका चूर्ण बिजौरेके रसमें ८ पुट देके सिद्ध करो, जो इसमेंसे २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी । इसका नाम अग्निमुखचूर्ण है, गोला, उदररोग अंत्रवृद्धि और वातरक्तके लिये बड़ा लाभकारी है ।

तथा ६-थूहर, आक, चित्रक, अरंडी, पुनर्नवा, तिल्ली, आँधीझाड़, कदली, पलाश और डासरा (इन प्रत्येकका खार), अजवायन, अजमोद, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और सेंकी हुई हींग इन सबका चर्ण अदरखके रसमें ६ पुट देकर खरल करो, यह चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी । अनुपान बदलनेसे और रोग भी नष्ट कर सकता है । इसे वैश्वानरचूर्ण कहते हैं ।

तथा ७–४ पैसे भरकर सांभरनोन, ३ पैसे भर सोंचरनोन, ५ टंक वायविडंग ५ टंक सेंधानोन, ५ टंक धनियां, ५ टंक पीपली, टंक पीपलामूल, ५ टंक पत्रज, ५ टंक कालजीरा, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक नागकेशर, टंक चव्य, ५ टंक अमलवेत, ५ टंक जीरा, ५ टंक सोंठ १० टंक अनारदाने, १ टंक इलायची, १ टंक तज इनका ४

१ डांसेर तंतडीके बीज जो खट्टे होते है ।

मासेचूर्ण प्रतिदिन गऊकी छांछ तथा कांजीके साथ नित्य सेवन करो तो अजीर्ण, गोला, प्लीहा उदररोग, अर्श, संग्रहणी, बद्धकोष्ठ, शूल, शोथ, श्वास, कास, आमविकार, पांडु और मन्दाग्नि ये सब रोग दूर होंगे, इसे लवणभास्कर चूर्णकहते हैं।

तथा ८–१ टंक सेंधानोन २ टंक पीपलामूल, ३ टंक चव्य, ४ टंक चित्रक, ६ टंक सोंठ, ५ टंक हर्रकी छाल और इन सब औषधोंके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बनालो, यह वड़वानलचूर्ण है। नित्य दो टंक सेवनेसे अजीर्ण नष्ट कर क्षुधा बढाता है।

तथा ९–२ टंक शुद्ध गन्धक और १ टंक शुद्ध पारेकी कजलीमें ५ टंक लोहसार और २ टंक तांबेश्वर मिलाकर लोहेके पात्रमें धरके अग्निपर चढ़ा दो, पिघल जानेपर अरंडके पत्रोंपर ढाकके १०० टकेभर जंभीरीके रसके साथ खरल करो, फिर छायामें सुखाके १०० टकेभर बिजौरेके रसके साथ खरल करो, फिर छायामें सुखाके, पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक सोंठके क्वाथकी ५ पुट दो, भली भाँति सूख जानेपर इन सब पदार्थोंके तुल्य सेंका हुआ सुहागा और आधा सोंचरनोन डालकर इन सबोंके तुल्य काली मिर्च डालो, तदनंतर इसे चनेके खारकी ७ पुट देके प्रस्तुत कर काचादिके पात्रमें धर दो, अब यह क्रव्यादरस बनगया, जो दो मासे प्रतिदिन खिलाकर ऊपरसे सेंधानोन युक्त गोछाँछ पिलाओ तो अजीर्ण मात्र तत्क्षण दूर हो, अत्यन्त गरिष्ट भोजन भी पचजावे और शूल, गुल्म वायुगोला, अफरा, प्लीहा, उदर ये सब भी दूर होंगे।

तथा १०–जवाखार, सज्जी, सुहागा, शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, पीपली, पीपलामूल चव्य, चित्रक, सोंठ, इन सब पदार्थोंके तुल्य सिकी हुई भांग और आधी मुंगनेकी जड़ लो, पारे गंधककी कजली करके सब औषध डालकर महीन पीस लो, अनंतर १ दिन भांगके रसमें १ दिन मुंगनेकी जड़के रसमें और १ दिन चित्रकके रसमे खरल करके धूपमें सुखाते जाओ और अंतको शरावसम्पुट करके गजपुटमें फूंक दो तदनंतर सात दिनतक अदरखके रसमें खरल करके निकाल धरो, अब यह ज्वालानलरस प्रस्तुत होगया, एक या दो रत्ती गन्धकके साथ चटाकर ऊपरसे गुडका क्वाथ पिलाओ तो तत्क्षण अजीर्णमात्र दूर हो, क्षुधाकी दीर्घ वृद्धि हो और अतिसार, संग्रहणी, कफके रोग, उल्टी, अरुचि आदि भी दूर होंगे, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ११-शुद्ध गन्धक, कालीमिर्च, चूक और सोंचरनोनका १ टंक चूर्ण नित्य जलके संग खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर हो, बद्धकोष्ठ जावे और क्षुधा लगे ।

तथा १२-५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गन्धककी कजली ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक कालीमिर्च, २ टंक जायफल इन सबको पीसके ५ दिनतक डासरेके रसमें खरल करो, अब यह रामबाणरस बनगया, जो इसको एक रत्ती नित्यप्रति ७ दिन तक खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी ।

तथा १३-शुद्ध पारा और शुद्ध गंधककी कजली, अजमोदा त्रिफला, सज्जी' जवाखार, चित्रक सेंधानोन, सोंचरनोन, जीरा, वायविडंग, सांभरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल ये सब औषध तुल्य लेकर इन सबोंके तुल्य बकायनके फलोंके छिलके लो कजली सहित इन सबको जम्भीरीक रसमें ७दिनपर्यंत खरलकर के १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, अब ये अग्नितुंडावतीनाम गोली बनगई, जो नित्य १ गोली खिलाके ऊपरसे (हरंकी छाल, सोंठ गुड़का) क्वाथ पिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होके क्षुधा बढ़ेगी और रोग भी मिटेंगे ।

तथा १४-१-भाग सोंठ, २ भाग कालीमिर्च, ३ भाग पिप्पली, ४ भाग सेंधानोन इन सबको नींबूक रसमें १० दिन खरल करके १ रत्तीकी गोलियां बनाओ यह क्षुद्रबोधरस है जो एक गोली नित्य खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर हो क्षुधा बढ़ेगी ।

तथा १५—बिडनोन, सोंचरनोन, अजवायन, दोनों जीरे, हरंकी छाल, सोंठ कालीमिर्च, पीपल, चित्रक अमलवेत, अजमोद, धना और डासरफल तुल्य लेके कपडछान कर चूर्ण बनाओ जो यह चूर्ण नित्य २ टंक खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर हो क्योंकि इसके बलसे एकबार पाषाण भी पाचन होवे तो अन्न पाचनमें क्या संदेह है ।

तथा १६—शुद्धगन्धक, कालीमिर्च, पीपल, सोठ, सेन्धानोन, जवाखार और लौंगचूर्ण १० दिनतक नींबूके रसमें खरल करके । १ रत्तीकी गोलियाँ बनाओ जो नित्य १ गोली दो तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी ।

तथा–१७–६ भाग हर्षकी छाल, भाग पीपली, २ भाग चित्रक, २ भाग सेंधानोनका चूर्ण बनाकर २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण दूर होकर क्षुधा लगेगी।

तथा १८–२ टंक सेंधा सुहागा, २ टंक पीपल, २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २ टंक हिंगुल, २ टंक कालीमिर्चका चूर्ण, १० टंकशुद्ध नींबूके रसमें खरल करके मटरके समान गोलियाँ बनालो, अब यह अजीर्ण कंटकरस बना, जो इसकी १ तथा २ गोलियां जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर भूख लगेगी, यह विषूचिका नाश करनेकी भी शक्ति रखता है।

तथा १९–२ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २ टंक सेंका हुआ सुहागा, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक सेंधानोनके चूर्णमें १ सेरभर अदरखका रस मिलाके फिर १ सेरभर नींबूका रस जिरादो (जिरादो=रिंजादो= मिलादो) अनन्तर १ सेरभर दहीका पानी भी इसीमें जिराके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बाँध लो, यह भी एक प्रकारका क्रव्यादरस है, इसकी १ गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र तत्क्षण दूर होकर क्षुधावृद्धि होगी, अफरा, उदररोग, शूल भी इससे नष्ट होवेगा।

तथा २०–१० टंक दालचीनी, १० टंक इलायची, १५ टंक लौंग, १० टंक सेंका सुहागा, १० टंक चित्रक, ५ टंक कालीमिर्च और ३ पैसे भर सेंधानोनका चूर्ण बनाके नित्य १। सवा टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण तत्क्षण दूर होगा, इसे क्रव्यादचूर्ण नाम दिया है ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा २१–सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, त्रिफला, पाँचोंनोन, सेंका सुहागा, जवाखार, सज्जी, (शुद्ध पारे और शुद्ध गन्धककी) कजली, शुद्ध सिंगीमुहराके चूर्णको ७ पुट अदरखके रसमें देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, अब यह क्षुधासागरचूर्ण प्रस्तुत हुआ, जो इसकी १ तथा दो गोली लौंगके काथके संग खिलाओ तो तत्क्षण अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी।

---

१ दहीको कपड़े बांधकर ऊपर लटका दो और नीचे मृत्तिकाका पात्र रखदो इसमें दहीका पानी टपक जावेगा वह उक्तोपयोगमें लाओ।

२–१ सेंधा २ सांभर, ३ समुद्रका. ४ विडनोन और ५ सोंचरनोन।

तथा २२–१०० सौ हर्र, गौके छाँछमें औटाकर गुठली निकाल डालो, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, चव्य, चित्रक, दालचीनी, पांचों नोन, सेंकी हींग, जवाखार, सज्जी, दोनों जीरे, अजमोद और इन सबके समान चूका इनके चूर्णमें नींबूके रसकी दश पुट देके यह चूर्ण उपर्युक्त विधिसे प्रस्तुत हर्रोंमें भर दो और इन्हें धूपमें सुखाके धरदो, अब यह अमृतहरीतकी बनगई, जो १ हर्र प्रतिदिन खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधावृद्धि हो तथा मन्दाग्नि, उदररोग, गोला, शूल, संग्रहणी, बद्धकुष्ठ, अफरा और आमवात भी नष्ट होवेंगे।

तथा २३–७ टंक कालीमिर्च, २ टके भर अजवायन, २ टकेभर चित्रक, ७ टंक पीपल, २ टंक सोंचरनोन, २ टंक साँभरनोन, २ टंक सेंधानोन, (१ टंक शुद्ध पारा और टके भर शुद्ध गन्धकी) कजली, २ टकेभर पीपलामूल, ५ पैसेभर सोंठ, ५ पैसेभर हर्रकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, १ टके भर जीरा, ५ टंक चव्य और इन सबके आधे लौंगके चूर्णको अदरखके रसमें १० पुट देके इन सबके तुल्य चूका मिलाओ अनन्तर बारीक, पीसके २ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनालो, वैद्यविनोदमें इसे लवंगामृतगुटिका नाम दिया है, जो इसकी १ गोली जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़े, पुष्टता होकर अन्य रोग भी नष्ट होंगे।

तथा २४–५ टंक दालचीनी, १० टंक लवंग, १० टंक दोनों जीरे, १० टंक सोंठ, १० टंक कालीमिर्च, ५ टंक अजमोद ५ टंक हर्रकी छाल, ६ टंक निशोथ, १० टंक डांसरे, १० टंक सेंधानोन, ३० टंक सोंचरनोन, १५ टंक निशोथ, पाव ऽ। भर सोनामक्खी, ऽ।। आधासेर अनारदाने इन सबके चूर्णको नींबूके रसकी १० पुट देकर इन सब पदार्थोंके तुल्य चूक मिलाओ और पीस सुखाके रख दो, यह राजवल्लभ चूर्ण बन गया, जो इसे २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र, बद्धकोष्ठ, मन्दाग्नि, उदर रोग, गोला और प्लीहादि दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी।

तथा २५–हर्रकी छाल, पीपल, सोंचरनोनका चूर्ण नित्य २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सब प्रकारके अजीर्ण और आध्मान दूर होकर भूख लगेगी।

तथा २६–दाख, हर्रकी छाल, मिश्रीको पीसके मधुके साथ दो टंक प्रमाणकी गोलियां बाँध लो जो जलके संग नित्य १ गोली सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर हो, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा२७–जीरा, सोंचरनोन, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानोन, अजमोद, सेकी हींग, हर्रकी छाल (ये सब अधेले २ भर और २ टके भर निशोथ इन सबका चूर्ण बनाके २ टंक नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी इसे जीरकादि चूर्ण कहते हैं यह योगतरंगिणीमें लिखा है।

तथा २८–अजमोद, हर्रकी छाल, चित्रक, लवंग, दालचीनी, सेंधानोन इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्ण दूर होकर भूँख बढ़ेगी यह सर्वसंग्रहग्रंथमें लिखा है।

तथा–२९–२ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक भर चित्रक, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पीपली, ५ टंक सोंठ, २ टंक जवाखार १ टंक सेंधानोन, १ टंक, सोंचरनोन, १ टंक सांभरनोनके चूर्णको ७ दिन तक नींबूके रसमें खरल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो इसे सर्वसंग्रहमें गन्धकवटी नाम दिया है, जो इसकी १ गोली नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्णमात्र, शूल, आमदोष, गोला, आध्मान भी दूर होंगे।

ये अजीर्णमात्रके यत्न दर्शित किये, विशेषता यह है कि, आमाजीर्ण पंचलवणसे, विदग्धाजीर्ण लंघनसे, विष्टब्धाजीर्ण शूल, सेंकसे तथा रसशेषाजीर्ण भी सेंक (ताव) से नष्ट होता है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे मन्दाग्निभस्मकाजीर्णरोगचिकित्सानिरूपणं नाम नवमस्तरंगः॥ ९ ॥

विषूचिकादिरोगाः

विषूचिकालसकयोर्विलम्बिकाकृमिपांडुकामलानाम्
चिकित्सा हलीमकस्य यथाक्रमेण रोगस्य ॥

विनयन्निशाधवेऽस्मिंस्तरंगे लिख्यतेचविचार्यतन्त्राणि १
पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तमिदम्

अब हम इस १० दशवें तरंगमें १ विषूचिका, २ अलस ३ विलम्बिका, ४ कृमि, ५ पाण्डु, ६ कामला और ७ हलीमक इन रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे अनेक आयुर्वेदीय ग्रंथोंको विचारके लिखते हैं।

विषूचिका यत्न--१ एक पोत्या लहसनकी बीजी, जीरा, शुद्ध गन्धक सेंधानोन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और सेकी हींगके चूर्णको नींबूके रसकी ५० पुट देकर छोटे बेरके समान गोलियां बनालो, जो एक गोली जलके साथ खिलाओ तो विषूचिका तत्क्षण दूर हो तथा अजीर्ण भी नष्ट होकर भूँख लगेगी।

तथा २--वायविडंग सोंठ, पीपली, हर्रकी छाल, आंवला, बहेड़ा, बच, गिलोय, शुद्ध भिलावाँ और शुद्ध सिंगीमोहराके चूर्णको १ दिन गोमूत्रमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो अदरख के रसके साथ खिलाओ तो १ गोलीसे अजीर्ण, २ गोलीसे विषूचिका, ३ गोलीसे सर्प विष और ४ गोलीसे सन्निपात दूर होगा, इसे संजीवनी गुटिका कहते हैं।

तथा ३--३ टंक सेंका सुहागा, ५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, ५ टंक पीली कौड़ीकी भस्म, २ टंक सज्जी, २ टंक पीपली, २ टंक सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, प्रथम पारे गन्धककी कजली बनाकर उसमें ये सब औषधि डाल दो और ८ दिनतक जंभीरीके रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाण की गोलियां बनालो, यह अग्नि कुमार रस बन गया जो इसकी १ गोली खिलाओ तो विषूचिका नष्ट होवेगी।

तथा ४--१ सेर आकके पत्रका रस, १ सेर धतूरेके पानका रस, १ सेर थुहरका दूध, १ सेर भुँगनेकी जड़का रस, २ टके भर कूट, २ टके

भर सेंधानोन, १ सेर तेल, ४ सेर कांजीका जल इन सबको कड़ाहीमें डालकर मन्द मन्द आंचसे औटाओ, पक जानेपर जब रस जलकर तैलमात्र रह जावे, उतारकर छान लो, जो इस तेलका मर्दन करो तो विषूचिका, पक्षाघातादि सब रोग दूर होवेंगे। यह वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

तथा ५--कर्णगजके बीज, सागर गोटीकी जड़, आंधा झाड़ (अपामार्ग) की जड़, नीमकी छाल, गिलोय और कुड़े छालके २ टंक चूरेका क्वाथ नित्य तीन दिनतक पिलाओ तो विषूचिका जावेगी ।

तथा ६--हर्रकी छाल, बच, सेंकी हींग, इन्द्रयव, भृङ्गराज, सोंचरनोन, अतीस इनका चूर्ण बनाकर २ टंक पानीके साथ नित्य सेवन कराओ तो विषूचिका तथा बवासीर दोनों नष्ट होवेंगे ।

तथा ७--४ मासे इलायची, ४ मासे लौंग, १ मासे अफीम, १० मासे जायफल इनका ४ मासे चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो विषूचिका तत्क्षण अच्छी होगी ।

तथा ८--४ पैसे भर जौका आटा, ५ टंक जवाखार, इनको छांछमें पकाके सहता सहता उष्ण लेप करो तो पेटका शूल और विषूचिका दूर हो ।

तथा ९--चूकेको औटाके सेरभर रस निकालो और उसमें ५ टंक सेंधानोन, १० टंक कूट, ऽ। पावभर तेल डालकर मन्दाग्निसे पकाओ जब रस जलकर तैलमात्र रह जावे, तब उतारकर छान लो, यह तेल विषूचिकाके रोगीको मर्दन करो तो विषूचिका दूर होगी ।

तथा १०—जो विषूचिकावालेको कुक्षिमें पीड़ा हो तो कडुवे तेलको उष्ण करके मर्दन करो तो पीड़ा नष्ट होगी ।

तथा ११—विषूचिकावालेको प्यास अधिक लगे तो लवंगका क्वाथ पिलावे तो प्यास मिट जावेगी ।

तथा १२—जो विषूचिका वेग विशेष वृद्धिपर दीखे तो रोगीके दोनों पार्श्वभागमें दाग दो तो विषूचिका नष्ट होगी ।

तथा १३—बिजौरेकी जड़, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हल्दी, कर्णगजके बीजोंको कांजीमें महीन पीसके अञ्जन लगा दो तो विषूचिका दूर हो । ये यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं ।

अलस तथा विलम्बिका रोग यत्न १-६ टंक साबुन और १ टंक नीला-थोथा दोनोंको पीसके गुदामें लगाओ तो बन्द छूटकर उक्त रोग दूर हो।

तथा २-दारुहल्दी, चोष, कूट, सेंकी हींग और सेंधानोन ये कांजीके जलमें पीसके उष्ण कर सहता हुआ उदरपर लेप लगाओ तो अलस और विलम्बिका दूर होवेंगे।

तथा ३-ऽ=आधापाव जौका आटा और १ टंक सज्जीको जलमें डालके पकाओ और कूखपर लेप करो तो विसूचिका, अलस, विलम्बिका ये सब रोग दूर होंगे।

कृमिरोग यत्न १-२ टंकभर अजवायन बासी जलके साथ नित्य सेवन कराओ तो उदरके कृमि मलद्वारसे मलके साथ बाहर निकल जावेंगे।

तथा २-१ टंक पलाशपापडा पानीमें पीसके २ टंक मधुके साथ नित्य ५ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हो।

तथा ३-दो टंक वायविडंग, महीन पीसकर नित्य मधुके साथ ७ सात दिनतक चटाओ तो कृमि दूर हो।

तथा ४-वायविडंग, सेंधानोन, हर्रकी छाल और जवाखारका २ टंक चूर्ण नित्य छांछके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो कृमि नष्ट हो जावें।

तथा ५-उक्त चूर्णमें ही नीमके पत्तोंका १० टंक रस मिलाकर नित्य ७ दिन पिलाओ तो कृमि नष्ट हों।

तथा ६-१ टंक शुद्ध पारा और २ टंक शुद्ध गन्धककी कजली तीव्रा, अजवायन ४ टंक, बकायनके फलीके छिलके ५ टंक, पलाशपापडेका २ टंक चूर्ण, ५ टंक मधुके साथ नित्य ७ दिन चटाओ तो कृमि दूर हों ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं।

तथा ७-नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु और मुगनेकी छालके ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य ७ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हों।

तथा ८-वायविडंग, सेंधानोन, सेंकी हींग, पीपली, कपेला[1], सोंचरनोनका २ टंक चूर्ण सात दिनतक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो पेटके कृमिमात्र नष्ट होवें। यह वैद्यविनोदमें लिखा है।

---

१ गेरूके सदृश लाल रंगकी बुकनी प्रसिद्ध ही है।

शिरकी लीख तथा (जुओंके नाशका उपाय) १–धतूरेके पत्रोंके रसमें पारा घोटकर शिरमें लगाओ तो जुओंका नाश होगा।

तथा २–नागरवेलके पानके रसमें पारा रगड़के लगाओ तो लीखें तथा जुएँ निश्चय मरें।

मूलद्वारोद्भवसूक्ष्मकृमिका यत्न १—लहसन, कालीमिर्च, सेंधानोन, हींगको पानीमें पीसके गुदाके भीतर लेप करो तो सूक्ष्म कृमि नष्ट होवें।

मच्छर, खटमल, चामुजुएँ आदिका यत्न १–महुएके फूल, वायविडंग, कलिहारी (लांगली) की जड़, मैनफल, चंदन, राल, खश, कूख, भिलावाँ और लोबानका चूर्ण बनाकर घरमें धूनी दो तो मच्छर खटमल आदि समस्त दूर होवेंगे। ये सब यत्न वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखे हैं,

पांडु, कामला और हलीमकके यत्न १-सात दिनतक गोमूत्रमें पकाये हुए कान्तिसारको महीन करके १ टंक नित्य जलके साथ १९ दिनतक सेवन कराओ तो पांडुरंग दूर हो,

तथा २—गोमूत्रमें पकाया हुआ १ टंक मंडूर नित्य गुड़के साथ १५ दिनतक खिलाओ तो पांडुरोग दूर हो।

तथा ३--साठीकी जड़, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविड़ंग, दारुहलदी, चित्रक; कूठ, हल्दी, त्रिफला, दात्यूणी (जंगली जमालगोटेकीजड़), चव्य इन्द्रयव, कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, काकडासिंगी, करेलेकी बेल, अजवायन और कायफल ये सब टके टके भर और इनसे दूना मंडूर लेके सबका चूर्ण करडालो, इस चूर्णको अष्टगुणे गोमूत्रमें पकाके १ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बांध लो, दो गोली नित्य गौकी छाँछके साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो असाध्य पांडु, कामला तथा हलीमक तीनों दूर हों और श्वास, कास, शोथ, शूल, अफरा, प्लीहा, अर्श संग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कुष्ठ ये समस्त रोग भी दूर होंगे इसे पुनर्नवादिमण्डूर कहते हैं।

तथा ४–५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक आँवले, ५ टंक बहेड़ेकी छाल, ५ टंक सोंठ, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक पीपल, ५ टंक वायविडंग, ५

---

१ मूलद्वारका स्थान बड़ा कोमल रहता है, इसलिये उक्त उपचार करनेके पश्चात् गुदाके भी लगा दो, यह लेप घृतके साथ ही करो अर्थात् पानीमें पीसनेके बदले घृतमें पीसो तो उत्तम होगा।

टंक चित्रकके चूर्णमें ९ पैसेभर लोहसार मिलाओ, अब यह नवायस-चूर्ण बन गया, इसमेंसे ९ रत्ती नित्य मधु या गौकी छाछ या गोमूत्र तथा घृतसे १५ दिन खिलाओ तो पांडु, शोष, अग्निमांद्य और अर्श ये सब रोग दूर होवेंगे, कोई २ वैद्य इसकी मात्रा २ से १८ रत्तीतक भी बढ़ा देते हैं।

तथा ५–अडूसा, गिलोय, नीमकी छाल, त्रिफला, चिरायता, कुट-कीके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक और रक्तपित्त ये सब रोग दूर होंगे।

तथा ६–त्रिफला, गुरुच, दारुहल्दी या नीम इनमेंसे किसी १ का रस तथा सर्व सांयोगिक रस, मधुके साथ १० दिनतक पिलाओ तो पांडु, कामला और हलीमक ये सबरोग दूर होवेंगे।

तथा ७–दड़घलका रस नेत्रोंमें आजो तो उक्त तीनों रोग दूर हों यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ८–चिरायता, कुटकी, देवदारु, नागमोथा, गुरुच, पटोल, धमासा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, चित्रक, त्रिफला, वायविडंगका चूर्ण और इन सबोंके तुल्यही कांतिसार इसमें मिलाकर नित्य १ टंक मधु अथवा छाँछके साथ सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक, शोथ, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, कास, रक्तपित्त, अर्श, आमवात, गुल्म और कुष्ठ ये सब रोग दूर होवेंगे, भावप्रकाशमें अष्टादशांगावलेह लिखा है।

तथा ९–कटुतुम्बीके रसका नास दो तो पाण्डुकामला दूर हो।

वर्जित पदार्थ–पांडुरोगसे पीडित मनुष्यको यव, गेहूं, चावल मूंग, अरहर और मसूरके व्यतिरिक्त अन्यान्न भक्षणार्थ कदापि न दो।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे विषूचिकादिहलीमकान्त-रोगाणां यत्ननिरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

चिकित्सा रक्तपित्तस्य रोगराट्शोषयोस्तथा ।
विधुभूमिमिते चास्मिंस्तरंगे लिख्यते मया ॥ १ ॥

रक्तपित्त, राजरोग, शोष

अब हम इस ग्यारहवें तरंगमें यथाक्रमसे रक्तपित्त, राजरोग और शोषकी चिकित्सा लिखते हैं ।

रक्तपित्त यत्न १-जिसकी नासिका, नेत्र, कर्ण, या मुखसे रुधिर गिरता हो उसे हर्र, त्रिफला, निसोत अथवा किरवारेका जुलाब दो तो रक्तपित्त दूर हो ।

तथा २-जिसके अधोमार्गसे रक्त गिरता हो उसे वमन करानेसे रक्तपित्त दूर होगा ।

तथा ३-खस, कमलगट्टा, अडूसा, गुरवेल, मुलहठी, महुआ, नागरमोथा, रक्तचन्दन और धनियांके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके संग पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो ।

तथा ४-प्रियंगु (गोंदनी) के फूल, लोध, रसोत, कुम्हारके चाककी मिट्टी और अडूसाके दो टंक चूर्णका क्वाथ मधु और मिश्री मिलाके १० दिन पर्यन्त पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो ।

तथा ५-नाकसे रुधिर गिरता होतो दूबके रस या अनारपुष्परस या अतलाईके रस या हर्रको शीतल जलमें पीसके उस जलका नाश दो तो रुधिरप्रवाह बंद होगा ।

तथा ६-दूर्वा और आँवलेको शीतल जलमें पीसके मस्तपर लेप करो तो नाकसे रुधिर गिरना बंद होगा ।-

तथा७-पकी गूलर, या छुहारा (खारिक) या द्राक्षा (मुनक्का) को मधुके साथ खिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं ।

तथा ८-धनियां, आँवला, अडूसा, द्राक्षा, पित्तपापडेको जलमें भिगोकर ठंढाईके समान उसीमें पीस डालो और चार टंक छानके पिलाओ तो रक्तपित्त, ज्वर, दाह, प्यास ये सब दूर होवें ।

तथा ९–दाख, चन्दन, लोध, गोंदनीके फूलोंको महीन पीसके मधुके साथ १० दिन पर्यन्त सेवन कराओ तो सबप्रकारका रक्तपित्त नष्ट होकर रक्तबहाव बंद हो जावेगा।

तथा १०–वसन्तमालिनीरस या बीजाबोल, बद्धरस अथवा पर्पटीरस दो तो रक्तपित्त दूर होकर नाकसे रक्त गिरना बंद हो।

तथा ११–कांदेके रसका नास दो तो रक्तपित्त बन्द हो।

तथा १२–शीतल जलसे घीको शतबार धोकर मस्तकपर लेप करो तो नकसीर (नाकसे रक्त गिरना) बन्द हो।

तथा १३–श्वेत कूष्मांड (भूरा कुम्हड़ा) को छीलके सब बीज निकाल डालो, मृत्तिकाके पात्रमें डालके जलसे पकाओ पकनेपर ठंढा करके गाढे वस्त्रसे छानलो जिससे पानी निकलकर शुद्ध पेठा रहजाय, उसे घीके साथ कड़ाहीमें डालकर मंद मंद आंचसे तलडालो इसके छनेहुए जलमें चो पहिले छानकर रखा था, मिश्रीकी चासनी बनाकर उसमें वह पेठा (जो तलके धरा है) डाल दो तथा उसीके साथही २ टकेभर पिप्पली, २ टकेभर सोंठ, २ टकेभर जीरा, २ टकेभर धनियां, २ टंक पत्रज, २ टंक इलायची और ९ टंक वंशलोचनका महीन पिसा हुआ चूर्ण और ऽ। पावभर मधु डालकर रखलो, यह कुष्मांडावलेह प्रस्तुत हो गया, जो इसको नित्य १ तथा २ टंक खिलाओ तो रक्तपित्तज्वर, दाह, प्यास, प्रदर, क्षीणता, वमन, स्वरभंग, श्वास, कास और क्षय ये सब रोग दूर होंगे, श्वेतके अभावमें पका या पीतकूष्मांडभी उपयोगमें ला सकते हैं।

तथा १४–इलायची, पत्रज, वंशलोचन, तज, दाख, पीपली ये सब एक पैसेभर १ टकेभर मिश्री, १ टकेभर मुलहठी, १ टकेभर खारिकके चूर्णमें १ टकेभर मधु मिलाकर गोलियां बनालो, जो इसमेंसे १ गोली नित्य खिलाओ तो रक्तपित्त, श्वास, कास, पित्तज्वर, हिचकी, मूर्च्छा, मद, भ्रम, प्यास पार्श्वशूल, अरुचि, शोथ, स्वरभंग और क्षय ये सब रोग दूर होवेंगे, इसे एलादिगुटिका कहते हैं, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

राजरोगशोष यत्न १–८ टंक वंशलोचन, ४ टंक पिप्पली, २ टंक इलायची, १ टंक तज और १६ टंक मिश्रीका चूर्ण मधु और मक्खनके

साथ चटाओ तो राजरोग, ज्वर; श्वास, कास, मन्दाग्नि, पार्श्वशूल, अरुचि, दाह और रक्तपित्त ये सब दूर होवेंगे इसे शीतोपलादि अवलेह कहते हैं।

तथा २-गिलोयसत्व और लोहसारका मिश्रण करके प्रतिदिन १ टंक माखन और मधुके साथ खिलाओ तो राजरोग शोष जाय।

तथा ३-३ भाग पारदभस्म (मरा हुआ पारा) २ भाग स्वर्णभस्म १ भाग शिलाजीत और २ भाग गन्धक इन सबको इकट्ठे पीसके पीली कौड़ियोंमें भर दो और बकरीके दूधमें सुहागा पीसके उन कौड़ियोंके मुखपर लगादो (जिससे मुँह बंद हो जाय) इन कौड़ियोंको एक गड़हे (मिट्टीका छोटा बर्तन डुबला) में भरके सराईसे कपड़मिट्टी लगाकर उस बर्तनका मुख भली भाँति बंद करके गजपुटमें फूँक दो, स्वांगशीतल होजानेपर निकालके खरल कर डालो यह राजमृगांक बनगया, जो इसकी ४ रत्ती प्रमाणकी मात्रा १ मासे पर्यन्त वर्धमान पिप्पली और मधुके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष अवश्य दूर होवेंगे।

तथा ४-५टंक भीमसेनी कपूर, ५ टंक तज, ५ टंक कंकोल, ५ टंक जायफल, ५ टंक लवंग, ७ टंक नागकेशर, ८ टंक पिप्पली ९ टंक सोंठ और इन सबके बराबर मिश्री इन सबका चूर्ण बना कर १ टंक नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोष दूर होवेंगे, यही कर्पूरादिचूर्ण जुदे-जुदे अनुपानसे अरुचि, कफ, क्षय, श्वास, कास, गोला अर्श, वमन और कंठरोगादिको भी नष्ट करता है।

तथा ५-५ टंक शुद्ध गन्धक; ५ टंक शुद्ध पारेकी कजली, ५ टंक हिंगुल, १ टंक मैनशिल, ५ टंक अभ्रक और इन सबसे आधा कांतिसार इन्हें शतावरीके रसमें १४ पुट देके सुखालो, यह कुमदेश्वर रस बनगया, जो इसकी २ तथा ३ रत्तीकी मात्रा प्रतिदिन प्रातःकाल मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, वात, पित्त, कफरोग और सब प्रकारके ज्वर दूर होवेंगे ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा ६-चौलाईको पकाके घृतके साथ नित्य खिलाओ तो राजरोग, बहुमूत्र दूर होवें।

तथा ७-पके हुये बड़े गीले ५०० आंवला मृत्तिकाके पात्रमें पकाकर रस निकाल लो इस रसमें ५०० टकेभर मिश्री मृतिका पात्रमेंही डालकर चासनी बनाओ (होसके तो इस चासनीको किसी चांदीके पात्रमें रक्खो नहीं तो उसी मृत्तिकाके पात्रमें रहने दो) तदनन्तर उसमें दाख, अगर, चन्दन, कमलगट्टा, इलायची, हर्रकी छाल, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, गुरुच, काकड़ासिंगी, पोहकरमूल, कचूर, अडूसा, विदारीकन्द, खरेटी, जीवंती, शालपर्णी, दोनों पृष्ठपर्णी, कटियाली, बेलकी गिरी, अरलू, कुंभेरपाठा, ये सब औषध १ एक टकेभर, तथा ६ टके भर मधु, १ टकेभर पिप्पली, २ टकेभर तज, २ टंक पत्रज, २ टङ्क नागकेशर, २ टङ्क इलायची, और २ टङ्क वंशलोचन इन सब औषधोंका चूर्ण डालकर उत्तम प्रकारसे संयुक्त करदो, अब यह च्यवनप्राश्य वलेह बन गया, जो नित्य १ टकेभर खिलाओ तो राजरोग, शोष दूर होकर बल और शरीरकी पुष्टि बढ़े तथा इसके सेवनसे वृद्ध भी तरुण हो सकता है।

तथा ८-१ टके भर अडूसा और कटियालीका रस निकाल १ टके भर मधु और २ टङ्क पिप्पलीके साथ नित्य सेवन कराओ तो राजगोग दूर हो।

तथा ९-१ भाग शुद्ध पारा और २ भाग शुद्ध गन्धककी कजलीमें १ भाग मृगांक (स्वर्णभस्म) और १ भाग अनबींधे मोतियोंका चूर्ण मिलाकर इन सबोंको सराई (दिया, सकोरा) में रक्खो, इस दियेपर दूसरा दिया जमाकर कपडमिट्टीसे बन्दकर दो, इस शरावसम्पुटको सुखाकर मृत्तिकाके घड़े (आधे घड़ेमें नोन, बीचमें सम्पुट और ऊपरसे फिर मुँहतक नोन भरा हुआ) में धर दो और इस घड़ेको चार प्रहर (१ दिनभर) अच्छी तीक्ष्ण आंच देकर स्वांगशीतल होजानेपर घड़ेमेंसे संपुट और संपुटमेंसे रस बड़ी युक्तिपूर्वक निकाल लो, वैद्यविनोद में इसको कुमुदेश्वररस नाम दिया है, जो नित्य १ तथा २ रत्तीकी मात्रा मिश्रीके साथ खिलाओ तो राजरोग दूर होगा।

तथा १०-पारा और गन्धक समान भागकी कजली करके पीली कौड़ियोंमें भर दो इन कौड़ियोंके मुखपर सुहागेका डाट लगाकर अग्निसे तपाओ, तदनन्तर इन कौड़ियोंको शरावसम्पुटकरके गजपुटमें फूँक

दो, स्वांगशीतल हो जाने पर शरावसम्पुटमेंसे कौड़ियोंको निकालकर महीन पीस लो, यह पारदेश्वर रस रुद्रदत्तमें लिखा है, जो इसकी एक रत्ती प्रमाणकी मात्रा नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, श्वास, कास, संग्रहणी और ज्वरातिसार ये सब रोग दूर होंगे ।

तथा ११-चरमें लिखा है कि शुद्ध शिलाजीतके सेवन करानेसे भी राजरोग नष्ट हो जावेगा ।

तथा १२-१० टंक तालीसपत्र, १० टंक चित्रक, १० टंक हर्रेकी छाल, १० टंक अनारदाना, १० टंक डांसरफल, २ टंक अजमोद, २ टंक गजपीपली, २ टंक अजवायन, २ टंक झाऊ वृक्षकी जड़, २ टंक जीरा, २ टंक धनियां, २ टंक जायफल, २ टंक लौंग, २ टंक तज, २ टंक पत्रज २ टंक इलायची और इन सबके समान ही मिश्री इन सबका बारीक चूर्ण कर नित्य २ टंक की मात्रा बकरीके दूधके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, क्षय, पीनस, प्लीहा, अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, पांडु, प्रमेह और वात, पित्त, कफके अन्य भी बहुतसे रोग नष्ट होंगे । हारीतमें इसका नाम महातालीसादि चूर्ण लिखा है ।

तथा १३-सोंठ, कालीमिर्च, तज, पत्रज, इलायची, लौंग, जायफल, वंशलोचन, कचूर, बावची, अनारदाना, इन सबका चूर्ण करके चूर्णके तुल्य ही कांतिसार और सबोंके तुल्य मिश्री मिलाओ अब यह गगनायस चूर्ण बन गया, जो इसे २ टंक नित्य बकरीके दूधके साथ खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि और २० प्रकारके प्रमेय मात्र इससे दूर होंगे ।

तथा १४-लौंग, कंकोल, कालीमिर्च, खस, चन्दन, तगर, कमलगट्टे- कालाजीरा. इलायची, अगर नागकेशर, सोंठ, पीपली, चित्रक, नेत्रवाला, भीमसेनीकपूर, जायफल, वंशलोचन, इन सबकी आधी मिश्री इन सबका महीन चूर्ण कर नित्य १ टंक खिलाओ तो राजरोग. मंदाग्नि, कास, हींचकी, संग्रहणी, अतिसार, भगंदर, प्रमेह ये सब दूर हों इसे लंवगादिचूर्ण कहते हैं ।

तथा १५-२टके भर अभ्रकभस्म, ४ मासे भीमसेनी कपूर, चार मासे जायपत्री, ४ मासे खस, ४ मासे पत्रज, ४ मासे लवंग, ४ मासे तालीसपत्र, ४ मासे दालचीनीका रस, ४ मासे धावडेके फूल, ६ मासे हर्रेकी छाल, ४ मासे आँवला, ४ मासे बहेडेकी छाल, ६ मासे सोंठ और

शुद्ध पारे गंधक ६की मासे कजलीमें उक्त सब औषधोंका चूर्ण डालकर जलके साथ खरल कर चनेके समान गोलियाँ बनालो। यह श्रृंगाराभ्रकगुटिका प्रस्तुत हुई, इसकी चार गोलियां नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोथ, श्वास, कास, शूल, प्रमेह, वमन, अम्लपित्त, अरुचि, संग्रहणी, वातरक्त ये सब नष्ट होकर पुष्टता प्राप्त होगी।

तथा १६--दशमूल, पीपली, चित्रक, कौंचबीज, बहेडेकी छाल, कायफल, काकडासिंगी, देवदारु, पुनर्नवाकी जड़, धनियां, लवंग, किरमालेकी गिरी, गोखरू, विधायरा (वृद्ध दारु, गर्भवृद्धि) कूट, इन्द्रायण इनका दो टकेभर चूर्ण १६ सेर पानीमें डालकर उसीमें अच्छी बडी बडी ४ सेर हर्र भी डाल दो। सब पदार्थ मृत्तिकाके पात्रमें मंद मंद आँचसे औटाकर हर्र निकाल शीतल करलो, दूसरे मृत्तिकाके पात्रमें उत्तम मधुके साथ इन्हे पांच दिनतक रखकर निकाल लो। फिर तीसरे पात्रमें दूसेर मधु (उपर्युक्त छोड़ दो नया लो) के साथ १५ दिन रखके निकाल लो, तदनंतर चौथे पात्रमें भी नये मधुके साथ एक मास पर्यंत डुबा रक्खो तत्पश्चात् उसी पात्रमें तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपलका चूर्ण डालके इन सबको ऐसे मिला दो कि मधु, हर्र और चूर्ण एकजीव हो जावें, जो प्रतिदिन १ हर्र खिलाओ तो राज रोग, शोष, कास, श्वास, हिचकी, वमन, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, वातरक्त, बवासीर, संग्रहणी, रक्तपित्त, दाह, विभूति, ब्योची, (जो पांवके सुरुओंमें होती है) कुष्ट, मृगी और पांडु ये सब रोग दूर हों। धन्वन्तरिसंहितामें इसे मधु पक्वहरीतकी नाम दिया है।

तथा १७--१ सेर अदरखके रसमें १ सेर गुडकी चासनी मंद २ आंचसे बनाओ इस पतली चासनीमें तज, पत्रज, नागकेशर, लौंग, इलायची, सोंठ, कालीमिर्च, पीप्पली (एक टके भर) का चूर्ण डालकर नित्य टके भर खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि ये दूर हों, यह आर्द्रकावलेह है।

तथा १८--बकरीके दूधमें समान जल और उसीमें ३ पीपली डालके मंद २ आँच दो, जब जल औटकर दूध मात्र रहजावे तब पीप्पली खाकर ऊदरसे दूध पीजावो। इसी प्रकार १ मासतक लेआओ तो राजरोग, शोष, कास, श्वास सब दूर हों। यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है।

तथा १९--४ सेर दाख १ मन जलमें डालकर औटाते औटाते चौथाई रखलो और उसीमें पुराना गुड, वायविडंग, प्रियंगुपुष्प, तज, इलायची, नागकेसर (टके टके भर), डालकर डमरूयंत्रसे मदिराकी रीतिपर रस निकाल लो इसे टके भर नित्य सेवन करो तो राजरोग, श्वास कास ये सब रोग दूर होवें। योगतरंगिणीमें इसे द्राक्षासव संज्ञा दी है।

तथा २०- १ भाग मृगांक, २ भाग रूपरस, ३ भाग ताम्रेश्वर, ४ भाग पारदभस्म, ५ भाग अभ्रक इनको एकत्र कर १ वायविडंग, २ नागरमोथा, ३ कायफल, ४ निर्गुंडी, ५ दशमूल, ६ चित्रक, ७ हल्दी, ८ सोंठ, ९ कालीमिर्च और १० पिप्पलीको २ पुट पृथक् पृथक् रखके पश्चात् एक देकर आधी रत्ती प्रमाणकी गोलियां बना लो इसकी एक गोली नित्य खिलाओ तो राजरोग, कास, प्लीहा, गोला, ये सब नष्ट होवें यह पंचामृतरस सार-संग्रहमें लिखा है।

तथा २१-बड़े शंखको गोमूत्रमें जलाकर, इस भस्मकी घरियां बनाओ इसमें ५ टंक पारा और ५ टंक गंधककी कजली भरके कपड़-मिट्टीसे बंदकर गजपुटमें फूँकदो; शीतल होनेपर पीसकर रख लो, यह भस्म १ रत्ती प्रतिदिन मधुकेसाथ चटाओ तो राजरोग दूर हो, रसार्णवमें यह विधि लिखी है।

तथा २२-ऽ। पावभर थूहरकी लकड़ी, १ टकेभर सेंधानोन, १ टकेभर सोंचरनोन, १ टकेभर सांभरनोन, १ सेर भर मट्ठा, २ टकेभर चित्रक इन सबका चूर्ण शरावसम्पुटमें धरके गजपुट में फूँक दो, जो इस भस्ममेंसे १ मासा प्रतिदिन भोजनोपरान्त जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, श्वास, बवासीर, शूल ये सब रोग दूर होके भोजन तुरंत पचे और आंव तत्काल भस्म होजावेगी, इसे क्षुद्रादिक्षार कहते हैं, वह "रसराजलक्ष्मी" नामक ग्रन्थमें लिखा है।

तथा २३-नींबूके रसमें बुझाई हुई शंखकी १ टंक मर भस्म १० टंक चव्य, १० टंक जवाखार, १० टंक सेंकी हींग, १० टंक पांचों नोंन, १० टंक कालीमिर्च, १० टंक पीपल, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक शुद्ध पारा, और १० टंक शुद्ध गंधककी कजली इन सबका चूर्ण नींबूके रसमें खरल करके चने प्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो एक गोली

इसे मूषाभी कहते हैं जैसे सुनारलोग चांदी सोना गलानेके लिये बनाते हैं।

नित्या लौंगके काढ़ेके साथ सेवनकराओ तो राजरोग, संग्रहणी, शूल, गोला ये सबरोग दूर होवेंगे, यह शंखवटी योगतरंगिणीमें लिखा है।

तथा २४–दशमूल, केवाँचके बीज, शंखाहोली, कचूर, खरेंटी, गजपीपली, अपामार्ग (ऊँगा आधीझारा), पीपलामूल, चित्रक, भारंगी, पोहकरमूल; इन सब औषधोंका २ टकेभर चूर्ण और १०० बडी हर्रैं, सबके सब २० सेर ॥ऽ पानीमें डालकर औटाओ चतुर्थांश रह जानेपर हर्रोंकी गुठली निकालकर महीन पीस डालो फिर १०० टके भर पुराने गुड़की चासनी बनाकर उसमें उपयुक्त चूर्ण और ८ टकेभर गौका घृत डाल दो यह अगस्त्य–हरीतकी बनगई, जो इसे १ टकेभर नित्य खिलाओ तो राजरोग, शोष, कास, श्वास, हिचकी, विषमज्वर, संग्रहणी, पीनस, अर्श और अरुचि ये सब रोग दूर हों, यह विधान वृन्दमें लिखा है।

तथा २५–१०० टकेभर अडूसेको जलमें औटाकर चतुर्थांश क्वाथ रख लो, इसमें १०० टकेभर पुराने गुड़की चासनी बनाकर उसीमें आठ टकेभर तिलीका तेल, ८ टकेभर गौका घृत, १०० हर्रकी छिलकोंका चूर्ण २ टंक पीपली, २ टक पीपलामूल, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पोहकरमूल, २ टंक चव्य, २ टंक चित्रक और २ टंक सोंठका महीन चूर्ण डालकर सिद्ध कर लो, जो इसको एक टकेभर खिलाओ तो राजरोग, अर्श, कास, श्वास, स्वरभेद, शोथ, अम्लपित्त, पांडुरोग, उदररोग, अग्निमांद्य और नपुंसकता ये सब रोगदूर होवेंगे ऐसा चरकमें लिखा है।

विशेषतः—वृन्दमें ऐसा लिखा ह कि, राजरोग शोषरोगसे रोगित पुरुषको षष्टितण्डुल[1], गेहूँ, यव, मूंग, हरिणमांस, कुलथी बकरी का घृत, बकरीका दुग्ध, मीठा अनार और आंवला ये पदार्थ अति हितकारी हैं. इनके सेवनही उक्त रोग नष्ट होजावेंगे।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे रक्तपित्तराजरोगशोषरोगयत्न
निरूपणंनामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

१ एक प्रकारके चावल जो ६० दिनमे पकजाते हैं।

कास-हिक्का-श्वास

अथ कासस्य हिक्कायाः श्वासस्य हि यथाक्रमम् ।
नेत्रचन्द्रमिते चोर्मौ चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इसके आगे (१२ वें तरंगमें कास, हिक्का और श्वास रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं ।

कासरोगका यत्न १-५ टंक लवंग, ५ टंक कालीमिर्च, ५ टंक बहेड़ेकी छाल और ५ टंक खैरसारके चूर्णको बबूलेकी छालके क्काथमें खरल करके २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ तथा २ या ३ गोलियां नित्य खिलाओ तो खांसी दूर हो, यह लवंगादिगुटिका लोलिम्बराजमें लिखी है ।

तथा २-१ टंक शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, ३ टंक पिप्पली, ४ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक बहेड़ेकी छाल, ६ टंक काकड़ासिंगीके चूर्णको बबूलके बक्कलके क्काथमें २१ पुट देकर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो, इनमेंसे २ गोली नित्य सोंठके क्काथके साथ खिलाओ तो खांसी अवश्य दूर होगी यह रससमूह तथा योगचिन्तामणिमें लिखा है ।

तथा ३-२ टंक काली मिर्च, २ टंक पिप्पली, १० टंक अनारके छिलके, २ टके भर गुड़ और २ टंक जवाखारको महीन पीसकर चने प्रमाणकी गोलियां बनालो; जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सब प्रकारकी खांसी दूर हो ।

तथा ४-पिप्पली, हर्रकी छाल, पोहकरमूल, सोंठ, कचूर और नागरमोथेका चूर्ण गुड़में मिलाकर ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सब प्रकारकी खांसी जावे ।

तथा ५-सोंठका क्काथ नित्य सेवन कराओ तो खांसी नष्ट हो

तथा ६-अदरखके रसमें मधु मिलाकर नित्य सेवन कराओ तो खांसी जाय ।

तथा ७-कटियाली, गुर्च, सोंठ पोहकरमूल और अडूसेका क्काथ पिलाओ तो खांसी नष्ट हो, इसे क्षुद्रादि क्काथ कहते हैं ।

तथा ८-छोटी कटियालीका क्वाथ बनाकर रस निकालो और उसमें पिप्पलीका चूर्ण डालकर नित्यपिलाओ तो खांसी दूर होगी ।

तथा ९-२ टंक सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पिप्पली, २ टंक अमलवेत, २ टंक चव्य, २ टंक चित्रक, २ टंक जीरा, २ टंक डांसरा, २ मासे तज, २ मासे पत्रज, और ४ मासे नागकेशरका चूर्ण,ऽ। पावभर गुडके साथ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो इसकी एक गोली नित्य प्रभातमें खिलाओ तो खांसी और श्वास दूर होगा।

तथा १०--हर्रकी छाल, पिप्पली, सोंठ, कालीमिर्चके चूर्णको गुड़के साथ गोलियां बनाकर १--२ तथा ३ गोली नित्यप्रति खिलाओ तो खांसी दूर होगी।

तथा ११--२ टंक लवंग, २ टंक पिप्पली, २ टंक जायफल, २ टंक कालीमिर्च, ८ पैसे भर सोंठ, और इन सबके तुल्य मिश्री इन सबका चूर्ण कर नित्य २ टंककी मात्रा जलके साथ दो तो खांसी, ज्वर, प्रमेह, अरुचि, श्वास मन्दाग्नि, संग्रहणी ये सब रोग दूर हों, यह लवंगादि चूर्ण है।

तथा १२-हिंगुल, कालीमिर्च, नागरमोथा, सिंगीमुहराका चूर्ण जंभीरी या अदरखके रसके साथ खरल करके मूंग प्रमाणकी गोलियां बांध लो, जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, और श्वास रोग दूर हों।

तथा १३-काली मिर्च, नागरमोथा, कूट, वच, शुद्ध सिंगीमुहरा इन सबको अदरखके रसमें खरल करके मूंग प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वास, कफरोग, सूतिकारोग और संग्रहणी ये सब दूर हों।

तथा १४-२ टंक या १ टंक लौंग, २ टंक पिप्पली, ३ टंक हर्रकी छाल, ४ टंक बहेड़ेकी छाल, ५ टंक अड़ूसा, ६ टंक भारंगी, और इन सबसे तुल्य खैरसार इन सबके चूर्णको बबूलकी छालके क्वाथमें २१ पुट देकर मधुके साथ चने प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वास, क्षय, सब, दूर हों, इसे कासकर्तरी गुटिका कहते हैं।

तथा १५-१ टंक भीमसेनी कपूर, १ टंक लौंग, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पिप्पली, २ टंक बहेड़ेकी छाल, २ टंक कुलिंजन नागरबेल (पानकीजड़), १ टके भर अनारका छिलका और इन सबके तुल्य खैरसार इन सबके चूर्णको जलमें खरल करके चने प्रमाणकी गोलियां

बना लो, जो एक गोली नित्य खिलाओ तो खाँसी दूर हो, यह कर्पूरादि गुटिका है, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा१६–अर्कपुष्पके मध्यकी फूली और कालीमिर्च दोनोंको पीसके कालीमिर्चके समान गोलियां बांध लो, एक गोली नित्य खिलाओ तो खांसी नष्ट होगी, १६ और १७ वां दोनों यत्न रुद्रदत्तमें लिखे हैं।

तथा १७–अर्कपुष्पके मध्यकी फूली और लौंगको पीसकर १ रत्तीकी गोलियां बनालो, जो १ गोली नित्य खिलाओ तो खांसी दूर होगी।

तथा १८–४सेर पसरकटियालीको पानीमें औटाकर क्वाथ बनाओ; इस क्वाथमें १०० हरें डालकर औटाओ पक जानेपर शीतलकर गुठली निकाल डालो १०८ टके भर गुड़की चासनीमें १ टके भर सोंठ, १ टके भर कालीमिर्च, १ टके भर पिप्पली,१ टके भर पत्रज, १ टके भर तज ३ टके भर नागकेशर १ टके भर इलायची इन सबका चूर्ण और ऊपर लिखी सौ हरोंका चूर्ण दोनों डालकर एक रस धर दो यह भृगुहरीतकी प्रस्तुत हो गई, जो नित्य १ टके भर खिलाओ तो सब प्रकारकी खांसी जावेगी।

तथा १९–चार सेर कटियालीके क्वाथमें ४ सेर मिश्रीकी चासनी बनाकर उसमें १ टके भर गुर्च, १ टके भर काकडासिंगी, १ टके भर चव्य, १ टके भर चित्रक, १ टके भर सोंठ, १ टके भर नागरमोथा १ टके भर पिप्पली, १ टके भर धमासा, १ टके भर भारंगी, १ टके भर कचूरका चूर और एक सेर भर मधु डालो यह कटियालीका अवलेह हुआ, जो १ टके भर नित्यखिलाओ तो सब प्रकारकी खांसी दूर हो, यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा २१–अडूसेके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो खांसी दूर होगी।

तथा २१–अर्कपत्र, मनसिल, सोंठ काली मिर्च और पिप्पली ये सब तमाखू सदृश चिलममें भरके पिलाओ तो खांसी दूर होगी।

तथा २२–(शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, शुद्ध सिंगीमुहरा, हिंगुल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सेंका सुहागा इन सबका चूर्ण भृंग-

राजके रसमें १दिन खरल करके तदनन्तर३दिन बिजौरेके रसमें खरल करो तदनन्तर आधी रत्ती प्रमाणकी गोलियां बांधकर १ गोली नित्य दश दिन पर्यंत खिलाओ तो खांसी, क्षय, संग्रहणी, सन्निपात और मृगी ये सब रोग दूर हों, यह आनन्दभैरव रस कहलाता है।

हिक्कारोग यत्न १–प्राणायाम करने, किसी प्रकार डरने, भयंकर बात सुनने, तथा वायु कफ न्यूनके पदार्थके भक्षणसे हिक्का नष्ट होगी।

तथा २–बकरीके दूधमें सोंठ डालकर पकाओ, जो यह दूध सोंठ सहित भक्षण कराओ तो हिचकी दूर होगी।

तथा ३–बिजौरेके रसमें यवका सत्तू और सेंधानमक मिलाकर खिलाओ तो हिचकी दूर होगी।

तथा ४–सोंठ और पिप्पलीका चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो हिचकी शीघ्र मिट जावेगी।

तथा ५–मक्खीकी विष्ठा दूधमें पीस कर नास दो तो हिचकी दूर हो।

तथा ६–गुड़ सोंठ पानीमें पीसकर नास दो तो हिचकी दूर हो।

तता ७– काशकी जड़के रसमें मधु मिलाकर नास दो तो हिचकी दूर हो।

तथा ८–मयूरपक्षकी भस्म मधुके साथ चटाओ तो हिचकी जावे।

तथा ९–बिजौरेकी केशरमें सेंधानोन मिलाकर खिलाओ तो हिक्का दूर हो।

तथा १०–गुवारपाठेके रसमें सोंठ डालकर खिलाओ तो हिचकी दूर हो।

तथा ११–पोहकरमूल, जवाखार, कालीमिर्चका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो हिचकी दूर हो।

तथा १२–हल्दी उर्दका चूर्ण निर्धूम अग्निसे तमाखू सदृश पिलाओ तो भयंकर हिक्का दूर हो। यह सब यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं।

तथा १३–सनकी छालका चूर्ण चिलममें भरके पिलाओ तो हिचकी जावे।

तथा १४–सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, जवासा (दुरालभा) कायफल, करेलेकी वेल, पोहकरमूल, काकड़ासिंगी इन सबका चूर्ण बनाकर २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो हिक्का दूर हो।

तथा १५--एक टंक पित्तपाड़ा, एक टंक पिप्पली और ५ टंक गुड़ इनका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का दूर हो ।

तथा १६--१० टंक असालु (हालु) क्वाथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का तत्काल बंद हो, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

१७-१ टंक मुलहठीका चूरा मधुके साथ चटाओ तो हिचकी बन्द हो ।

तथा १८--१ टंक पिप्पली मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो हिक्का बन्द हो जावे ।

तथा १९--दुग्धमें घृत डालकर कुनकुनसा पिलाओ तो हिक्का बन्द हो ।

तथा २०--बिजौरेका रस, मधु और सोंचरनोन मिलाकर पिलाओ तो हिक्का, दूर हो, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

तथा २१--कवीट या आँवलेका रस मधु मिलाकर पिलाओ तो हिक्का, श्वास दोनों बंद होवें, यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है ।

तथा २२--इलायची, दालचीनी, नागकेशर, कालीमिर्च, पिप्पली, सोंठ, (उत्तरोत्तर वृद्धिक्रम से) पहिला १, दूसरा २ तीसरा ३ टंकादि लेकर इन सबोंके तुल्य मिश्रीडालो, इसे घृतमें सानकर प्रतिदिन २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन करो तो हिक्का, अजीर्ण, उदररोग, अर्श, श्वास और कास ये सब रोग दूर हों, यह एलादि चूर्ण वृन्दमें लिखा है ।

श्वासरोग यत्न १--नमक, तेलको उष्णकरके हृदयको सेको तो श्वास दब जावेगा ।

तथा २--अदरखके रसमें मधु मिलाके चटाओ तो श्वास दूर हो ।

तथा ३-१ सेर अदरखके रसमें, ऽ। पावभरसोंठ, ऽ। पावभर बहेड़ेकी छालका चूर्ण और २ सेर बकरीका मूत्रडालके मृत्तिकाके पात्रमें औटावो, गाढ़ा हो जानेपर ऽ॥ आधसेर मधु मिलाकर नित्य १ टंक सेवनकरावो तो श्वास और कास दोनों दूर हों ।

तथा ४--दशमूल, कचूर, रास्ना, पिप्पली, सोंठ, पोहकरमूल, भारंगी, काकडासिंगी, गुड़ चित्रक इनके दो टंक चूरेका क्वाथ नित्य सेवन करावो तो पार्श्वशूलादि ये सब दूर हों ।

तथा ५--पेठेकी जड़का १ टंक चूर्ण नित्य सेवन कराके ऊपर से उष्ण जल पिलावो तो श्वास दूर हो।

तथा ६--हल्दी, कालीमिर्च, मुनक्का, पिप्पली, रास्ना, कचूर इन सबका १ टंक चूर्ण गुड़ और कड़वे (तिलीके) तेलके साथ सेवन कराओ तो श्वास निश्चय दूर हो।

तथा ७--१ एक सेर भारंगीको औटाके रस निकालो, इसमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाते समयही एक सेर हर्रकी छालकाचूर्ण डालके मिलादो, शीतल होजानेपर इसमें ६ टंक मधु, टकेभर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टके भर नागकेशर, २ टके भर जवाखार इनका महीन पिसा हुआ चूर्ण उसी चासनीमें मिलादो और एक पैसे भर नित्य खिलाओ तो श्वास, कास, अर्श, गुल्म, क्षय और उदररोग ये सब दूर होवें, इसे भारंगी अवलेह कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशोक्त हैं।

तथा ८--२ टंक शुद्धपारा और २ टंक शुद्ध गंधककी कजली, २ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक सेंका सुहागा, २ टंक मैनसिल, २ टंक कालीमिर्च, १ टंक सोंठ, २ टंक पिप्पली इन सबके चूर्णको अदरखके रसकी १ पुट देकर सिद्धकर लो, यह 'श्वासकुठार रस' बनगया, जो इसकी एक रत्ती प्रमाणकी मात्रा नित्य दो तो श्वास दूर हो।

तथा ९--१ भाग शुद्धपारा, २ भाग गंधक और ३ भाग तांबेश्वर तीनों ग्वारपाठेके रसमें खरल करके तांबेके सम्पुटमें रक्खो और बालुकायंत्रसे एक दिनभर आंच देकर सिद्ध करलो, यह 'सूर्यावर्त्त रस' बनालो, इसे २ रत्ती नित्य सेवन कराओ तो श्वासरोग दूर हो, यह वैद्यविनोदमें लिखा है।

तथा १०--काकडासिंगी, सोंठ, पिप्पली, नागरमोथा, पोहकरमूल, कचूर, कालीमिर्च, और इन सबके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बनालो, इसमें १ टंक गुर्च, अड़ूसा, पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, (इसमें किसी एक) क्काथके साथ नित्यसेवन कराओ तो श्वास दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ११--पिप्पली, पोहकरमूल, हर्रकी छाल, सोंठ, कचूर, कमलगट्टा इन सबके चूर्णमें समानगुड़ मिलाकर चने प्रमाणको गोलियां

बनालो, जो एक तथा दो गोली नित्य सेवन कराओ तो श्वास रोग दूर हो।

तथा १२ शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म और इन तीनोंसे दूनी सोंठ, कालीमिर्च, पीप्पली, पत्रज, नागकेशर नागरमोथा, वायविडंग, सम्भालू, कपेला, पीपलामूल ये सबलेकर चूर्ण कर डालो और जल-पिप्पलके रसमें ३ पुट देकर चने प्रमाणकी गोलियां बनालो। इसकी १ गोली नित्य सेवनसे श्वास, बवासीर, भगंदर, संग्रहणी, हृदयशूल, पार्श्वशूल, उदररोग, प्रमेह यह सब रोग दूर हों। यह महोदधिरस, सर्वसंग्रहमें लिखा है।

तथा १३--(शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, कान्तिसार, सुहागा, रास्ना, वायविड़ंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, कलीमिर्च, पिप्पली, गुर्च, कमलगट्टा, शुद्धसिंगीमुहरा, इन-सबका महीन चूर्ण मधुमें मिश्रित कर १ तथा २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, इसकी १ गोली नित्य भक्षण कराओ तो श्वास दूर हो, वैद्यरहस्यमें इसे 'अमृतार्णव-रस' संज्ञा दी है।

तथा १४--(पारा और गंधक तुल्यकी) कजलीको चौलाईके रसमें९ दिनपर्यंत खरल करके वज्रमूषा (दृढ घरिया) में रख १ दिनपर्यंत वालुकायंत्रसे आंच दो इसमेंसे ६ रत्ती की मात्रा नित्य पान अथवा पानके रसके साथ खिलाओ तो श्वास और हिक्का दोनों दूर हों, रुद्रदत्तमें इसकानाम "मेघडम्बररस" लिखाहै।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे कासहिक्काश्वासरोगचिकित्सा
निरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

स्वरभेद-अरोचक-छर्दि

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चैव यथाक्रमम्।
तरंगेऽग्न्योषधीशेऽस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस तेरहवें तरंगमें यथाक्रमसे स्वरभेद, अरोचक और छर्दि इन तीनोंकी चिकित्सा लिखते हैं।

स्वरभेदरोग यत्न १-नोनयुक्त तेलके पदार्थ भक्षण कराओ तो वातस्वरभंग दूर हो।

तथा २-उष्ण जल पिलाओ तो वातस्वर भंग दूर हो

तथा ३-घृत गुडके भक्षणसे वातस्वर भंग दूर हो

तथा ४ घृत मधुको भक्षण कराओ तो पित्तकास्वरभंग दूरहो

तथा ५-उष्ण दूध पिलाओ तो पित्तस्वरभंग दूर हो।

तथा ६-खारे, कडुवे पदार्थ अथवा मधु खिलाओ तो स्वरभंग दूर हो।

तथा ७-पिप्पली, पिप्पलामूल और कालीमिर्च गोमूत्रमें पीस कर पिलाओ तो कफस्वरभंग दूर हो।

तथा ८-गलेके तालुके मसूढ़ोका रुधिर निकाल डालो तो कफ-स्वरभंग दूर हो

तथा ९-१०० टके भर कटियाली, ५० टके भर पीपलामूल २५ टके भर चित्रक, २५ टके भर दशमूल इन सबका चूर्ण १ मन पानीमें औटाकर औटते औटते चार सेर रहजानेपर उतारलो, ठंढा होने-पर छानकर १०० टके भर पुराने गुड़की पतली चासनी बनाओ तदनन्तर इसमें ८ पल पिप्पली, ३ पल जायफल १ पल काली-मिर्चका चूर्ण और एक सेरभर मधु डालकर सबको एकमें एक कर दो, जो यह नित्य दो या तीन टके भर खिलाओ तो सब प्रकारका स्वरभंग, छर्दी, श्वास, कास, मन्दाग्नि कंठरोग, गुल्म, प्रमेह, आनाह (अफरा) और मूत्रकृच्छ्र ये सब रोग दूर होंगे, यह निदग्धि-कावलेह (कटियालीका अवलेह) भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा १०-अजमोद, हल्दी, चित्रक, जवाखार, आंवलेका २ टंक चूर्णनित्य घृत और मधुके साथ चटाओ तो भयंकर स्वरभंग भी दूर हो।

तथा ११-हर्रकी छाल, वच, पिप्पलीका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो मेद, क्षयरोगका स्वरभंग दूर हो। यह वैद्यविनोदमें लिखा है।

तथा १२-बहेडेकी छाल, पिप्पली, सैंधानोन और आंवलेका चूर्ण गौकी छांछ अथवा गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर हो, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा १३--जायफल, पिप्पली, नील (वृक्ष विशेष जिससे नील एक प्रकारका रंग निकलता है) और बिजौरेकी कली इन सबको महीन पीसके मधुके साथ चटाओ तो सब स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर स्वर हो जावेगा, यह जायफलका अवलेह सर्वसंग्रहमें लिखा है।

तथा १४--कुलिंजनको मुखमें रखकर उसका रस चूसते जावो तो स्वर भंग दूर हो।

तथा १५--चव्य, अमलवेत, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, डासरे, तज, पत्रज, जीरा, चित्रक, इलायची इन सबका २ टंक चूर्ण तिगुने गुडके साथ नित्य सेवन कराओ तो स्वरभंग, पीनस, कफरोग और अरुचि ये सब दूर हों, इसे चव्यादिचूर्ण कहते हैं।

तथा १६--पारदभस्म, तांबेश्वर, कांतिसार इस सबको तुल्यलेके कटीलीके रसमें २१ पुट दो और मूँगके समान गोलियां बनाकर एक गोली मुखमें रक्खो तो स्वरभंग दूर हो, ये गुरु गोरखनाथजीकी गोली है।

१७--ब्राह्मी, वच; हर्रकी छाल, अडूसा, पिप्पलीका १ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ १४ दिन तक सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर (किन्नरसदृश) स्वर बन जावेगा ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

अरोचकरोग यत्न १--अदरख और सैंधानोन भोजनके पूर्व खिलाओ तो अरोचक दूर हो।

तथा २--अदरखके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो अरुचि, कास, श्वास, तीनों दूर हों।

तथा ३--मिश्री डालकर पक्की इमलीका रस बनाओ और उसमें इलायची, लौंग, भीमसेनी (शुद्ध) कपूरकी प्रतिवास (भावना) देकर यह रस पिलाओ तो अरुचि दूर हो।

तथा ४--राई, जीरा, सेंकी हींग. सोंठ,सैंधानोनका चूर्ण, गऊके दही तथा मट्ठेके साथ पिलाओ तो अरुचि दूर होकर क्षुधा बढ़े।

तथा ५- वस्त्रमें छनेहुए गौके दहीमें मिश्री डालकर इलायची, लौंग, भीमसेनी कपूरके साथ पिलाओ तो अरुचि तत्काल दूर हो, इसे शिखरन कहते हैं।

तथा ६--२ टके भर अनारदाना, ८ टके भर मिश्री, १ टके भर सोंठ, १ टके भर कालीमिर्च, १ टके भर पिप्पली, २ टंक तज, २ टंक पत्रज, २ टंक नागकेशर इनके २ टके चूर्णको नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि तथा खांसी दूर होगी, इसे दाडिमादिचूर्ण कहते हैं।

तथा ७--लवंग, कंकोल मिर्च (शीतलमिर्च), खश, चन्दन, अगर, तगर, कमलगट्टा, कालाजीरा, नागकेशर, पिप्पली, सोंठ, चित्रक, इलायची, भीमसेनी कपूर, जायफल, वंशलोचन, और इन सबसे आधी मिश्री इन सबका १ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि मन्दाग्नि, क्षीणता, बद्धकोष्ठ, खांसी, दाह, हिचकी, राजरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह ये सब रोग दूर होंगे, इसे लवंगादि चूर्ण कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ८--सौंफ, कालीमिर्च, डासरा, अमलवेत, सोंचरनोन, गुड़, मधु, बिजौरेकी केशर, तज, पत्रज, वंशलोचन, इलायची, अनारदाना, जीरा ये सब औषधी अधेले अधेले भर लेके चूर्ण बनाओ और नित्य दो टंकके लगभग जलके साथ सेवन कराओ तो अरोचकता दूर हो।

तथा ९--पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, कालीमिर्च, अजमोद, डांसरा, अमलवेत, असगंध, अजवायन, कैथा (कवीट) ये सब अधेले २ भर और ४ टंक मिश्री इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, श्वास, कास, वमन, शूल, रक्तपित्त ये सब दूर हों इसे बृहदेलादि चूर्ण कहते हैं, यह सर्वसंग्रहमें लिखा है।

तथा १०--जवाखार, सज्जी, सेंकासुहागा, पांचों नोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, लोहसार, शुद्ध कपूर, चव्य, चित्रक, अनारदाना, डांसरा, अदरख इन सबके चूर्णको अजवायनके रसकी ३ पुट तदनंतर नींबूके रसकी ५ पुट, तदनन्तर अमलवेतके रसकी ३ पुट देकर चने प्रमाणकी गोलियां बांध लो, इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो अरुचि, मन्दाग्नि, गुल्म, श्वास, कास, कफ, प्रमेह इत्यादि रोग पृथक २ अनुपानसे दूर होंगे यह अग्निकुमाररस सर्वसंग्रहमें लिखा है।

छर्दिरोग यत्न १--धनियां, सोंठ, दशमूल इनका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो वात छर्दि दूर हो ।

तथा २--घृतमें सेंधानोन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो ।

तथा-३-मूंग और आंवलोंको औटाकर रस निकालो और इस रसमें घृत, सेंधानोन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो ।

तथा ४-मूँग, मसूर, जौके आटेकी राब (लपसी) में, मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ५-पित्तपापड़ेके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ६ गुर्च, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोलके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ७-मक्खीकी विष्ठा (तथा पोदीनेका फूल), मिश्री, चन्दन इन तीनोंको घिसकर मधुके साथ चटाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ८-लाहीके सत्तूमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ९-मसूरके सत्तूमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा १०-चावलोंके पानीमें मधु डालके पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो ।

तथा ११--अनारका रस मधुके साथ पिलाओ तो वात, पित्त, कफ तीनोंकी छर्दि दूर हो ।

तथा १२-इलायची, नागरमोथा, नागकेशर, चावलोंकी लाही, गौरीसर, चन्दन, बहुफली, बेरकी बीजी, लौंग, पिप्पली, इन सबका १ या दो टंक चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो त्रिदोषज छर्दि दूर हो ।

तथा १३-पीपलके पेड़के छिलके जलाकर पानीमें बुझाओ और यह बुझा हुआ जल पिलाओ तो उल्टी बंद होगी

तथा १४-बेरकी बीजी, आँवलेकी बीजी, छोटी पीपल, मक्खीकी बीट इनकेक्काथमें मधु डालकर पिलाओ तो छर्दि बंद हो । ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं ।

तथा १५–जामुनके कोमल पत्र और आमके कोमल पत्रोंका पानी औटाकर इसमें लाहीको महीन पीसो और मधु डालकर पीलाओ तो भयंकर भी छर्दि दूर हो ।

तथा १६–यदि ग्लानिकारक वस्तुसे छर्दि हुई हो तो उत्तम मनोहर वस्तु (जिसके देखनेसे चित्तग्लानि दूर होकर उत्साह बढे) दिखाओ ग्लानिजन्य छर्दि दूर हो ।

तथा १७–आँवसे छर्दि हुई हो तो लंघन कराओ छर्दि दूर होगी ।

तथा १८–१ मासा केशर, १ मासा इलायची, २ रत्ती हिंगुल इन सबको महीन पीसकर मद्यके साथ चटाओ तो सब प्रकारकी छर्दि दूर होगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे स्वरभेदारोचकच्छर्दिरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

तृषा–मूर्च्छा–मदात्यय

तृषायाश्चात्र मूर्च्छाया भंगे वेदविधौ क्रमात्
मदात्ययादिरोगाणां चिकित्सालिख्यते मया ॥ २ ॥

अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा, मूर्च्छा और मदात्यय रोगकी चिकित्सा लिखते हैं ।

तृषारोगयत्न १–वायुकी तृषा उष्ण अन्न तथा जल सेवन करनेसे दूर होगी ।

तथा २–दही और गुड़ खिलाओ तो वाततृषा दूर हो ।

तथा ३–स्वर्ण तथा चांदीको अत्युष्ण (तपाके लाल) कर जलमें बुझा दो और यह जल पिलाओ तो पित्त तृषा दूर हो ।

तथा ४–मिश्रीका ठण्ढा रस (शर्बत) पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो ।

तथा ५–रात्रिभर धनियांको भिगोके ठंडाईके समान पीस डालो और मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्त तृषा दूर होगी ।

तथा ६–अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो ।

तथा ७-शीतल जलमें रहना, जलक्रीडा करना अथवा शीतल (गीले वस्त्र पहननेसे पित्ततृषा दूर होगी ।

तथा ८--कपूर, चन्दन तथा अगरकोशिर (ललाट) अथवा शरीरपर लपेटनेसे पित्ततृषा दूर होगी ।

तथा ९- तीक्ष्ण, कटु वस्तुको खिलानेसे कफतृषा दूर हो ।

तथा १०--लौंगका क्वाथ पिलाओ तो कफतृषा दूर हो ।

तथा ११--जीरा, सोंठ, सोंचरनोनका चूर्ण जलकेसाथ सेवन कराओ तो कफतृषा दूर हो ।

तथा १२--बकरेका रक्तपिलाओ तो शस्त्रप्रहारजन्यतृषा दूर हो ।

तथा १३--बकरेके सोरवे (मांसरस) में मधु डालकर पिलाओ तो प्रहारज तृषा जावे ।

तथा १४--क्षीर (खीर = दूधमें पकाये हुए चावल) में मिश्री डालकर पिलाओ तो प्रहारज तृषा दूर हो ।

तथा १५--गन्ना (सांटा = ईख) का रस पिलाओ तो क्षीणताकी तृषा दूर हो ।

तथा १६--बड़के अंकुर, मुलहटी, लाही, कमलगट्टे इनको महीन पीसकर गोली बनाओ और इसमेंसे १ गोली मुँहमें रक्खो तो क्षीणताकी तृषा दूर हो ।

तथा १७--महुएको मुँहमें रक्खो तो तृषा दूर हो ।

तथा १८--बिजौरेकी जड़, अनार, कवीटकी जड़, चन्दन, लोध, बेरीकी जड़, इन सबको महीन पीसकर शिरपर लेप करो तो तृषा, दाह, शोष, तीनों दूर हों ।

तथा १९--बच और बेलका क्वाथ पिलाओ तो आंवकी तृषा दूर हो।

तथा २०--अति दुर्बल मनुष्यको तृषा हो तो दूध पिलानेसे दूर होगी ।

विशेषतः-तृषासे मनुष्य मोहको प्राप्त होकर प्राण छोड़ देता है, इसलिए किसी भी दशामें पानी पिलाना बन्द न करो, वरन् रोगानुसार थोड़ा बहुत जल सदा देते ही रहो, ये यत्न वैद्यविनोद तथा भावप्रकाश में लिखे हैं ।

मूर्च्छारोग यत्न१–तिल्ली तथा इण्डोलो आदिसे सेको तो वातमूर्च्छा दूर हो ।

तथा २–शीतल रस (शर्बत) पिलाओ तो पित्तमूर्च्छा दूर हो ।

तथा ३–चमत्कारी मणि धारणसे पित्तमूर्च्छा दूर हो ।

तथा ४–कपूर चन्दनादि शीतल पदार्थके लेपसे मूर्च्छा दूर होगी ।

तथा ५–बेरकी बीजी, शीतल मिर्च, खश, नागकेशर ये चारों पदार्थ ५ टंक लेके शीतल जलमें भिगोदो. गल जानेपर मसलकर छान लो, यह छना हुआ जल मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा दूर हो ।

तथा ६–मीठे अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा जावे ।

तथा ७–दाखके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छा दूर हो ।

तथा ८–साबुन (मार्जन) को घिसके (नेत्रोंमें) अञ्जन लगाओ तो कफकी मूर्च्छा दूर हो ।

तथा ९–शिरस (वृक्षविशेष) के बीज, पिप्पली, कालीमिर्च, सेंधा-नोन इनको गोमूत्रमें पीसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगाओ तो कफकी मूर्च्छा दूर हो ।

तथा १०–मैनशिल, वच, लहसुन इनको गोमूत्रमें पीसके आंखोंमें अञ्जन लगाओ तो कफ तथा सन्निपातकी मूर्च्छा दूर हो ।

तथा ११–मैनशिल, महुआ, सेंधानोन, वच, कालीमिर्च इनको महीन पीसकर जलके साथ नास दो तो सब मूर्च्छा दूर हो ।

तथा १२—शीतल जल शिरपर डालो अथवा अन्य शीतल यत्न करो तो रुधिरमूर्च्छा दूर हो ।

तथा १३--जिसे मद्यकी मूर्च्छा हो उसे थोडा मधु पिलाओ तो मद्य की मूर्च्छा दूर हो ।

तथा १४--निद्रासे भी मद्यमूर्च्छा दूर होगी ।

तथा १५--मैनफल या नीलाथोथा या फिटकरी पिप्पलीको जलमें औटाकर वह जल पिलाओ, जिससे वमन हो जावे तो विषमूर्च्छा दूर हो ।

तथा १६--पिप्पली, पारदभस्म, तांबेश्वर, नागकेशर इनकी १ रत्ती की मात्रा शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो सब मूर्च्छासे जाग्रत हो।

तथा १७--धमासेके क्वाथमें घृत डालकर पिलाओ तो चक्कर आना (जी घूमना और आना) बंद हो ।

तथा १८--हर्र और आंवलेके क्वाथमें घृत डाल पिलाओ तो चक्कर बंद हो ।

तथा १९--सोंठ, पिप्ली, सौंफ, हर्रकी छाल, पांच टंकका चूर्ण कर ६ टकेभर गुड़में मिलादो और ५ टंकभरकी गोलियाँ बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो चक्कर आना बंद हो ।

तथा २०--सेंधानोन, कपूर, मैनसिल, सरसों, पिप्पली, महुएके पुष्प इन सबको घोड़ेकी लार (थूक) में महीन पीसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो तन्द्रा तथा बहुनिद्रा दोनों दूर हों ।

तथा २१--सहिजनेके बीज, सेंधानोन, सरसों कूठ इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और अतिनिद्रा दोनों दूर हों ।

तथा २२--कालीमिर्च, मुँगनेके बीज, सोंठ, पिप्पली इनको अगस्त्य-पुष्प (फूल विशेष) के रसमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और निद्रा दूर हो ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा २३--सोंठके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्च्छामात्र दूर हो ।

तथा २४--केवाँचकी फली शरीरमें लगादो तो मूर्छा दूर हो ।

मदात्यय यत्न १--द्राक्षासव (अंगूरकी शराब) आदि शास्त्रोक्त उत्तम मद्य विधिपूर्वक सेवन कराओ तो वातमदात्यय दूर हो । जैसे अग्निसे जलनेपर पुनःअग्निसे तपादो,पीडा न्यून होकरके फफोला नहीं आता इसी प्रकारसे वातमदात्य भी मद्यपानसे दूर होगा।

तथा २--बिजौरे की केशर, अमलवेत, मीठे बेर, मीठे आनारकी भावना (पुट), अजवायन, जीरा, सोंठके महीन चूर्णमें देकर यह चूर्ण पुराने उत्तम मद्यके साथ पिलाओ तो वादमदात्यय दूर हो ।

तथा ३--सोंचरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पीप्पलीका चूर्ण वैद्यक शास्त्रोक्त विधिसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो ।

तथा ४--चव्य, सोंचरनोन, सेंकी, हींग, सोंठ, अजवायनका चूर्ण मधुके साथ पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो ।

तथा ५-लवा (चंडूल), तीतर अथवा मुर्गेका मांस खिलाओ तो वातमदात्य दूर हो।

तथा ६-अतिस्वरूपवती चतुर १६ वर्षकी युवा स्त्रीसे मैथुन कराओ तो वातमदात्य दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ७-दाख, अनार, खारीक तथा महुएकी मदिरा मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर होगा।

तथा ८-गौके मट्ठेमें मिश्री डालकर पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो। यह सारसंग्रहमें लिखा है।

तथा ९-समस्त शीतल यत्नोंसे पित्तमदात्य दूर होगा।

१०-शीतल जलमें मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो।

तथा ११-मीठे अनारका रस मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो।

१२-मृग, लवाका मांस खिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो।

तथा १३-बकरेका सोरुवा तथा साँठी चावल भक्षण कराओ तो पित्तमदात्यय नष्ट हो।

तथा १४-चंदन तथा खशका लेप करो तो कफमदात्ययका नाश हो।

तथा १५-यव, गेहूं तथा कुलथीका भोजन कराओ तो कफमदात्यय जावे।

तथा १६-कटु, खट्टी, खारी वस्तु खिलाओ तो कफमदात्यय दूर हो।

१७-वमन या लंघन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो।

तथा १८--सोंचरनोन, अमलवेत, जीरा, तज, इलायची,

कालीमिर्च, मिश्री इन सबका चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो।

तथा १९-पारे गंधककी १टंक कजली आंवलेके रसके साथ खिलाओ तो सन्निपातमदात्यय दूर हो।

तथा २०- दाखके रस, अनारके रसमें मधु और मिश्री मिलाकर पिलाओ तो पानविभ्रम दूर हो, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा २१--पेठेके रसमें गुड डालके पिलाओ तो धतूरेके फल आदि भक्षणसे उत्पन्न हुआ मदात्यय नष्ट हो।

तथा २२–दूधमें मिश्री डालकर पिलाओ तो धतूरे और भंगका मदात्यय दूर हो।

तथा २३--कपासकी जड़का रस या भांटेकी जड़का रस, या पतली छांछ, या घृत या मिश्री जलमें नींबूका रस पिलाओ तो भंग तथा धतूरेका मदात्यय दूर हो।

विषमदात्यय यत्न २४--१ मासे निबोलीकी बीजी और १ मासे नीले थोथेको कांजीसे साथ पीसकर पिलाओ तो विषमदात्यय मात्र दूर होगा, ये यत्न वैद्योपचारग्रन्थमें लिखे हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे तृषामूर्च्छामदात्ययादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

दाह–उन्माद

दाहोन्मादरुजोर्वै बाणकलानिधिमिते तरंगेऽस्य।
लोकहिताय लिखामि नवीनामृतसागरस्य सुचिकित्साम् ॥१॥

आर्याछिन्द

अब हम इस अमृतसागरके पन्द्रहवें तरंगमें लोकहितार्थ दाह और उन्मादरोगकी उत्तम चिकित्सा लिखते हैं।

दाह यत्न १--घृतको १०० अथवा १००० बार शीतल जलसे धोकर शरीरमें मर्दन कराओ तो शरीरकी दाह दूर हो।

तथा २--जौके सत्तूमें मिश्री डालकर खिलाओ तो दाह दूर होगी।

तथा ३--आंवलोंके जलमें महीन वस्त्र भिगोकर उढ़ाओ तो दाह शीतल हो जावेगा।

तथा ४--खश और चन्दनको घिसकर शरीरमें लेप करो तो दाह शान्त हो।

तथा ५--केलेके कोमल पत्र या कमलपुष्पकी शय्यापर सुलाओ तो दाह शीतल हो।

तथा ६--जलके फुहारे तथा जलक्रीडा सेवन कराओ तो दाह नष्ट हो।

तथा ७--खशकी टट्टियोंके मध्य बिठाओ तो दाह शीतल हो।

तथा ८--उत्तम शीतल जल पिलाओ तो दाह नष्ट हो,

तथा ९--उपवनादि शीतल स्थानोंमें भ्रमण कराओ तो दाह ठंढी पडे।

तथा १०--चन्दन, पित्तपापडा, खश, कमलगट्टे, धनियां, सौंफ और आंवलेके चूर्णसे १ टकेका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो दाह शान्त हो।

तथा ११- धनियांको रात्रिभर शीतल जलमें भिगोकर प्रातःकाल भंगके समान घोट (पीस) डालो, जलमें वस्त्रसे छानकर मिश्रीके साथ पिलाओ तो दाह दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १२--यदि रक्तके बिगाडसे दाह हुई हो तो मनुष्यके शरीरमें (फस्त) खुलवा दो तो दाह दूर होगी।

तथा १३--शुद्ध पारा, गन्धककी कजली, भीमसेनी कपूर, चन्दन, खश और नागरमोथा इन सबको जलके साथ खरल करके चनेके लगभग गोलियां बनालो और एक गोली मुखमें रखके चूसो (रसपान) करो तो शरीरकी दाह दूर हो, यह दाहनाशक रस है।

तथा १४--१ तोला शुद्ध पारा, १ तोला शुद्ध गन्धककी कजली, १ तोला तांबेश्वर, १ तोला अभ्रक इन सबको खरल करके नागरमोथाके रसकी पुट और मीठे अनारके रसकी १ पुट, केवडेके रसकी एक पुट, सहदेवी (महाबला) के रसकी १ पुट, पिप्पलीके रसकी १ पुट, चन्दनके रसकी पुट और दाखके रसकी ७ पुट दो, तदनंतर छायामें सुखाके चने प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो दाह, अम्लपित्त, मूत्रकृच्छ्र, प्रदर और प्रमेह ये सब रोग दूर हों इसे चन्द्रकलारस कहते हैं (चन्द्रकला = शीतल ठण्ढा, शीतलतामें चन्द्रकी कलासदृश)

उन्मादरोग यत्न १--घृतादि पिलाओ तो वातोन्माद दूर हो।

तथा २--अच्छे विरेचन (जुलाब) दो, पित्तका उन्माद दूर हो।

तथा ३—वमन कराओ तो कफका उन्माद नष्ट हो।

तथा ४--बस्ति क्रिया (लिंगेन्द्रिय तथा गुदामें पिचकारी लगाना) करनेसे भी उन्माद दूर होगा।

तथा ५--म्हूण्या (एक शाकका नाम, जिसे कुल्फी भी कहते हैं) का रस निकालकर उसके समान गुड़ मिलाओ यह गुड गौकी छांछमें मिलाकर पिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा ।

तथा ६--खरवंटे (वृक्षविशेष) की डालियोंका रस निकालकर पिलाओ तोउन्मादरोग दूर होगा ।

तथा ७--रोगीके शरीरमें कडुए तेलका मर्दन करके घाममें खड़ा रक्खो तो उन्मादरोग दूर होगा ।

तथा ८--कोई अद्भुत वस्तु दिखाओ अथवा इष्टका नाम लो तो उन्माद रोग दूर हो ।

तथा९--उष्ण घृत या तेल या पानीका स्पर्श कराओ तो उन्मादरोग दूर हो ।

तथा १०--केवांचकी फली अगाओ तो उन्माद रोग दूर हो ।

तथा ११--कोड़ा (चाबुक) की मार लगाओ तो त्रासके मारे उन्माद रोग दूर हो ।

तथा १२--शस्त्र, सर्प या हस्ती तथा सिंहादिसे रोककर भय बताओ तो उन्मादरोग दूर हो ।

तथा १३--कूट, असगंध, सेंधानोन, अजमोद, दोनों जीरे, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, पाठा, शंखाहुली और इन सबके बराबर वच- इनका चूर्ण ब्राह्मीके रसमें १० पुट देकर छाया में सुखाओ, जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण नित्य घृत और मधुके साथ १५ दिनपर्यन्त खिलाओ तो सब उन्माद, वायुजन्य विकार तथा प्रमेह भी दूर हों, बुद्धिबढ कर कविताकी शक्ति प्राप्त होगी, यह सारस्वत चूर्ण ब्रह्माजीकृत है ।

तथा१४--त्रिफला, पित्तपापडा देवदारु, शालपर्णी, जवासा, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, इंद्रायणकी जड़, गौरीसर, चन्दन, पद्मकाष्ठ, कचूर, कमलगट्टे, इलायची, कटियाली, मजीठ, पत्रज, निसोत, वायविडङ्ग, रुद्रवन्ती, नागकेशर, मुलहठी, पृष्ठपर्णी, चमेलीके पुष्प ये सब औषधी अधेले २ भर लेकर चूर्ण बनाओ । इसे १ सेरभर गोघृतके साथ ४ चार सेर जलमें डाल कर मन्द मन्द आँचसे औटाओ पानी जल चुकनेपर यानी घृत मात्र रह जानेपर उतार कर छान लो । इसमेंसे ९ टंक घृत नित्य भोजनके साथ खिलाओ तो उन्माद, अपस्मार (मृगी) और पांडुरोग ये सब दूर होंगे, इसे कल्याणघृत कहते हैं ।

तथा १५--सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, हींग, वच, सिरसके बीज, सेंधानोन, सरसों इन सबको गोमूत्रमें पीसके रोगीके नेत्रोंमें अञ्जन लगाओ तो उन्मादरोग दूर हो, ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं।

तथा १६--अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी, सेंधानोन, मुलहठी, वच, कूट, पिप्पली, जीरा, इन सबको गोमूत्रमें पीसकर छायामें सुखाओ, इसमेंसे २॥ ढाई टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर हो करके जिह्वापर सरस्वती वास करे। यह विश्वाद्य चूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा १७--ब्राह्मीका रस या पेठेका रस, या पीपलामूलका रस अथवा शंखाहुलीका रस १ टङ्क नित्य पिलाओ तो उन्माद दूर होगा।

तथा १८--वच, कूट, शंखाहुली, धतूरेकी जड़, इनका चूर्ण कर ब्राह्मीके रसकी ७ पुट और काले धतूरेके बीजोंके तैलकी ५ पुट देकर नास बना लो। जो यह नास सुंघाओ तो उन्माद दूर हो, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १९--सिरसके फूल, मजीठ, पिप्पली, सरसों, वच, हल्दी, और सोंठको बकरीके दूधमें पीसकर गोलियां बनाओ, सूखनेपर गोलीको घिसकर नेत्रोंमें अञ्जन लगाओ तो उन्माद दूर हो, यह योगरत्नावलीमें लिखा है।

तथा २०--सेंकी हींग, सोंचर नोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली ये सब २ टके भर लेके चूरा बनाओ, इसे गोघृतके साथ ४ चार सेर गोमूत्रमें डालकर मन्द मन्द आँचसे औटाओ, गोमूत्र जल चुकनेपर गोघृतमात्र रह जावे तब उतारकर छानलो, जो यह घृत ५ टंक भर नित्य भोजनके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा।

भूतोन्मादादि यत्न--भूतोन्मादादिके यत्न करनेवालेको चाहिये कि आप पवित्र होकर अपने शरीरकी रक्षा नारायण कवचादिसे करके पश्चात् निम्नलिखित क्रमानुसार यत्न करे।

भूतबाधा यत्न १--कालीमिर्च, पिप्पली, सेंधानोन और गोरोचनको महीन पीसकर मधुके सम्पर्कसे अंजन लगा तो भूतबाधा दूर हो।

तथा २--ज्वरके प्रकरणमें भूतज्वर जो नृसिंहजीका दिव्य मन्त्र लिखा है उसका उपयोग करो तो भूतोन्माद दूर होगा।

तथा ३--अब भूतादिके उन्माद दूर करनेके लिये (श्रीमहादेवजीने उड्डीश तन्त्रमें सावरी मन्त्र यन्त्र लिखे हैं) सो मन्त्र यन्त्र लिखते हैं--

"ॐ नमो भगवते नारसिंहाय घोररौद्रमहिषासुररूपाय त्रैलोक्याडंबराय रौद्रक्षेत्रपालाय ह्रौं ह्रौं क्रीं क्रीं क्रीमिति ताडय ताडय मोहय मोहय द्रंभि द्रंभि क्षोभय क्षोभय अभि अभि साधय साधय ह्रीं हृदये आं शक्तये प्रीतीं ललाटे बंधय ह्रीं ह्रीं हृदये स्तम्भय स्तम्भय किलि किलि ईं ह्रीं डाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय शाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय भूतं प्रच्छादय प्रच्छादय अप्रभूति अदूरि स्वाहा राक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय ब्रह्मराक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय आकाशं प्रच्छादय प्रच्छादय सिंहिनीपुत्रं प्रच्छादय प्रच्छादय एते डाकिनीग्रह साधय साधय शाकिनीग्रह साधय साधय अनेन मंत्रेण डाकिनी शाकिनी भूत प्रेत पिशाचादि ऐहिकाहिक द्व्याहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, पंचक, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सन्निपात, केशरी, डाकिनीग्रहादि, मुंच मुंच स्वाहा गुरुकी शक्ति मेरी भक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरोवाच " इति मन्त्र

इस मंत्रको मुखसे उच्चारण करते हुए मयूरपक्ष या लोहेकी कोई वस्तु तथा छप्परकी घास ले इक्कीस बार झाड़ दो तो भूतादिके समस्त उन्माद दूर होंगे ।

डाकिनी शाकिनीको भाषण करानेका मंत्र ४.

"ॐ नमो आदेश गुरुकूं ॐ नमो जय जय नृसिंह तीन लोक चौदह भुवनमें हाथ चाबि और ओठ चाबि नयन लाल लाल सर्व वैरि पछाड़ मार भक्तनका प्राण राख आदेश आदेश पुरुष को" इति मंत्र ।

रोगीके सन्मुख बैठकर इस मन्त्रको पढ़ो और इसीसे जल मंत्रितकर उसे पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी आदि तत्क्षण मुखसे बोलने लगेगी ।

डाकिनी आदिको शरीरमें बुलानेको मंत्र ५ ।

"ॐ नमो चढ़ो चढ़ो रबीर धरती चढ़ पातालशूल चढ पग पाताली चढ कौन कौन बीर चढै हनुमान बीर चढै धरती चढ पगपानी चढ एडी चढ चढ मुखे चढ चढ पिण्डी चढ चढ गोडे चढ चढ जांघे चढ चढ कटि चढ चढ पेट चढ पेटसे धरन चढ धरनेसे पसलियों चढ पसलियोंसे हिये चढ हियसे छाती चढ छातीसे कांधे

चढ कांधेसे कंठ चढ कंठसे मुख चढ मुखसे जिह्वा चढ जिह्वासे कर्ण चढ कर्णसे आंखों चढ आंखोंसे ललाट चढ ललाटसे शीश चढ शीशसे कपाल चढ कपालसे चोटी चढ हनुमान नरसिंह करवा रक्तया चलाबीर समदबीर अगियाबीर सता बीर, ये बीर चढे" इति मंत्र।

इस मंत्रसे डाकिनी आदिको बुलाओ (बकुरावो) तो उस रोगीके शरीरमें आकर भाषण करने लगे, तब उससे इच्छित वार्त्ता पूँछ लो।

डाकिनीको चोट लगानेका मंत्र ६।

"ॐ नमो महाकाय योगिनी योगिनी पारशाकिनी कल्पवृक्षाय दृष्टियोगिनी सिद्धिरुद्राय कालदंभेन साधय साधय मारय मारय चूरय चूरय अपहर शाकिनी सपरिवारं नमः ॐ ठंछः ॐ ह्री छः ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा" इति मंत्र। इस मंत्रसे ७ वार गूगल मंत्रितकरके उखलीमें डाल मुसलसे कूटोतो वह चोट डाकिनीको लगे, इसीमंत्रसे अस्तुरा (छुरा) लेके अपना घुटना मूँडो तो डाकिनीका शीर मुड़ा जावे, इसी मन्त्रसे उर्द मंत्रित करके फैंको तो डाकिनी आकर नाचने कूद-नेलगे और इसी मन्त्रसे जल मन्त्रित कर नेत्रोंमें लगाओ तो डाकिनी बोलने लगेगी।

डाकिनीका दोष दूर होनेका मन्त्र ७।

"ॐ नमो आदेश गुरुका डाकिनी सिहारी किन्नेमारी यती हनु-मान्ने मारी कहां जाथ दबकी किनोंने देखी यती हनुमान्ने देखी सातवें पाताल गई सातवें पातालसे कौन पकड़ लाया यती हनुमंत पकडलाया, यती हनुमंत वीर पकड़ लायके एक ताल दे एक कोठा तोड़ा, दो ताल दे दो कोठे तोड़े, तीन ताल दे तीन कोठे तोड़े, चारताल दे चार कोठे तोड़े, पांच ताल दे पांच कोठे तोड़े, छः ताल दे छः कोठे तोडे, सतवां कोठा खोल देखे तो कौन कौन खडे हैं डाकिनी, सिंहारी, भूत, प्रेत, चले यती हनुमन्त तेरे झाड़ेसे चल ॐ नमो आदेश गुरुको गुरुकी शक्ति मेरी भक्ति फुरो मंत्र ईश्वरोवाच इति मन्त्र" इस मन्त्रको मुखसे उच्चारणकर मयूरपक्ष तथा लोहेके चाकू आदिसे झाड़ दो तो डाकिनी आदि का दोष

डाकिनी शाकिनी आदि दूर करनेके यंत्र ८।

यन्त्रः प्रथमः १

१।९	६६	१	५
७	६	७	६
९	=	÷	·।·
८	१	ऽ	४०

यन्त्रः द्वितीयः २

७	७	९	८
ऽ	६	६	५
४	।।।	ऽ	११
७।	६	१।।	.।।।.

प्रथम यंत्रको भोजपत्रादिपर लिखके बालकके गलेमें बांधो और द्वितीय यंत्रको लिखकर शुद्ध जलमें घोलकर पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी दूर होकर बालक दोषसे निवृत्त हो जावेगा।

प्रत्यक्ष दर्शकविधि (जिसे हाजरायत भी कहते हैं) ९।

मंत्र "ॐ नमः कामाख्यायै सर्वसिद्धिदायै (अमुककर्म) कुरु कुरु स्वाहा" अस्य मन्त्रस्य बाह्लीकऋषिःजगतीच्छन्दकामाख्यादेवता--कर न्यासः १ ॐ नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः २ कामाख्यायै तर्जनीभ्यां नमः स्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायै मध्यमाभ्यां वौषट्; ४ (अमुककर्म) अनामिकाभ्यां हुं, ५ कुरु कुरु कनिष्ठिकाभ्यांवौषट् स्वाहा, ६ करतलकर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

हृदयादिन्यासः-१ ॐ नमो हृदयाय, २ कामाख्यायै शिरसे स्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायै शिखायै वौषट्, ४ (अमुककर्म) कवचाय हुं ५ कुरु कुरु नेत्रत्रयाय वौषट्, ६ स्वाहा अस्त्राय फट्।

ध्यानम्-"योनिमात्रशरीरा या कुंगुवासिनिकामदा॥
रजस्वला महातेजा ध्येया कामाक्षि सर्वदा॥"

उक्त मन्त्रको १००० सहस्र जप करके गूगल और गुलतुरेंके फूलकी ७०० सप्त शत आहुति दो और मैनफलकी राख (भस्म) को रुईमें मिलाकर बत्ती बनालो यह बत्ती तेलभरे दीपकमें जलाकर उस दीपककी पूजा करो तदनन्तर आठ दश वर्षकी अवस्था, उत्तम वर्ण, देवगणवाले पवित्र बालक (लड़का तथा लड़की) को दीपकके सम्मुख बिठलाकर आप भी पवित्रतासे मन्त्रके जपके संकल्पका जल मैनफलपर डाल दो और दीपकके सन्मुख इस मन्त्रको लिखके निम्नलिखित यंत्रकी पूजा करो तथा बालककी हथेलीमें वह दिखाकर मैनफलकी राख तेलमें मिलाके बालककी हथेलीपर लगा दो और

पूजित यन्त्र उसके गले दक्षिण हस्तमें बांधकर उससे कहो कि तू अपनी हथेलीमें देखता जा, फिर उससे जो कुछ पूँछना हो पूँछो, वह अपनी हथेलीमें देखकर जो कुछ कहे सो सत्य जानो, वह बालक सब बतलावेगा, उक्त मन्त्रके जपका दशांश हवन तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन और तद्दशांश ब्राह्मण भोजन कराओ, यह विधि उड्डीशमें लिखी है ।

यही यन्त्र बालकके हाथमें बांधना चाहिये ।

१	८	३	८
५	६	३	६
७	२	९	२
७	४	५	४

भूतोन्मादका यत्न १०–नीमके पत्ते, वच, हींग सर्पकी कांचली और सरसों इनकी धूनी दो तो भूत डाकिनी आदि दूर हों ।

तथा ११–कपासके कांकडे (बिनौले) मयूरपक्षका चन्दोवा, कटि- याली, मरुवा, दौना, तज, छड, शिवनिर्माल्य (शिवजी पर चढे हुए पुष्प बेलपत्री आदि) बैलका दांत, बिल्लीकी विष्ठा, वच, तूसा (चलनो- सन जो आटा छननेपर चलनीमें बच रहता है), बाल, सांपकी कांचली, गौका सींग, हाथीदांत, हींग, कालीमिर्च, इन सबके कूटे हुए चूरेकी धूनी दो तो सबप्रकारकी भूतादि बाधा दूर हो, यह महा- महेश्वर धूप चक्रदत्तमें लिखी है ।

तथा १२–पिप्पली, कालीमिर्च, सेंधानोन, गोरोचन इनको मधुमें पीसकर अंजन लगा दो तो भूतबाधा दूर हो ।

तथा १३–करंजकी जड़, दारुहल्दी, सरसों, कूट, हींग, वच, मजीठ. त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और प्रियंगुपुष्प इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास सुँघाओ तथा अंजन लगाओ तो भूतादि बाधा दूर हों ।

तथा १४–गोरखककड़ी (गोरखी) को गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो ब्रह्मराक्षस भी दूर भागेगा ।

तथा १५–शंखाहुलीकी जड़को चावलोंके पानीमें पीसकर तथा घृतके साथ रगड़के नास सुँघाओ तो भूतादि बाधा दूर हों ।

विशेषतः-भूतादि बाधाओंको दूर करनेके लिये जो हम ऊपर मन्त्र लिख चुके हैं उन्हें पहिले ही से ग्रहणमें (ग्राससे मोक्षपर्यंत) जप कर लो तब वे मन्त्र उपरोक्त दर्शित यथार्थ सिद्धदाता होकर तत्तत्कार्यपर उपयोगी होवेंगे अन्यथा नहीं ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे दाह--उन्मादभूतादिबाधायत्न-

निरूपणं नाम पंचदशस्तरंगः ॥ १५ ॥

अपस्मार-वातव्याधि

अपस्मारस्यामयस्य वायुजानां यथाक्रमम् ।
तरंगे रसचन्द्रेऽस्मिंश्चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें अपस्मार (मृगी) और वातजन्य रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं ।

अपस्माररोग यत्न १-तिल्ली और लहसन मिलाकर खिलाओ तो वातापस्मार दूर होगा ।

तथा २-दूधमें शतावरी डालकर पिलाओ तो पित्तापस्मार दूर हो ।

तथा ३-ब्राह्मीका रस मधुके साथ पिलाओ तो कफापस्मार नष्ट हो ।

तथा ४-राई या सरसोंको खिलाओ तथा गोमूत्रमें पीसकर शिरपर लेप करो तो मृगी दूर हो ।

तथा ५-१ सेरभर तेल, ४ सेरभुंगनेका रस, ४ सेर ग्वारपाठेका रस, ४ सेर चिरचिरेका रस, १ सेर भर नींबूकी छालका रस, ४ सेर गोमूत्र इनको एकत्र कर मन्द मन्द आँचसे औटाओ, जब सब रस जल कर तेल मात्र रह जावे तब छानकर रोगीके मर्दन करो तो अपस्मार दूर हो ।

तथा ६-मैनसिल, नीलकंठ (अथवा न हो तो कबूतर) की विष्ठा दोनोंको पीसकर अंजन लगाओ तो मृगी दूर हो ।

तथा ७-पारदभस्म, अभ्रक, कांतिसार, शुद्ध गंधक, मरा हुआ मैनसिल, हरतालभस्म और रसोंत इन सबको गोमूत्रमें १ दिनपर्यंत खरल करके इन सबसे दूने गन्धकके बीचमें इन्हें धर दो, अब ये सब लोहेके पात्रमें रखकर १ प्रहर आँच दो शीतल होनेपर निकालकर १ रत्ती नित्य ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो ।

तथा ८--सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, सोंचरनोन और सेंकी हुई हींग इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ १५ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो।

तथा ९--२ टंक मुलहठीका चूर्ण पेठेके रसके साथ ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो।

तथा १०--वच और कूट दोनोंका २ टंक चूर्ण, ब्राह्मी या शंखाहुलीके रस अथवा पुराने गुड़के साथ १९ दिनतक सेवन कराओ तो मृगी दूर हो।

तथा ११ सेरभर गोघृत, आठ सेर पेठेका रस, दो सेर, मुलहठीका क्वाथ इनको मिलाकर आंच दो जब घृतमात्र रह जावे तब छानकर रोगीको भोजनके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो।

तथा १२- मुंगनेकी छाल, कूट, नेत्रवाला, जीरा, लहसुन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, हींग ये सब पैसे पैसेभर लेकर पीस लो और आध सेर तेलके साथ दो सेर बकरेके मूत्रमें डालकर आंच दो, औटाते औटाते तेलमात्र रह जानेपर कपड़ेसे छानकर नाकमें डालो तो मृगी दूर होगी ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १३-पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, त्रिफला, वायविडंग, सेंधानोन, अजवायन, धनियां और जीरेका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मृगी, संग्रहणी, उन्माद, अर्श आदि दूर हों।

तथा १४-पुष्यनक्षत्रके दिन कुत्तेका पित्ता (कलेजा) निकालकर उसका अंजन लगाओ या घीके साथ धूप दो तो मृगी दूर हो।

तथा १५-वचका २ टङ्क चूर्ण दूध या मधुके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो। ये दोनों यत्न योगतरंगिणीमें लिखे हैं।

तथा १६-नकुल (न्योला) की विष्ठा, बिल्लीकी विष्ठा और कौएकी विष्ठा एकत्र कर धूनी दो तो मृगी दूर हो। यह चक्रदत्तमें लिखा है।

वातव्याधि यत्न १-पिष्ट, सलोनी, चिकनी, उष्ण वस्तु और आंवले खाने, निद्रालेने, घाम (धूप) में फिरने, पसीना निकलने, तृप्तिपूर्वक, भोजन करने, उष्ण उबटन लगाने, तेल मर्दन करने और वातहारक वस्तु भक्षणसे सामान्य वातरोग दूर होंगे।

शिरोग्रहरोग यत्न २–दशमूलका क्वाथ, बिजौरेका रस, और तेल एकत्र कर आंच दो, औटाकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो शिरोग्रह दूर होगा।

तथा ३–कूट, अरंडकी जड़, धतूरेकी जड़, सहँजनेकी जड़, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, सिंगीमोहरा, इन सबको महीन पीसकर जलमें औटाओ और उष्ण उष्णका लेप करो तो शिरोग्रह दूर हो।

अल्पकेशरोग यत्न ४–देशी गोखरू और तिल्लीके पुष्पका चूरा और इन दोनोंके समान मधु इन सबको घृतके साथ बालोंमें लगाओ तो बाल अधिक निकलकर बढ़ेंगे।

तथा ५–मुलहठी, नील कमलकी नाल (जड़) और दाख इन सबको घी या तेल या दूधमें भलीभांति पीसकर बालोंमें लगाओ तो बाल बढ़कर अल्पकेशरोग दूर हो।

अधिक जमुहाईके शमनका यत्न ६–सोंठ, पिप्पली, सेंधानोन, कालीमिर्च, अजमोद इनका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो जमुहाई बन्द हो जावेगी।

तथा ७—कडुआ तेल मर्दन कराओ, या मिष्ट भोजन कराओ या ताम्बूल खिलाओ तो जमुहाई बन्द हो।

तथा ८- मुख बन्द हो गया तो चिकनी वस्तुके सेंक (ताव) से पसीना उत्पन्न कराओ तो मुख खुल जावेगा, जिसका मुख खुला (चौड़ा, फटा हुआ) रह गया हो उसे शीतल वस्तुका उपचार करो तो मुख बन्द होके चलने (घूमने) लगे और जिसकी हनु (ठुड्डी= दाढ़ी) मुरकने (घूमने = लौटने) से बन्द हो जावे उसे पिप्पली और अदरख चबा चबाकर थुकवाओ तो डाढ़ी घूमने लगे और हनुग्रह रोग दूर होगा।

तथा ९-तेलमें लहसनको तलके सेंधानोनके साथ खिलाओ तो हनुग्रहरोग दूर हो।

तथा १०–उर्दकी पिठ्ठी (दाल भिगी पिसी) में सेंधानोन, हींग और अदरख मिलाके बड़े बनाओ और तेलमें सेंक (तलके) खिलाओ

तथा ११--तेलको उष्ण करके शिरमें मर्दन करो तो हनुग्रह दूर होगा ।

तथा १२-सौ १०० टकेभर पीपलके पंचांगका[1] चूर्ण कर १६ सेर पानी डालके औटाओ चतुर्थांश (ऽ ४ चार सेर) रहनेपर छानके इसीमें १०० टकेभर तिलीका तेल, १०० टकेभर दहीका मट्ठा, १०० टकेभर कांजीका पानी, ४०० टकेभर दूध और १ सेरभर खीप (प्रसारणी) का रस डालो । तदनंतर, चित्रक, पीपलामूल, महुआ,सेंधानोन, बच, सौंप, देवदारु, रास्ना, गजपीप्पली, छड़ीला, रक्तचंदन, अरंडकी जड़,खरैंटीकी जड़ और सोंठ ये सब टकेटके भर लेके चूर्णकर क्राथ बना लो । तदनंतर यह क्राथ उपर्युक्त मिश्रित पदार्थोंके साथ युक्तकरके मन्दमन्द आंचसे औटाओ सबपदार्थ जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानलो जो इस तेलका मर्दन करो या नास दो या खिलाओ तो वातके सब विकार, हनुस्तंभ, पंगुरोग, जिह्वास्तंभ, अर्दितरोग, स्कधस्तंभ, पृष्ठिकशूल, गृध्रसी, चाँयल, धनुर्वात और कुब्जरोग ये सब विकार दूर होंगे यह प्रसारिणीतैल कहलाताहै ।

जिह्वास्तंभरोग यत्न १३-मीठारस, नोन, खटाई, चिकनाई तथा उष्णता (उष्ण पदार्थ) को यथोचित जिह्वापर मर्दन करो तो जिह्वास्तंभ दूर हो ।

तथा १४--उष्ण जलके कुल्ले कराओ तो जिह्वास्तंभरोग दूर होगा ।

हिकलाना, गुनगुनाना तथा गूँगेपनका यत्न १५-१ टंक मुँगनेकी जड़, १ टकेभर बच, १ टके भर सेंधानोन, १ टके भर धावडेके फूल, १ टकेभर लोध इन सबका चूर्ण ऽ ४ चार सेर बकरीके दूधके साथ ऽ १ सेर भर गौकेघृत में डालकर मन्दमन्द आंचसे औटाओ, दुग्ध जलकर घृतमात्र रहजानेपर छान कर इसे निम्नलिखित सरस्वतीमन्त्रसे विधिपूर्वक सेवन कराओ तो हिकलाना गुनगुनाना और मूकपना ये सब दूर होकर स्मृति, बुद्धि और कांति बढ़ेगी । इसे सारस्वतघृत कहते हैं ।

---

१ किसी वृक्षका पंचांगकहनेसेउसके मूल, छाल, पर्ण, पुष्प और फलका बोध होता है ।

घृत भक्षणविधि–" ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः" यह सरस्वस्वतीजीका सिद्धमंत्र है, इसके जितने अक्षर हैं उतने ही सहस्र (११०००) ग्यारह हजार जपकरके इस मंत्रको सिद्धकरो, तदनंतर इस मंत्रसे पूर्वोक्त विधिसे प्रस्तुत घृतको मंत्रित करके रोगीको खिलाओ तो उक्ततीनों रोग दूर होकर सरस्वतीप्रसन्न होवे।

तथा १६--उक्त मंत्रसेही मालकांगनीके तेलको मंत्रित करके खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर बुद्धि तत्काल चमत्कारी होजावे।

तथा १७–हल्दी, वच, कूट, पिप्पली, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहटी, महुआ, और सेंधानोन, इन सबका २ टंक चूर्ण नवनीतके साथ उक्त मंत्रसे मंत्रित कर विधिपूर्वक २१ दिन खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर वह मनुष्य श्रुतिधर (जो सुने वही धारण) याद कर लेनेवाला और सहस्रों श्लोक कण्ठगत करनेकी शक्ति रखनेवाला होजावेगा। इसे कल्याणकावलेह कहते हैं।

प्रलाप तथा वाचालरोग यत्न १८–अगर, तगर, पित्तपापड़ा, कुटकी, नागरमोथा, असगंध; ब्राह्मी, दाख, दशमूल, शंखाहुली, इन सबका क्काथबनाकर पिलाओ तो प्रलाप और वाचाल रोग दूर हों।

जिह्वानीरसरोग यत्न १९–सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सेंधानोन, अमलवेत, चूकको पीस जिह्वापर लेप करो तो जिह्वाको सब रसोंका बोध होगा।

तथा २०–ब्राह्मी, पलाशपापडा, राई, कालीजीरा, पिप्पली, पीपलामूल, चित्रक, और सोंठ इन सबका चूर्ण बनाकर जिह्वापर लेप करो। यह क्काथ बनाकर कुल्ले कराओ तो रसज्ञान प्राप्त होगा।

तथा २१–रोगीको बारम्बार अदरख खिलाओ तो रसज्ञान प्राप्त होवे तथा बधिररोग और कर्णनाद भी दूर होगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे अपस्मारवातव्याधिरोग निरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

त्वक्शून्यादि वातव्याधि

त्वक्शून्याद्यामयानां हि वातजानां यथाक्रमम् ।
तरंगे मुनिसोमेऽस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया १

अब हम इस सत्रहवें तरंगमें बादीसे उत्पन्न होनेवाले जो त्वचाशून्य प्रभृति रोग हैं उनकी चिकित्सा यथाक्रम लिखते हैं ।

त्वचाशून्यरोग यत्न १–रोगीके शरीरमेंसे रक्त निकलवा दो तो त्वचाशून्य रोग दूर हो ।

तथा २ नोन और धमासा तेलमें डालकर शरीरमें मर्दन कराओ तो त्वचाशून्यरोग दूर हो ।

आर्दितरोग १–इस रोगीको चिकने पदार्थ खिलाओ और नारायण तथा विषगर्भ आदि तेलका मर्दन कराओ या उष्ण वस्तु खिलाओ तथा अग्निसे दाग दो किंवा उष्ण औषधोंसे पसीना निकालो अथवा वातहारक तेल मस्तकपर डलवाओ तो आर्दितरोग दूर हो ।

वायुआर्दितरोग यत्न १–दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो वातार्दित दूर हो ।

तथा २–बिजौरेका रस पिलाओ तो वातार्दित रोग दूर हो ।

तथा ३ खरैंटी, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठका क्वाथ दो तो वातार्दित रोग दूर होगा ।

तथा ४–हींग और लहसनयुक्त उर्दके बड़े खिलाकर ऊपरसे मांसका रुवा पिलाओ तो वातार्दित दूर हो ।

पित्तार्दितरोग यत्न १–घृतके बस्तिकर्म (मूलद्वारपर घीकी पिचकारी लगाना) या दूध पिलानेसे पित्तार्दित दूर होगा ।

कफार्दितरोग यत्न १–वमन कराओ तो कफार्दित दूर होगा ।

तथा २–तिल्लीके तेलमें लहसुन मिलाकर खिलाओ तो कफार्दित रोग दूर होगा ।

मन्यास्तंभनरोग यत्न १–दशमूलका क्वाथ या पंचमूलका क्वाथ तथा औषधों द्वारा पसीना लेने अथवा नास लेनेसे मन्यास्तम्भ

तथा २-तेल मर्दन करके अरंडीके पत्ते बांधो तो मन्यास्तम्भ दूर होगा।

तथा ३-मुर्गीके अंडेके रसमें सेंधानोन और घी मिलाकर गर्दनमें लगाओ तो मन्यास्तम्भ दूर हो।

बाहुशोषरोग यत्न-१ उन्मादरोगचिकित्सापर जो कल्याणघृत लिख आये हैं उसका सेवन कराओ तो बाहुशोषरोग दूर होंगे।

तथा २ खरैंटीके क्वाथमें सेन्धानोन मिलाके पिलाओ तो मन्यास्तम्भ और बाहुशोष दोनों दूर होंगे।

अपबाहुकरोग यत्न १-शीतल जलका नास दो तो अपबाहुकरोग दूर हो।

तथा २--गूगल, मोई जडी (मारवाडमें प्रसिद्ध) की जड़के काथ गूगल मिलाकर नास दो तो अपबाहुक (भुजास्तम्भ) रोग दूर हो।

तथा ३--उर्दके पानीका नास दो तो अपबाहुक रोग दूर हो।

तथा ३--उर्द, अलसी, जौ (यव), कटसेला, कटियाली, गोखरू, अरलू, केवाँचकी जड़, कपासके बिनौला, मूँगनेके बीज, बेरीकी जड़, कुलथी, साँठीकी जड़ खींप (प्रसारणी) की जड़, रास्ना, खरैंटीकी जड़, गुरच, कुटकी इन सबको तेलमें डालकर पकाओ, पकनेपर छानकर इससे रोगीके मर्दन करो तो अपबाहुक रोग दूर होगा, यह माषतैल कहलाता है।

विश्वाचीरोग यत्न १--दशमूल, खरेटी, उर्द इनका क्वाथ बनाकर साथ पिलाओ तो विश्वाचीरोग दूर हो।

तथा २--उर्द, सेन्धानोन, खरेटी, रास्ना, दशमूल, हींग, वच और सोंठ इनका चूर्ण पानीमें औटाओ तदनन्तर यह पानी तेलमें डालकर आंच दो, तेल मात्र रहजानेपर छानकर तेलको रोगीके मर्दन करो विश्वाची, बाहुशोष, अपबाहुक और पक्षाघात ये सबरोग दूर होंगे, इसेभी माषादि तैल कहते हैं।

ऊर्ध्ववातरोग यत्न १--१० भाग सोंठ, १० भाग विधायरा, ५ भाग हर्रकी छाल, १ भाग असगंध, १ भाग सेकी हींग, १ भाग सेंधानोन औषध इन सबके समान चित्रक, ५ भाग निसोत इन सबका २ टङ्क चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो ऊर्ध्ववातरोग दूर होगा।

आध्मान रोग चिकित्सा १--लंघन कराने, पाचक, औषध देने क्षुधा-वर्धक और खिलाने और बस्तिक्रिया करनेसे आध्मान रोग दूर होगा।

तथा २--२ टंक पिप्पली, १० टंक निसोत और १० टंक मिश्रीका चूर्ण करके इसको २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो आध्मान (अफरा) दूर हो।

तथा ३--वच, कूट, सौंफ, सेंकी हींग, सेन्धानोन इन सबका चूर्ण कांजीके साथ महीन पीसकर उष्णकर पेटपर लगाओ तो आध्मान दूर हो।

तथा ४--१ टकेभर हर्रकी छाल, १ टकेभर किरवारेकी गिरी, १ टके-भर आंवला, १ टकेभर दात्यूणी, १ टके भर कुटकी, १ टकेभर निसोत, १ टके भर नागरमोथा, १ टकेभर थूहरका दूध इन सबको पीसकर ४ सेर पानीमें औटाओ और ऽ॥ आधा सेर रह जानेपर उसीमें १ टके भर जमालगोटा (छिलके निकालकर महीन वस्त्रमें बाँधके) डालके मन्द मन्द आँचसे औटाओ, जब औटते २ पानी जल जावे तब जमा-लगोटा, निकाल लो यह शुद्ध होगया, इसमेंसे अष्टमांश जमालगोटा, जमालगोटेसे त्रिगुणी सोंठ, द्विगुणी कालीमिर्च, तुल्य पारा और गँधक लेकर पारेकी गंधककी कजली करलो और उसमेंसे उक्तौषधें मिलाकर १ प्रहर खरल करो तदनंतर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली शीतल जलके साथ दो तो आध्मान, शूल, अनाह, उदावर्त, प्रत्याध्मान, गोला और उदरव्याधि ये सब रोग दूर होंगे इसे महानाराचरस कहते हैं, इसके खिलानेसे रेचन होते हैं रेचनानंतर दहीमें मिश्री मिलाकर खिलाओ और तदनंतर सैंधानमक डालकर दही और भात खिलादो, तो आध्मान (अफरारोग) तत्काल दूर होगा।

प्रत्याध्मानरोग यत्न १--यह रोग भी लंघन, पाचन और बस्ति-क्रियासे दूर होगा।

वाताष्ठीला तथा प्रत्यष्ठीला रोगका यत्न १--सेंकी हींग, पीपलामूल धनियां, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाठ, कचूर, अमलवेत, सेंधा, सौंचर, और सांभरनोन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हर्रकी छाल, पोहकरमूल, डांसरा और झाऊकी जड़के महीन चूर्णको अदरखके रसकी ३ पुट देकर छायामें सुखालो इसमें

२ टंक नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वाताष्ठीला तथा प्रत्यष्ठीला दूर होंगे।

तूणी तथा प्रतितूणी रोग यत्न १--इस रोगसे पीडित पुरुषकी गुदामें स्नेह[1] पदार्थोंसे बस्तिक्रिया करो तो ये रोग दूर होंगे।

तथा २--सोंठ, पीप्पली, काली मिर्च, सेंकी हींग, जवाखार, सज्जी और सेंधानोन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो तूणी तथा प्रतितूणी नष्ट हों।

त्रिकशूलरोग यत्न १--बालू (रेती) सेंको तो त्रिकशूल जावेगा।

तथा २--गुल्हीवोली (बबुलके वृक्षकी जातमें होती है) की जडकी छाल, असगन्ध, झाऊकी छाल, गुरच, शतावरी, गोखरू, रास्ना, निसोत, सौंफ, कचूर, अजवायन, शुंठी इन सबके समान शुद्ध गूगलसे, गूगलसे चतुर्थांश घृत इन सबको युक्तकर ५ मासे नित्य मद्य या मांस रस या उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो त्रिकशूल, जानुग्रह, भुजासांध, संधिगत वायु (गठिया वायु), अस्थिभङ्ग, लँगड़ापन, गृध्रसी, पक्षाघात, ये सब रोग दूर होंगे। इसे त्रयोदशाङ्ग गूगल कहते हैं।

बस्तिवात (मूत्रावरोध) रोग यत्न १--खरेंटीकी जड़की छाल और मिश्रीका २ टंक चूर्ण गोदुग्धके साथ खिलाओ तो बस्तिवात दूर हो।

तथा २--त्रिफलाके चूर्णमें समान कांतिसार मिलाकर इसमेंसे ४ मासे मधुके साथ चटाओ तो बस्तिवात (जिसमें मूत्र बूँद बूँद गिरती हैं) दूर होगी।

तथा ३- चार मासे जवाखार मिश्रीके साथ खिलाओ तो दीर्घबस्तिवात (जो किंचितमात्र भी मूत्र नहीं उतरता हो) बंद भी खुलकर उत्तम सरलतापूर्वक मूत्र उतरने लगेगा।

तथा ४--पेठेके बीज और तेवरसी (फूटककडी) के बीज दोनोंको पानीमें घोटकर २ मासे जवाखार डालो और ऊपरसे मिश्री मिलाकर पिलाओ तो रुका हुआ मूत्र उतरने लगेगा।

तथा ५- चिनिये कपूरकी बत्ती बनाकर पुरुषकी लिंगेंद्रिय और स्त्रीकी भगेन्द्रियमें रक्खो तो अवरोधित मूत्र प्रसरण होने लगेगा।

---

१ घृत तैल मज्जा, आदि चिकने पदार्थ स्नेह है।

गृध्रसीरोग यत्न १--वमन कराओ तो गृध्रसीरोग दूर हो।

तथा २ गृध्रसीरोग बस्तिक्रियासे भी दूर होगा, परन्तु इस रोगमें प्रथम हर्रका जुलाब देकर पश्चात् यह चिकित्सा करनी चाहिये।

तथा ३-एरंडीका तेल और गोमूत्रयुक्त अनुमानमुवाफिक १ मास पर्यंत पिलाओ तो गृध्रसीरोग दूर हो।

तथा ४-तैल, घृत, बिजौरेका रस, अदरखका रस, चूक और गुड़ इन सबको मिलाकर १ मास पिलाओ तो गृध्रसी, त्रिशूल, गोला, उदावर्त्त, कटि और जंघाकी पीड़ा ये सब रोग दूर होंगे।

तथा-५दूधमें एरंडीके बीजोंकी खीर, बनाकर १ मास पर्यंत खिलाओ तो गृध्रसी और पोतोंका शूल दूर हो।

तथा ६-एरंडीकी जड, बेलकी गिरी और कटियालीके क्राथमें तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसी और पोतोंका शूल दोनों दूर हो।

तथा ७-बिडनोन और सोंचरनोनको पीसकर गोमूत्र और एरंडीके तेलके संयोगसे पिलाओ तो कफ, वातकी गृध्रसी दूर हो।

तथा ८-अडूसा, दात्यूणी और किरमालेकी गिरीके क्राथमें एरंडीका तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसी रोग दूर हो।

तथा ९-निर्गुण्डीका रस पिलाओ तो गृध्रसी रोग दूर हो।

तथा १०-५ टके भर रास्ना, ६ टके भर गूगलका चूर्ण घृतके साथ मिलाकर ४ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ, ५ गोली नित्य खिलाओ तो गृध्रसी दूर हो।

तथा ११-गुरच, रास्ना, किरमालेकी गिरी, देवदारु, गोखरू, सोंठ, अरंडकी जड़का क्वाथ बनाकर पिलाओ तो गृध्रसी, जंघापीडा उदर-पीडा, पार्श्वशूल ये सब दूर होंगे, इसे रास्नादि क्राथ कहते हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे वातरोगयत्ननिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः ॥१७॥

खंजादि-वातव्याधि

खंजादीनां वातजानां गदानां वक्ष्यिन्दौ वै लिख्यतेऽस्मिन्स्तरंगे । पुंसां वातव्याधिना पीडितानामारोग्यार्थं लाभदात्री चिकित्सा ॥ १ ॥

अब हम इस अठारहवें तरंगमें वातव्याधिसे पीडित पुरुषोंके आरोग्यके हेतु खंज (लंगडापन) आदि रोगोंकी लाभदायिनी चिकित्सा लिखते हैं।

खंज तथा पंगुरोग यत्न १-विरेचन कराओ, औषधियोंसे उष्ण पसीना निकालो, योगराज आदि गूगल दो, वातहारक नारायण आदि तैल मर्दन करो, अथवा बस्तिकर्म करो तो ये प्रत्येक यत्न खंजरोगका नाश करेंगे।

कलायखंजरोग यत्न १-विषगर्भादि तैल मर्दनसे यह रोग नष्ट होगा।

क्रोष्टुशीर्षरोग यत्न १-२टंक गुर्च, १० टंक त्रिफला दोनोंको क्वाथ बनाकर २ टंक गूगलके साथ १ मास पर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्ष रोग दूर होगा।

तथा २-७ सेर दूध, १० टंक एरण्डीका तेल मिलाकर १ मासपर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग नष्ट हो।

तथा ३-अढाई टंक विधायरेका चूर्ण ऽ॥ आधसेर गोदुग्धके साथ पिलाओ तो उक्त रोग दूर हो।

तथा ४-तीतरके मांसके शुरुवेमें दो टंक गूगल मिलाके पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो।

तथा ५-किशोरगूगल खिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो।

घुटनेकी पीडानाशक यत्न १-प्रथम तेल मर्दन करके ऊपरसे सोंठका महीन चूर्ण मसल लो, तदनंतर पुनःऊपरसे तेल चुपड़कर बाँध दो तो घुटनेकी पीडा दूर हो।

तथा २-२ टंक केवांचके बीज दहीके साथ, ७ या चौदह दिन तक

खल्वरोग यत्न–१कूट और सेंधानोनके क्वाथमें तेल और अमलेवतका रस डालकर आँचसे पकाओ, रस जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो खल्वरोग दूर हो।

वातकंटकरोगयत्न १–पांवके गट्टोंमेंसे रुधिर निकालो तो वातकटक दूर हो

तथा २–१ मासपर्यंत ५ टंक अरंडीका तेल नित्य पिलाओ तो वातकंटक दूर हो ।

पाददाहरोगयत्न--मसूरकी दालका आटा पानीमें औटाकर ठण्डा होनेपर कपड़ेसे छानके ५ सातबार पैरके तलुओंमें बांधो तो पाददाह रोग दूर हो ।

तथा २–पैरके तलुओंमें मक्खन लगाके आंचसे सेंको तो पाददाह दूर हो ।

तथा ३–अरंडके बीज गौके दूधमें महीन पीसकर दाहस्थान (पांवके तलुए या हाथकी हथेली) में मर्दन करो तो अत्यन्त पाददाह भी दूर हो ।

पादहर्षरोगयत्न--कफ और वातहारक यत्नोंसे यहरोग दूरहोगा

पादफूटन (पगफूटनी) यत्न १–तिल्ली, सांभरनोन, हल्दी, और धतूरेके बीजोंके पानीमें महीन पीसकर इन सबके बराबर गौका मक्खन और इन सबसे चौगुना गोमूत्र ये सबएकत्र करके आंचसे पकाओ जल और औषधियां जलकर घीमात्र रहजानेपर छानकर पैरके तलुओंमें मर्दन करो तो पैरफूट न बंद हो ।

अक्षेपरोगयत्न १–खरैंटीकी जड़, दशमूल, यव, कुलथी, बेरकी जड़के अष्टावशेष क्वाथमें तैल डालकर आंच दो, पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपरउस तेलमें सेंधानोन, अगर, राल, देवदारु, मंजीठ, कूट, पद्माख, इलायची, छड़, पत्रज, तगर, गौरीसर, असगंध, सौंफ और सांठीकी जड़ कूटकर डालो पुनः मन्द मंद आंचसे पकाकर छानलो, जो इस तेलका मर्दन करो तो सब प्रकारके आक्षेप, सब वातरोग, हिचकी, कास, श्वास, गोला, अंत्रवृद्धि, क्षीणता, अस्थिभंग और भ्रम ये सब रोग दूर होंगे, इसे महाबली तेल कहते हैं ।

अन्तरायाम तथा बाह्यायाम रोग यत्न-जो हम ऊपर अर्दित रोगके यत्न लिखआये हैं वे ही यत्न जानो।

धनुस्तंभ तथा कुब्जकरोगयत्न १-पूर्वलिखित प्रसारणी तैलसे धनुस्तंभ, कुब्जक और अन्तरायाम, बाह्यायाम, किंवा वातजन्य सकल विकार दूर होवेंगे।

अपतंत्ररोगयत्न १-कालीमिर्च, मुंगनेके बीज, अफीम वायविडंग और महुएके चूर्णका नास दो तो अपतंत्ररोग दूर हो।

तथा २-हर्रकी छाल, वच, रास्ना, सेंधानोन और अमलवेत इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या अदरखके रसके साथ सेवन करावो तो अपतंत्ररोग दूर होगा।

अपतानकरोगयत्न १-दशमूलके क्वाथमें पिप्पली डालकर पिलावो तो अपतानकरोग नष्ट हो।

तथा २-तेल मर्दन करावो तो अपतानकरोग दूर हो।

तथा ३-तीक्ष्ण वस्तुका नास दो तो अपतानकरोग दूर होगा।

तथा ४-घृत पिलानेसे अपतानक रोग दूर होगा।

तथा ५-स्नेहवस्ति करो तो अपतानकरोग दूर होगा।

पक्षाघातरोग यत्न १-उर्द, केवाँचबीज, अरेंडीकी जड़ और खरेंटीकी जड़के क्वाथमें सेंकी हींग और सेंधानोन लाकर पिलावो तो पक्षाघातरोग दूर हो।

तथा २-पीपलामूल, चित्रक, सोंठ, पीपली, रास्ना, सेंधानोन और उर्दके क्वाथमें तेल डालके पकावो; पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दन करो तो पक्षाघात रोग दूर होगा, इसे ग्रंथितेल कहते हैं।

तथा ३-उर्द, केवांचके बीज, अतीस, एरंडकी जड़, रास्ना, सेंधा नोन और सौंफके क्वाथमें तेल डालकर पकावो, क्वाथ जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर मर्दनकरो तो पक्षाघातरोग दूर होगा, इसे माषादि तैल कहते हैं; ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ४--केवांचके बीज, खरेंटीको जड़, एरंडकी जड़, उर्द, सेंधानोन और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो पक्षाघात दूर हो, यह वैद्यविनोदमें लिखा है।

तथा ५--महुएका रस ५ टंक, गूगल ५ टंक, बीजबोल ५ टंक, बकरीकी लेंडी ५ टंक, कठियालीका रस ५ टंक, पलाशपापडा ५ टंक, आँबा हल्दी ५ टंक, सुहागा ५ टंक, बिजौरेकी जड़ ५ टंक, इन सबको महीन कर रोगीके शरीरमें लेप करो और दो हाथ चौड़ा लंबा, २ हाथ गहरा गढ़ा खोदके आग जला दो जब वह भली भाँति तप्त हो जावे तब अंगारे निकालकर गढ़के पृष्ठभागमें सर्वत्र आक (अकाव = आकडा) के पत्ते बिछा दो तदनन्तर उक्त रोगीको उस गढ़ेमें बैठाकर पसीना निकलनेतक उसीमें बैठा रहने दो तो उक्त लेपके गुण तथा अर्कपत्रके तावसे पक्षाघातरोग अवश्य दूर होगा, रोगीका मुख गढ़ेके बाहर रखना चाहिये जिससे ईजा (हानि) न हो ।

निद्रानाशरोग यत्न १--सेंकी भाँगको मही पीस कपड़छान करके मधुके साथ रात्रीमें चटाओ तो निद्रा आकर क्षुधा बढेगी इसी यत्नसे अतिसार और संग्रहणी भी दूर होती है ।

तथा २--पिप्पलीका चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो नष्ट हुई निद्रा भी शीघ्र आवे ।

तथा ३--कलिहारीकी जड़ पीसकर मस्तकपर बांधो तो निद्रा आवे ।

तथा ४--इच्छानुसार सहते सहते कँघवे (ककवा) से शिरके बाल ऐंचो तो निद्रा आवेगी ।

तथा ५--कोमल हाथोंसे पैरके तलुओंको धीरे २ मलवाओ तो निद्रा अवश्य आवेगी ।

तथा ६--भांटे (बैंगन) का भरता मधु मिलाकर खिलाओ तो निद्रा आवे ।

तथा ७--बैंगनका भरता तेलकी कांजी या खटाईके साथ रात्रिको खिलाओ तो निद्रा तत्काल आवेगी ।

तथा ८-अरंड और अलसीका तेल दोनोंको कांसे (फूल) की थालीमें भली भाँति रगड़के रोगीकी आंखमें अंजन लगाओ तो बहुत निद्रा आवे ।

तथा ९-सौंफ और भाँगका महीन चूर्ण बकरीके दूधमें औटाकर रोगीके ललाटपर लेप करो तो निद्रा आवेगी ।

तथा १०--बकरीके दूधसे पैरके तलुओंको धोओ तो निद्रा आकर पैरोंकी दाह दूर हो।

तथा ११--मृगमद (कस्तूरी) को स्त्रीके दूधसे पीसकर अंजन लगाओ तो बहुत दिनोंकी नष्ट हुई निद्रा भी पुनः आवेगी ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

सर्वांगकुपितवातयत्न १--विषगर्भादि तैल मर्दन करो तो उक्त रोग दूर हो।

तत्तधातुगत कुपितवात यत्न १--त्वचाके रसमें कुपित हुआ वात तेल मर्दन करनेसे नष्ट होगा।

तथा २--रक्तमें कुपित हुआ वात शीतल लेप तथा विरेचन या रुधिर निकलवानेसे अच्छा होगा।

तथा ३--मांसमें कुपितवात विरेचनसे शांत होगा।

तथा ४--मेदामें कुपित वात भी विरेचनसे ही शांति पावेगा।

तथा ५--अस्थि (हड्डियों) में कुपित वात चिकने पदार्थोंके खिलानेसे अच्छा होगा।

तथा ६--मज्जागतकुपितवात चिकनेपदार्थोंके खाने या मर्दनसे शान्त होगा।

तथा ७--वीर्यमें बिगड़ा हुआ वात पौष्टिक औषधि भक्षणसे शांति पावेगा।

कोष्ठगतकुपितवात यत्न १--पाचनादि औषध भक्षण तथा दुग्धपान करानेसे अच्छा होगा।

आमाशयगत कुपितवात यत्न १--१ दीपन पाचन औषध दो, २ लंघन कराओ, ३ वमन कराओ,४विरेचन दो और ५ पुराने मूँग चावल खिलाओ इनमेंसे एक एक उपाय भी उक्त रोगनाशक हैं।

तथा २--अथवा रोहिस (रोहितक), हर्रकी छाल, कचूर, पोहकरमूल, गुरच, बेलका गूदा, देवदारु, सोंठ, वच, अतीस, पीपल और वायविडंगका क्वाथ पिलाओ तो आमाशयगत कुपितवात शान्त हो।

पक्काशय या हृदय तथा मूलद्वारगत कुपित वात यत्न १-- गुर्च, कालीमिर्चका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो उक्त रोग दूर हो।

तथा २--असगन्ध और बहेडेकी छालका चूर्ण गुड़ मिलाकर खिलाओ तो उक्त तीनों स्थानोंका कुपितवात दूर हो।

तथा ३--देवदारु और सोंठका चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो तीनों स्थानोंका कुपितवात दूर हो।

कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवात यत्न १ सेंक (ताव) तथा तैलादि मर्दनसे कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवात शांत हो।

स्नायुगत यत्न १- शीर छुड़ाने (जिसे यूनानीमालजेमें फस्त खुलवाना कहते हैं) से स्नायु (नस) गत कुपितवात शांत हो।

संधिगत कुपितवात यत्न १- सेंक तथा तेल मर्दनसे संधिगत कुपितवात दूर होगा।

तथा २--२ टंक इन्द्राणीकी जड़ और २ टंक पिप्पलीका चूर्ण मिलाकर खिलाओ तो संधिगत कुपितवात अवश्य दूर हो।

इति अमृतसागरे चिकित्साखण्डे वात रोगयत्ननिरूपणं नामाष्टदशस्तरंगः ॥ १८ ॥

समस्त वात व्याधि

सर्वेषां वातरोगाणां नन्दानन्तामिते तथा।
पूर्वोक्तानां तरंगेऽस्मिँल्लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

अब हम इस १९ उन्नीसवें तरंगमें निदान खंडलिखित समस्त वातरोगोंकी चिकित्सा लिखते हैं।

वातव्याधिके सामान्य यत्न १ --असगंध, खरेंटीकी जड़, बेलका गूदा, दोनों पाटल[1], कटियाली, गोखरू, गंगेरनकी छाल सांठी (पुनर्नवाकी जड़), अरलु, खींप और अरणी ये सब औषध १० टके भर कूटकर १६ सोलह सेर पानीमें औटाकर चतुर्थांश रहजानेपर छान लो यह ४ सेर क्वाथ, ४ सेर तिल्लीका तेल, ४ सेर शतावरीका रस

१ श्वेत और लाल दोनों गुलाब, पाटल = गुलाब या कुंजसेवती २ रंग की होती है।

और १६ सेर गौका दूध ये सब एकत्र कर मंद मंद आंचसे पकाओ, पकते समय १ टके भर कूट, २ टके भर इलायची, २ टकेभर रक्तचन्दन, २ टके भर वच, २ टके भर भूर छड़, २ टके शिलाजित, २ टके भर सेंधानोन २ टके भर असगंध, २ टके भर खरेंटी, २ टके भर रास्ना, २ टके भर सौंफ, २ टके भर इन्द्राणी, २ टकेभर शालपर्णी, २ टके भर उर्दपर्णी ये सब औषध डालदो औटते औटते सब पानी जल कर तैलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो या खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ' गलग्रह, बधिरपन, गतिभंग, कटिग्रह, गात्रशोष, नष्टशुक्र, विषमज्वर, अन्नवृद्धि, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, गृध्रसी और वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे इसे नारायणतैल कहते ह।

तथा २-सोंठ, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सेंकी हींग, अजमोद, सरसों, दोनों जीरे, सँभालू, इन्द्रयव, पाठा, वायविड़ंग, गजपीपली, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, और मूर्वा ये सब औषध चार चार मासे भर और इन सबके बोझसे दूना त्रिफला तथा इन सबके प्रमाणसे दूना शुद्ध गूगल लेकर इन सबका चूर्ण करलो, तदनंतर सबको एकजीव करके ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनालो, इन गोलियोंको मृत्तिकाके चिकने पात्रमें धरके रास्नादि क्वाथके साथ १ गोली नित्य खिलाओ तो समस्त वातव्याधि दूर हों, किरमालेका पञ्चांग क्वाथके साथ दो तो कफके सब रोग दूर होंगे, दारुहल्दीके क्वाथके साथ प्रमेह दूर हो, गोमूत्रके साथ खिलाओ तो पाण्डु रोग नष्ट होगा, मधुके साथ खिलाओ तो वातरक्तरोग दूर होंगे और पुनर्नवादि क्वाथसे खिलाओ तो उदरामय व्याधि दूर होगी, येसब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं, यह योगराजगूगल है।
विशेषतः-राजरोग गूगलको सेवन करनेवाले रोगीको मैथुन (संग) और खट्टे पदार्थ भक्षण करना कदापि योग्य नहीं है।

रास्नादिक्वाथ १-रास्ना, सांठी, सोंठ, गिलोय और अरण्डीजड़का क्वाथ रास्नादिक्वाथ कहलाता है, जिसे ऊपर योगराजगूगलके साथ दिया है।

महारास्नादिक्वाथ २-रास्ना, धमासा, खरेंटीकी जड़, अरंडीकी जड़, देवदारु, कचूर, वच, अडूसा, हर्रकी छाल, किरमालेकी गिरी,

चव्य,नागरमोथा, सांठीकी जड़, गुरुच, विधायरा, सौंफ, गोखरू, असगन्ध, अतीस, शतावरी, सहँजनेकी बक्कल, धनियां और दोनों कटियालीका क्वाथ महारास्नादिक्वाथ कहलाता है इसके साथ योग-राजगूगलको खिलाओ तो वायुके समस्त रोग दूर होंगे।

तथा ३-१ टके भर लहसनका रस और १ टके भर तेलमें सेंधानोन डालकर पिलाओ तो वायुके सब रोग दूर होंगे।

तथा ४-दूध या घृत तेल या मांसरसके साथ १४ दिन पर्यन्त लहसन खिलाओ तो सब प्रकारका वात, विषमज्वर, शूल, गोला, अग्निमान्द्य, प्लीहा, मस्तकरोग, वीर्यके सब रोग दूर होंगे, ये दोनों (तृतीय और चतुर्थ यत्न) लहसनकल्क कहलाते हैं।

तथा ५-थूहरपत्र, अरण्डपत्र, बकायनपत्र, सम्भालूपत्र, शोभाञ्जनपत्र और कनेरका पत्र, इन सबका रस, इन सब रसोंसे चतुर्थांश तेल और सोंठ, इन सबको एकत्र कर पकाओ, रस जल चुकनेके बाद तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो सब वातरोग दूर होंगे यह अष्टांग तैल कहलाता है।

तथा ६-धतूरेकी जड़, निर्गुण्डी, पटोलकी जड़, एरण्डीकी जड़, असगन्ध, पवांर, चित्रक, मुँगनेकी जड़, काकलहरी, कलिहारीकी जड़, नीमकी छाल, बकायनकी छाल, दशमूल, शतावरी, चिरपोटणी (मकोय), गौरीरस, विदारीकन्द, थूहरके पत्ते, आकके पत्ते, सनाह, दोनों करनेकी छाल, आधाझाडा (ओंगा) और खीप ये सब औषध तीन २ टके भर और इन सब औषधोंके बराबर तिल्लीका तेल, इसी तेलके बराबर अण्डीका तेल और दोनों तेलोंसे चौगुना जल ये सब एकत्र कर मन्द मन्द आंचसे औटाकर पानी जलकर तेलमात्र रह जानेपर उतारकर छानलो पश्चात् सोंठ, मिर्च, पिप्पली, असगंध, रास्ना, कूट, नागरमोथा, वच, देवदारु, इन्द्रयव, जवाखार, पांचों नोन, नीला-थोथा, कायफल, पाठा, भारंगी, नौसादर, गंधक, पोहकरमूल, शिलाजीत, हरताल ये प्रत्येक औषध धेले धेले भर और २ टके भर सिंगीमुहरा इन सबके चूर्णको उक्त तेलमें डाल दो, जो यह तेल मर्दन करो तो सब वायुरोग तथा कुक्षी, भौं, जंघा, पृष्ठ, संधि इनस्थानोंमें स्थित कुपितवात, पदशोथ, गृध्रसी,

मस्तकरोग, अङ्ग फूटना, कर्णशूल, गंडमाला ये सब रोग दूर होवेंगे इसे विषगर्भ तैल कहते हैं।

तथा ७--मँजीठ, देवदारु, चीड़ (वृक्षविशेष), दोनों कटियाली, वच, तज, पत्रज, शुद्धगंधक, हर्रकी छाल, बहेडेकी छाल, कचूर, आंवला, नागरमोथा ये सब दो २ टङ्क लेके क्वाथ बनालो, यह क्वाथ १ सेरभर तेलके साथ पकाकर तेलमात्र रह जानेपर इस तेलमें छड़, मूर्वा, मैनफल, तज, चम्पाकी जड़, कमलतंतु, पीपलामूल और सोंचरनोन, ये दो २ टके भर तथा लोबान (ऊद) गंधापिरौजा, असगंध, नख (जो कि अष्टांगमें सुगंधिविशेष होती है), और छड़ ये टके टकेभर और इलायची, लौंग, चन्दन जूहीके फूलोंकी कली, कंकोल, अगर और केशर ये पैसे पैसे भर और २ टंक कस्तूरी, इनसब औषधोंका बारीक चूर्ण करके डालदो, इसको मन्द मन्द आंचसे पकाते २ औषधें मिलाकर तेलमात्र रहजाने पर २ टङ्क कपूर डालके छानलो, अब इस तैलका मर्दन करो तो सब वातरोग समस्त प्रमेह, शोथ, गुल्म, ज्वर ये सब रोग दूर होवेंगे, यह लक्ष्मीविलास महासुगंधित तैल चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ८-७ टकेभर सोंठ, ७ टकेभर घीमें पीसकर पकाओ इसमें ७ टकेभर इकपोता लहसन और सात टकेभर मधु डालकर एकत्र करलो, जो एक टकेभर नित्यखिलाओ तो पक्षाघात हनुस्तंभ कटिभंग, भुजाकी पीड़ा और बायुकेसमस्त रोगदूर होवेंगे।

तथा ९-मालकांगनी, असालु, अजबायन, कालाजीरा, मेथी और तिल इन सबको समान एकत्र कर तेलीके कोल्हू (घानी) से पेराओ, जो इस तेलका मर्दन करो तो वायुके समस्त रोग दूर होंगे यह विजयभैरव तैल है।

तथा १०-पारा, गंधक, हरताल और मैनशिल इनको ३ दिनतक कांजीके साथ खरल करके एक रातभर महीन कपड़ेपर लपेटदो और इस कपडेकी बत्तीबनाकर ऊपरसे लपेट दो तदनंतर बत्तीको चौगुने तेलमें भिगोकर सुलगा (जला) दो और किसी लोहेके पात्रके ऊपर उसे पकड़ रक्खो बत्ती जलते समय उस पात्रमें जो तेल टपकेगा, उसका मर्दन करो तो समस्त वातरोग दूर होवेंगे, यह भी विजयभैरव कहलाता है।

तथा ११–३ टकेभर हर्रकी छाल, ३ टके भर चित्रक १ पैसे भर इलायची, १ पैसे भर तज, १ पैसे भर पत्रज, १ पैसेभर नागरमोथा, २ टंक सम्भालू, १० टंक सोंठ, १० टंक काली–मिर्च, १० टंक पिप्पली, १० टंक पीपलामूल, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक लोहसागर, १० टंक वंशलोचन, १० टकं शुद्ध पारा, १० टंक शुद्ध गंधककी कजली इन सबको महीन पीसकर ३ वर्षके पुराने गुड़के साथ बेरकी बीजीके समान गोलियां बनाके घृतकेचिकने पात्रमें रख दो, ये रोगीके बलानुसार १ या दो तथातीन गोली २ मासपर्यंत नित्य खिलावो तो कफ पित्तके सब रोग, ४ मासतक खिलावो तो वायुके सब रोग वर्षतक खिलाओ तो समस्त रोगमात्र दूर होवे; २ वर्षतक खिलाओ तो वृद्धता दूर होकर तरुणाई प्राप्त हो और इसी रसको ३ वर्ष पर्यंत युक्ति और प्रणामपूर्वक सेवन कराओ तो शरीर सब प्रकारसे रोगरहित होकर आयुवृद्धि होगी, यह विजयभैरवरस है।

तथा १२–१ भाग शुद्ध पारा, २ भाग शुद्ध गंधक, ३ भाग त्रिफला, ४ भाग चित्रक, ५ भाग शुद्ध गूगल इन सबको अरंडीके तेलमें दिनभर खरल करके हिंग्वष्टक चूर्णके साथ १ दिनभर फिर खरल करो और २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनाकर १ मास पर्यंत प्रतिदिन १ गोली रोगीको ब्रह्मचर्यपूर्वक लौंग, सोंठ, अंडीकी जड़के क्वाथके साथ सेवन कराओ तो सब प्रकारके वातरोग दूर होंगे और साधारण वात तो ७ दिन मात्रके सेवनसेही दूर हो जाता है, इसको वातारिरस कहते हैं।

तथा १३–शुद्ध गंधक, शुद्ध सींगीमुहरा, सोंठ, कालीमिर्च, पारा, पीपली (पारे गंधककी कजलीके साथ) को महीन पीसकर मिला डालो और भँगरेके रसकी सात पुट देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो नित्य एक गोली अदरखके रसके साथ खिलाओ तो सब प्रकारकी वायुकी पीड़ा दूर होगी, यह समिरपन्नग रस कहलाता है।

तथा १४–उत्तम नवीन अफीम, कुचला, कालीमिर्च इन तीनोंको महीन पीसकर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो पानके रसके साथ प्रभातकाल १ गोली नित्य खिलाकर ऊपरसे पान खिलाओ तो समस्त वातरोग शोथ, विषूचिका, अरुचि और अपस्मार ये सब रोग दूर होवेंगे, यह समीरगजकेसरी रस कहलाता है, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

१ जहां पारे और गन्धकका संयोग हो वहां उनकी कजली बना लेनी चाहिये।

तथा १५-तीव्रा (मदकरणी जिसे खुराशानी भी) कहते हैं, अजवायन, जीरा, काकड़ासींगी, अजमोद, असगंध इन सबका १ मासे चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सब प्रकारका वायु, कास, श्वास, प्रलाप अतिनिद्रा और अरुचि ये सब रोग दूर होंगे, इसे वृद्ध चिन्तामणिरस कहते हैं।

तथा १६-२ टकेभर चित्रक, ३ टके भर हर्रकी छाल, १ टके भर पारा, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टके भर पिप्पली, १ टकेभर पिप्पलामूल, १ टके भर नागरमोथा, १ टकेभर जायफल, १ टके भर विधायरा, ५ टंक इलायची, ५ टंक कूट, शुद्ध गंधक, ५ टंक हिंगुल; ५ टंक अकरकरहा, ५ टंक मालकांगनि, ५ टंक तज, ५ टंक अभ्रक, २ टंक शुद्ध सींगिमुहरा और आठ टके भर गुड़ इन सबको पीस छान एकत्र करके जलभंगराके रसकी १ पुटदो और २ या ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाके १ गोली नित्य खिलाओ तो सब वातरोग, कुष्ठ, प्रमेह, मृगी, क्षय, आमवात, श्वास, शोथ, पांडु और अर्श ये सब दूर होंगे, यह अमृतनाम्नी गुटिका योगतरंगिणीमें लिखी है।

तथा १७-शुद्ध पारे और गंधककी कजलीको दूधीके रसकी १ पुट, तुलसीके रसकी १ पुट, बावची (मासबावरी) के रसकी १ पुट, मयूरशिखा (हरे पुष्पवाली बूटी) के रसकी १ पुट, मुलहठीके रसकी १ पुट, वाराहीकंदके रसकी एक पुट और बहुफलीके रसकी १ पुट यथाक्रमसे देके प्रत्येक पुटके साथ सुखाते जाओ, सब पुट हो चुकने पर मुर्गीके अंडेका रस निकालकर खोखलाको पानीसे धोके इस खोखलामें पूर्वोक्त कजली भर दो इस कजली भरे हुए अंडेको ७ कपड़मिट्टी (सुखा-सुखाके एकान्तर एक) से लपेटकर गजपुटमें पकाओ इसी प्रकार तीन वार गजपुमें फूंकके निकाल लो जो इसमेंसे १ रत्तीमात्र खिलाओ तो सब प्रकारकी बादी दूर होकर क्षुधावृद्धि होगी। यह राक्षसरस रसार्णवमें लिखा है।

तथा १८-शुद्ध पारे और गन्धककी कजली बनाके उसमें इन दोनों से आधा हरताल डालो, इनमें इन तीनोंके समान रांगा डालकर चारोंको आकके दूधमें सात दिनतक खरल करो और सुखाके कांचकी दृढ आतसी शीशीमें भर दो, इस शीशीको कपड़मिट्टीमें लपेटके ११ प्रहरतक बालूयन्त्रसे आंच दो, स्वांगशीतल हो जानेपर निकालकर

आधी रत्ती पानमें रखके खिलाओ तो सब प्रकारका वात, उन्माद, क्षीणता, मन्दाग्नि, कुष्ठ, व्रण और विषमज्वर ये सब दूर हों, यह वङ्गेश्वररस योगतरंगिणीमें लिखा है।

तथा १९-शुद्ध हरताल, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, हिंगुल, सुहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल इन सबके चूर्णको अदरखके रसकी १ पुट देके मूँग प्रमाणकी गोलियां बना लो, जो एक गोली नित्य प्रभात समय खिलाओ तो सब प्रकारकी वातव्याधि, मन्दाग्नि, सूतिकारोग, शीतज्वर और संग्रहणी ये सब उपद्रव दूर हों, यह हरितालगुटिका रसरत्नदीपमें लिखी है।

तथा २०-५ पैसे भर लहसनको जीरेके सदृश कतरके १ पैसे भर दूध और धेले भर पानीमें पकाओ दूध पानी सूख जानेपर, लहसनको खरल करके लुगदी बांधलो, इस लुगदीको अधेले भर घीके साथ आंच देकर लाल हो जानेपर निकाल लो, अनन्तर आधी रत्ती कस्तूरी चार रत्ती लौंग, १ मासा जायफल, १ मासा दालचीनी, २ स्वर्णपत्र, (सोनेका वर्क) और उपर्युक्त निर्मित लहसनकी लुगदी ये सब पीसके २ पैसे भर मिश्रीकी चासनीमें डाल दो, तदनन्तर इसकी चार गोली बनाकर १ गोली प्रातःकाल (और अधिक वायुका वेग हो तो एक गोली पुनः सायंकालको) खिलाओ तो वायुजन्य सब वेदना शान्त हो जावे, यदि वातव्याधिकी विशेष ही तीव्रता हो तो उक्त क्रमानुसार २१ तथा ३९ दिन पर्यंत इसी गोलीका सेवन कराओ तो समस्त वातरोग दूर होकर शरीरको पुष्टता और क्षुधा प्राप्त होगी, ये गोलियां जितनी चाहो उक्त प्रमाणसे ही बनाओ, इसे लहसन पाक कहते हैं।

इति श्री अमृतसागरे चिकित्साखंडे समस्तवातरोगाणांयत्ननिरूपणं नामैकोनविंशतितमस्तरंगः ॥ १९ ॥

आमवातादिरोगाः

ऊरुस्तम्भरोगस्य चामानिलस्या-
ऽनेत्रे लिखामीह भंगे चिकित्साम् ।
तथा पित्तजानां बलासोद्भवानां
गदानां नवीनामृताब्धेर्यशोदाम् ॥ १ ॥

भुजंगप्रयातवृत्तमिदम्

अब हम इस अमृतसागरके २० बीसवें तरंगमें ऊरुस्तम्भ, आमवात, पित्त और कफरोगोंकी यशदायिनी चिकित्सा लिखते हैं ।

ऊरुस्तम्भरोगचिकित्सा १-त्रिफला, काली मिर्च, सोंठ, पीपली, और पीपलामूलका २ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ चटाओ तो ऊरुस्तम्भ दूर हो ।

तथा २-सोंठ, पीपल, शिलाजीत और गूगल (ये सब ९ मासेभर) का चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो ऊरुस्तम्भ दूर हो ।

तथा ३-दशमूलके क्वाथके साथ गूगल सेवन कराओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो । यह भावप्रकाशमें लिखा है ।

तथा ४-१ टंक भिलावा, १ टक गुर्च, १ टंक सोंठ, १ टंक देवदारु, १ टंक हर्रकी छाल, १ टंक सांठीकी जड और १ टंक दशमूलका काथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो ।

तथा ५-एक टंक गूगल नित्य गोमूत्रके साथ १५ पन्द्रह दिनतक पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो ।

तथा ६-सर्पकी बांबी (सर्पके रहनेका भूछिद्र) की मिट्टी मधुमें खरल करके मर्दन करो तो ऊरुस्तंभ दूर हो ।

तथा ७-दो टंक वचका चूर्ण उष्णजलके साथ खिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो ।

तथा ८-खशका रस या नीबूका रस, मधु या गुड़के साथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो, यह काशीनाथपद्धतिमें लिखा है ।

तथा ९-चव्य, हर्रकी छाल, चित्रक, देवदारु, सागरगोटीके फूल, सरसोंका चूर्ण २ टंक मधुके साथ नित्य सेवन कराओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो, यह सर्वसंग्रहमें लिखा है ।

ऊरुस्तंभमें वर्जित कर्म–शीर छुड़ाकर शरीरका रक्त निकालना, वमन कराना, विरेचन देना और वस्तिक्रिया करना ये कृत्य ऊरुस्तंभवाले रोगीको सर्वदा वर्जित हैं, वैद्यरहस्यमें लिखा है कि ये कृत्य कदापि न करो।

आमवातरोगयत्न १–आमवातके रोगीको लंघन कराओ, सेंको, तीक्ष्ण रस दो, क्षुधावर्धक औषध खिलाओ, विरेचन दो, वस्तिकर्म करो, बालू या नमकसे तांव (सेंक) दो, दाग (दंभ) दो, बैंगन या करेलेका शाख खिलाओ, कोदों या चना खिलाओ इन कार्योंको विचारपूर्वक करो तो आमवात दूर हो।

तथा २–चित्रक, कुटकी, हर्रकी छाल, वच, देवदारु, अतीस, गुर्चके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो।

तथा ३–कचूर, सोंठ, हर्रकी छाल, वच, देवदारु, अतीस और गुर्चका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो।

तथा ४–५ टंक अरंडीके तेलको नित्य पिलाओ तो आमवात-दूर हो

तथा ५–हर्रकी छालका चूर्ण अरंडीके तेलके साथ सेवन कराओ तो आमवात और गृध्रसी दोनों दूर होंगे।

तथा ६–किरमालेके पत्ते तेलमें भूँजके चावलोंके साथ खिलाओ तो आमवात दूर हो।

तथा ७–अरंडके बीजोंकी दूधमें खीर बनाकर पिलाओ तो आमवात और गृध्रसी दोनों दूर होंगे।

तथा ८–खरेंटी, रास्ना, अडूसा, अरंडकी जड़, धमासा, कचूर, दारुहल्दी, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हर्रकी छाल, गोखरू, चव्य, सहँजना और दोनों कटियाली ये सब बराबर और एकसे तिगुना रास्ना इन सबका ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो पक्षाघात, कम्प, अर्दित, कुब्जवात, संधिवात, घुटनावात, पिंडलीवात, गृध्रसी, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्तार्श, वीर्यदोष और स्त्रीका वंध्यापान ये सब रोगदूर हों इसे महारास्नादि क्वाथकहते हैं।

तथा ९–अजमोद, कालीमिर्च, पीपली, वायविडंग देवदारु, चित्रक, सौंफ, सेंधानोन, पीपलामूल ये सब टके २ भर, १० टके भर

सोंठ, १० टके भर विधायरा, ५ टके भर हर्रकी छाल और इन सबके बराबर गुड़ लेके प्रथम औषधियोंका चूर्ण कर गुड़के साथ खरल करके २ दो टंकभरकी गोलियां बनाओ, जो १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो आमवात, अफरा, शूल, गृध्रसी, गोला, प्रतितूणी, कटिपीड़ा पृष्ठपीड़ा, शोथ, जांघ और हड्डियोंकी फूटन ये सब दूर हों, यह अजमोदादि चूर्ण है।

तथा १०--आठ टकेभर सोंठ १ सेर गौके घीके साथ चूर्ण करके मिलादो और यह सोंठयुक्त घी ५ सेर दूधमें डालकर खोवा बनालो, तदनंतर ५० टकेभर मिश्रीकी चासनीमें उक्त प्रकारसे निर्मित खोवा डालकर १ टके भर सोंठ, १ टकेभर नागकेशरका चूर्ण भी उसीमें डालदो और १ टकेभरकी गोलियां बनाकर १ गोली प्रातःकाल और १ सायंकाल नित्य खिलाओ तो आम वात दूर होकर शरीर पराक्रमी तथा बलाढ्य होगा, इसे शुंठीपाक कहते हैं।

तथा ११--८ टके भर मेथी और ८ टके भर सोंठकाचूर्ण १ सेर भर घी मिलाके ४ सेर गौके दूधमें डालदो इस दूधका खोवा बनाकर ४ सेर मिश्रीकी चासनीमें डालो और ऊपरसे १ टके भर कालीमिर्च, १ टके भर चित्रक, १ टके भर पिप्पली १ टके भर धनियां २ टके भर सोंठ, १ टके भर पीपलामूल, १ टके भर अजवायन, १ टके भर जीरा, १ टके भर सौंफ, १ टकेभर जायफल, १ टकेभर कचूर, १ टकेभर तज, १ टके भर पत्रज और १ टकेभर नागरमोथेका चूर्ण डालकर १ टकेभरकी गोलियां बनाओ, जो एक गोली नित्य खिलाओ तो आमवात, वातव्याधि, विषमज्वर, पांडु, उन्माद, मृगी, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरोग्रह, नेत्ररोग और प्रदर ये सब रोग, दूर होकर वीर्य बढ़ेगा, इसे मेथीपाक कहते हैं।

तथा १२-२ टंक लहसनका रस २ टंक गौके घीके संग नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो।

तथा १३-५ टंक सेंधानोन, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक पोहकरमूल, ५ टंक महुआ और ५ टंक पीपलीका चूर्ण, १ सेर अरंडीका तेल, १ सेर सौंफका रस, २ सेर कांजी और ४ सेर दहीका मट्ठा इन सबको कड़ाहीमें डालकर मन्द मन्द आंच दो रसादिक जलकर तेलमात्र रह-

जानेपर छानकर २ टंक नित्य खिलाओ या मर्दन करो तो आमवात दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी, इसे ब्रह्मसिद्धवात तेल कहते हैं ।

तथा १४–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोंठ, कुटकी, त्रिफला, किरमालेकी गिरी, समभाग और एकसे तिगुनी हर्रकी छाल इन सबका चूर्ण और पारे गन्धककी कजली दोनोंको मिलाकर भली भांति खरल करो, जो इसमेंसे १ मासे भर रस नित्यसोंठ और अरंडकी जड़के क्वाथके साथ सेवन कराओ तो आमवात दूर हो, इसे आमवातारिरस कहते हैं ।

तथा १५ सेर गूगल, १ सेर कड़ुआ तैल, १ सेर हर्रकी छाल, १ सेर बहेडेकी छाल, १ सेर आवलेका चूर्ण इन सबको २४ चौबीस सेर पानीके साथ चूल्हेपर चढ़ाकर आंच दो, चतुर्थांश रहजानेपर छानके पुनः चूल्हेपर चढ़ाओ और कुछ गाढ़ा होजानेपर २ टंक पारा, २ टंक गन्धक, २ टंक सोंठ, २ टंक मिर्च, २ टंक पीपल, २ टंक त्रिफला, २ टंक नागरमोथा, २ टंक देवदारु और १०० शुद्ध जमालगोटे इन सबका चूर्ण उक्तक्वाथमें डालके १ मासे भर नित्य उष्ण जलकेसाथ-सेवन कराओ तो आमवात, वातरोग, भगन्दर, शोथ, शूल, अर्श, ये सब रोग दूर होकर क्षुधा और वीर्यकी वृद्धि होगी, इसे व्याधिशार्दूल-गूगल कहते हैं ।

तथा १६–हर्रकी छाल, सेंधानोन, निसोत, इन्द्रायणके फलकी बीजी, इन्द्रायणकी जड़ और सोंठका चूर्ण जलके साथ लोहेके पात्रमें डालकर मन्द मन्द आंचसे पकाओ, जल ओटाकर गाढ़ा होनेपर बेरके समान गोलियां बनाकर १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाके ऊपरसे घृतयुक्त चावल खिलाओ तो आमवात दूर हो, इसे आमादिकगुटिका कहते हैं, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं ।

तथा १७–सोंठ, कालीमिर्चे, पिप्पली, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य, चित्रक, वच, इलायची, झाऊकी जड़, पीपलामूल, देवदारु, कूट, तुम्बरु (तस्तूम्बा, इन्द्रायणफल) पोहकरमूल, दोनों हल्दी, सोंठ, सौंफ, जीरा, पत्रज, धमासा, सोंचरनोन, जवाखार, सज्जी, गजपीपल, सेंधानोन और इन सबके बराबर शुद्ध गूगल इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या मधुके साथ सेवन कराओ तो आमवात, उदावर्त, पांडु, कृमिरोग, विषमज्वर, आध्मान, उन्माद, कुष्ठ और शोथ

ये रोग दूर होंगे, धन्वंतरिजीने इसका नाम द्वाविंशदगुग्गुल रक्खा है, यह वीरसिंहावलोकन ग्रंथमें लिखा है।

तथा १८-१ सेर गूगल, ८ टके भर कडुवा तेल, १ सेर हर्रकी छाल, १ सेर बहेडेकी छाल, १ सेर आंवला इन सबका चूर्ण कर २४ चौवीस सेर जलमें औटाओ, चतुर्थांश रहनेपर छानकर पुनः अग्निपर चढाओ, कुछ गाढा होनेपर २ टंक सोंठ, २ टंक कालीमिर्च, २ टंक पीपल, २ टंक त्रिफला, २ टंक नागरमोथा, २ टंक देवदारु, २ टंक गुर्च, २ निसोत, २ टंक दात्यूणी, २ टंक वच, २ टंक भूकंद, २ टंक धतूरेके बीज, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक शुद्ध पारा इन सबका चूर्ण उक्त क्वाथमें डालके १ मासा नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो आमवात, मस्तकपीडा, कटिपीडा, भगंदर, घुटनोंकी वायु, जंघाकी वायु, पथरी और मूत्रकृच्छ्र ये सब रोग दूर होकर क्षुधा और धातुकी वृद्धि होगी तथा शरीर रोगरहित रहेगा, इसे सिंहनाद गूगल कहते हैं, यह योगतरंगिणीमें लिखा है।

तथा १९-५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक तांबेश्वर, २ टंक शुद्ध पारा, २ टंक लोहसार इन सबको इकट्ठे पीसकर लोहके पात्रमें डालदो और आंचसे पिघलाकर एरंडीके पत्तोंपर डालदो तदनंतर पत्तों सहित करके पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठके क्वाथकी १ पुट, बहेड़ेके क्वाथकी २० पुट और गुर्चके रसकी १० पुट, दो, तदनन्तर इस पदार्थके समान सेंका सुहागा, सुहागेसे आधा बिड़नोन बिड़नोनके समान, कालीमिर्च, कालीमिर्चके समान डांसरे, डांसरेके समान सोंठ, सोंठके समान पिप्पली, पिप्पलीके समान त्रिफला, त्रिफलाके समान लवंग इनसबका महीन चूर्ण करके १ मासे भर, नित्य खिलाओ तो आमवात दूर होकर क्षुधा वृद्धि हो, यह आमवातेश्वररस रोगयुक्त स्थूल मनुष्यको कृश और कृशको स्थूल करता है, अतिशय भोजनको शीघ्र पचाता और न्यारे २ अनुपानोंसे अनेक अन्य रोगोंको भी नष्ट करता है, यह सारसंग्रहमें लिखा है।

आमवातमें वर्जित पदार्थ-दही, दूध, गुड़, उर्द, मांस और मछली ये पदार्थ उक्त रोगोंमें सर्वथा वर्जित हैं, ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है।

पित्तरोग यत्न १-निम्बकी छाल आदि तीक्ष्ण वस्तु, मिश्री आदि मिष्ट वस्तुका भक्षण, चंदनादि शीतल पदार्थका लेपन, शीतल छाया,

चन्द्रमाकी चांदनी, भूगर्भगृह (तलघर) या रात्रिको किसी शीतल स्थानमें निवास, उशीरव्यजन, (खशके पंखे) द्वारा शीतल पवन सेवन, दुग्धपान, विरेचन तथा शिर छुलवानेसे पित्तके ४० चालीसों रोग नष्ट होंगे।

कफरोगकेसामान्य यत्न १–उष्ण, रूखी, कसैली, कटु वस्तु खिलाओ, कुरले, वमन, लंघन, मल्लकीका, मार्गगमन, जागरण, मैथुन श्रम कराओ, पसीनानिकालो, प्यास रोको, हुक्का पिलाओ, नास दो या चिनक खिलाओ इन यत्नोंसे बीस प्रकारके कफरोग नष्ट होंगे।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखंडे ऊरुस्तम्भामवातपित्तरोगकफरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम विंशतितमस्तरंगः ॥२०॥

वातरक्तशूलादिरोगाः

गदानां वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमम् ।
तरंगे भूनेत्रमिते चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २१ इक्कीसवें तरङ्गमें वातरक्त और शूल आदि रोगों की चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

वातरक्त यत्न १–रोगीके शरीरमें जोंक या सिंगी या शीर (फस्त) या अस्तुरेसे ऐसा रक्त निकाल दो जिसमें वायु बढने न पावे तो वात रक्त दूर हो।

तथा २–१ टंक गूगल गुर्चके क्वाथके साथ नित्य खिलाओ तो वात रक्त दूर हो।

तथा ३–२ टंक अण्डीका तेल गुर्चके क्वाथके साथ पिलाओ तो वात रक्त दूर हो।

तथा ४–मंजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, दारुहल्दी, गुर्च और नीम की छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ १ मण्डल (चालीस दिन) पर्यंत पिलाओ तो वातरक्त , कुष्ठ, पामा (खुजली) और फोड़े ये सब दूर होंगे, यह लघुमंजिष्ठादि क्वाथ है।

तथा ५-गुर्च बावची, पवाँर, नीमकी छाल, हल्दी, हर्रकी छाल, आँवला, अडूसा, शतावरी, कमलतन्तु, मुलहठी, खरेंटी, महुआ, गोखरू, पटोल, खश, मंजीठ और रक्तचन्दनका चूर्ण इनका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ठ, पामा और दद्रु ये सब दूर होंगे । ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं । इसे गुडूच्यादि क्वाथ कहते हैं ।

तथा ६-सेरभर शुद्ध भैंसागूगल, सेरभर हर्रकी छाल, सेरभर बहेड़े की छाल, सेरभर आंवला, ३२ टंक गुर्च, इन सबका चूरा ६४ सेर पानीमें औटाकर आधा रह जानेपर छान लो, फिर कड़ाहीमें डालकर कुछ गाढ़ा हो जानेपर पारा, गंधक, निसोत, गुर्च, दात्यूणी दो दो टंक और एक टंक वायविडंगका चूर्ण उक्त क्वाथमें डाल दो इन सबको एक जीव करके चार या आठ मासे नित्य मँजिष्ठादि क्वाथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, श्वास, गोला, कुष्ठ, शोथ, व्रण, उदररोग, पांडु, प्रमेह और मन्दाग्नि ये सब रोग दूर होंगे, यह किशोरगुगल कहलाता है । इस गूगलको सेवन करनेवाले रोगीको अग्नि तापना, घाममें फिरना, श्रम करना, मार्ग चलना, मैथुन करना और खटाई, मांस, दही, नोंन, तेल ये नहीं खाना चाहिये ।

तथा ७-२ सेर भिलांवांका[1] मुख रेतीसे घिसकर १५ सेर पानीमें औटाओ, औटाते समय २ सेर गुर्चका महीन चूर्ण डालकर चतुर्थांश रख लो तदनन्तर गुर्च, बावची, निम्बकी छाल, हर्रकी छाल, हल्दी, नागरमोथा, तज, (ये सब दो दो टंक), इलायची, गोखरू, कचूर, रक्तचन्दन, ये चारो पांच पांच टंकका बारीक चूर्ण उक्त ४ सेर क्वाथमें डालकर भिलावा सहित सब औषधें और जल आदिको कूट डालो इन सबको एकत्रकर ५ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वात रक्त, कुष्ठ, अर्श पामा, विसर्प सब वातविकार, सब रक्तविकार दूर होंगे, इसके सेवन करनेमें रोगीको छठवें यत्नोक्त वस्तुयें वर्जना चाहिये, यह अमृतभल्लातक है ।

तथा ८-अलसी या अरंडीके बीजोंको दूधमें पीसकर हाथ पैरोंपर लेप करो तो वातरक्त दूर हो ।

---

१ जो पानीमें डालनेसे नहीं डूबे ऐसे पक्के बोझिल भिलावां इस पाकके लिये लेना चाहिये ।

तथा ९-गौरीसर, राल, मोम, मंजीठको तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो वातरक्त दूर हो।

तथा १०-एरंडीकी जड़, गुर्च और अडूसेके क्वाथमें ४ मासे गूगल और २ टंक एरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो वातरक्त, मूर्च्छा, श्वास, मस्तकपीड़ा और फोडे ये सब दूर हों यह यत्न वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ११-हरतालको पुनर्नवाके रसमें खरल करके टिकिया बनाओ। सूखजानेपर पुनर्नवाकी राखके बीचमें धरके ठीकर (मिट्टीके बर्तन) को चूल्हेपर चढ़ा दो, मंद मंद आंचसे ५ दिन ५ रात्रि तपाकर स्वांगशीतल होजानेपर टिकिया निकालो जो इसमें १ रत्ती भस्म गुडूच्यादिक्वाथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ, पामा, फिरंगवात, विसर्प और फोड़े ये सब रोग दूर हों, सेवन करनेवाले पुरुषको नोन, खटाई, कटु रस, धूप, अग्निका बचाव करना चाहिये और सेंधानोन तथा मीठी वस्तुयें भक्षण करना चाहिये, टिकिया आंचपरसे निकलनेपर श्वेत रंग बोझ पूर्ववत् (जो बोझ पहिले था उतनाही रहना चाहिये) और निर्धूम होजाना चाहिये, यह हरतालेश्वर रस भावप्रकाशमें लिखा है।

वातरक्तवालेको वर्जित पदार्थ-दिवसमें निद्रा, क्रोध, श्रम, मैथुन और कटु, उष्ण, भारी, खारी, खट्टी वस्तु भक्षण न करना चाहिये।

तथा योग्य कार्य-यव, गेहूँ, लाही, (ये पुराणे) अरहर, चना, मूंग कुलथी, मसूर, धनियां, चिरपोटणी, बथुआ, चोलवा, लूण्या (कुलफा), बकरीका दूध और बकरीका ही घी तथा मांसाहारियोंको बटेर और तीतरका मांस ये पदार्थ उक्त रोगीको भक्षण करने योग्य हैं।

वातशूल रोग यत्न १-अजवायन, सेंधानोन, सेंकी हींग, जवाखार, सोंचरनोन, हर्रकी छालका २ टंक जीरा, ४ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर हो।

तथा २-१ टंक सोंचरनोन, २ टंक जीरा, ४ टंक कालीमिर्चके चूर्णको अमलवेतके रसकी ७ पुट और बिजौरेके रसकी ७ पुट देकर चारमासे भर गोलियां बनालो, जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर होगा।

तथा ३–निसोत, वायविडंग, सहँजनेकी फली, हर्रकी छाल, कबेलाके चूर्णको अश्वके मूत्रमें पकाकर २ टंक मद्यके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ४–सेंकी हींग, अमलवेत, पिप्पली, अजवायन जवाखार, हर्रकी छाल और सेंधानोनका २ टंक चूर्ण मद्यके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो।

तथा ५–२ टंक बिजौरेकी जड़का चूर्ण घृतके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो, यह बीजपूरादि योग सर्वसंग्रहमें लिखा है।

तथा ६–शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रक, अमलवेत, ताम्बेश्वर और शुद्ध सिंगीमुहरको पीसकर अदरखके रसमें ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वातशूल दूर हो, इसे अग्निमुख रस कहते हैं।

पित्तशूल यत्न १–हर्रकी छालको गुड़में पीसकर घृतके साथ खिलाओ तो पित्तशूल दूर हो।

तथा २–विरेचन कराओ तो पित्तशूल दूर हो।

कफशूलयत्न १–आंवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो कफशूल दूर हो।

तथा २–नीमकी छालका क्वाथ मदिराके साथ पिलाओ तो कफशूल दूर हो।

तथा ३–जवाखार, सेंधानोन, सांभरनोन, सोंचरनोन, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और सेंकी हींगका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफशूल दूर हो।

त्रिदोषजशूल यत्न १–त्रिफलासार, मुलहठी, हुआ इनका १ टंक-चूर्ण मधु या घृतके साथ चटाओ तो त्रिदोषज (सन्निपात) शूल दूर हो।

तथा २–शंखभस्म, सोंचरनोन, सेंकी हींग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली इनका २ टंक चूर्ण उष्णजलके साथ सेवन कराओ तो त्रिदोषजशूल दूर हो।

आमशूलयत्न १–आंवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो आमशूल दूर होगा।

उपर्युक्त कफरोगके तीनों यत्न भी आमशूलको नष्टकर सकेंगे।

सामान्य शूलमात्रके यत्न १-रोगीको वमन या लंघनकराओ औषधियोंसे प्रस्वेद निकालो, पाचन सज्जीखारका चूर्ण या ऋव्यादि चूर्ण खिलाओ, बस्तिक्रिया करो, कुलथी या तपी हुई रेतीकी पोटलीसे पानी सींचकर सेंको तो प्रत्येक उपायोंसे शूल रोग दूर हो।

तथा २-काकड़ासिंगी, कुलथी, तिल, यव, अलसी, अरंडकी जड़, पुनर्नवाकी जड़ लहसनकी बीजीको कांजीमें पकाकर शूलके स्थानमें सेक करो तो शूलदूर हो।

तथा ३-तिल्लीको पीसकर कांजीमें पकाओ, पकते समय कुछ तेलभी डालके पोटली बनाकर सेंको तो शूल तत्क्षण दूर हो।

तथा ४-मैनफलको कांजीमें पीसकर नाभिपर लेप करो तो शूल दूर हो।

तथा ५-सोंठ, और अरंडकीजड़का क्वाथ पिलाओ तो शूल दूर हो।

तथा ६-सोंठ और एरंडका क्वाथ हींग या सोंचरनोनके साथ पिलावो तो शूल दूर हो।

तथा ७-गुड़को पानीमें औटाकर जवाखार डाल पिलावो तो शूल दूर हो।

तथा ८-कांसे या चांदी या तांबेका जल भरा पात्र शूलके स्थानपर फिराओ तो शूल दूर हो।

तथा ९-राई और त्रिफलेका चूर्ण मधु या घृतके साथ दो तो शूलमात्र दूर हो।

तथा १०-दारुहल्दी, चोख, कूट, सौंफ, सेंकी हींग और सेंधानोनके बारीक चूर्णका उष्ण काँजीके साथ लेप करो तो शूल दूर हो।

तथा ११-बेलकी जड़, एरंडकी जड, चित्रक, सोंठ, सेंकी हींग, सेंधानोन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो।

तथा १२-पक्के कुम्हडेके सूखे हुए धूला (टुकडे जैसे शाक बनाने के लिये करते हैं) पीतलके पात्रमें भरकर मुँह बन्द करदो; इसे चूल्हे पर चढ़ाके उतनी आंच दो कि जिससे जलकर कोयले बनजावें स्वांग

शीतल हो जानेपर २ मासे राख, सोंठके चूर्णके साथ खिलाकर ऊपरसे जल पिलाओ तो असाध्य शूल भी दूर हो, इसे कूष्मांडक्षार कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १३–सोठ, हर्रकी छाल, पिप्पली, निसोत और सोंचरनोन का १ टके भर चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो शूल, अफरा, अर्श और आमवात ये सब दूर हों, इसे पञ्चसम चूर्ण कहते हैं।

तथा १४–सेंकी लौंग और सोंचरनोनका चूर्ण सोंठके क्वाथ और अरंडके तेलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो।

तथा १५–शंखका चूर्ण, सोंचरनोन, सेंकी हींग, कालीमिर्च और पिप्पलीका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल तुरंत दूर हो।

तथा १६–शुद्ध सिंगीमुहरा, सोंठ, चित्रक, कालीमिर्च, पीपल, जीरा और सेंकी हींगके चूर्णको भाँगरेके रसकी ३ पुट देकर चने सदृश गोलियाँ बनालो और १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो।

तथा १७–शंखभस्म, करंजमूल, सेंकी हींग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और सेंधानोनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो, यह शूलनाशक चूर्ण कहलाता है।

तथा १८–चित्रक, सोंठ, सेंकी हींग, पाठा, पिप्पली, काली मिर्च, जीरा, धनियां, पांचों नोन, छड़, अजवायन और पिप्पलामूलके चूर्णको जंभीरीके रसकी ५ पुट देके ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो हृदयशूल, आमशूल, पार्श्वशूल, समस्त शूल, अरुचि और ८० अस्सी प्रकारके वात ये सब रोग तुरंत दूर हों, इसे चित्रकादिगुटिका कहते हैं।

तथा १९–हर्रकी छाल, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, कुचिला, शुद्ध गंधक, सेंकी हींग और सेंधानोनको जलसे खरल करके चने प्रमाणकी गोलियां बनाओ, १ गोली नित्य प्रातःकाल उष्णजलके साथ सेवन कराओ तो शूल, संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मंदाग्नि ये सब रोग दूर होंगे, इसे शूलनाशिनी गुटिका कहते हैं।

तथा २०–२टंक कुट (शाल्मलिवृक्ष), २ टंक सोंठ, १ टंक सोंचरनोन, १ टंक सेंकी हिंगका चूर्ण सहँजने या लहसनके रसमें मिलाकर गोलियां बनालो, जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो शूल तत्काल दूर होगा, इसे कुचिलादिगुटिका कहते हैं।

तथा २१–१०टंक शुद्ध पारा, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्च, २० टंक पिप्पली २० टंक सोंठ, २० टंक सेंकी हींग, ५ टंक पाँचो नोन, ८ टंक इमलीका खार, ८ टंक जमीरीका खार, ८ टके भर शंखकी राख इन सबको नींबूके रसमें ५ दिन खरल करके १ टंक रस उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो, इसे शूलदावानलरस कहते हैं।

तथा २२–आधसेर हीराकसीस, सेर भर लाहोरी फिटकरी, सेर भर सेंधानोन, सेर भर शोरेका चूर्ण करके ढ़ेकली (यन्त्रोंमें प्रसिद्ध है) यंत्रसे रस निकाल लो, जो १ मासे भर खिलाओ तो शूल, गुल्म, अर्श प्लीहा, उदररोग, अजीर्ण और वातरोग सब दूर होंगे, इसे शंखद्राव कहते हैं।

तथा २३–शुद्ध गंधक, गंधकसे आधा पारा इन दोनोंके समान कंटकवेधी तीनोंको तांबेके पात्रमें १ दिन खरल करके गोला बनालो और हंडीमें नमकभरके बीचमें यह गोला धरदो, हंडीको चूल्हेपर तीन दिन आँच देकर स्वांगशीतल होजानेपर गोलेको निकालके पीस डालो, जो इस भस्मको २ रत्ती प्रमाणकी मात्रासे नागरवेल पानके साथ खिलाओ तो शूल तत्काल दूर हो, इसे शूलगजकेशरी रस कहते हैं।

तथा २४–जीरा, सोंठ, काली मिर्च, सेंकी हींग और वच इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो।

तथा २५–१ टके भर त्रिफला, ५ टके शुद्ध गन्धक, २ टके भर कांतिसार इन्होंका चूर्ण अनुमानसे २ टंक मधु और २ टंक घृतके साथ

---

१ प्राचीनामृतसागरमें इसे कुचिलादिगुटिका नाम दिया है, परन्तु इसमें कुचिलेका नाम मात्र भी नहीं दृष्टि पड़ता हां, जो कुटादिगुटिका कही जावे तो वही योग्य है।

२ इस पदार्थको कांच या चीनीकी शीशीको छोड़ अन्य पात्रमें न धरो, क्योंकि यह उसे खा जायगा तो फिर इस पदार्थ हाथ न लगेगा, और इसके भक्षण समय रोगीके मुखमें घृत लगादो नहीं तो उसके दांत और जीभको हानि पहुंचनेका भय होगा

३ मासपर्यंत चटाओ तो सब शूल वायुके विकार और फोड़े ये सब दूर हों। इसे गन्धकरसायन कहते हैं।

तथा २६–१ टकेभर गुड़, १ टकेभर आंवला, ३ टकेभर मण्डूर, इनका चूर्ण मधु और घृतके साथ चटाओ तो शूल, अन्नद्रव, जरत्पित्त, अम्लपित्त, परिणामशूल ये सब दूर हों। यह गुडादिमंडूर कहलाता है।

तथा २७–वायविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च और पिप्पली इन सबके बराबर मंजीर और तुल्य ही गुड़ तथा इन सबोंसे १० गुणा गोमूत्र लो तदनन्तर सब औषध और गुडादिका चूर्ण गोमूत्रमें पकाकर दृढ़ कर लो और पिंड बनाकर घृतके चिकने पात्रमें रखदो, जो इसमेंसे २ टंक नित्य भोजनके पूर्व भक्षण कराओ तो शूल, पंक्तिशूल, कामला, पांडु, शोथ, मन्दाग्नि, अर्श, संग्रहणी कृमि, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त ये सब रोग दूर होंगे यह तारामंडूर है।

तथा २८–हर्रकी छाल, सुहागा, सोंठ, सेंकी हींग, कालीमिर्च, चित्रक, शुद्ध गन्धक, सेंधानोन, और इन सबके समान शुद्ध कुचिला इन सबको पीसकर एक मासे प्रमाणकी गोलियां बना लो जो १ गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अफरा, बद्धकोष्ठ, कफरोग, अजीर्ण, मन्दाग्नि, ज्वर ये सब रोग दूर हों। यह स्थूलगजकेसरी गुटिका है।

तथा २९–कणगजकी जड़, सेंकी हींग, सोंठ, सेंका सुहागा, इन सबका २ टंक चूर्ण उष्ण जलसे सेवन कराओ तो महाशूल भी दूर हो ये सब नत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा ३०–सोंचर नोन, अमलवेत, जीरा और मिर्च ये सब एक दूसरेसे क्रमानुसार दूने दूने लेकर चूर्ण करो और बिजौरेके रसमें गोलियां बनाकर १ गोली उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो, इसे सौवर्चलादि गुटिका कहते हैं।

तथा ३१–सेंकी हींग, अमलवेत, कालीमिर्च, पिप्पली, अजवायन, सोंचरनोन, सांभरनोन, सेंधानोन, इन सबको पीसकर बिजौरेके रसमें गोलियां बनाओ; जो एक गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो समस्त शूल दूर होंगे, इसे हिंग्वादिगुटिका कहते हैं।

तथा ३२– हल्दी, सहँजना (मुँगना) की छाल, सेंधानोन, एरंडी-की जड़, सौंफ, भैंसागूगल, सरसों, दानामेथी, असगन्ध, और महुएके चूर्णको कांजीके पानीमें उसन (सान) के रोटी बनाओ और अग्निपर सेंकके रोगीके पेटपर बांधो या ताव दो तो पेट शूल दूर हो।

तथा ३३–कौड़ियोंकी राख, शुद्ध सिंगीमुहरा, सेंधानोन, कालीमिर्च, पिप्पली इन सबका चूर्ण कर पानके रसमें १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो १ गोली नित्य खिलाओ तो शूल रोग दूर हो, यह शूलगजकेशरी रस है।

तथा ३४–बडे शंखको तपा तपाकर ११ ग्यारह वार नींबूके रसमें बुझाओ, फिर इस बुझे हुए शंखके चूर्ण (राख) में १ टके भर इमलीका खार, ५ टंके सोंचरनोन, १ टके भर सेंधानोन १ टकेभर सांभरनोन १ टकेभर कचनोन, १ टकेभर बिडनोन, ६ मासे सोंठ, ६ मासे कालीमिर्च, ६ मासे पिप्पली, १ टकेभर सेंकी हींग, १ टकेभर शुद्धगंधक, १ टकेभर शुद्ध पारा। १ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा ये सब औषधें मिलाकर एकजीव करदो तदनंतर जलके साथ घोटकर छोटे बेर प्रमाणकी गोलियां बनाओ। जो एक गोली लवंगके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो। इसका नाम शंखवटी रस है।

तथा ३५-जो भोजन करनेपर शूल उत्पन्न हो तो २ टंक शीशे (कांच) की भस्म उष्ण जलके साथ पिलाओ तो शूल, दूर होगा।

तथा ३६–एक टंक शुद्धपारा, १ टंक शुद्ध गंधक, ४ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टकेभर कालीमिर्च, २ टकेभर काकडासिंगी, २ टकेभर पिप्पली २ टकेभर सेंकीहींग ८ टकेभर पांचोनन, ८ टकेभर इमलीका खार, ८ टकेभर नींबूके रसमें बुझे हुए शंखकी भस्म इन सबके चूर्णका नींबूके रसमें खरल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बना लो। जो १ गोली जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अजीर्ण, उदररोग और मंदाग्नि ये सब दूर होंगे, इसे शूरदावानल रस कहते हैं। ये सब यत्न सर्वसंग्रह ग्रंथमें लिखे हैं।

---

१ जहाँ हींग सकनेके लिये हो तो वहाँ हींगको गौके घृतमेंतलडालो या रुईमें लपेटके अग्निपर तपाके फुला डालो तो हींग सिक जावेगी।

पार्श्वशूलयत्न १–सिंगीमुहरा। हरताल, सेंकी हींग, नौसादर, राई, मैनशिल, लहसन, वच, एलिया (एलावा) इन सबको जलमें पीसकर उष्ण करो और रोगीके पार्श्वभागपर लेप करो तो पार्श्वशूल (पसलीदूखना) दूर होगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे वातरक्तशूलादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकविंशतितमस्तरंगः ॥ २१ ॥

उदावर्त आनाह

उदावर्त्तानाहगदयोस्तरंगे च यथाक्रमम्
पक्षनेत्रमिते चास्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस २२ बाइसवें तरंगमें उदावर्त और आनाह रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

उदावर्तरोगयत्न १–स्नेहपान कराओ तथा अधोवायु आनेवाली औषधि सेवन कराओ तो अधोवायुके प्रतिबंधसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर हो।

तथा २–विरेचनसे मलको दूर करनेवाली औषध या मल शुद्ध करनेवाले अन्न भक्षण कराओ, फलवर्ती या तेल मर्दन करो या वस्तिक्रिया करो तो मल रोकनेका उदावर्त रोग दूर हो।

तथा ३–१ टंक जवाखार, १ टंक वचको पानीमें पीसके पिलाओ तो मूत्ररोकनेका उदावर्त दूर होगा।

तथा ४–कटियाली और अर्जुनवृक्षकी जडका क्वाथ पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त्त दूर होगा।

तथा ५–मिश्री, गन्नेका रस, दूध दाखका रस पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त्त दूर होगा, इससे वायुजन्म रोग भी नष्ट होता है।

तथा ६–स्नेहपान या मर्दनद्वारा पसीना निकालनेसे जमुहाई रोकनेका उदावर्त्त दूर होगा।

---

१ स्नेहपान, फलवर्ती और वस्तिक्रिया आगे वर्णन करेंगे।

तथा ७–उच्च स्वरसे रुदन करके आँसू बहाओ या सुखपूर्वक शयन कराओ या मनोहर कथा सुनाओ तो आँसू रोकनेका उदावर्त दूर हो ।

तथा ८–कालीमिर्च, राईका नासदो या नकछिकनी सुँघाओ या सूर्याभिमुख होकर छिंकाओ (छींक लिवाओ) या तेल मर्दन करके पसीना निकालो तो छींक रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर होगा।

तथा ९–तेल मर्दन करो या पसीना निकालो तो डकारका वेग रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर होगा ।

तथा १०–वमन, या लंघन या विरेचन या बस्तिकर्म करो तेल मलो, नासिकाके सुरोंसे पानी पिलाओ तो वमन रोकनेका उदावर्त दूर होगा ।

तथा ११–१६ वर्षवाली सुन्दर रूपवती स्त्रीसे भोग कराओ या तेल मर्दन करो या मद्यादि मादक पदार्थ पिलाओ या मुर्गेका मांस, साँठी धानके चावल खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो कामदेव (वीर्य) के रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर होगा ।

तथा १२–चिकना, उष्ण, रुचिकारक, हल्का, हितकारी भोजन कराओ या सुगंधित पुष्प धारण कराओ तो क्षुधा रोकनेका उदावर्त दूर होगा ।

तथा १३–शीतक्रिया करो, फुहारोंके समीप बिठाओ; महीन वस्त्र पहिनाओ जलक्रीडा कराओ या शीतल जलमें भीमसेनीकपूर घोलकर धीरे धीरे पिलाओ तो तृषाका उदावर्त दूर हो ।

तथा १४–श्रम दूर होनेपर विश्राम देनेसे, या मांसरसके साथ चावल खिलानेसे श्वास रोकनेका उदावर्त दूर होगा ।

तथा १५–उष्ण दूधमें मिश्री डालकर सहता २ पिलाओ, मनोहर कथा सुनाओ या सुखसे सुलाओ तो निद्राको रोकनेका उदावर्त दूर होगा ।

सूचना–यहांतक हमने १५ पन्द्रह वेगोंके रोकनेसे जो उदावर्त उत्पन्न होते हैं उनकी क्रिया चिकित्सा लिखी है इसके आगे अब सब उदावर्तमात्र दूर होनेके यत्न प्रकाश करते हैं ।

उदावर्त यत्न १–हींग, मधु और सेंधानोनको पीसकर बत्ती बनाओ और घीसे चुपडकर सहती सहती गुदामें रक्खो तो उदावर्तमात्र दूर हो इसे हिंग्वादिफलवर्ती कहते हैं।

तथा २–मैनफल, पिप्पली, कूट, बच, सरसों, गुड़ इन सबको दूधमें महीन पीसकर बत्ती बनाके मलद्वारपर रक्खो तो उदावर्तमात्र दूर हो इसे मदनफलादिफलवर्ती कहते हैं।

तथा ३–१ टके भर शक्कर, ३ टके भर निसोत और ५ टके भर पिप्पली इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ सेवन कराओ तो दृढ मलद्राव होकर उतरे और उदावर्त दूर हो, इसे नाराचचूर्ण कहते हैं।

तथा ४–सोंठ, मिर्च, पिप्पली, पीपलामूल, निसोत, दात्यूणी, चित्रक इनका १ टंक चूर्ण गुडके साथ नित्य प्रातःकाल खिलाकर ऊपरसे जल पिलाओ तो उदावर्त, पांडु, प्लीहा, गुल्म और शोथ ये सब रोग दूर होंगे, इसे गुडाष्टक कहते हैं।

तथा ५–सूखी मूल, सांठीकी जड़, पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, दशमूल; किरवारेकी गिरी इन सबका घृत बनाकर खिलाओ तो उदावर्त दूर हो, इसे शुष्कमूलकादि घृत कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ६–शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, सेंकासुहागा, सोंठ, पीपल मिर्च इनसबका १ मासे चूर्ण मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो उदावर्त, अफरा, उदररोग औग गुल्म ये सब दूर होंगे, इसे अजयपाल रस कहते हैं, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ७–निसोत या थूहरपत्र या तिल्ली आदि उष्ण वस्तु युक्तिपूर्वक सेवन कराओ तो उदावर्त दूर हो।

तथा ८–निसोत, दात्यूणी, तज, थूहर, किरवारा, शंखाहुली, कणगचकी जड- कबीला इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ २ टके तेल और २ टके घीके साथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो उदावर्त, उदररोग, अफरा, तृषा और गुल्म, ये सब दूर होंगे।

आनाहरोग यत्न १–उदावर्त रोगके जो उपर्युक्त यत्न लिखे हैं उन्हीं यत्नोंसे आनाहरोगभी नष्ट होगा।

तथा २--इसके निम्नलिखित यत्न और भी जानो, २ भाग निसोत, ४ भाग पिप्पली, ५ भाग बहेडेकी छाल और इन सबके समान गुड इन सबको महीन पीसकर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली नित्य जलके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो अनाहरोग दूर हो।

तथा ३--सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सेंधानोन, सरसों, धमासा और मैनफलका चूर्ण गुडके साथ मिलाकर अँगूठे के समान मोटी बत्ती बनाओ और घीमें भिगोकर गुदामें रक्खो तो आनाह (अफरा), उदावर्त, उदररोग, मूत्राशयके रोग और गुल्मरोग ये सब दूर होंगे, ये ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे उदावर्तानाहरोगयत्न-
निरूपणं नाम द्वाविंशस्तरंगः ॥ २२ ॥

अथ गुल्मरोग

गुल्मामयस्यास्य नूनं चात्र पञ्चविधस्य वै ।
रामनेत्रमिते भंगे चिकित्सालिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस तेइसवें तरङ्गमें पांच प्रकारके गुल्मरोगकी चिकित्सा लिखते हैं।

वातगुल्मरोग यत्न १- हर्रका चूर्ण और एरंडीका तेल दूधमें डालकर पिलाओ तो वातगुल्म रोग दूर हो।

तथा २--सज्जी, कूट, जवाखार और केवड़ेके खारका चूर्ण एरंडीके तेलके साथ पिलाओ तो वातगुल्म दूर हो।

पित्तगुल्मरोग यत्न १--निसोतका चूर्ण या त्रिफलेका चूर्ण खिलाओ या कबीलाको मिश्री या मधुके साथ चटावो तो पित्त गुल्म दूर हो।

कफगुल्मरोग यत्न १--वातगुल्म ही के यत्न इसपरभी चलते हैं।

समस्तगुल्मरोग यत्न--१ सेंकी हींग, पीपलामूल, धनियां, जीरा, वच. चव्य, चित्रक, पाठा, कचूर, अमलवेत, सांभरनोन, सोंचरनोन, सेंधानोन, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हर्रकीछाल, पोहकरमूल, डांसरा, झाऊकी जड़ इन सबके चूर्ण को अदरख के रसकी ७ पुट और बिजौरे के रसकी ७ पुट देकर २ टंक चूर्ण नित्य खिलाओ तो गुल्म, आनाह,

अर्श, संग्रहणी, उदावर्त, उदररोग, ऊरुस्तंभ, उन्माद और शूल ये सब रोग दूर होंगे, इसे हिंग्वादि चूर्ण कहते हैं ।

तथा २-४ मासे सज्जी और चार मासे गुड़ नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो ।

तथा ३-पलाशखार; थूहरखार इमलीखार, अर्कखार, तिलखार, जवाखार, सज्जीखार और आधेझारेके खारका चूर्ण कर १ या २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे, इसका नाम क्षाराष्टक चूर्ण है ।

तथा ४-सांभरनोन, सेंधानोन, कचनोन, जवाखार, सुहागा, सोंचरनोन और सज्जीका चूर्ण ३ दिनतक थूहरके दूधमें भिगोकर धूपमें सुखालो, इसे आकके पत्तोंमे लपेटके पत्तोंको घड़ेमें भरदो और इस घड़ेको गजपुटमें फूँककर स्वांगशीतल होनेपर घड़ेमेंसे भस्म निकाल लो, तदनंतर सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, त्रिफला, अजवायन, जीरा और चित्रकका चूर्ण उक्त निर्मित भस्मके साथ खरल करके २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जल या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, शूल, अजीर्ण, शोथ, उदररोग, मन्दाग्नि, उदावर्त, प्लीहा ये सब रोग दूर होंगे, इसे वज्रक्षार चूर्ण कहते हैं ।

तथा ५-सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सेंधानोनका २ टंक चूर्ण ग्वारपाठेके गूदेमें लपेट दो और इसे घीके साथ नित्य खिलाओ तो गुल्म और प्लीहा दोनों दूर हों ।

तथा ६-मन भर ग्वारपाठेका गूदा, २०० टके गुड़, १०० टके भर मधुमें २ सेर धावडेके फूल, २ टके भर सोंठ, २ टके भर मिर्च, २ टके भर पिप्पली, २ टके भर तज, २ टके भर पत्रज, २ भर इलायची, २ टके भर चव्य, २ टके भर चित्रक, २ टके भर कचूर, २ टके भर नागकेशर, २ टके भर झाऊकी जड़, २ टके भर अजमोद, ४ टके भर जीरा, २ टके भर देवदारु, २ टके भर बबूलकी छाल, २ टके भर असगंध, २ टके भर रास्ना, २ टके भर विधायरा और २ टके भर इन्द्रयवका चूर्ण मिलाकर एकजीव करदो, तदनंतर एक मृत्तिकाके चिकने पात्रमें इन सब पदार्थोंको भरके पात्रका मुँह बंद करदो, इस पात्रको २१ दिन पर्यंत पृथ्वीमें गाड़कर पश्चात् बाहर निकालो, जो इसमेंसे

नित्य २ टके भर खिलाओ तो गुल्म, उदावर्त, उदररोग, विषूचिका, गृध्रसी, श्वास, कास, पांडु और वातव्याधिके समस्त रोग नष्ट होवेंगे, इसे ग्वारपाठेका आसव कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ७–१ टंक सोरा और १ टंक अदरख नित्य खिलावो तो गुल्म दूर हो।

तथा ८–१ टंक सीपकी भस्म, ४ मासे गुड़के साथ नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो, इसे सीपप्रयोग कहते हैं।

तथा ९--२ टंक लहसनको दूधमें खीर बनाकर खिलाओ तो गुल्म दूर हो।

तथा १०--एरंडकी जड़, चित्रक- सोंठ, वायविडंग, पिपलामूल. सेंकी हींग, सेंधानोन इन सबका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म, अफरा और शूल ये सब रोग दूर होंगे।

तथा ११–१६ मासे अजवायन, ५ टंक जीरा, ५ टंक धनियाँ, ५ टंक काली मिर्चे, ५ टंक कुडेकी छाल, ५ टंक अजमोद, ४ टंक काला जीरा, ५ टंक सेंकी हींग, ८ टंक जवाखार, ८ टंक सज्जी, ८ टंक पांचों नोन, ९ टंक निसोत, १० टंक दात्यूणी, १० टंक कचूर, १० टंक पोहकरमूल, १० टंक वायविडंग, अनारदाना, १० टंक हर्रकी छाल, १० टंक चित्रक, १० टंक अमलवेत और १० टंक सोंठ, इन सबके चूर्णको बिजौरेके रसकी १० पुट देके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो नित्य १ गोली घृत या दुग्धके साथ पिलाओ तो पित्तगुल्म, मधुके साथ खिलाओ तो वातगुल्म और दश-मूलके क्वाथेक साथ खिलाओ तो त्रिदोषगुल्म. हृदयरोग, संग्रहणी, शूल कृमि और अर्श ये सब रोग नष्ट होंगे, इसे कांकायनी वटिका कहते हैं।

तथा १२–पूर्वोक्त लवणभास्कर चूर्ण खिलाओ तो गुल्म दूर होगा।

तथा १३–तिल्लीका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर होगा।

तथा १४–भारङ्गी, गुड़, घृत, पिप्पली, तिल्ली, सोंठ और मिर्चका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो।

तथा १५–भारंगी, पिप्पली, पिपलामूल, देवदारु, कणगचकी जड और तिल्लीका क्वाथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो। इसे कणादि क्वाथ कहते हैं।

तथा १६-शुद्ध मैनशिल, शुद्ध हरताल, शुद्ध रूपामक्खी, शुद्ध आंवलासार, गन्धक, शुद्ध पारा, और तांबेश्वर, इन सबके चूर्णको पिप्पलीके क्वाथमें १ दिन खरल करके थूहरके दूधमें खरल करो, जो इसमेंसे १ टंक मधु या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर हों। इसे विद्याधररस कहते हैं।

तथा १७-पारा, गन्धक, हरताल, जमालगोटा, तांबेश्वर, सिंगीमुहरा (छहों शुद्ध करो), सेंका सुहागा, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली इन सबके चूर्णको भांगरेके रसकी ३ पुट देकर पुनः ३ दिन तक देकर पुनः ३ दिन पर्यंत खरल करो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली अदरखके रसके साथ खिलाओ तो गुल्म रोग दूर होगा, इसे गुल्मकुठार रस कहते हैं। यह सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १८-हाथकी शीर (फस्त) छुडवाओ तो गुल्मरोग दूर होगा।

तथा १९-सेंकी हींग, अनारदाने और बिड़नोनका चूर्ण बिजौरेके रसमें खरल करके २ टंक चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो गुल्म दूर हो।

तथा २०-५ टंक अजवायन, १ टंक नोन, और ५ टंक गुड़को कूटके छांछके साथ नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर होकर क्षुधा लगे और मल मूत्र भलीभांति सरण होगा, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा २१--सेंकी हींग, अजवायन, जवाखार, सेंधानोन, सोंचर-,नोन, हर्रकी छाल, इन सबका २ टंक चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे।

तथा २२-१ भाग सेंकी हींग, २ भाग सेंधानोन, ३ भाग पिप्पली, ४ भाग पीपलामूल, ५ भाग कंकोलमिर्च, ६ भाग अजवायन, ७ भाग हर्रकी छाल, ८ भाग अनारदाना, ९ भाग आमके जडकी छाल, १० भाग चित्रक, ११ भाग सोंठ, १२ भाग फिटकरी, इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, अरुचि, हृदयरोग, अनाह, अर्श, और वादीके समस्त विकार दूर होंगे। इसे हिङ्गुद्वादशक चूर्ण कहते हैं।

तथा २३--वच, हर्रकी छाल, सेंकी हींग, सेंधा नोन, अमलवेत, जवाखार और अजवायन इनका दो टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल ये दोनों दूर हों, इसे वचादि चूर्ण कहते हैं।

तथा २४--२५ बड़ी हर्र, १६ सेर पानीमें डालकर औटाओ, औटाते समय इसमें १६ टकेभर दात्यूणी और १६ टके भर चित्रकको कुछ कुछ कूटके डाल दो, मन्द, मन्द आंच से औटाते हुए चतुर्थांश (४) सेर जल रह जाने पर छान कर इस ४ सेर जलमें वे २५ हर्र गुठली निकालके पीस डालो इसमें १३ टके भर गुड़ डालकर पुनः औटाओ, औटाते औटाते आधा सेर जल रह जानेपर १ टके भर पिप्पली, १ टके भर सोंठ, ४ टके भर घी, ४ टके भर मधु १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर नागकेशर १ टके भर इलायची इन सबका चूर्ण भी इसी अर्द्धावशेष जलमें डालकर अवलेह बनाओ, जो इसमेंसे १ टके भर नित्य खिलाओ तो गुल्म, संग्रहणी, पांडु, शोथ विषमज्वर, कुष्ठ, अर्श, अरुचि, प्लीहा, हृदय, रोग, ये सब दूर होकर शुद्धरेचन (दस्त सफा) होगा। इसे दन्तोहरीतकी कहते हैं।

तथा २५--पूर्व निर्मित शंखद्राव सेवन कराओ तो गुल्म रोग दूर हो।

तथा २६--१०० बड़े पक्के जंभीरीका रस घृतके चिकने पात्रमें भरके इसीमें २ टकेभर सेंकी हींग, १ टकेभर सेंधानोन, १ टके भर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, ४ टकेभर सोंचरनोन, १ टके भर अजवायन और ९ टकेभर सरसोंकाचूर्ण डालदो अनन्तर उस पात्रका मुख बंद कर २१ दिन तक कचरे (कूडा) में गाड़ रक्खो, फिर बाइसवें दिन निकालकर १ टकेभर नित्य खिलाओ तो गुल्म, प्लीहा, विद्रधि, अष्ठीला, वायु; कफ, अतिसार, पार्श्व शूल; हृदय-रोग, नाभिशूल; बद्धकोष्ठ, विषोन्माद, उदररोग, वात रोग कफ रोग, ये सब दूर होंगे इसे जंभीरीद्राव कहते हैं। ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा २७--नदीका खार, कूडे वृक्षकाखार, आकका खार, सहँजनेका खार, कटियालीका खार, थूहरका खार, बेलका खार, पलाशका खार,

बकायनका खार आंधेझारे (औंगा) का खार, कदंबका खार, अडूसेका खार, सांभारनोन और सेंकी हींग इन सबका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, शूल, उदररोग ये सब दूर हों। इसे नादेयक्षार कहते हैं। यह योगशतकमें लिखा है।

तथा २८–सौंफ, कणगचकी जड़, तज, दारुहल्दी और पिप्पलीके क्वाथमें तिल, गुड़, सोंठ, कालीमिर्च, सेकी हींग और भारंगी डालकर पुनः औटाओ, अनंतर छानकर पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो तथा स्त्रीका मासिक रजोधर्म बन्द हुआ हो तो पुनः प्राप्त होगा।

तथा २९-जवाखार, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली इनका क्वाथ पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो।

तथा ३०--१ भाग शुद्ध पारा। २ भाग वंग भस्म, ४ भागशुद्ध गन्धक, ४ भाग ताम्बेश्वर इन सबको आकके दूधमें २ दिन खरल करके गोला बनाओ और शरावसम्पूटमें फूँकदो, स्वांगशीतल होजानेपर निकालकर २ रत्ती रस घृतके साथ खिलाओ तो गुल्म; प्लीहा, उदर ये सब दूर हों यह वंगेश्वररस कहलाता है।

गुल्मरोगोद्भवयोनिशूल यत्न--त्रिफला निसोत, दात्यूणी और दशमूल एक एक टकेभर कूटकर चूर्ण बनाओ। इसमेंसे ६ टंक चूर्णका क्वाथ एरंडीका तेल। घी और दूध इन सबको मिलाकर पिलाओ तो योनिका शूल दूर हो।

रोगीको वार्जित पदार्थ–सूखा शाक, दाल, मछलीका मांस और मीठे फल ये चारों पदार्थ गुल्मरोगीको कदापि भक्षण मत कराओ। यह सर्वसंग्रहमें लिखा है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे गुल्मरोगयत्ननिरूपणं नाम त्रयोविंशस्तरंगः॥ २३॥

यकृत्प्लीहाहृद्रुजां च मया ह्यत्र यथाक्रमम् ।
वेदनेत्रमिते भंगे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ २ ॥

अब हम इस चौबीसवें तरंगमें यकृत, प्लीहा और हृद्रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं ।

यकृत और प्लीहारोग यत्न १--जवाखारको ऊंटनीके दूधमें मिलाकर पिलाओ तो यकृत् और प्लीहा दूर हो ।

तथा २--सीसेकी भस्म दहीके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो ।

तथा ३--१ टंक पिप्पली नित्य दूधमें डालकर पिलाओ तो प्लीहा रोग निस्सन्देह दूर हो ।

तथा ४--आकके पत्तोंकी भस्म और नोन मही (मट्ठा) में डालकर पिलाओ तो प्लीहा दूर हो ।

तथा ५- सेंकी हींग, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, कूट, जवाखार और सेंधानोन इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य बिजौरे नींबूके रसके साथ खिलाओ तो प्लीहा अवश्य दूर हो ।

तथा ६--पलाशके खारमें भिगोई हुई २ टंक पिप्पली नित्य खिलाओ तो प्लीहा और गुल्म भी दूर हो ।

तथा ७--चार मासे शंखकी भस्म जँभीरीके रसके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो ।

तथा ८--बायें हाथकी शीर छुड़वाओ तो प्लीहा और दाहिने हाथकी शीर छुड़वाओ तो यकृत्रोग नष्ट होगा ।

तथा ९--पक्के आमके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो प्लीहा दूर हो ।

तथा १०--अजवायन, चित्रक, जवाखार, पिप्पली, पीपलामूल, दात्यूणी इनका २ टंक चूर्ण मठ्ठा या मदिराके साथ नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर होगा, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा ११-५ टंक सेंधानोन जलमें औटाकर नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर हो, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है ।

तथा १२--जवाखार, वायविडंग, पिप्पली, कणगचकी जड, अमलवेत और इन सबसे दूनी हर्रकी छाल इन सबका चूर्ण गुड़के साथ खिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो।

तथा १३--पिप्पली, सोंठ, दात्यूणी और इन सबसे दूनी हर्रकी छाल इन सबका चूर्ण गुड़के साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो।

तथा १४--वायविडंग, चित्रक, इन्द्रायणकी जड़ इन सबके बराबर सांठीकी जड और वाय विडंग इनसे दूनी देवदारु, तिगुनी सोंठ, और चौगुनी दात्यूणी लेकर चूर्ण बनाओ, इसमेंसे १ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो।

तथा १५--शुद्ध भिलावाँ; हर्रकी छाल और जीरेका चूर्ण कर इन सबके बराबर गुड़ मिलाओ, ५ टंक नित्य खिलानेसे प्लीहा दूर होगा।

तथा १६--लहसन, पीपलामूल, हर्रकी छाल इनका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो प्लीहा दूर हो, ये चक्रदत्तमें लिखे हैं।

तथा १७--रोहिसकी जड, हर्रकी छाल और सोंटका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो उदररोग, प्रमेह, कफ अर्श, कुष्ठ और प्लीहा ये सब दूर होंगे, यह योगतरंगिणीमें लिखा है।

तथा १८--सांभरनोन, राई, हल्दी टके टके भरका चूर्ण १०० टके भर छांछके साथ चिकने घडेमें भरके १५ दिनतक गलावो पश्चात् १२ दिनतक २ टंक नित्य पिलाओ तो प्लीहा रोग दूर हो, इसे तक्रसंधान-कहते हैं, यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा १९--१०० टकेभर रोहिस और ४ सेर बेरीकी जडको कूटके १६ सेर पानीमें औटाओ चौथाई (४ सेर) रह जानेपर छानकर १ सेर गौका घृत और ४ सेर बकरीके दूधमें मिला दो तदनंतर सोंठ, सांठीकी जड़, तुंबुरु, वायविडंग, जवाखार, पोहकरमूल, झाऊकी जड़ और वच, ये सब २॥ ढ़ाई टंक लेकर चूर्ण बनावो और यह चूर्ण उपर्युक्त द्रव पदार्थ (क्वाथ घी दूध) में डालकर मंद मंद आंचसे औटावो, दुग्ध आदि औषध जल कर घी मात्ररह जानेपर छानकर दो या तीन टंकनित्य खिलावो तो प्लीहा, उदररोग, पांडु, कुक्षिशूल,

१ रोहिस एक प्रकार सुगंधित वास है जिसका तैल वातरोगपर अत्युपयोगी होता है इसे "रोहितक" भी कहते हैं।

अरुचि, बद्धकोष्ठ, अतिसार, वमन और विषमज्वर ये सब रोग दूर होंगे, इसे महारोहित घृत कहते हैं, इसके भक्षक रोगीको पथ्यसे रखना चाहिये, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा २०-१०० टकेभर चित्रकके क्वाथमें २०० टकेभर कांजी का पानी,४००टकेभर दहीका मठा और१सेरभर घी इन सबको एकत्रकरके यह औषधि मिलावे-पीपल पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जवाखार, तालीसपत्र, सेंधानोन, दोनों जीरे, दोनों हल्दी ये प्रत्येक टके टके भर और १ टंक कालीमिर्च इन सबका चूर्ण भी इसमें डाल दो, तदनंतर इन सब पदार्थोंको मन्द २ आंच देकर घृतमात्र रहजानेपर छान लो, जो इस घृतका सेवन करावो तो गुल्म, प्लीहा, उदररोग, आनाह,पांडु, अरुचि, शोथ, विषमज्वर, मंदाग्नि और मूत्राशयके समस्त रोग दूर होके बलकी वृद्धि होगी, इसे चित्रकादि घृत कहते हैं, यह वृन्दमें लिखा है।

विशेषतः-यकृत् और प्लीहा, दोनों रोगोंपर एक समान ही चिकित्सा है इसलिये उपर्युक्त २० बीसों नियम यकृत् और प्लीहा दोनों रोगोंपर जानना चाहिये।

हृद्रोग यत्न १-बहेडेके बक्कलका २ टंक चूर्ण नित्य दूध घी या गुड़के पानीके साथ पिलाओ तो हृद्रोग, जीर्णज्वर और रक्तपित्त ये तीनों दूर होंगे।

तथा २-हर्रेकीछाल, वच, रास्ना. पिपली, सोंठ, कचूर, पोहकरमूल इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन करावो तो हृद्रोग दूर होगा।

तथा ३-हरिणके सींगका पुटपाक करके गौके घीके साथ खिलाओ तो शूल और हृद्रोग दोनों दूर होंगे।

तथा ४-खरेंटी, गंगेरनवृक्षकी छाल और काहूवृक्षकी छाल, तथा मुलहटी इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो हृद्रोग, वातरक्त, रक्तपित्त ये सब दूर होंगे, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ५-कूट और वायविडंगका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ खिलाओ तो हृदयके कृमि झडके हृद्रोग दूर होंगे।

तता ६–गंगेरनकी जड़, काहूवृक्षकी छाल और पोहकरमूल का २ टंक चूर्ण नित्य दूध या मधुके साथ पिलावो तो हृद्रोग, श्वास, कास, छर्दि और हिचकी ये सब रोग दूर होंगे।

तथा ७–हर्रकी छाल, वच, रास्ना, पिप्पली, सोंठ, कचूर, पोहकरमूल इन सबका चूर्ण नित्य प्रमाणानुसार विचारपूर्वक सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर होगा। इसे हरीतक्यादि चूर्ण कहते हैं।

तथा ८--दशमूलके क्वाथमें एरंडीका तेल और सांभरनोन डालकर पिलाओ तो हृद्रोग दूर होगा।

तथा ९--सेंकी हींग, वच, वायविडंग, सोंठ, पिप्पली, हर्रकी छाल, चित्रक, जवाखार, सोंचरनोन और पोहकरमूलका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर हो। यह योगरत्नावलीमें लिखा है।

तथा १०–२ टंक पोहकरमूलका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो हृद्रोग, श्वास, कास, राजरोग और हिक्का ये सब दूर होंगे।

तथा ११--सेंकी हींग, सोंठ, चित्रक, कूट, जवाखार, हर्रकी छाल, वच, वायविडंग, सोंचरनोन, शुद्ध पारा और पोहकरमूल इनसबका चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग, अजीर्ण और विषूचिका ये सब रोग दूर होंगे। यह रस प्रदीप ग्रंथमें लिखा है।

तथा १२---पोहकरमूल, सोंठ, कचूर, हर्रकी छाल, जवाखार इनके क्वाथमें घी डालकर पिलाओ तो हृद्रोग दूर होगा यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे यकृत्प्लीहाहृद्रोगयत्न-
निरूपणं नामचतुर्विंशतितमस्तरंगः ॥ २४ ॥

मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात

चिकित्सा मूत्रकृच्छ्रस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात्।
बाणनेत्रमितं चात्र तरंगे लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इसके आगे मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगोंकी चिकित्सा इस पचीसवें तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं।

मूत्रकृच्छ्ररोग यत्न १–बड़े गोखरू, किरवारेकी गिरी, डाभ (दर्भ) की जड़, काशकी जड़, जवासा, आंवला, पथरचटा (पाषाणभेद) और हर्रकी छाल इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ, मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र और पथरीका असाध्य रोग भी दूर होगा इसे गोक्षुरादिक्वाथ कहते हैं।

तथा २–इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पिप्पली, तेबरसी (खीरा ककडी) के बीज, केशर, सेंधालोन इन सबका २ टंक चूर्ण चावलके जलके साथ सेवन कराओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा ३–आंवलेका रस पुराने गुड़के पानीके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा ४–दूधमें पुराना गुड़ या मिश्री डालकर पेटभर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा।

तथा ५–आंवले या सांठीके रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो महारज मूत्रकृच्छ्र दूर होगा।

तथा ६–गोखरूके क्वाथमें जवाखार डालकर पिलाओ तो मलावरोधज मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा ७–५ टंक त्रिफला और ५ टंक बेरकी छालको रात्रिभर पानीमें भिगोकर प्रातःकाल दोनोंको उसी पानीमें ठंढ़ाईके समान पीस छान कर सेंधानोनके साथ पिलाओ तो मल रोकनेका मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा ८–५ मासे जवाखार और ५ मासे मिश्रीका चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो मल रोकनेका उदावर्त दूर होगा।

तथा ९–५ टंक दाख, १० टंक मिश्री और १० टंक दहीका मट्ठा तीनोंको मिलाकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा १०–गोखरुके पञ्चांगका क्वाथ, मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो, यह सब भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ११–गुर्ण, सोंठ, आंवला, असगन्ध और गोखरूके २ टंक चूर्ण का क्वाथ नित्य पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

१ एक प्रकारका घास होता है ३ या ४ फुटतक ऊँचा बढता है।

तथा १२--गौके दूधमें पके नीम्बूका रस डालकर मनमाना पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, दाह और स्त्रीकी योनिदोषसे उत्पन्न हुए रोग नष्ट होंगे।

तथा १३--हर्रकी छाल, किरवालेका गूदा, गोखरु, पाषाणभेद, धमासा और अडूसेका ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य पिलाओ तो दाहसंयुक्त मूत्रकृच्छ्र और बद्धकोष्ठ दूर हों, यह हरीतक्यादि क्वाथ है।

तथा १४--डाभ, काश, दूब, सरकना (मूँज) और सांठी इन पांचोकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो रक्तमूत्रकृच्छ्रकी वेदना दूर होगी।

तथा १५- पके कुम्हड़ेके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो, इसे कूष्मांडरस कहते हैं।

तथा १६--कटियालीका रस मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा १७--२ टके भर गोखरूका चूर्ण, अठगुणे (१६) टके भर पानीमें औटाके आधा रहजानेपर छान लो इसी पानीमें ७ टकेभर गूगल डालकर पुनः औटाओ, कुछ औटानेपर इसीमें सोंठ, कालीमिर्च नागरमोथा, हर्रकी छाल, बहेड़की छाल और आंवला यह एक एक टके भरका महीन चूर्ण डाल दो, ये सब पदार्थ परस्पर मिलाकर दृढ हो जानेपर उतारके घृतके चिकने पात्रमें रख दो जो इसमेंसे नित्य ५ मासे जलके साथ खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्रमेह, प्रदर, वातरक्त और शुक्रदोष ये सब रोग दूर होंगे इसे गोक्षुरादिगूगल कहते हैं।

तथा १८--१ टके भर जीरा और १ टके भर गुड़ नित्य खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा।

तथा १९--२ टंक जवाखार, गौकी छांछके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र और पथरी दोनों दूर हो, इसे जवाँखारतक्रयोग कहते हैं।

तथा२०--एक भाग शुद्ध पारा और ४ भाग शुद्ध गन्धककी कजली बड़ी कौडीमें भरके पानीमें पिसे हुए सुहागेसे उसका मुँह बन्द करदो और मिट्टीकी कुल्हियामें धरके गजपुटमें धर फूँक दो, स्वांगशीतल होजानेपर पीसके इसमेंसे ४ मासे भस्म २१ इक्कीस कालीमिर्चके

चूर्णमें मिलाकर घृतके साथ चटाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो, यह लघुलोकेश्वर रस कहलाता है ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा २१--निरूहबस्ति या उत्तरबस्तिकी क्रिया करो तो मूत्रकृच्छ्र निस्सन्देह दूर हो।

तथा २२- शतावरी, काशीकी जड़, डाभकी जड़, गोखरू, विदारीकन्द, सारलकी जड़ और किसोरिया (तालाबके कीचड़में गोलर होते हैं. हिन्दुस्थानमें कशेरू भी कहते हैं) इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा २३--तेवरसीके बीज, महुआ, दारुहल्दी, इनका क्वाथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा २४--केलेके रसमें गोमूत्र मिलाकर पिलाओ तो कफका मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा २५--इलायचीका महीन चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा २६–मूँगका १ टंक चुर्ण तण्डुलके जलके साथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा २७–गोखरू और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा २८–बड़ी कटियाली, पाठा, मुलहठी, महुआ और इन्द्रयवका क्वाथ पिलाओ तो सन्निपातका मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा २९–शिलाजीतको मधुके साथ चटाओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ३०--उत्तम स्त्रीसे मैथुन कराओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर होगा।

तथा ३१--खरैंटीकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो सब मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा ३२--१०० सौ टंके भर गोखरूका पंचांग कूटकर अठगुने (८०० टके भर) पानीमें औटाओ, चतुर्थांश रह जानेपर छानकर इसमें ५० टकेभर मिश्रीकी (गाढ़ी चाटने योग्य) चासनी बनाओ; तदनन्तर सोंठ, पीप्पली, इलायची, जवाखार, केशर, कडु-

वेके वृक्षकी छाल, तेबरसी ये सब दो टके भर और ८ टके भर वंशलोचन इन सबका महीन चूर्ण उक्त चासनीमें डालकर नित्य १ टके भर खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, पथरी, बद्धकोष्ठ, रक्तमूत्र और मधुप्रमेह ये सब रोग दूर होंगे, यह गोक्षुरावलेह कहलाता है, ये यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं।

मूत्राघातरोग यत्न १ नरसल (देवनल), डाभ, कास, सांठी और खैरेंटी इन सबकी जडोंका क्वाथ बनाकर शीतल होनेपर मधुके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो।

तथा २–जलमें पिसा हुआ कपूर अत्यन्त महीन वस्त्रपर लेप करके उस वस्त्रकी बत्ती बनाओ, जो यह बत्ती इन्द्रीके छिद्रमें धरो तो मूत्राघात दूर हो।

तथा ३–धनियां और गोखरूके क्वाथमें घृत पकाके खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और शुक्रदोष तीनों दोष दूर होंगे, यह धान्यगोक्षुरघृत है।

तथा ४–पांच टंक तेबरसीके बीज और ५ टंक धनियां रात्रिको जलमें भिगोकर प्रातःकाल ठंढाईके समान उसी जलमें पीस डालो और छानकर १ टंक सेंधानोन डालके पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो।

तथा ५–दो टंक पाटल (गुलाब) वृक्षकी खार और १ टंक सोंचरनोन मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो।

तथा ६–खट्टे अनारका रस और इलायची मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो।

तथा ७–शिलाजीत सेवन कराओ तो मूत्राघात दूर हो।

तथा ८–१० टंक केवांचके बीज, १० टंक पिप्पली, २ टंक तालमखाना, १० टंक मिश्री और १० टंक दाख इन सबका चूर्ण मधु और घृतके साथ उष्ण दूधमें डालकर पिलाओ तो शुक्रावरोधज मूत्राघात दूर।

---

१ सर्वसंग्रहमें लिखा है कि इसके सेवन करनेसे वांझ स्त्रीको भी गर्भप्राप्ति होकर प्रसन्नता होगी।

तथा ९--आधासेर चित्रक, ५ टंक गौरीसर, १० टंक खरैंटीकी जड़, आधा पाव दाख, ५ टंक इद्रायणकी जड़, ५ टंक पिप्पली, १० टंक त्रिफला, १० टंक मुलैठी और १०० बड़े आंवले इन सबका चूर्ण १६ सेर पानीके साथ औटाकर ४ सेर (चतुर्थांश) रह जानेपर छानलो, इस क्वाथमें २ सेर घी डालकर पकाओ । रस । जलकर घृतमात्र रहजानेपर छानकर आधा पाव वंशलोचनका चूर्ण डाल दो अब यह चित्रकादि घृत बना जो नित्य आध पाव सेवन कराओ तो मूत्राघात, सब प्रकारके वीर्य दोष, प्रदर और मूत्रकृच्छ्र इन सबका नाश होगा और स्त्रीको गर्भ होगा, यह चरकमें लिखा हैं ।

तथा १० त्रिफलेके क्वाथमें दूध और गुड़ डालकर पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो ।

तथा ५१--पाटल, अरलु, नीमकी छाल, हल्दी, गोखरू, पलाशके वक्कल इन सबका क्वाथ गुड़के साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो ।

तथा १२--अत्यंत रूपवती स्त्रीसे मैथुन करो तो मूत्राघात दूर हो, ये सब यत्न अत्रियसंहितामें लिखे हैं ।

मूत्रावरोध यत्न १३--बिनौला (सरकी कांकडा या कपासका बीज) की बीजी, त्रिफला और सेंधानोनका ९ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मूत्र स्वच्छ उतरेगा ।

तथा १४--तिल्ली और बिनौला इन दोनोंका क्षार मधु और दहीके साथ खिलाओ तो मूत्र रुकना बंद होगा ।

तथा १५--कमलकी जड़ और तिल्लीको गौके मूत्रमें पीसकर पिलाओ तो मूत्रका रुकाव बंद होकर मूत्र उतरे ।

अत्यन्त उष्णमूत्र यत्न १६--चमेलीकी जड़को बकरीके दूधसे पीसकर पिलाओ तो मूत्रकी विशेष उष्णता दूर हो ।

सूचना १--उधर जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और पथरीके लिखे हैं, वे सब मूत्राघातको भी उपयोगी हो सकते हैं यह भावप्रकाशमें लिखा हैं ।

तथा २--जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगपर बताये गये हैं वे सब मूत्रावरोध (पेशाब बंद होजाने) पर चलसकते हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे मूत्रकृच्छ्रमूत्राघातरोगयत्ननिरूपणं
नाम पंचविंशतितमस्तरंगः ॥ २५ ॥

अथ अश्मरी प्रमेह--पिडिका

अश्मरीमेहपिडिकारोगाणां हि यथाक्रमम् ।
रसनेत्रमिते भंगे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ २ ॥

अब हम इस २६ छब्बीसवें तरंगमें अश्मरी अर्थात् पथरी, प्रमेह और पिडिका रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

अश्मरी (पथरी) रोग यत्न १--सोंठ, अरणी, पाषाणभेद, कूट, गोखरू, एरंडकी छाल और किरमालेका गूदा इनके चूर्णका पांच टंक क्वाथ, सेंकी हींग, जवाखार और सेंधानोन डालकर पिलाओ तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अर्श, उपदंश (गर्मी) और कोठेकी वायु ये सब रोग दूर होंगे, यह शुण्ठ्यादि क्वाथ दीपन और पाचन है।

तथा २--इलायची, पिप्पली, मुलहठी, पाषाणभेद, पित्तपापडा, अडूसा, गोखरू और तिरंडीकी जडका क्वाथ शिलाजीतके साथ पिलाओ तो पथरी और मूत्रकृच्छ्र दूर हों यह एलादि क्वाथ है।

तथा ३--पेठेके रसमें हींग और जवाखार डालकर पिलाओ तो पथरी और पेडूकी पीड़ा दूर हो।

तथा ४--बरण्याकी छाल, पाषाणभेद, सोंठ और गोखरूका क्वाथ जवाखारके साथ पिलाओ तो पथरीरोग नष्ट होवे।

तथा ५--२ टंक गोखरूका चूर्ण मधु और भेड़ीके दूधके साथ पिलाओ तो पथरीरोग नष्ट हो।

तथा ६--बरण्याकी जडके क्वाथमें गुड़ डालकर पिलाओ तो पथरी और मूत्राशयकी पीड़ा भी नष्ट हो।

तथा ७--अदरखका रस, जवाखार, हर्रकी छाल और मलयागिरि चन्दनका क्वाथ पिलाओ तो पथरी दूर हो।

तथा ८--१०० टके भर बरण्याके बक्कल चौगुने (चार सेर) पानीमें औटाओ चतुर्थांश (१ सेर) रह जानेपर छान लो, इसमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाकर सोंठ, पेठेके बीज, बहेडेकी बीजी, बथुएके बीज, सहँजनेके बीज, इलायची, हर्रकी छाल और वायविडंग (ये सब

१ बरण्या किंवा वरुणवृक्ष मारवाड प्रान्तमें बहुत उत्पन्न होते हैं उस देशमें यह प्रसिद्ध है।

टके टके भर) का चूर्ण डाल दो, तदनन्तर एकजीव करके नित्य २ टके भर खिलाओ तो पथरी दूर हो। इसे वरुणगुड़ कहते हैं।

तथा ९--मंजीठ, तेबरसीके बीज, जीरा, सौंफ, आंवला, बेरकी बीजी, शुद्ध आंवलासार, गन्धक और शुद्ध मैनसिल इन सबका १ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ खिलाओ तो पथरी निश्चित दूर हो।

तथा १०–२ टके भर कुलथीके क्वाथमें २ मासे सेंधानोन और दो मासे शरपंखे (मारवाडमें धोला धमाला कहते हैं) का रस डालकर पिलाओ तो पथरी दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा–११ ५ टंक हल्दीका चूर्ण और १० टके भर गुड इनमेंसे नित्य १ मासे भर लेके कांजीके साथ पिलाओ तो पतरी दूर हो।

तथा १२ -सोंचरनोन, मधु, दूध और तिल्लीका खार मदिरामें मिलाकर ३ दिन पर्यन्त पिलाओ तो पथरी दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा १३- २ टंक तिल्लीका खार और ९ टंक मधु दूधमें मिलाकर १५ दिन पर्यंत पिलाओ तो पथरी झरकर निश्चय गिर जावेगी।

तथा१४–२टंक गोलककडी जड़ रात्रिको पानीमें भिगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें (ठण्ढाई समान) पीसके ७ दिन पर्यन्त पिलाओ तो पथरी इन्द्रियद्वारसे झरकर गिर जावेगी। यह राजमार्तण्डमें लिखा है।

तथा१५–कुलथी, सेंधानोन, वायविडंग, सार(सार समझके डालना) मिश्री, सांठेका रस, पेठेका रस, जवाखार, तिल्लीका खार, पेठेके बीज और गोखरूके क्वाथमें गौका घी पकाकर नित्य २ टकेभर पिलाओ तो पथरी मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, और शुक्रबन्ध ये सब रोग दूर होंगे, इसे कुलत्थादिघृत कहते हैं।

पथरीरोगपर पथ्य–मूँग, जौ, गेहूँ, चावल, दूध, घी, सेंधानोन और ठण्डसे (टींडसी, जिसका शाक मारवाड़में बहुत होता है) ये वस्तुएं पथरीरोगपर पथ्य हैं।

वातजमधुप्रमेह[1] यत्न १–बड़की जड़, अरलूकी जड़, चिरौंजी (अचार) वृक्ष, आंवले जड, किरमाले की जड (इन सब

[1] मधुप्रमेह सबके पीछे है परन्तु यह अतिक्लिष्ट असाध्य है, इसलिये हमने पहले ही लिखा है।

जड़ोंका वक्कल) मुलहठी, लोध, नीमकी छाल, पटोल, वरणेकी छाल, दात्यूणी, मेंढासिंगी, चित्रक, कणगचकी जड़, इन्द्रयव, त्रिफला, शुद्ध भिलाँवा, सोंठ, कालीमिर्च, तज, पत्रज, और इलायची इन सबका महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो मधुप्रमेह दूर हो। इसे न्यग्रोधादि चूर्ण कहते हैं।

तथा २-उपर्युक्त औषधोंका क्वाथ पिलानेसे तथा इन्हीं औषधोंका तैल बनाकर शरीरमें मर्दन करनेसे किंवा इन्हींका घृत बनाकर खिलानेसे वातजमधुप्रमेह दूर होगा।

तथा ३-शुद्ध सोनामक्खी, पाषाणभेद, शुद्ध शिलाजीत, चन्दन, कचूर पिप्पली और वंशलोचन इनका २ टंक चूर्ण १० टंक मधुके साथदूधमें मिलाकर नित्य पिलाओ तो वातज मधु प्रमेह और मूत्रावरोध दूर हों। ये यत्न आत्रेय संहितामें लिखे हैं।

तथा ४-शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, मिश्री और महुवेकी छालके महीन चूर्णको सालईकी जड़के रसकी ३ पुट देके १ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ, जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो वातजक्षारप्रमेह दूर हो। यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

पित्तजक्षारप्रमेह यत्न १-धव, कहुआ, अरलू, (इनकेवक्कल). कशेरू या केलेके वृक्षकी भीतरकी श्वेत छाल, कमलकी जड़ और दाख इनका क्वाथ पिलाओ तो पित्तजक्षारप्रमेह दूर हो।

तथा २-सुन्दर स्त्रीसे मैथुन कराओ पित्तजक्षारप्रमेह दूर हो।

तथा पित्तज रक्तप्रमेह यत्न ३-बासी (रात्रिका भरा हुआ) पानीमें दाख भिगो मसल डालो और मुलहठी तथा श्वेत चन्दन डालकर पिलाओ तो पित्तजरक्तप्रमेह दूर हो।

तथा ४-खश, लोह, कहुवाकी छाल और रक्तचन्दनके ५ टंक चूर्णका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो पित्तजप्रमेह दूर हो। यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ५-कमलनाल, कहुवेकी जड़ इन्द्रयव, धवके जड़की छाल, इमलीकी छाल, आंवले, निंबोलीके क्काथमें (हिममें) मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तजप्रमेह दूर हो।

कफजप्रमेह यत्न

कफजउदकप्रमेह यत्न १–धवके बक्कल, कहुवेका बक्कल, रक्तचन्दन और सालरके बक्कलका क्वाथ पिलाओ तो कफजप्रमेह दूर हो।

तथा इक्षुप्रमेह यत्न २–कूठ, पित्तपापड़ा, कुटकी, मिश्री इनका क्वाथ पिलाओ तो कफ इक्षुप्रमेह दूर हो।

तथा अरुण्याकी जड़, पाटल, धमासा, अरलू, और पलाशका क्वाथ पिलाओ तो इक्षुप्रमेह दूर हो।

तथा शुक्रप्रमेह यत्न ४–दूर्वा, मूर्वा, भारंगकी जड़, काशकी जड़, दात्यूणी, मजीठ, सालरका बक्कल इनका क्वाथ पिलाओ तो कफजशुक्रप्रमेह तथा पित्तरुधिरप्रमेह दोनों दूर हों। ये सब आत्रेयमें लिखा है।

तथा लालाप्रमेह यत्न ६–कपासकी बीजीको भैंसकी छाँछमें ७ दिन खरल करके नित्य २ मासे खिलाओ तो कफजलाला प्रमेह दूर हो। यह रसरत्नाकरमें लिखा है।

तथा प्रमेहमात्र यत्न ६–नागरमोथा, हर्रकी छाल, लोध, कायफल इनके ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो कफज दशों प्रमेह मात्र दूर हों यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ७–वायविडंग, रार, कायफल, लोध, विजयसार (औषधविशेष) कदम्बके बक्कल और कहुवेके वृक्षकी छालका क्वाथ नित्य पिलाओ तो कफजप्रमेहमात्र दूर हो।

आत्रेयमतनिर्मित प्रमेह यत्न

तथा तक्रप्रमेह यत्न १–लोध, कहुवेके बक्कल, खैर, नीमके पत्ते, आँवले, रक्तचन्दन इनके क्वाथमें गुड़ डालके पिलाओ तो तक्रप्रमेह और पिडिकाप्रमेह दोनों दूर हों।

तथा घृतप्रमेह यत्न २–त्रिफला, किरवारेका गूदा, बेरकी जड़, मूरबा, मुँगनेके पत्ते, नीमके पत्ते, दाख और केलेके वृक्षके भीतरकी श्वेत छाल इन सबका क्वाथ पिलाओ तो घृतप्रमेह दूर हो।

तथा ३–गुर्च, चित्रक, पाठा, कूड़े (इन्द्रवृक्ष) की छाल, सेकी हींग और कूट इनका २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो घृतप्रमेह दूर हो, यह सर्वसंग्रहमें लिखा है।

तथा अतिमूत्रप्रमेह यत्न ४--मूर्वा, पारा, वंग (वंगेश्वर) और अभ्रकको १ दिनभर मधुके साथ खरल करके नित्य १ मासे मधुके साथ सेवन कराओ तो (अति) बहुमूत्रप्रमेह दूर हो, इसे तालकेश्वर रस कहते हैं, इसके ऊपर गूलरके फलोंका २ टंक चूर्ण अवश्य लेना चाहिये।

तथा ५--२ मासे पंचवक्त्ररस नित्य सेवन कराओ तो बहुमूत्रप्रमेह दूर हो, यह रसरत्नाकरमें लिखा है।

सर्वप्रमेहमात्र यत्न १--नागरमोथा, त्रिफला, हल्दी, देवदारु, मूर्वा, इंद्रयव और लोध इनका क्वाथ पिलाओ तो प्रमेह और मूत्रप्रमेह दूर हो।

तथा २--काकलहरी (बूटी विशेष), हर्रकी छाल, हल्दी, काहूके बक्कल इन सबके चूर्णके समान मिश्री मिलाकर ५ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो समस्त प्रमेह दूर हो, यह आत्रेयमें लिखा है।

तथा ३--कचूर, बच, नागरमोथा, चिरायता, देवदारु, हल्दी, अतीस, दारुहल्दी, पीपलामूल, चित्रक, धनियां, त्रिफला, चव्य, गजपिप्पली, जवाखार, सज्जी, सेंधानोन, सोंचरनोन (ये सब एक एक टंक) ५ टंक सार, २ टंक मिश्री, ४ टंक शुद्ध शिलाजीत और ४ टके भर शुद्ध गूगल इन सबको अलग २ पीस कपडछान कर एकत्र करो, १ टके भर शुद्ध गन्धक, १ टके भर शुद्ध पारेकी कजली और १ टके भर अभ्रकमें उपर्युक्त चूर्ण मिश्रित करके इसमेंसे ४ मासे नित्य मधुके साथ चटाओ तो सर्वप्रमेहमात्र, अर्श, क्षय, वीर्यदोष, नेत्ररोग, दंतरोग, पांडुरोग, कंडुरोग, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्लीहा, खाँसी और कुष्ठ ये सब दूर हों, इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं।

तथा ४--त्रिफला, जीरा, धनियां, कौंचके बीज (ये चार चार टके भर), छोटी इलायची, दालचीनी, लौंग, नागकेशर और बावची (तुकमारिया) के बीज (ये सब दो दो टके भर) इन सबके चूर्ण मिश्री और घी डालकर १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली नित्य प्रभातमें खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो, इसे प्रमेहहारी चूर्ण कहते हैं।

तथा ५--१ टके भर लोध, मधु या खरेंटी क्वाथके साथ सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर हो।

तथा ६–गुर्चका सत, त्रिफला और लोहसार इन तीनोंको मिलाकर मधु या मिश्रीके साथ १ टंक सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर हो।

तथा ७–मिश्री, सिंघाडे और श्वेत चीनीका २ टंक महीन चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो बहुत प्राचीन प्रमेह भी दूर हो।

तथा ८–१ टकेभर गूगलके पक्व फल सेंधानोंनके साथ सेवन कराओ तो असाध्य प्रमेहभी दूर हो।

तथा ९–१ रत्ती वंगेश्वर रस मधुके साथ खिलाकर उपरसे मधुके साथ गूलरके फलोंका चूर्ण चटावो तो असाध्य प्रमेह भी दूर होगा।

वंगेश्वररसनिर्माणविधि–पावभर उत्तम रांगा (कथील) को आधपाव पारेके साथ गलाकर थालीमें डालके (चौडा पत्तर करके) छोटे छोटे टुकडे करलो, पांच पांच सेर गोबरकी २ गोबरी (उपली, कंडे, छेना) बनाकर सुखालो, १ सेर टेसू (पलाश) के फूल और १ सेर मेंहँदीके पत्तोंको सुखाकर चूर्ण करलो, अब गोबरी नीचे रखकर उसपर फूल, पत्तोंका आधा (सेरभर) चूर्ण बिछा दो, उसपर वे रांगेके टुकडे जमाकर ऊपरसे आधा (शेष) चूर्ण डाल दो और ऊपरसे दूसरी गोबरी दृढतापूर्वक जमाकर निर्वात (जहाँ वायु न लगे) स्थानमें आगमें जला दो, तदनंतर स्वांगशीतल होजानेपर रसको निकालकर उपयोगमें लाओ, इसके गुण कहांतक लिखें, जुदे जुदे अनुपानसे अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

तथा १०–१ गोली प्रातः और १ संध्याको सुपारी पाककी दो तो प्रमेहमात्र दूर हों।

सुपारीपाक निर्माण विधि–आठ टके (सुपारी चिकनी) को कपड़छान कर चूर्णको ८ टकेभर गो घीके साथ मिलाओ, फिर तीनसेर गोदुग्धमें डालकर मंद मंद आंचसे खोवा बनालो और नागकेशर, नागरमोथा, चन्दन, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, आंवला, कोयल (अपराजिता वेलिविशेष) के बीज, जायफल, वंग, धनियां, चिरौंजीदाने, तज, पत्रज, इलायची, दोनों जीरें, सिंघाडे और वंशलोचन

---

१ वे रांगेके टुकडे अग्निके तापसे जलकर भस्म हो जानेपर फुलकर श्वेत हो जाते हैं परन्तु उनका बोझ कुछ न्यूनाधिक नहीं होता है, पश्चात् उन्हें किंचित् मसलदो तो वे चूर्ण हो जाते हैं, इसे वंगेश्वर रस कहते हैं।

(ये सब पांच टंक) का महीन कपड़छान चूर्ण और उपर्युक्त खोवा दोनों ५० टके भर मिश्रीकी चासनीमें डालकर १ टंकप्रमाणकी गोलियां बनालो, जो १ गोली प्रातः और एक संध्याको खिलावो तो प्रमेहमात्र, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, अर्श, मन्दाग्नि, शुक्रदोष और प्रदर ये सब रोग दूर होकर शरीर पुष्टताको प्राप्त होगा।

तथा ११--गोखरूपाकविधि--आधासेर गोखरूका चूर्ण सेरभर गोघृतके साथ पांचसेर गोदुग्धमें डालकर मंदाग्निसे खोवा बनावो तदनंतर बेलकी गिरी, कालीमिर्च, जायफल, समुद्रशोष, इलायची, भीमसेनी कपूर; दालचिनी, पत्रज, हल्दी, कूट, अफीम, तालमखाना ये सब दो दो टंक, ५ टंक लोहसार और इन सबके बोझसे आधा भांगका महीन कपड़ छान चूर्ण और उपर्युक्त खोवा ४ सेर मिश्रीकी चासनीमें डालकर ५ पांच टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली नित्य सेवन करावो तो प्रमेहमात्र दूर होकर स्तम्भनशक्ति प्राप्त हो, मैथुनसेमयमें स्त्री बहुत प्रसन्न हो।

तथा १२--चित्रक, शुद्ध गंधक, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, शुद्धपारा, शुद्ध सिंगीमुहरा, त्रिफला और नागरमोथा, (पारे गंधकको कजली करलो) इन सबके महीन चूर्णको भृङ्गराजके रसकी १ पुट देकर खरल कर डालो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर एक गोली नित्य प्रात-काल खिलाओ तो २० बीसों प्रकारके प्रमेह दूर होंगे, इसे पञ्चाननी गुटिका कहते हैं। यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा १३--१ मासा भीमसेनी कपूर, १ मासा कस्तूरी, ४ मासे अफीम और ४ मासे जायपत्री इन सबको नागवेल (पान) के रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बना लो, जो एक गोली दूध मिश्रीके साथ नित्य सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर होकर वीर्य स्तम्भित होगा।

तथा १४--आंवले और हल्दीका ५ टंक चूर्ण रात्रिको जलमें भिगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें पीस लो और भंगके समान कपडेसे छानकर मधुके साथ पिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो।

---

१ भीमसेनी कपूरको शास्त्रमें " शुद्ध कपूर " नाम दिया है, जोंकि यन्त्रसे उड़ाकर शुद्ध किया जाता है, इसका नाम " बरास कपूर " भी है।

तथा १५-मेघनादरसे विधि-शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक (की कजली) शुद्ध सोनामक्खी, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, बेरकी बीजी, शिलाजीत, हल्दी और कबीट (कैथ) के चूर्णको भांगरके रसकी २१ पुट देकर १ रत्ती नित्य खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो।

तथा १६-हरिशंकररसविधि-शुद्ध पारा और अभ्रक दोनोंको आंवलेके रसमें ७ सात दिन पर्यन्त खरल करके १ रत्ती भर नित्य खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो।

तथा १७-प्रमेह कुठाररस विधि-इलायची, भीमसेनी कपूर, भारंगी, जायफल, गोखरू, सलाई वृक्षकी छाल, शुद्ध पारा, अभ्रक, मोचरस, और वंगसार, इन सबको महीन पीसकर इस रसमेंसे २ रत्ती खिलाओ तो प्रमेह दूर हो।

तथा १८--५ टंक बकायनके बीज चावलोंके पानीमें पीसकर गोघृत के साथ नित्य खिलाओ तो विशेष प्राचीन प्रमेह भी दूर हो, ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं।

पिडिका रोग यत्न १-धव (धावडा), कहुवे, कदम्ब, बेर, सरसों, नीम इनके बक्कलोंका क्वाथ बनाकर उस जलसे नित्य पिडिकाओंको धोओ तो पिडिका दूर हो।

तथा २--काहूके बक्कल, कदम्बके बक्कल और तेंदूकी अन्तर छाल के क्वाथसे पिड़िकाओंको नित्य धोओ तो इंद्रियके ऊपरकी पीबयुक्त पिडिका तथा शरीरमात्रकी पिडिका दूर हों।

वात पिडिका यत्न ३--भांगरेका रस, तुलसीके पत्ते और पटोलके पत्तोंको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो वातपिडिका नष्ट हो।

पित्तपिडिका यत्न ४-मुलहटी, कूट, रक्तचन्दन, खश, रोहिस, गेरू और कमलगट्टोंको दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तपिडिका और उनकी दाह दूर हो।

पिडिकाकी दाहका यत्न ५-मक्खनको १०० या १००० बार जलसे धोकर पिडिकाओंपर लेप करो तो इंद्रियकी पिडिकाओंकी दाह तथा उनके पीबका बहाव भी बन्द होगा, (मक्खन कांसेकी थालीमें मथ मथके धोना चाहिये)।

पीब बहावका यत्न ६- कदम्ब, काहू, अनार और आंवलेके पत्तोंको उष्ण जलमें पीसकर लेप करो तो पिडिकाओं से पीबका बहाव बन्द हो।

तथा ७-पिडिकाओंको कांजी या छाछ या शीतल जलसे नित्य धोया करो तो पीबका बहाव बन्द होकर पिडिका नष्ट हो जावे, ये सब यत्न आत्रेयमें प्रदर्शित हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे अश्मरीप्रमेहपिडिका यत्ननिरूपणं नाम षड्विंशतितमस्तरंगः ॥ २६ ॥

अथ मेदोस्थूल-कार्श्य-उदररोग

मेदःकार्श्योदररुजां तरंगेऽस्मिन् यथाक्रमम्।
सप्तद्विप्रमिते नूनं चिकित्सा कथ्यते मया॥ १ ॥

अब हम इस सत्ताईसवें तरंगमें मेदोरोग, कार्श्य और उदररोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

मेदोरोग यत्न १--गुर्च और त्रिफलाके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा २--बासी ठंढे पानीमें मधु मिलाकर पिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ३-उष्ण अन्न भक्षण कराओ या चावलोंका मांड पिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ४-सोंठ, मिर्च, पीपली, चित्रक, त्रिफला, नागरमोथा और वायविडंगके क्वाथमें गूगल डालकर पिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ५-मधुके साथ पिप्पली चटाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ६--धतूरेके दत्तोंका रस शरीरमें मर्दन करो तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ७-शुद्ध पारा, ताम्बेश्वर, लोहसार, और बीजाबोलके चूर्णको कूटकर भंगरेके रसमें ३ दिनतक खरल करके २ रत्ती मधुके साथ नित्य खिलाओ तो मेदोरोग दूर हो इसे वडवानल रस कहते हैं यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ८–चव्य, जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, सेंकी हींग और सोंचरनोनका २ टंक चूर्ण यवके सत्तूके साथ खिलाओ तो मेदोरोग दूर हो। यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ९--वायविडंग, सोंठ, जवाखार और लोहसारका १ टंक चूर्ण आँवलेके चूर्ण और मधुके साथ खिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा १०–बेरीके बक्कल (वृक्षकी छाल) में काँजीका पानी, अरण्डका रस और शिलाजीत मिलाकर पिलाओ तो मेदोरोग दूर हो।

तथा ११–गुर्च, इलायची, कूडेकी छाल और आँवले ये सब एक से एक बढकर (१–२–३ आदि) और इन सबके प्रमाण गूगल लेकर सबके महीन चूर्णमेंसे १। सवा या १॥ डेढ़ टंक मधुके साथ सेवन कराओ तो मदोरोग और भगंदर दोनों दूर हों। इसे अमृतगूगल कहते हैं। यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा १२–त्रिफला, अतीस, मूर्वा, निसोत, चित्रक, अडूसा निम्बकी छाल, किरवारेकी गिरी; पीपलामूल, दोनों हलदी, गुर्च, इंद्रायण, पीपली, कूट, सरसों और सोंठ इनके क्वाथमें कुछ तुलसीका रस और तेल डाल आंच दो; रस जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर शरीरमें मर्दन या वस्तिक्रिया करो तो मर्दन और कफके अन्य रोग भी दूर हों; इसे त्रिफलादि तेल कहते हैं, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

मेदरोगीको सेवनीय पदार्थ–पुराने चावल, मूंग, कुलथी, कोदों, यव, कडुवारस, मधु, एरंडीके पत्तोंका शाक, हींग, चावलोंका मांड़, लेपन, वस्तिकर्म, चिंता, परिश्रम, मल्लक्रीडा, मार्गगमन और जागरण इन विषयोंके सेवनमात्रसे मेदरोग नष्ट होता है।

शरीरदुर्गंधि यत्न१–शंखका चूर्ण अडूसाके पत्तेके रसमें सेके मिलाकर लेप करो तो शरीरमें पसीना आनेसे जो दुर्गंधि आती है वह दूर हो।

तथा २–बेलपत्रके रसमें शंखका चूर्ण मिलाकर शरीरमें लेप करो तो दुर्गंधि दूर हो।

तथा ३–नागकेशर, सिरसके बक्कल, लोध, खश और हर्रकी छालको जलमें पीसकर उबटन करो तो शरीरकी दुर्गंधि दूर हो।

तथा ४–बबूलके पत्ते जलमें पीसकर स्नानके पूर्व शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंधि दूर हो, यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ५–तांबूलके पत्ते, हर्रकी छाल, और कूटको जलमें पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंधि दूर हो।

तथा ६–कुल्थी, कूट, छड, छडीला, चन्दन, तज, वच और यवका सेंका हुआ आटा इन सबको जलमें महीन पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंधि दूर हो, यह शार्ङ्गधरमें लिखा।

कक्षादुर्गंधि निवृति यत्न--१ कांखों (हाथ और धडके संगमके नीचेके भाग) में नींबूके पत्तोंका रस लगाओ तो कांखोंमें पसीना आनेपर दुर्गंधि दूर हो।

तथा २--हल्दीको अधजली कर पानीमें पीसकर कांखोंमें लगाओ तो काखोंकी दुर्गंधि दूर हो।

तथा ३–कूट और दोनों हल्दीको गोमूत्र या गोबरमें पीसकर लेप करे तो दुर्गंधि और कुष्ठ भी दूर हो, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

स्त्रीका सुवर्णकारक सुन्दर (रंग होनेका) लेप १–हर्रकी छाल, लोध, नीमके पत्ते अनारके बक्कल और आमके बक्कलको जलमें पीस्कर स्त्रीके शिरपर लेप करो तो देहका कुवर्ण दूर होकर सुन्दर वर्ण (रंग) प्राप्त हो और कांति बढ़े, यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है।

कार्श्यरोग यत्न--१–जितनी बलकारी, वीर्य वर्धक, वीर्यविबंधक और पुष्टिकारी औषध (यथा घी, दूध, आदि वस्तु हैं) वे सब कार्श्य (क्षीणता दुबलापन) रोगनाश करनेवाली हैं।

तथा २–जो जो पुष्टिकारी प्रयत्न हैं वे वे सब कार्श्य रोगके यत्नही हैं, यह भावप्रकाशमें लिखा है।

वातोदररोग यत्न १–दशमूलके क्वाथमें एरंडीका तेल डाल करके पिलाओ तो वातोदर दूर हो।

तथा २–त्रिफलाका क्वाथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो वातोदर दूर हो।

तथा ३–कूट, दात्यूणी, जवाखार, पाठा, वच, सोंठ, सैंधव, सोंचर, और साम्भरनोंनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वातोदर दूर हो, इसे कुष्ठादिचूर्ण कहते हैं ।

तथा ४–१०० टके भर एकपात्या लहसुनको पीसकर १६ सेर जलमें औटाओ, औटाते समय उसीमें, सोठ, कालीमिर्च पिप्पली, सांठीकी जड, सोंचरनोंन, दात्यूणी, विड़नोन, सहँजनेकी जड़, अजवायन, गजपिप्पली (ये सब टके टकेभर), ३ टकेभर त्रिफला और ६ टके भर निसोत इन सबका महीन चूर्ण तथा २ सेर तिल्लीका तेल भी डालकर मन्द आंचसे औटाओ, औटाते २ सब औषधें जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर कांचके पात्रमें भर दो, इस तेलमेंसे नित्य प्रातःकाल ५ टंक (तथा रोगीकी शक्त्यनुसार) पिलाओ तो आठों प्रकारके उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, अन्तर्वृद्धि, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि प्लीहा, अष्ठीला, हडफूटन और वायुके समस्त विकार १ मास सेवनसे दूर होंगे ।

तथा ५—उष्ण दुग्धमें अरंडीका तेल और गोमूत्र डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो ।

तथा ६–छांछमें सोंचरनोन और पिप्पली डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो ।

पित्तोदर यत्न १–विरेचन (जुलाब) दो तो पित्तोदर दूर हो ।

तथा २–मिश्री और कालीमिर्च जलके साथ सेवन कराअे तो पित्तोदर दूर हो ।

कफोदर यत्न १–पिप्पली, पीपलामूल, चित्रक धेले धेले भर, २ टंक निसोत और ५ टंक एरंडीका तेल, ऊँटनीके दूधमें उष्ण करके नित्य १ मास पर्यंत पिलाओ तो कफोदर दूर हो ।

तथा २–अजवायन, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली और झाऊ वृक्षकी जड़का ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तोकफोदर दूर हो ।

तथा ३–साँठी, दारुहल्दी, कुटकी, पटोल, हर्रकी छाल, देवदारु, नीमकी छाल, सोंठ, और गुर्चके ५ टंक चूर्णका क्वाथ पिलाओ तो कफोदर, पार्श्वशूल, श्वास और पांडु ये सब रोग दूर हों, इसे पुनर्नवादि क्वाथ कहते हैं, यह भावप्रकाशमें लिखा है ।

सन्निपातोदर यत्न १--सोंठ और त्रिफलाके क्वाथमें दही, घी या तेल डालकर पकाओ, पानी जलकर तेल या घी (जो डाला हो) रहजानेपर छानकर खिलाओ तो सन्निपातोदर दूर हो।

तथा २--सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, जवाखार, सेंधानोन, इनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सन्निपातोदर दूर हो।

समस्तउदररोगमात्र यत्न १--अजवायन, झाऊकी छाल, धनियां, त्रिफला, पिप्पली, कालाजीरा, अजमोद, पीपलामूल, वायविडंग ये नवों एक एक भाग, तीन भाग दात्यूणी, २ भाग निसोत, २ भाग इंद्रयण इनके चूर्णको २६ भाग थूहरके दूधकी १ पुट देके २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सब उदररोग तथा वातरोग दूर हों यह नारायणादि चूर्ण कहलाता है, इसीको बेरीके बक्कलके क्वाथके साथ सेवन करानेसे गुल्म, मद्यके साथ देनेसे आध्मान, मठ्ठेके साथ देनेसे बद्धकोष्ठ, अनारके क्वाथके साथ देनेसे अर्श और उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्ण, भगंदर पांडु, कास, श्वास, क्षय, संग्रहणी, कुष्ठ, मन्दाग्नि और विषपात्र दूर हो "जैसे विष्णुभगवान् दैत्योंका नाश कर देते हैं, वैसेही यह नारायण चूर्ण उक्त रोगोंको समूल नष्ट कर देता है।"

हमने यह नारायन चूर्ण प्रचीनामृतसागरानुसार लिखा है परन्तु भावप्रकाशमें इसके निर्माणार्थ निम्नश्लोक दिये है जिन्हें विद्वान् स्वयं जान लेंगे "यवानी हपुषा धान्यं त्रिफला, चोपकुञ्चिका। कारवी पिप्पली मूलमजगन्धा शठी वचा ॥ १ ॥ शताह्वा जीरकाव्योषं स्वर्णक्षीरी च चित्रकम्। द्वौ क्षारौ पौष्करं मूलं कुष्ठे लवणपञ्चकम् ॥ २ ॥ विडंग च समांशानि दन्त्या भागत्रयं भवेत्। त्रिवृद्विशाले द्विगुणे शीतला स्याच्चातुर्गुणा ॥ ३ ॥ एष नारायणो नाम्ना चूर्णो रोगगणापहः। एनं प्राप्य निवर्तन्ते रोगा विष्णुं यथाऽसुराः ॥ ४ ॥ तक्रेणोदरिभिः पेयं गुल्मिभिर्बदराम्बुना। आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥ ५ ॥ दधिमंडेन विड्बन्धे दाडिमांबुभिरर्शसि। परिकर्तेषु वृक्षाम्लैरुष्णांबुभिरजीर्णके ॥ ६ ॥ भगंदरे पांडुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे। हृद्रोगे ग्रहणीरोगे कुष्ठे मन्दानले ज्वरे ॥ ७॥ दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे। यथार्हं स्निग्धकोष्णेन पेयमेतद्विरेचनम्" ॥ ८ ॥ इत्युक्तं भावप्रकाशे।

तथा २–थूहरका दूध, दात्यूणी, त्रिफला, वायविडंग, कटिआली, चित्रक, कुकर भंगरा ये सब दो सेर लेकर ८ आठ सेर पानीमें डालकर औटाओ और औटाते समय १ सेर भर गोघृत डालकर पानी जलके घृतमात्र रहजानेपर छानके २ टंक नित्य खिलाओ तो विरेचन होकर सब उदररोग दूर हों, यह नारायणघृत भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ३--१ टके भर अजवायन और २ टके भर सेंके सुहागेका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सब उदररोग दूर हों।

तथा ४--५ टके भर पिप्पली थूहरके दूधमें भिगो भिगोकर सात दिनमें छायामें सुखाओ तदनन्तर महीन पीसकर जलके साथ ४ मासे भर १ दिनके अन्तरसे खिलाके ऊपरसे छांछ या चावल खिलाओ तो उदररोग दूर हों।

तथा ५--१००० एक सहस्र पिप्पलीका चूर्ण, हर्रका चूर्ण थूहरके दूधमें ७ पुट देकर छायामें सुखाओ और १ टंक गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो समस्त उदररोग दूर हों।

तथा ६--दात्यूणी, पिप्पली, सोंठ, एक एक भाग, ६ भाग चोक और ॥। पौन भाग बिडनोनको लेवे, १ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो प्लीहा, गुल्म, मन्दाग्नि और समस्त उदररोग दूर हों।

तथा ७--आकके पत्ते और सैंधव घड़ेमें भरकर मुँह बन्द कर और भट्टीमें जलाकर स्वांगशीतल हो जानेपर निकालकर पीस डाल जो इसमेंसे ५ टंक नित्य छांछ या ग्वारपाठेके रसके साथ सेवन कराओ तो उदररोग दूर हो।

तथा ८--सोंठ, या हर्र या पिप्पलीको गुड़के साथ नित्य २ टंक खिलाओ तो उदररोग, शोथ, पीनस, खांसी, अरुचि, जीर्णज्वर, अर्श संग्रहणी, कफरोग और वातरोग ये सब दूर हों, ये सब यत्न वैद्यरहस्य में लिखे हैं।

तथा ९--सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, सुहागा, पांचों नोन, सज्जी, और इन सबके समान शुद्ध जमालगोटाके चूर्णको दात्यूणीके रसकी ३ पुट और बिजौरेके रसकी ३ पुट देके खरल करो और छायामें

सुखाकर आधी रत्ती नित्य खिलाओ तो समस्त उदररोग, प्लीहा, गुल्म, अफरा, शूल, और अर्श ये सब रोग दूर हों, इसीको आंखोंमें आंज दो तो सब विष उतर जावेगा इसे 'उदयभास्कर' रस कहते हैं। यह रस रत्नदीपमें लिखा है।

तथा १०--आकड़ेका दूध, कुड़ेकी छाल, (ये दो दो टकेभर) चित्रक पिप्पली, शंखाहुली, नीमकी जड़, निसोत, हर्रकी छाल, कबीला, ये सब एक एक टके भर और ६ टके भर थूहरका दूध इन सबका चूर्ण १ सेर भर घी ५ सेर पानीमें डालकर औटाओ रसादिक जलकर घृतमात्र रहजानेपर छानकर जितने विरेचन करना हो उतनीही बूँदें खिलावो तो प्रतिबूँदपर १ एक विरेचन होकर उदररोग, शोथ, भगंदर और गुल्म ये सब दूर हों, इसे विंदुघृत कहते हैं, यह वैद्यविनोदमें लिखा है।

जलोदर यत्न–१ नीलाथोथा, गंधक, पिप्पली और हर्रकी छालका चूर्ण थूहरके दूधमें ५ दिन और किरमालेके गूदेके रसमें ९ दिन खरल करके उष्ण जलके साथ नित्य १ मासे सेवन करावो तो जलोदर दूर हो, इसके ऊपर चावल और इमलीके रस (शर्बत) का पथ्य देना चाहिये, इसे 'उदरारिरस' कहते हैं, यह योगतरंगिणीमें लिखा है।

इति श्री अमृतसागरे चिकित्साखंडे मेदोरोगकार्श्यरोगयत्ननिरूपणं नामसप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

अथ शोथ; अण्डवृद्धि--वर्ध्म

शोथस्य वृद्धिरोगस्य वर्ध्मरोगस्य च क्रमात्।
वसुपक्षे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

अब हम इस २८ अट्ठाईसवें तरंगमें शोथ, अण्डवृद्धि वर्ध्म रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

वातशोथ यत्न१–सोंठ, सांठीकी जड, एरण्डीकी छाल, पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, इनका क्वाथ पिलाओ तो बादीकी सूजन दूर हो।

पित्तशोथ यत्न १–पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल और दारुहल्दीके क्वाथमें गुड डालकर पिलाओ तो पित्तशोथ तृषा, ज्वर दूर होंगे।

पित्तशोथ यत्न १--काली मकोइके रसमें सांठीकी जड़ पीस कर लगाओ तो कफकी, सूजन दूर हो।

सन्निपातशोथ यत्न १- पिप्पली या हर्रको थूहरके दूधमें ३ दिन भिगोकर सुखालो और महीन पीसकर २ टंक नित्य १० दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो सन्निपातशोथ दूर हो।

भल्लातकशोथ यत्न १–तिल्ली और काली मिट्टीको भैंसका दूध या भैंसके मक्खनमें पीसकर लेप करो तो भिलावेंसे उपजी हुई सूजन दूर हो।

तथा २–मुलहठी, काली तिल्ली, भैंसका दूध और भैंसका मक्खन इन सबको पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो।

तथा ३–सालईके पत्ते पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो।

विषशोथ यत्न १--जिस जिस विषकी निवृत्तिके लिये जो जो उपाय आगे विषप्रकरणमें लिखेंगे विषशोथके वेही उपाय जानो।

सामान्यशोथ यत्न १ हर्रकी छाल, हल्दी, भारंगी, गुरच, चित्रक, दारुहल्दी, सांठीकी जड़, और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो पेट, पैर, और मुखकी सूजन दूर हो, इसे पथ्यादि क्वाथ कहते हैं।

तथा २--विषखपरेकी जड़, देवदारु, और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो।

तथा ३--दात्यूणी, निसोत, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली और चित्रकका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो।

तथा ४-सोनामक्खी, विषखपरा, नीमकी छाल और गोमूत्रका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो।

तथा ५–सांठीकी जड़, दारुहल्दी, सहँजनेकी जड़, सोंठ और सरसोंको कांजीके पानीमें पीसके उष्ण करके लेप करो तो शोथ दूर हो।

तथा ६--अदरख या पिप्पली या सोंठ या हर्रकी छाल इनमेंसे किसी एकको गुड़के साथ पीसर २ टंकसे बढ़ाते बढ़ाते एक टके

भर तक बढ़ाकर १ मास पर्यन्त खिलाओ तो शोथ पीनस, कण्ठरोग, श्वास, कास, अरुचि, जीर्णज्वर, संग्रहणी और कफवातके सब विकार नष्ट होंगे।

तथा ७–पिप्पली और सोंठके चूर्णमें समान गुड मिलाकर खिलाओ तो शोथ, अजीर्ण और शूल ये सब दूर हों।

तथा ८–३ टके भर गुड, ३ टके भर सोंठ, ३ टके भर पिप्पली, १ टके भर मण्डूर, १ टके भर तिल्ली इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य खिलाओ तो शोथ मात्र दूर हो।

तथा ९–सूखी मूली, सांठीकी जड, दारुहल्दी, रास्ना और सोंठमें तेल पकाकर यह मर्दन करो तो शूलयुक्त शोथ मात्र नष्ट होवे, ये यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १०–सांठीकी जड, दारुहल्दी; गुरुच, पाठा, सोंठ और गोखरू इनका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सब शरीर विस्तृत शोथ, उदररोग और व्रणमात्र दूर हो। यह पुनर्नवादि चूर्ण है।

तथा ११–सांठीकी जड़, नीमकी छाल, पटोल, सोंठ, कुटकी, गुरच, दारुहल्दी, हर्रकी छाल इनका क्वाथ पिलावो तो सर्वांग–शोथ, कास, उदररोग और पांडुरोग ये सब दूर हों, यह पुनर्नवादि क्वाथ है।

अण्डकोशशोथ यत्न १–त्रिफलाके क्वाथमें गोमूत्र डालकर पिलावो तो अण्डकोश (पोतों) की सूजन दूर होगी।

शोथदाह यत्न १–बहेडेकी बीजी जलमें पीसकर लेप करो तो सूजनकी जलन दूर हो।

वातांडवृद्धि यत्न १–दूधमें अरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो १ मासमें वायुकी अण्डवृद्धि दूर हो।

पित्तांडवृद्धि यत्न १–गूगल, एरंडीका तेल और गोमूत्र तीनोंको मिलाकर पिलावो तो पित्तकी अण्डवृद्धि नष्ट हो।

तथा २–रक्तचन्दन, महुआ, कमलगट्टा, कमलनाल और खशके दुग्धमें खरल करके पोतोंपर लेप करो तो पित्तकी अण्डवृद्धि, दाह और पीड़ा ये नष्ट हों।

कफांडवृद्धि यत्न १--सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, और त्रिफलेके क्वाथमें जवाखार और सेंधानोन डालकर पिलावो तो कफकी अण्डवृद्धि शांत हो।

रक्तांडवृद्धि यत्न १--जलौका (जोंक) लगाकर अण्डकोशका रुधिर निकलवा दो तो रक्तकी अण्डवृद्धि नष्ट हो।

तथा २—विरेचन करावो तो रक्तकी अण्डवृद्धि नष्ट हो।

तथा ३--मिश्री और मधु जलके साथ पिलावो तो रक्तकी अण्डवृद्धि नष्ट हो।

तथा ४—शीतल द्रव्यों (ठंडे पदार्थों) के लेपसे रक्तज तथा पित्तज दोनों अण्डवृद्धि दूर हों।

मेदांडवृद्धि यत्न १-अण्डकोशकी मेद (चर्बी) निकलवाडालो तो अण्डवृद्धि दूर हो।

तथा २-तुलसीके पत्ते पीसके औटाकर सहाते-सहाते लेप करो तो मेदकी अण्डवृद्धि दूर हो।

मूत्रांडवृद्धि यत्न १-अंडकोशका जल निकलवा दो तो मूत्रांडवृद्धि दूर हो।

तथा २-मूत्राशय (पोतेकी सीवनके पार्श्वों) के नीचे महीन वस्त्रको बांधो तो मूत्रकी अण्डवृद्धि दूर हो।

समस्तांडवृद्धि यत्न १-कड़वी तूम्बड़ी, या रूखी बस्तुका सहता हुआ लेप करो, या उन्हींके उष्ण जलसे सेंको तो अंडवृद्धि मात्र दूर हो।

तथा २-१५ टंक खैराका गोंद, १० टंक वच, १५ टंकसोंठ, ८ पैसेभर गौका दुग्ध और ८ टकेभर सालममिश्री इन सबको गो-दुग्धमें खरल करके४टंक नित्य पोतोंपर लेप करो तो२१दिनके यत्नसे अण्डवृद्धि शांत हो ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ३-रास्ना, मुलहठी, गुर्च, अरंडकी जड़, खरैंटी, किरमालेकी गिरी, गोखरू, पटोल और अडूसेके क्वाथमें अरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो अण्डवृद्धि दूर हो।

तथा ४-हर्रकी छाल, चिरायता, धनियां ये सब पैसेभर पौन पैसेभर लौंग, १ टकेभर सोनामक्खी इन सबके तुल्य मिश्री और मिश्रीके

तुल्य मधु इनसबको ९ दिन खरल करके इसको नित्य २ टंक खिलावो तो अण्डवृद्धि निश्चय दूर हो, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तलगतअण्डकोश यत्न १-भेड़ीका घी काँसेकी थालीमें मसलो, फिर इसीमें रालका चूर्ण डालकर मथो, फिर शुद्ध सिंगीमुहराका चूर्ण डालकर पुनः मसलो, तीनोंके एकजीव होजानेपर पोतेपर इस स्निग्ध पदार्थका मर्दन करो तो उतरा हुआ पोता (गोसा गोई) यथास्थित होकर अच्छा हो जावेगा, यह भावप्रकाशमें लिखा है।

वर्ध्मरोग यत्न १ -हर्रकी छाल, पिप्पली और सेंधानोनको महीन पीसकर अरंडीके तेलमें भूँज (पका) के २ टंक नित्य खिलाओ तो वर्ध्म (बद) रोग बैठ जावे।

तथा २-जीरा झाऊवृक्षकी छाल, गेहूँ, कूट और बेरके पत्ते ये सब काँजीके पानीमें महीन पीसकर लेप करो तो बद रोग दूर हो यह भावप्रकाशमें लिखा है।

तथा ३-तत्काल (तुरंत मरे हुए कौवेको अंतरमल उष्ण जल करके बदपर बांधो या लेप करो तो बद तत्काल दूर हो यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

तथा ४-कुन्दरूको भेडीके दूधमें पीसकर लेप करो तो बदरोग दूर हो।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखंडे शोथाण्डवृद्धिवर्ध्मरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम अष्टाविंशतितमस्तरंगः ॥ २८ ॥

अथ गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रंथी, अर्बुदरोग

गलगंडादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमम् ।
नन्दनेत्रमिते भंगे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब हम २९ उन्तीसवेंतरंगमेंगलगंड, गंडमाला अपची, ग्रंथी और अर्बुद रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

गलगंड रोग यत्न १-सरसों, अलसी, यव, सनके बीज, मुगनेके बीज और अमलीके बीज इन सबको छाँछमें महीन पीसकर लेप

करो तो गलगंड गंडमाला (कंठमाला) और ग्रंथि (गांठ) ये तीनों रोग दूर हों।

तथा २--सरसों और जलकुम्भी (बूटीविशेष) दोनोंकाभस्म तेलमें घिसके लेप करो तो गलगंडरोग दूर हों।

तथा ३-शंखाहुलीको जलमें पीस और भंगके समान छानकर १५ दिन पर्यंत प्रभात समय पिलाओ और ऊपरसे गौका घी पिलाओ तो गलगंड दूर हों।

तथा ४-कुटकीको पीसकर रात्रिभर घियातुरईमें भर रक्खो तदनंतर प्रातःकाल उसी घियातुरईको पीस छानकर रसको ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो गंडमाला दूर हो।

तथा ५- गुर्च, नीमकी छाल, छड, कपास (रुई) वृक्षकी छाल, दोनों पिप्पली, खरेंटी, देवदारु इनके क्वाथको तेलमें पकाओ और यह तैल १५ दिन पर्यन्त नित्य पिलाओ तो गलगंड नष्ट हो, यह अमृतादितैल है।

तथा ६-यव, मूंग, पटोल, कटु वस्तु, रूखा अन्न, वमन और रुधिर निकालना ये सब गलगंडलरोगके नाश करनेके उपाय हैं।

तथा ७-५टंक कचनारकी छाल, १ टंकभर सोंठ, १ टंक पिप्पली, १ टंक मिर्च, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, १ टंक आँवले, ५ टंक बरण्याकी छाल, १ टंक तज १ टंक पत्रज, १ टंक इलायची और इन सबके समान शुद्ध गूगल इन सबका चूर्ण ५ मासे पर्यंत नित्य प्रभात जलके साथ सेवन कराओ तो गलगंड, अर्बुद, ग्रंथि, व्रण, गुल्म कुष्ठ भगंदर ये सब रोग जुदे जुदे अनुपानोंसे दूर होंगे, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ८-लाल एरंडीकी जड़, पलाशकी जड दोनोंको चावलोंके पानीमें पीसकर लेप करो तो गलगंड दूर हो। यह वैद्यरहस्यमें लिखा है।

गंडमाला (कंठमाला) रोग यत्न १--जलकुम्भी, सेंधानोन और पिप्पली तीनोंको ठंढाईके समान पीस छानकर सोंठके चूर्णके साथ पिलाओ तो कंठमालारोग दूर हो।

तथा २ -बरण्याकी जडका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो कंठमाला दूर हो।

तथा ३--वायविडंगकी जडके क्वाथमें भंगरेका रस और मीठा तेल डालकर मंद मंद आँचसे पकाओ। रस जलकर तेलमात्र रह जानेपर सिन्दूर डालकर छान लो अब यह " चक्रमर्दनतैल " बन गया। जो इसका लेप करो तो कंठमाला नष्ट हो।

तथा ४ चिरमी (गुमची) का पचांग जलमें पीसकर तेलके साथ पकाओ, रस जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो कंठमाला दूर हो, इसे गुंजादितैल कहते हैं। ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ५--किरमालेकी जड चावलोंके जलमें पीसकर लेप करो तो कंठमाला दूर हो।

तथा ६--संभालूकी जड पानीमें पीसकर लेप करो तो कंठ माला दूर हो।

तथा ७--सरसों और शूकरकी विष्ठाको खपरी (ठीकरी) में जलाकर कडुवे तेलमें खरल करो और रोगीके रोगस्थानपर लेप करो तो कंठमाला (गंडमाला) दूर हो, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

अपचीरोग यत्न १--सरसों, नीमके पत्ते और भिलाँवेको बकरीके मूत्रमें पीसकर लेप करो तो अपची रोग नष्ट हो।

तथा २ रक्तचन्दन, हर्रकी छाल, लाख, बच, और कुटकीको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ और इस तेलका मर्दन करो तो अपचीरोग नष्ट हो। इसे चंदनादितैल कहते हैं।

तथा ३--सोंठ, काली मिर्च, वायविडंग, महुआ, सेंधानोन और देवदारुको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ। पानी जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानकर इस तेलका नास दो (सुँघाओ) तो अपचीरोग दूर हो। इसे व्योषादितैल कहते हैं।

ग्रंथिरोग यत्न १--सज्जी, मूलीका खार, शंखके चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करो तो ग्रंथि और अर्बुद दोनों नष्ट होंगे।

तथा २--व्रणरोगकी चिकित्सामें " जात्यादि घृत " वर्णन करेंगे वह घृत भी ग्रंथि और व्रण दोनोंको लाभकारी है।

अर्बुदरोग यत्न १--हल्दी, लोध, पतंग, धमासा और मैनसिलको मधुमें पीसकर लेप करो तो मेदार्बुद रोग नष्ट हो।

तथा २--मूलीका खार, हल्दी और शंखके चूर्णको महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुदरोग दूर हो।

तथा ३--कूट, नोन और बडका दूध इनको महीन पीसकर लेप करो और ऊपरसे बडका पत्ता बांधो तो सात दिनमें ही अर्बुद-रोग दूर हो।

तथा ४--सहँजनेकीजड और बीज, सरसों, तुलसीपत्र, यव, करनेकी छाल और इन्द्रयवको छांछमें महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुद रोग दूर हो। ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे गलगंडगंडमालापचीग्रन्थ्यर्बुद-रोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकोनत्रिंशस्तरंगः ॥ २९ ॥

अथ श्लीपद--विद्रधि

श्लीपदस्य विद्रधेश्च ह्यामयस्य यथाक्रमम्
वियद्रामे तरंगेऽस्मिन् चिकित्सा कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस ३० तीसवें तरंगमें श्लीपद और विद्रधि रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं।

श्लीपद यत्न १--लंघन, लेपन, स्वेदन, विरेचन, रुधिरनिष्कासन और उष्णवस्तु सेवन ये प्रत्येक कर्म श्लीपदरोगपर लाभकारी हैं।

तथा २--सरसों, मुँगनेकी जड़, सोंठ और देवदारुको गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो श्लीपदरोग शांति पावेगा।

तथा ३--सांठीकी जड़, सोंठ और सरसोंको कांजीमें पीसकर लेप करो तो श्लीपदरोग दूर हो।

तथा ४--धतूरा एरंड, संभालू, मुँगना इनकी जड और सरसोंको जलमें महीन पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हो।

तथा ५--सहदेई (महाबला) को ताडफलके रसमें पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हों।

तथा ६–शाखोटक (सहोर) वृक्षके बक्कलका काथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो।

तथा ७–हल्दी और गुड़को महीन पीसकर गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपद, दाह, कुष्ठ तीनों दूर हों।

तथा ८–सांठीकी जड़, त्रिफला और पीप्पली इन्होंका २ टंक महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बहुत दिनोंका भी श्लीपद नष्ट होवे।

तथा ९–बड़ी हर्रका चूर्ण, आंरडका तेल और गोमूत्र मिलाकर १५ दिन पर्यन्त पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १०–विधायरा, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, वायविडंगको जलमें पीसकर तेलमें मन्द आंचसे पकाओ और तेलमात्र रह जानेपर छान-कर मर्दन करो तो श्लीपद दूर हो।

तथा ११–धतूरेके बीज क्रमशः एकसे बीसतक बढ़ाते जाओ इन्हें खाकर ऊपरसे शीतल जल पिलाओ तो श्लीपद दूर हो ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १२–कैसोंधि (एक जातका दरख्त) की २ टंक जड़ गोघृतके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग नष्ट हो।

तथा १३–पिप्पली, त्रिफला और देवदारुका २ टंक चूर्ण नित्य कांजीके जलके साथ सेवन कराओ तो श्लीपद, अजीर्ण, वातरोग और प्लीहा ये सब दूर होकर क्षुधावृद्धि होगी, इसे पिप्पल्यादि चूर्ण कहते हैं, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा १४–मंजीठ, महुवा, रास्ना, जल (पीलुवृक्षविशेष, मारवाडमें बहुत होता है) और सांठीकी जडको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो पित्तका श्लीपद दूर हो।

तथा १५–अंगूठोंके ऊपरकी नसोंका रक्त निकाल दो तो पित्तका श्लीपद दूर हो।

विद्रधिरोग यत्न १–एरंडीकी जडके ख्वाथमें तेल या घृत पकाकर उससे सहता २ सेंक करो तो वादीकी विद्रधि दूर हो।

तथा २- विरेचन कराओ तो पित्तकी विद्रधि दूर हो।

तथा ३-असगंध, खश, महूआ, और रक्तचन्दनको दूधमें महीनपीस कर घी मिलाओ और उष्ण करके लेप करो तो पित्तकी विद्रधि दूर हो।

तथा ४--ईंट, बालू, लोहेका मल और गोबरको महीन पीसकर गोमूत्रमें पकाओ और सहता सहता हुआ सेक करो तो कफकी विद्रधि दूर हो।

तथा ५-जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो तो सब विद्रधि दूर हों।

तथा ६-जबतक विद्रधि पक न जावे तबतक उसका यत्न व्रणशोथसदृश करो।

तथा ७-यव, गेहूँ और मूंग तीनोंके आटेको घृतमें पकाकर लेप करो तो विना पकी विद्रधि भी कुशल हो जावे।

तथा ८-दशमूलके क्वाथमें तेल या घी मिलाकर व्रणको धोओ तो विद्रधिका व्रण और सूजन दोनों दूर हों।

तथा ९-रक्तचन्दन, मँजीठ, हल्दी, महुआ और गेरूको दूधमें पकाकर लेप करो तो रुधिर, चोट लगनेकी दोनों विद्रधि दूर हों।

तथा १०-कालाजीरा, इन्द्रायणकी जड़, और तुरई इनके २ टंक चूर्णका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो कोठेकी विद्रधि दूर हो।

तथा ११-सहँजनेकी जड़के रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो शरीर के भीतर (अन्तर) की विद्रधि दूर हो।

तथा १२-मुंगनेके क्वाथमें सेंधानोन और हींग डालकर प्रातःकालही पिलाओ तो अन्तर (शरीरके भीतरकी) विद्रधि दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

इति अमृतसागरे चिकित्साखण्डे श्लीपदविद्रधिरोगयत्न-
निरूपणं नाम त्रिंशस्तरंगः ॥ ३० ॥

अथ व्रणशोथ, व्रणरोग।

व्रणस्य व्रणशोथस्याग्निदग्धस्य यथाक्रमम्।
ज्याकृशानौ तरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

अब हम इस ३१ इकतीसवें तरंगमें व्रणशोथ, व्रणरोग और अग्निदग्धकी चिकित्सा यथाक्रमसे कहते हैं।

शारीरकव्रण यत्न १—१ लेप २ औषधोंके उष्ण जलसे धोना, ३ बांसकी नलीसे व्रणपर पसीना निकाल अँगूठे अथवा हस्ततलसेधीरे २ मलना, ४ जलौकाआदि कर्मसे रक्त निकालाना, ५ औषधोंकी पट्टी बांधकर व्रणपर पसीना निकालना, ६ व्रणको पकाना, ७ शस्त्रक्रियासे चीरना, ८ अँगूठेसे दबाकर पीब निकालना, ९ व्रणका शोधन करना, १० व्रणमें अँकुर लाना, ११ अंतमें त्वचाके व्रणसदृश पूर्ण कर देना, ये ११ उपाय यथाक्रम करने व्रण नष्ट हो जावेगा, चरक और सुश्रुतग्रंथमें इसी प्रकारसे ६० साठ उपाय व्रणरोगके लिखे हैं।

वातजव्रणशोथलेप १ बिजौरेकी जड़, छड़, देवदारु,, सोंठ, रास्ना और अरणीको पानीमें पीसलो और उष्ण करके सहता सहता लेप[१] करो तो वातज व्रणकी सूजन दूर हो, जैसे जल अग्निको बुझाता है वैसे यह लेप इसको मिटाता है।

पित्तजव्रणशोथलेप १--महुआ, रक्तचन्दन, दूर्वा, आंवले, कमलनाल, खश, नेत्रवाला और पद्माखको ठंढे जलमें पीसकर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन उतर जावेगी।

तथा २--बडकी जड़, गूगल, बेतके बक्कलको जलमें पीसकर इनसे दशमांश घृत डाल कर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो।

कफजव्रणशोथलेप १--नगद (नागदमनी), बावची, मेढासिंगी मंजीठ, राल,असगंध और शतावरी इन सबको महीन पीस और उष्ण करके सहता हुआ लेप करोतो कफजव्रणका शोथ दूर हो।

तथा २--पिप्पली, खली (तिल्ली अलसी आदि तैलिक अन्नोंका निस्तैल भाग), सहँजनेके बक्कल, नदीकी रेत (बालू) और हर्रकी

१ लेपमात्र करना रात्रिकालमें वर्जित ही है।

छालको गोमूत्रमें पीसकर उष्ण उष्ण लेप करो तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो।

सन्निपातज व्रणशोथलेप १--इसपर वैद्य स्वबुद्धिसे विचार पूर्वक लेप करे।

रक्तजव्रणशोथमात्रलेप १--इसपर पित्तजव्रणशोथके समान लेप करो।

समस्तव्रणशोथलेप १--सांठीकी जड़, देवदारु, हल्दी, सोंठ, मुँगनेका बक्कल और सरसोंको खटाईमें पीसकर सहताहुआ उष्ण लेप करो तो सबव्रणमात्रकी सूजन उतर जावेगी।

वातजव्रणशोथमार्जन १--वातनाशक औषधियोंके क्काथ से धोवो तो वातजव्रणशोथकी सूजन दूर हो।

तथा २--दशमूल, खरैंटी, रास्ना, असगंध, खीप, अरंडकीजड़ या फल, मुँगना निर्गुंडी, सांठी, पिप्पली, सेंधानोन, सोंठ, मुँगनाके बीज रुईके बीज (बिनौला), अलसी, कुलथी, तिल्ली, यव, सरसों, मूलीके बीज, सौंफ, नीमके पत्ते, नागरवेलके पत्ते, गुलाबास (हबास) के पत्ते इनको उष्णकरके बांधो या क्काथ बनाकर शोथको धोओ तो बादीके व्रणकीसूजन उतर जावेगी।

तथा ३--तेल या मांसरस, या घृत, या कांजीको उष्णकर, सहते सहते व्रणशोथको धोओ तो वादीके व्रणशोथ की सूजन उतर जावेगी।

पित्तजव्रणशोथमार्जन १--शीतल औषधोंका क्वाथ, या घृत या शक्करके पानी, या सांठेके रससे धोओ तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो।

कफजव्रणशोथमार्जन १--कफनाशक औषधोंके उष्ण क्वाथ या तेल या गोमूत्र, या खारके जलसे धोवो तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो।

सन्निपातजव्रणशोथमार्जन १--सन्निपातनाशक औषधोंके उष्ण सहते हुए क्वाथसे धोओ तो सन्निपातके व्रणका शोथ दूर हो।

रक्तजव्रणशोथमार्जन १--इसपर पित्तजव्रणशोथ सदृश यत्नकरो।

व्रणशोथमात्रमार्जन१ -हर्रके बक्कलको पानीमें औटाकर शोथपर सहती धारा छोड़ो तो व्रणकी सूजनमात्र दूर हो।

समस्तव्रणशोथस्वेदन १--कठोर व्रणपर अभ्यंग और स्वेदन करके अँगूठसे या हथेलीसे शनैः शनैः घिसकर (मिसलकर) पसीना निकालो तो वह ढीला होकर अच्छा हो जावेगा ।

व्रणशोथरक्तनिष्कासनविधि १--जिस व्रणका वर्णविपर्यय हो, या काला हो और पीड़ा अधिक हो या किसी विषहरे जीवके काटनेसे शोथ हो उसका जलौका (जोंक) या छूरे (अस्तुरे) से रुधिर निकलवा दो तो वह तुरंत अच्छा होगा ।

व्रणशोथ पकानेकी विधि १-जो व्रण लेपादि पूर्वोक्त यत्नोंसे न पके तो सहँजनेकी जड़ और फल, तिल्ली, सरसों, अलसी, यव, गेहूँ, नीमके पत्ते या मदिरा लिकालनेका जावा इत्यादिको पकाकर व्रणपर बांधो तो व्रण पक जावेगा ।

पक्वव्रण चीरनेकी विधि १-जिस व्रणमें पीब भर गया हो उसे शस्त्रक्रियामें कुशल वैद्य शस्त्र (नश्तर) से चीरकर उसमेंका पीब निकाल देवे और पीब स्वच्छ होजानेपर मलहमकी पट्टी बाँध दे तो व्रण अच्छा होजावेगा ।

शस्त्रक्रिया वर्जन--बालक, वृद्ध, क्षीण, पुरुष, भयभीत, शस्त्रक्रिया (चीरफाड़) को न सहनेवाला, स्त्री और जिसे मर्मस्थानमें व्रण हुआ ऐसे रोगीका व्रण मत चीरो, परन्तु नीचे लिखी औषधियोंसे पीब निकाल दो ।

व्रणभेदन औषध १--कणगज (करंज) की जड़, चित्रक, दात्यूणी, भिलावें, कनेर और कबूतरकी विष्ठा इनमेंसे किसी एकका भी लेप करो तो अवश्य ही पक्व व्रण फूटकर पीव निकल जावेगा,

तथा २--खारानोन, जवाखार, सज्जी और अपामार्ग (ऊँगाआधाझारा) का खार इनमेंसे किसी एकका लेप करो तो व्रण फूटकर पीब बह जावेगा ।

तथा ३--यदि व्रण अति कठोर हो तो उसपर हाथीका दाँत पानीमें घिसकर लगा दो तो उस व्रणका शोथ उतरकर फूटके पीब बह जावेगा ।

व्रणपीडनविधि १-मर्मस्थानमें व्रणमें पीब उत्पन्न हो गई हो तो उसे मत चीरो किन्तु यव, गेहूँ और उर्दको पानीमें पीस और पकाके

उस व्रणपर बांध दो तो उसमेंसे पीब बहकर हलका होजावेगा, तब उसपर मलहम लगाकर आरोग्य कर लो।

व्रणशोधनविधि १--जो कच्चा व्रण हो तो उसे पटोलके पत्ते या नीमके पत्तोंको पानीमें औटाकर उस पानीसे धोओ तो व्रण अच्छा हो जावेगा।

तथा २-कच्चे व्रणको गूलरके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो अच्छा होगा।

तथा ३-कच्चे व्रणको किरमालेके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो अच्छा होगा।

तथा ४-कच्चे व्रणको पीपल वृक्ष, गूलर, बड और बेल इन चारोंके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो व्रणकी सूजन और उपदंश (गर्मी) दोनों दूर हों।

तथा ५-तिल, सेंधानोन, मुलहटी, नीमके पत्ते, दोनों हल्दी, निसोत और नागरमोथा इन सबको जलमें पीसकर व्रणपर लेप करो तो व्रण पककर उसका पीब निकल जावेगा।

दुष्टव्रणयत्न १-नीमके पत्ते, तिल, दात्यूणी, निसोत और सेंधानोनको पीसकर लेप करो तो दुष्टव्रण अच्छा होजावेगा।

तथा २-नीमके पत्ते जलमें औटकर व्रणपर बाँधो तो दुष्ट व्रण दूर हो।

तथा ३-हर्र, निसोत, सेंधानोन, दात्यूणी और कलिहारीकी जड़को मधुमें पीसकर इसकी बत्ती व्रणमें चलादो तो दुष्टव्रण अच्छा हो।

तथा ४-जिस व्रणका मुँह छोटा हो उसमें नीमके पत्तोंके रसकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रण कुशल होगा।

तथा ५-नीमके पत्ते, घी, मधु, दारुहलदी और महुएकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रणदूर हो।

तथा ६-तिल्लीको औटा बत्ती बनाके व्रणमें चलाओ तो व्रण अच्छा होगा।

व्रणभरण यत्न १-नीमके पत्ते जलमें पकाकर उस जलसे व्रणको धोवो और मधुयुक्त तेलका फुहा (रुई) उसपर बाँधो तो व्रण भरकर अच्छा हो जावेगा।

तथा २--असगंध, लोध, कायफल, मुलहठी, मंजीठ और धावडेके फूल इन सबको पीसकर व्रणपर बाँधो तो व्रण भरकर अच्छा हो जावेगा ।

व्रणदाह तथा शूलयत्न १--जौका आटा, मधु, तैल, घी इन सब को इकट्ठे तपाकर व्रणपर लेप करो तो व्रणदाह और शूल दूर हो ।

व्रणकृमियत्न १--कणगचकी जड़, नीमकी छाल और निर्गुंडीको पीसकर लेप करो तो व्रणके कृमि निवृत्त होंगे ।

तथा २--लहसन पीसकर लेप करो तो कृमि निवृत्त होगी ।

तथा ३--हींग और नीमकी छालको पीसकर लेप करो तो व्रणके कृमि दूर होंगे ।

व्रणकण्डू कृमियत्न १--नीमके पत्ते, बच, हींग, सरसों, घी, नोन इन सबका चूर्ण एकत्र कर घीमें सानके अग्निपर धूनी दो तो व्रणपर छोत (अशुद्धि, छूत) पड़नेके कारण जो खुजाल होकर कृमि पड जाते हैं वह कृमि और व्रणकी पीडा दूर होगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

व्रणभरण यत्न १--पैसे भर कडुवा तेल और दो पैसेभर पानी कांसे (फूल) की थालीमें डालकर १ दिनभर हाथसे मसलो, तदनन्तर इसमें ५ पैसेभर रार, १ टके भर खैरसार, ५ टंक कूट २ टंक नीला-थोथा, १ टंक गन्धापिरोजा और १ टंक काली मिर्च इन सबका कपड छान किया चूर्ण डालकर पुनः हाथसे मसलो, अब जो इस मलहमकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो व्रण तत्काल भर जावेगा ।

आगन्तुक व्रण यत्न १--खड्ग (तलवार) आदि नाना प्रकारकी धारके घावसे किसी मनुष्यकी त्वचाका कोई भाग फटजावे तो चतुर वैद्यको चाहिये कि, उस घावको रेशमके पक्के धागेसे टाँके लगाकर रोगीको निर्वातस्थानमें रक्खे, तदनन्तर गेहूँके मैदामें जल और घी डालके पकावे और पानी जलकर घृतयुक्त मैदा रह जानेपर उसकी टिकियासे वह टाँके लगा हुआ घाव सहता २ सेके तो वह अच्छा हो जावेगा ।

तथा २–कुटकी, मोम, हलदी, मेंहँदी, मुलहटी, करंजके फल, पत्ते और जड, पटोल, चमेलीके पत्ते और नीमके पत्ते इन सबको घीमें

डालकर पकाओ, जब ये सब सूखकर घृतमात्र रहजावें तब उस घृतसे व्रणको सको तो व्रण तत्क्षण कुशल हो जावेगा, ये सब यत्न वैद्यरत्नमें लिखे हैं।

तथा ३–शस्त्रादिके प्रहारसे यदि अधिक रुधिर निकलकर वायु कुपित होनेसे अधिक पीडा होने लगे तो उक्त प्रकारके रोगीको "घी" पीलाओ जिससे वात शमन होकर पीडा दूर हो।

तथा ४–यदि खड्गादिसे गात्र छिन्न हो जावे तो उस घावमें गंगेरनकी जडका रस भर दो तो वह घाव भरकर शीघ्रही अच्छा होगा।

तथा ५–शस्त्रप्रहारवाले रोगीको सब शीतल यत्न लाभदायक ही हैं।

तथा ६–यदि शस्त्र प्रहारसे आमाशयमें रुधिर एकत्र हो जावे तो उसे वमनद्वारा तथा मूत्राशयमें रुधिर जमगया हो तो विरेचनद्वारा रुधिर निकालकर रोगीको आरोग्य करदे।

तथा ७–बांसकी छाल, अरंडकी छाल, गोखरू, पाषाणभेद इनके क्वाथमें सेंकी हींग और सेंधानोन डालकर पिलाओ तो कोठेका जमा हुआ रुधिर निकलकर वह रोगी आरोग्य हो जावेगा।

तथा ८–आगंतुक व्रणयुक्त रोगीको यव, कुलथी, सेंधानोन और सूखा पदार्थ खाना ये लाभ जनक होंगे।

तथा ९–चमेलीके पत्त, नीमके पत्ते, पटोल, कुटकी, दारुहल्दी, गौरीसर, मंजीठ, मोम, हर्रकी छाल, तज, हल्दी, नीलथोथा, मधु, करंजबीज इन सबके समान घी और सब औषधियोंसे अष्टगुण जल ये सब पदार्थ एकत्र कर मन्द मन्द आंचसे पकाओ, फिर रस जलकर घृत मात्र रहजाने पर छानकर इसकी बत्ती तथा लेप व्रणमें लगाओ तो शारीरिक आंगंतुक तथा गम्भीर व्रण भीजावेगा,इसे जात्यादिघृत कहते हैं।

तथा १०–चमेलीके पत्ते नीमके पत्ते, पटोलके पत्ते, किरमालेके पत्ते, महुआ, मोम, कूट, दारुल्दी, कुटकी, मंजीठ, पद्माख (पद्मकाष्ठ); हर्रकी छाल, तज, कमलगट्टे, नीलथोथा और किरमालेका गूदा इनके क्वाथमें तिल्लीका तेल पकाकर छानलो, जो इस तेलकी बत्ती या फोहा आदि व्रणपर लगाओ तो वह व्रण तत्क्षण भरकर अच्छा हो जावेगा, इसे जात्यादि तैल कहते हैं।

तथा ११--चित्रक, लहसुन, हींग, सरपंख (यह गौडदेशमें प्रसिद्ध है), कलिहारीकी जड़, सिंदूर, अतीस और कूट इन सबके चूर्णको कड़ुवे तेलके साथ जलमें डालकर पकाओ, जब पानी जलकर तेल मात्र रह जावे तब छानकर रुई आदिके द्वारा व्रणपर लगाओ तो आगंतुकव्रण, दुष्टव्रण और नाड़ीव्रण इन सबका समूल नष्ट कर देगा, इसे विपरीत मल्लतैल कहते हैं।

तथा १२--गुर्च, पटोलकी जड, त्रिफला, वायविडंग और इन सबके समान गूगल इन सबका २ टंक बारीक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो व्रणमात्र, वातरक्त, गुल्म, उदररोग ये सब दूर हों इसे अमृतादिगूगल कहते हैं ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

प्लुष्टदग्ध यत्न १–अग्निसे जले हुएको अग्निसे ही तपाओ तो अच्छा होगा।

तथा २–जले स्थानपर अगरादि उष्ण औषधियोंका लेप करो तो जला हुआ अवश्य अच्छा हो जावेगा।

दुर्दग्ध यत्न १–औषधियोंका बना हुआ संशोधित तथा साधारण घृत तपाकर ठंडा होनेपर लगाओ तो दुर्दग्ध अच्छा हो जावेगा

सम्यग्दग्ध यत्न १–तवाखीर, बड़की जड़, रक्तचन्दन, सोना, गेरू, गुरच इन सबको पीसकर घीके साथ लेप करो तो सम्यग्दग्ध कुशल हो।

अतिदग्ध यत्न–१–बिगड़े हुए मांसको निकालकर सांठी चावल और तेंदूको घीमें पीसकर लेप करो और ऊपरसे गुरचके पत्ते बांधो तो अतिदग्ध कुशल हो।

तथा २–मोम, महुआ, लोध, रार, मंजीठ, रक्तचन्दन और मूर्वाको घीमें पकाकर घीका लेप करो तो अतिदग्धकी जलन मिटकर नवीन मांसांकुर उत्पन्न होगा, इसे चित्रकादि घृत कहते हैं।

तथा ३–पटोलके पंचांगके क्वाथमें कड़ुआ तेल पकाकर क्वाथ जलके तेलमात्र रह जानेपर छान लो, जो इसका लेप करो तो अग्निदग्धकी दाह, झरना और फटना ये सब शान्त हो जावेंगे; ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ४–पुराना कलीका चूना, दहीके पानीमें पीसकर दग्धपर लगाओ तो अग्निदग्ध तथा तैलदग्धका फफोला दोनों शीतल पड़ जावेंगे।

तथा ५–जौ (यव) को जलाकर तिल्लीके तेलके संयोगसे लेप करो तो दग्ध कुशल होगा।

तथा ६–सेंका जीरा, मोम और रार घीमें पीसकर लगाओ तो दग्ध कुशल होगा।

तैलदग्ध यत्न १–पावभर तिल्लीके तेलमें पुराना कलीका ३ पैसे-भर चूना १ प्रहरपर्यंत हाथसे मलकर एकजीव कर लो और रुईसे जले स्थानपर लगाओ तो तत्काल अच्छा होगा। चूना पानीमें भीगा हुआ लेना।

व्रणग्रंथि यत्न १–कधीला, वायविडंग, और तज, दारुहल्दीको जलमें महीन पीसकर तिल्लीके तेलके साथ मंद आंचसे पकाओ पानी जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर इस तेलका लेप करो तो व्रण ग्रंथि दूर हो।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे व्रणशोथव्रणरोगाग्निदग्धरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकत्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

अथ भग्नरोग, नाडीव्रणरोग

चिकित्सा भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य हि।
नेत्रराममिते भंगे लिख्यते च यथाक्रमम् ॥ १ ॥

इस ३२ बत्तीसवें तरंगमें भग्नरोग और नाणी व्रणकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

जो चोट आदि लगनेसे हड्डी जोडपरसे उखड जावे या टूट जावे तो उसपर वहीं तुरंत गीले कपडेकी पट्टी बांधकर ऊपरसे ठण्ढा पानी डालो, तदनंतर किसी अस्थिभेदज्ञाता पुरुषसे यत्न कराओ, इस विकारपर सेंक करो या पट्टी बांधो पर सब शीतल उपाय करो, पट्टी बहुत कडी खींचकर मत बांधो क्योंकि ऐसा करनेसे त्वचापर शोथ होकर चमडी पक जावेगी इसलिये साधारण दशाकी ढीली पट्टी बांधो तो हड्डी यथार्थ जमकर लाभकारी हो।

भग्नरोगयत्न १–भग्नस्थानको शोधकर उसपर गीली औषधियां दर्भ (डाभ एक प्रकारका घास) से कसकर बांधो या कीचड लगाओ तो हड्डी अच्छी होजावेगी।

तथा २–मंजीठ और महुएको ठंढे पानीमें पीसकर अस्थिभंगस्थान-पर लगाओ तो वह अच्छा होगा।

तथा–३–१०० वार पानीसे धोये हुए घीमें साँठी चावल पीसकर लेप करो तो अस्थिभंग अच्छा होगा।

तथा ४–बेरकी लाख, पीपलकी लाख, गेहूँ और काहूके बक्कलको घीमें पीसकर दूधके साथ ५ टंक नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग अच्छा होगा।

तथा ५–लाख, काहूके बक्कल, असगंध, खिरैंटी और गूगल इनका २ टंक चूर्ण दूधके साथ नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग दूर हो।

तथा ६–गेहूँको अधजले करके समान फिटकरीके साथ पीस लो और यह ५ टंक चूर्ण १० मधुके साथ ७ दिन चटाओ तो अस्थिभंग दूर हो।

तथा ७–आंवले, मैदालकडी और तिल्लिको शीतल जलमें पीसकर चोटपर लेप करो तो अस्थिभंग कुशल हो।

तथा ८–उत्तम ममाई (जो कि मनुष्यके मांससे बनती है)खिलाओ तो उखडी टूटी हुईहड्डी अच्छी हो।

तथा ९–२ टंक लाखका चूर्ण दूधके साथ १५ दिन पर्यंत पिलाओ तो टूटी हुई हड्डी जुड जावेगी, (लाख पीपल वृक्ष या बेरीकी लेना)

तथा १०–२ या तीन रत्ती पीली कौडीका चूर्ण उष्ण दूधके साथ पिलाओ तो टूटी हुई हड्डी जुड जावेगी, ये सब यत्न वैद्य रहस्यमें लिखे हैं।

तथा ११–बबूलका बक्कल, त्रिफला, सोंठ, मिर्चे और पिप्पली इन सबके समान गूगलका २ टंक चूर्ण १५ दिन पर्यंत दूधकेसाथ पिलाओ तो अस्थिभंग दूर होकर शरीर बज्रसा दृढ हो जावेगा।

तथा १२–बबूलके बक्कलका २ टंक चूर्ण १ मास पर्यंत मधुके साथ साथ चटाओ तो शरीर वज्रसा दृढ़ हो जावे, यह योगतरंगिणीमें लिखा है ।

तथा १३–मेथी, मैदालकडी, सोंठ, और आंवलेको गोमूत्रमें महीन पीसकर चोटपर लेप लगाओ तो मुद्गर आदिकी चोट भी दूर हो ।

तथा १४–मांस या मांसरस (शोरुवा), दूध, घी और सब पौष्टिक औषधियां ये सब पदार्थ भग्नरोगवालेको सेवन करने योग्य हैं ।

तथा १५--नमक, कटुवस्तु, खार, खटाई, मैथुन, श्रम, घाममें भ्रमण और रूखा अन्न भक्षण ये इस रोगीको हानिकर हैं ।

विशेषतः–बालक और तरुणको अस्थिभंग हो तो शीघ्र अच्छा हो परंतु वृद्ध तथा रोगीको लगी हुई चोट शीघ्र अच्छी न होगी।

नाडीव्रणरोग यत्न १–छोटे मुखका नाडीव्रण जिसके मुखसे सर्वदा पीब बहती रहती हो उसके मुखपर थूहर या आकके दूधमें भीगी हुई दारुहल्दीको घिसकर बत्ती बनाके धरो तो वह व्रण भरकर अच्छा हो ।

तथा २–किरवारेकी जड़ हल्दी, और मंजीठको मधुमें पीसकर बत्ती बनाकर व्रणके मुखमें चलाओ तो नाडीव्रण अच्छा हो ।

तथा ३–चमेलीके पत्तोंका रस, आकड़ेकी जड़, किरमालेकी जड़, दात्यूणी, सेन्धानोन, सोंचरनोन, और जवाखार इनको महीन पीसकर छोटे मुखवाले व्रणकेमुखपर युक्तिसे धरो तो वह व्रण अच्छा हो जावे ।

तथा ४–जात्यादिघृत तथा जात्यादितैलसे भी नाडीव्रण अच्छा होगा ।

तथा ५–त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, और इन सबके समान शुद्ध गूगलका २ टंक चूर्ण नित्य शीतल जलके साथपथ्यसे ४९ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो सबप्रकारके नाडीव्रण दूर हों ।

तथा ६–गूगल और सिंदूरको महीन पीसकर व्रणमें युक्तिसे भरो तो नाडीव्रण अच्छा हो । ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा ७-मधु या नमक या तेलकी बत्ती चलाओ तो दुष्टव्रण अच्छा हो।

तथा ८-सज्जी, जवाखार, कपेला, मेहँदी, सुहागा, श्वेत खैरसारको गोघृतमें १ दिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो व्रणका शोथ और कृमि दूर होकर व्रण भर जावेगा, यह स्वर्जादिघृत चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा ९--संभालूके पत्तोंके पकायेहुए तेलकी बत्ती व्रणमें दो तो व्रण अच्छा हो। यह निर्गुण्डीतैल वृन्दमें लिखा है।

तथा १०-१ पैसे भर राल, १ पैसेभर सफेदा, १ पैसे भर श्वेतमोम, १ पैसे भर मुर्दासिंगी इनमेंसे मोमको छःपैसे भर उष्ण घीमें पिघलाकर शुद्ध करलो और शेष औषधोंका महीन चूर्ण उसमें मिलाकर कांसेकी थालमें जलके साथ १०८ वार हाथसे मसलकर धोओ और इसको व्रणमें भरो तो व्रण अच्छा हो। इसे श्वेतमलहम कहते हैं।

तथा ११-शुद्ध, पारा, शुद्ध आंवलासार गन्धक इन दोनोंके समान मुर्दासिंगी इन तीनोंके समान कपेला, कुछ नीलाथोथा इन सबोंसे चौगुना घी और कुछ नीमके पत्तोंका रस इन सबको २ दिन पर्यन्त खरल करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र अच्छे हों यह यत्न वैद्यरहस्यम लिखा है।

तथा १२-मस्तगीका गोंद (रूमीमस्तंगी) मैंढल, नीलाथोथा, सज्जी, सुहागा, सिन्दूर, कपेला, मुर्दासिंगी, गूगल, कालीमिर्च, सोनागेरू, इलायची, गन्धापिरोजा, सफेदा हिंगुल और शुद्ध गन्धक इन सबका चूर्ण करो और इनमेंसे किसी एकके बराबर मोमको गोघृतमें पिघलाकर शुद्ध करो, तदनन्तर उक्त चूर्णमें मिलाकर दो दिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो शारीरिक आगन्तुक दुष्टव्रण प्रभृति सब अच्छे होंगे।

तथा १३-नीलाथोथा, कपेला, मुर्दासिंगी, श्वेत, खैरसार, सिंदूर, मोम, हिंगुल, केशर और इन सबके समान गोघृत लेकर प्रथम गोघृतमें नीला थोथा और मोम पिघलाओ और पीछेसे अवशिष्ट औषधोंका चूर्ण डालकर उतार लो तदनंतर ठंडा होजाने पर कांसेकी

थालीमें जलके साथ १ दिन पर्यंत मंथन करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र तथा व्रणका घाव भरके अच्छा हो, ये यत्न वैद्यकुतूहलमें लिखे हैं।

तथा १४--३ पैसे भर हिंगुल, १ पैसे भर मुर्दासिंगी, ३ पैसे भर सज्जी प्रथम १ पैसे भर नीमके पत्तोंकी टिकियाको गोघृतमें पकाकर उसीमें ३ पैसे भर श्वेत मोम मिलाओ और शेष औषधोंका चूर्ण इसीमें डाल कर व्रणमें भरो तो व्रणमात्र अच्छे हों।

तथा १५--१ पैसे भर राल, १ पैसे भर कत्था, १ पैसे भर कालीमिर्च, ४ पैसे भर गोघृत, ४ पैसे चमेलीका तेल इन सबको लोहेकी कड़ाहीमें पीसकर बिवाई (पांवकी एडीमें फटी हुई रदारे) में भरो तो वे अच्छी हों।

तथा १६--नीमके पत्तोंका सेरभर रस पावभर गोघृतके साथ कड़ाहीमें औटाओ, रस जलकर घृतमात्र रहजानेपर उसमें ४ पैसेभर रार, १ पैसेभर नीला थोथा, १ पैसेभर मुर्दासिंगी इनका महीन चूर्ण डालकर एकजीव कर दो। इस मलहमको कपड़ेकी पट्टीपर लगाकर व्रणपर चिपकाओ तो निश्चय अच्छा हो।

तथा १७--मैनशिल, मंजीठ, लाख, दोनों हल्दी इन सबको घी और मधुके साथ महीन पीसकर त्वचापर लेप करो तो व्रणजन्य विकारसे काली पड़ी हुई त्वचाका वर्ण पूर्ववत हो जावेगा।

तथा १८--अपामार्ग (आंधेझारे) बीज और तिल दोनोंको महीन पीसकर लेप करो तो वातजन्य नाडीव्रण दूर हो।

तथा १९--तिल, मधु और घीको एकत्र पीसकर लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो।

तथा २०--तिल, मंजीठ, हस्तीदन्त इनको महीन पीसकर जलके साथ लेपकरो तो पित्तका नाड़ीव्रण दूर हो।

तथा २०- तिल, मुलहठी, दात्यूणी, नीमकी छाल या पत्ते, सेंधानोन इन सबको महीन पीसकर लेप करो तो पितका नाड़ीव्रण दूर हो।

इति श्रीअमृतसागरे विचारखण्डे भग्नरोगनाडीव्रणरोगयत्ननिरूपणं नाम द्वात्रिंशस्तरंगः ॥३२॥

भगंदर-उपदंश

भगन्दरस्य रोगस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ।
रामाग्निप्रमिते भंगे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

अब आगे तेतीसवें तरंगमें भगन्दर और उपदंश रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं ।

भगन्दररोग यत्न १--वैद्यको चाहिये कि, भगन्दरकी उत्पत्ति होते ही जोंक आदि किसी भी उपायसे वहांका रुधिर इस प्रकारसे निकाल दे कि, जिसमें फुन्सी न पकने पावे तो भगन्दर दूर हो ।

तथा २--सांठीकी जड़, गुर्च, सोंठ, मुलहठी, और बड़के कोमल पत्तोंको महीन पीसकर और पकाके सहता २ लेप करो तो भगंदर दूर हो ।

तथा ३--चमेलीके पत्ते, बडके पत्ते, गुर्च, सोंठ और सेंधानोन इन सबको छांछमें महीन पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो ।

तथा ४--हल्दी, आकके पत्ते, सेंधानोन, गूगल और कनेरके पत्ते इनका चूर्ण तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो भगंदर दूर हो ।

तथा ५--गूगल, त्रिफला और पिप्पलीका १ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो भगंदर, शोथ, गुल्म, अर्श ये सब नष्ट हों, इसे नवकर्षिका गूगल कहते हैं ।

तथा ६--चतुर वैद्य या सथिया भगंदर व्रणको चीरकर उसपर व्रण-यत्न लिखित मलहम आदि लगावे तो भगंदर दूर हो ।

तथा ७--रसोत, दोनों हल्दी, निसोत, मंजीठ, नीमके पत्ते, तेजबल और दात्यूणीको महीन पीसकर भगंदर पर लेप करे और इन्हींके जलसे धोवे तो भगंदर दूर हो ।

तथा ८--कुत्तेकी हड्डी, केचुवे (मज्जा) गधेके रक्तमें पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो ।

तथा ९--बिल्लीकी हड्डी, त्रिफलाके रसमें पीसके लेप करो तो भगंदर दूर हो ।

तथा १०--बिल्लीकी हड्डीकी राख और कुत्तेकी हड्डीकी राख दोनोंको गोघृतके साथ लोहेके पात्रमें घिसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो।

तथा ११--२ भाग शुद्ध पारा और ४ भाग तांबेका मल, काकलहरीके रसमें १५ दिन खरल करके तांबेके सम्पुटमें बन्द करो दो और उस सम्पुटको बालूभरी हंडीके बीचमें धरके ८ प्रहर पर्यंत आंच दो, स्वांगशीतल हो जानेपर निकालकर उसमें घी, मधु और सुहागा मिलाओ, तदनंतर इस मिश्रणको पक्की मूषामें धरकर आंच दो (जैसे सुनार चांदी गलानेमें नलीसे फूँक देता है) जब वह पदार्थ उसीमें घूमने लगे तब निकालकर उसमेंसे ३ रत्तीकी मात्रा मधुके साथ दो और ऊपरसे त्रिफलाका क्वाथ पिलाकर पथ्यसे रक्खो तो भगंदर निश्चय अच्छा होगा, इसे रूपराजरस कहते हैं।

तथा १२--१ भाग पारा, २ भाग आंवलासार गंधक दोनोंकी कजलीको ग्वारपाठेके रसमें खरल करके तांबेके संपुटमें बन्दकरो और इस संपुटको राखभरी हंडीमें गाड़कर १ दिनपर्यंत आंच दो, अनंतर स्वांगशीतल (आपही आप ठंढी) हो जानेपर निकालकर जम्भीरीके रसकी ७ पुट दो , इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा मधु या घीके साथ चटाकर ऊपरसे मूली या लहसन पिलाओ तो भगंदर दूर हो, रोगीको मीठा आहार, दिनमें निद्रा, मैथुन और शीतल भोजनका बचाव करना चाहिये, इसे रविसुन्दररस कहते हैं, यह रससिंधुमें लिखा है।

तथा १३--तिल्ली, नीमकी छाल और महुआ इन सबको शीतल जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तजभगंदर दूर हो।

भगंदरपर वर्जित पदार्थ--श्रम, मैथुन, युद्ध, घोड़े आदिपर चढ़ना और ऊगा हुआ (अंकुरित) अन्न खाना, भगंदर अच्छा होनेपर भी १ वर्ष पर्यन्त वर्जित हैं, यें सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

उपदंशरोग यत्न १- जोंक लगाकर रोगस्थानका रक्त निकलवा दो तो उपदंश दूर हो, परन्तु घाव पकना नहीं चाहिये।

तथा २--साँठीकी जड, गिलोय, सोंठ, मुलहठी और बड़के कोमल पत्तोंको जलमें औटाकर उस जलसे लिंगेन्द्रियको धोओ तो उपदंश दूर हो।

तथा ३–लिंगेन्द्रियकी शीर (फस्त) छुड़वाओ तो उपदंश अच्छा होगा।

तथा ४–बड़के कोमल पत्ते, काहूकी छाल, जामुनकी छाल, लोध, हर्रकी छाल और हल्दी इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो गर्मी दूर हो।

तथा ५–चतुर्थ यत्नोक्त (ऊपर लिखा सो) औषधोंके जलसे धोओ तो लिंगेन्द्रियका शोथ तथा पकाव भी दूर हो।

तथा ६–त्रिफलाके क्वाथ या भांगरेके रस या कमलके जलसे धोओ तथा लेप करो तो उपदंश दूर हो।

तथा ७–मिझने (मारवाडमें प्रसिद्ध) वृक्षकी छाल, अथवा अनारकी छालको जलमें पीसकर लेप करो तो उपदंश दूर हो।

तथा ८–सुपारी जलमें घिसकर इन्द्रियपर लगाओ तो गरमी अच्छी हो।

तथा ९–त्रिफलाको कडाहीमें जलाकर उस भस्मको मधुके साथ इन्द्रियपर लेप करो तो उपदंश दूर हो।

तथा १०–पटोल, नीमकी छाल; त्रिफला, चिरायता, खैरसार, विजयसार और गूगल इनका क्वाथ पिलाओ तो गर्मी दूर हो।

तथा ११–चिरायता, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोल, कणगचकी जड़, आंवला, खैरसार और विजयसारका क्काथ घृतमें पकाकर इस घीका लेप करो या भोजनके साथ खिलाओ तो उपदंश दूर हो, इसे भूनिंबादिघृत कहते हैं।

तथा १२–कुष्ठ और व्रणयत्नलिखित घृतका लेप करो या खिलाओ तो उपदंश दूर होगा।

तथा १३–विरेचन दो तो उपदंश दूर हो।

तथा १४–८पैसेभर बडी हर्र, १ पैसे भर श्वेत कत्था, १ पैसेभर नीलाथोथा इन सबको १०० पक्के नींबूके रसमें खरल करके १ मासे प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ और प्रतिदिन दहीके साथ १ गोली १५ दिन तक खिलाकर पथ्यसे रक्खो तो गर्मी नष्ट हो।

तथा १५-१ भाग नीलाथोथा, १ भाग कत्था, २ भाग मुर्दासिंगी और २ भाग सुपारीकी राखको महीन पीसकर उपदंशपर भुरकाओ तो छाले सूखकर उपदंश मिट जावेगा ।

तथा १६-शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, हरताल, सिंदूर और मैनसिलको तांबेके पात्रमें तांबेके घोटेसे घृतके साथ ३ दिन तक घोटकर इन्द्रियपर लेप करो तो उपदंश दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

लिंगवर्ती यत्न १-मसे दूर होनेकी औषधोंसे इसकी चिकित्सा करो तो लिंगवर्ती (लिंगार्श) दूर होगा ।

शूकरोग यत्न १-१ विष दूर करनेके यत्न करो, २ जोंक लगाकर इन्द्रियका विकारी रक्त निकाल दो, ३ लिंगविरेचन अर्थात् जुलाब दो, ४ अल्पाहार कराओ, ५ त्रिफलाके क्वाथके साथ गूगल सेवन कराओ, ६ औषधोंके लेप तथा सेंक लगाओ, ७ खरेंटीका तेल मर्दन करो, ८ शीतल प्रयत्न करो और ९ दारु हल्दी, तुलसी, मुलहटी, धमासा इन्हें तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो, ये नवों यत्नोंमेंसे प्रत्येक यत्न १८ हों प्रकारके शूकरोगोंको नष्ट कर सकते हैं, ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं ।

इति अमृतसागरे चिकित्साखण्डे भगंदरोपदंशलिंगवर्तिशूकरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३३ ॥

चिकित्सा कुष्ठरोगस्य नराणां सुखदायिनी ।
वेदवैश्वानरे ह्यस्मिन् तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस चौतीसवें तरंगमें मनुष्योंको सुख प्राप्त करनेवाली कुष्ठरोगकी चिकित्साका कथन करते हैं ।

कुष्ठरोग यत्न १-हर्रकी छाल, कणगजकी जड़, सरसों, हल्दी, बावची, सेंधानोन और नागरमोथा इन सबको गोमूत्रमें पीसकर कुष्ठ-लगाओ तो कुष्ठ अच्छा हो, इसे पथ्यादि लेप कहते हैं ।

तथा २-बावचीके चूर्णको अदरखके रसकी पुट देकर कुष्ठपर उबटन करो तो कुष्ठ दूर हो ।

तथा ३--निम्बपंचांग, दोनों हल्दी, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली ब्राह्मी, गोखरू, शुद्ध भिलावां, चित्रक, बायविडंग, सार, बाराहीकंद, गुर्च, बावची, किरमाल, मिश्री, कूट, इन्द्रयव, पाठा और खैरसार इन सबके चूर्णको नागरमोथाके रसकी १ पुट, निम्बपंचांगकी ७ पुट और भांगरेके रसकी ७ पुट देकर छायामें सुखालो तदनंतर पीसकर इसमेंसे अधेलेभर चूर्ण शुभ दिनसे मधु या खैरसारके क्वाथके साथ प्रातःकाल उष्ण जलसे कुष्ठरोगीको यह विरेचन दो और अनुदिन कुछ बढाते बढाते टके तक बढ़ाकर ऊपरसे घृतसहित हलका भोजन कराओ तो विचर्चिका, उदुम्बर, पुंडरीक, दाद, कपालिक, किटिभ, अलस, सतारु, विस्फोटक इतने सब कुष्ठ तथा विसर्परोग ये सब दूर होंगे, यह निम्बपंचांगावलेह ब्रह्माजीने मार्कण्डेय ऋषिजीको बताया है।

तथा ४–पांच टकेभर बावची, ५ टकेभर शुद्ध गूगल, ३ टके भर शुद्ध सोनामक्खी, २ टके भर सार, ३ टके भर गोरखमुंडी, १ टके भर कण-गच, ४ टके भर खैरसार, २ टके भर गुर्च, २ टके भर निसोत, २ टके भर नागरमोथा, १ टके भर वायविडंग, १ टके भर हल्दी, १ टके भर तज, ५ टके भर निंबपंचांग, ३ टके भर त्रिफला और २ टके भर चित्रक इन सबका चूर्ण घृत और मधुके साथ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियाँ बनालो और प्रतिदिन प्रातःकाल१गोली गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो कुष्ठमात्र, वातरक्त, पांडुरोग, उदररोग, प्रमेह और गुल्म ये सब दूर होकर वृद्ध भी तरुणसदृश बलवान हो जाता है, इसे स्वायम्भुवगूगल कहते हैं।

तथा ५ चित्रक, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, जीरा, कलौंजी, वच, सेंधानोन, अतीस, चव्य, कूट, इलायची, जवाखार, वायंविडंग, अज-मोद, नागरमोथा, देवदारु और इन सबके समान शुद्ध गूगल इन सबके चूर्णको मधुके साथ ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाकर एक गोली नित्य भोजनके समय खिलाओ तो कुष्ठमात्र, व्रणमात्र, कृमि, संग्रहणी, मुखरोग, अर्श, गृध्रसी और गुल्म ये सब रोग दूर होंगे, इसे किशोरगूगल कहते हैं।

तथा ६–१ सेर शुद्ध भिलावां १६ सेर जलमें औटाकर औटते समय २ सेर गुर्च कूटकर डालदो औटते औटते चतुर्थांश रह जानेपर उतार कर छानलो और इसमें १ सेर गोघृत, ४ सेर गोदुग्ध, १ सेर मिश्री, ऽ॥

आधा सेर मधु मिलाकर मन्द मद आँचसे पकाओ, दृढ हो जानेपर उतारकर उसमें बावची, पवाँरके बीज, नीमकी छाल, हर्रकी छाल, आंवले, सैंधव, नागरमोथा इलायची, नागकेशर, पित्तपापड़ा, पत्रज, नेत्रबाला, खश, चंदन, गोखरू, कचूर और रक्तचन्दन ये सब दो दो टंकका महीन चूर्ण मिलादो जो इसमेंसे प्रतिदिन १ टकेभर प्रातःकाल जलके कराओ तो समस्त कुष्ठमात्र, वातरक्त और अर्श ये सब रोग दूर होंगे, इसके सेवनपर श्रम करना, घाममें विचरना, अग्नि तापना, खटाई, मांस, दही खाना, तैल मर्दन और मार्गगमन इतने कर्म वर्जित हैं, इसे अमृतभल्लातकावलेह कहते हैं ।

तथा ७--नीमकी छाल, गौरीसर मँजीठ, त्रायमाण त्रिफला, नागरमोथा, पित्तपापडा, बावची, जवासा, वच, खैरसार, रक्तचन्दन, पाठा, सोंठ, भारंगी, अडूसा, चिरायता, वच, कूड़ेकी छाल, इन्द्रायणकी जड, चित्रक, गुर्च, निसोत, मूर्वा, वायविडंग, इन्द्रयव, मानपात (रामबाण) बकायन, पटोल, दोनों हल्दी, पीपली, किरमालेका गूदा, कलिहारीकी जड़, सतोन्यू (औषधि विशेष), शुद्ध वेंत, चिरमू, रास्ना, सांठीकी जड़, दात्यूणीं, शुद्ध जमालगोटा, भांगरा, कठसेला, अकोटक, साखोटक (भूतावास) ये सब दो दो टके भर कूटकर १६ सेर पानीमें औटाओ और चतुर्थांश रह जानेपर उतारकर छान लो तदनन्तर ४ सेर शुद्ध भिलावाँ १६ सेर जलमें औटाकर चतुर्थांश रह जानेपर छान लो, और पूर्व निमित ४ सेर पानीमें मिलाकर इस ८ सेर पानीमें १०० टके भर गुड़की चासनी बनाओ पश्चात् सोंठ, मिर्च, पिप्पली, नागरमोथा, वायविडंग, चित्रक, चन्दन, कूट, अजमोद, पत्रज, नागकेशर, इलायची ये सब एक एक टके भर, सेंधानोन २ टके भर, त्रिफला ३ टके भर इन सबका चूर्ण कर उक्त चासनीमें डाल दो और शुभ दिन देख इसमेंसे नित्य दो टके भर खिलाके खटाई और उष्ण वस्तुओंका पथ्य रक्खो तो कुष्ठमात्र, व्रणमात्र, अर्श, कृमि, रक्तपित्त, उदावर्त कास, श्वास, भगंदर ये सब रोग दूर होकर तरुणाई, शरीरकी कांति और क्षुधाकी वृद्धि होवेगी, इसे महाभल्लातकावलेह कहते हैं ।

तथा ८--मंजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, नीमकी छाल, दारु हल्दी, और गुरच इन सबके ५ टंक चूर्णका काथ प्रतिदिन पिलाओ तो कुष्ठ-

१ प्रकारका कटीला पौधा जिसके पीत पुष्प होते हैं, महादेवजीको विशेष प्रिय हैं ।

२ एक प्रकारका कँटीला वृक्ष हैं जिसके बैगनी फल सदृश होते हैं यह वृक्ष अकोल नामसे प्रसिद्ध हैं ।

मात्र, वातरक्त, विस्फोटक और विसर्प ये सब रोग दूर होंगे इसे लघुमजिष्ठादि क्राथ कहते हैं।

तथा ९–मंजीठ, बावची, पवाँड, नीमकी छाल, हर्रकी छाल, हल्दी, आँवले, अड़ूसा, शतावरी, खरैंटी; गंगेरनकी छाल, मुलहटी, महुआ, कटियाली, पटोल, खश, गिलोय, रक्तचंदन इन सबके ५ टंक चूर्णका क्राथ प्रतिदिन पिलाओ तो सब कुष्ठ और वातरक्त दूर होंगे इसे मध्यममंजिष्ठादि कहते हैं।

तथा १०–मंजीठ, इन्द्रयव, गुरच, नागरमोथा, वच; सोंठ हल्दी, दोनों कटियाली, नीमकी छाल, पटोल, कूट, भारङ्गी, वायविडंग, चित्रक, मूर्वा, देवदारु, जलभंगरा, पिप्पली, त्रायमाण, पाठा, शतावरी, खैरसार, विजयसार, त्रिफला, चिरायता, बकायन, किरमालेकी गिरी, निसोत; रक्तचन्दन, बावची, वरुणा, दात्यूणी, साखोट, अड़ूसा, पित्तपापड़ा; गौरीसर, अतीस, जवासा और इन्द्रायणकी जड़ इन सबके ५ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन सेवन कराओ तो अठारहों प्रकारका कुष्ठ, वातरक्त, रक्तविकार, विसर्परोग और त्वचाशून्य ये सब रोग दूर हों, इसे बृहन्मंजिष्ठादि क्राथ कहते हैं।

तथा ११–काली मिर्च, निसोत, नागरमोथा, हरताल, देवदारु, दोनों हल्दी, छड़, कलौंजी, आकका दूध, गोबरका रस ये सब धेले धेले भर, १ पैसे भर सिंगीमुहरा, १ सेर कड़ुआ तैल, ४ सेर पानी और ८ सेर गोमूत्र, इन सबको एकत्र कर मन्दाग्निसे औटाओ और रसादिक जलकर तैलमात्र रह जाने पर उतार छानके मर्दन करो तो कुष्ठमात्र दूर हों। इसे लघुमरीच्यादि तैल कहते हैं।

तथा १२–काली मिर्च, निसोत, दात्यूणी, आकका दूध, गोबरका रस, देवदारु, दोनों हल्दी, छड़, कूट, रक्तचन्दन, इन्द्रायणकी जड़, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कनेरकी जड़, चित्रक, नागरमोथा, कलिहारीकी जड़ वायविडंग; पवाँड, कूड़ेकी छाल, सिरसकी जड़, नीमकी छाल, लतोनकी छाल, गुरुच, थूहरका दूध, किरमालेका गूदा, खैरसार, बावची, वच, मालकांगनी ये सब टके टके भर, २ टकेभर सिंगीमुहरा, चार सेर कड़ुवा तेल और १६ सेर गोमूत्र इन सबको एकत्रकर मन्द मन्द आंचसे औटाओ और गोमूत्रादि जलकर तेलमात्र

रहजानेपर छानके इस तेलका मर्दन करो तो कुष्ठमात्र, खुजली, च्योंची, दाद, मुखछाया ये सब रोग दूर होंगे। यह तैल मनुष्य तो क्या बरन हाथी घोड़े पशुओंका भी वातहारक और जीवनप्रद है। इसे महामरीच्यादितैल कहते हैं।

तथा १३-उत्तम हरतालके पत्रोंको चित्रकके रसमें १ दिन और सांठीके रसमें १ दिन खरल करके टिकिया बनाकर सुखा लो, तदनन्तर वह टिकिया सांठीके पंचाङ्गखारमें रखकर इसे इस प्रकारसे दाबो कि जिसमें धुवाँ न निकलने पावे और इसे चूलेपर चढ़ाकर मंद मंद जलती हुई आंचसे ४ दिन रात्रि निरंतर तपाके स्वांग शीतल हो जानेपर निकाल लो,जो वह तेलमें (पूर्ववत्--पहिले जितनी थी)निर्धूम और श्वेतवर्णकी हो आई हो तो उसमेंसे२रत्तीकी मात्रा गुर्चके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो अठारहों प्रकारका कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, फिरङ्गवायु ये सब रोग दूर होंगे। इसके सेवन करनेवालेको नोन, खटाई कटुरस और धूपमें फिरना निषिद्ध है। यदि नोन विना न रह सके तो सेंधानोन और मिठाई खिलाओ। इसे तालकेश्वररस कहते हैं।

तथा १४-पारा, शुद्ध गन्धक, तांबेश्वर, लोहसार, गूगल, चित्रक, शैलाजीत, कुचला, वच, अभ्रक और किसी एकके प्रमाणसेचौगुने कणगचके बीज इन सबके चूर्णको पारे गंधककी कजली मिलाकर इसमेंसे २ टंक मिश्रण मधु और घृतके साथ सेवन कराओ और ऊपरसे चावल दूध खिलाओ तो गलितकुष्ठ भी दूर होकर रोगीका शरीर कामदेव सदृश होजावेगा। इसके भक्षण समयमें स्त्रीसङ्ग करना वर्जित है। इसे गलितकुष्ठादिरस कहते हैं।

विभूतिकुष्ठ यत्न १-कूट, मूलीके बीज, सरसों, केशर और हल्दी को सिरसके जलमें पकाकर लेप करो तो बहुत पुरानी विभूति भी दूर होगी।

तथा २ केलेका खार, हल्दी, दारुहल्दी, मूलीके बीज, हरताल देवदारु शंखका चूना इनको नागरवेलके पानके रसमें महीन पीसकर लेप करो तो विभूति (सेंहुँआ) दूर हो।

चर्मदलकुष्ठयत्न १--अमचूर और सोंधानोन जलके साथ ताम्रपात्रमें तांबेके घोटेसे महीन पीसकर लेप करो तो चर्मदल दूर हो।

पामा यत्न १--१ टकेभर जीरा और ५ टकेभर सेंदुर कड़वे तेलमें पीसकर पकाके लेप करो तो पामा (खुजली) अच्छी हो।

तथा २-मंजीठ, त्रिफला, लाख, कलिहारीकी जड़, हल्दी और आंवलासारगन्धक इन सबको पीसकर घाममें उष्ण करो और लेप करो तो पामा (खुजली) दूर हो।

तथा ३--पारा, दोनों जीरे, दोनों हल्दी, कालीमिर्च, सिंदूर, आंवलासारगन्धक इन सब औषधोंके चूर्णको पारे गन्धककी कजलीके साथ गोघृतमें १ दिन खरल करके मर्दन करो तो पामा दूर हो।

तथा ४–पारा और आंवलासारगंधककी कजली, नीलाथोथा, हल्दी, मेंहँदी, तीव्रा, अजवायन, मालकांगनी इन सबका चूर्ण और घृतमें पिघलाया हुआ मोम इन सबको गोके घृतमें १ दिन पर्यन्त खरल करके मर्दन करो तो पामा (खुजली) आदि सब रुधिर विकार दूर हों।

तथा ५–२ टंक शुद्ध आंवलासारगंधक और तीन मासे नीलाथोथा, दोनोंको पानीके साथ महीन पीसकर गोली बनाओ और इस गोलीको महीन कपड़ेमें बाधकर गेहूँके मसले हुए अलोने आटेसे छाप दो; फिर उस गोली सहित आटेकी बाटी बनाकर सेंक डालो, तदनन्तर वह गोली कपड़े सहित निकालकर दूसरी बाटीमें धरो इसी प्रकार चार पांच बाटियां बनाकर घीमें मल डालो या घी शक्करमें चूरमा (मलीदा) बना लो, जो यह चूरमा इसी प्रकार ९ दिन नित्य खिलाओ तो पामा (खुजली) आदि समस्त रक्तविकार दूर होंगे।

तथा ६–सेंधानोन, पवांरके बीज, सरसों और पिप्पलीको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो पामा नष्ट हो।

कच्छदाद यत्न १–आकके पत्तोंका रस, हल्दीका क्वाथ और कड़ुवा तेल इन तीनोंको एकत्र कर मंदाग्निसे पकाओ, रस जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो कच्छदाद दूर हो, यह अर्कतैल कहलाता है।

तथा २–मैनशिल, हीराकसीस, आंवलासारगंधक, सेंधानोन सोनामक्खी, पत्थरफोडी, सोंठ, पिप्पली, कलहारी, कनेर, पवांर, वाय-

विडंग, चित्रक, दात्यूणी और निम्बके पत्ते ये सब अधेले अधेले भर लेकर जलके साथ महीन पीसो और इस पानीको २ सेर कडुवे तेलके साथ पकावे, पकते ही समय इसमें आकका दूध, थूहरका दूध, छटांक छटांकभर और ४ सेर गोमूत्र डाल दो, जब जलते २ रसादिक जलकर तेलमात्र अवशिष्ट रह जावे तब छानकर मर्दन करो तो असाध्य कच्छदाद, पामा, खुजली तथा रुधिरप्रकोपज समस्त रोग दूर होंगे, इसे कच्च्छूराक्षतैल कहते हैं।

दद्रुकुष्ठ यत्न– १ कूट, वायविडंग, पवांडके बीज, सरसों, तिल, सेंधानोन इन सबको खटाईसे महीन पीसकर लेप करो तो दद्रु नष्ट हो।

तथा २–दूब, हर्रकी छाल, सेंधानोन, पवांरेके बीज, कनेरकी छाल इन सबको कांजी या छांछमें पीसकर लेप करो तो दाद, कच्छदाद और खुजली ये सब दूर होंगे।

श्वित्रकुष्ठयत्न १–बहेडेकी छाल, हर्रकीछाल, कटुंम्बर (कैथका गूदा) और बावची इनका क्वाथ पिलाओ तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो।

तथा २–हरताल, मैनसिल, चिरमी और चित्रक इनको गोमूत्रमें महीन पीसकर लेप करो तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो।

तथा ३–विष्णुक्रान्ता (तिलंकठी), शंखाहुली, बावची खैरसार और आंवलेके चूर्णका सेवन करके पथ्यसे रक्खे तो श्वित्रकुष्ठ दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ४–४ टकेभर हल्दी, ६ टकेभर गौका घी, ४ सेर दूध, ५० टकेभर मिश्री, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर कालीमिर्च, १ टकेभर पिप्पली, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर वायविडंग, २ टकेभर नागकेशर, टकेभर निसोत, १ टकेभर त्रिफला, १ टकेभर केशर और १ टकेभर नागरमोथा इन सबको जुदे २ पीसकर घीमें सान लो और हल्दीका चूर्ण दूधमें डालकर दूधका खोवा बना लो तदनन्तर मिश्रीकी चासनीमें यह घीयुक्त औषधि और हल्दीयुक्त खोवा डालकर १ टके प्रमाणकी गोली बनालो जो इसकी गोली नित्य खिलाओ तो कुष्ठ, खुजली, फोडे और दाद ये सब रोग दूर होंगे इसे हद्रिराखण्ड कहते हैं।

तथा ५–पवांरके बीज, बावजी, सरसों, तिल, कूट, दोनों हल्दी और नागरमोथा इनको छांछमें पीसकर लेप करो तो खाज, व्योंची ये सब रोग दूर हों ।

कुष्ठमात्र यत्न १–उत्तम निर्धूम, श्वेत और बोझमें पहिलेके समान तवकिया हरतालकी भस्ममेंसे १ रत्तीकी मात्रा पुराने गुड़के साथ २१ दिन पर्यंत सेवन करके ऊपरसे चनेकी रोटी सांठीधानके चावल और गौका घृत खिलाओ और नोन खटाईका पथ्य रक्खो तो १८ अठारहों प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त और फिरंगवात ये सब दूर हों ।

तथा २–२ टंक पारा; २ टंक शुद्ध गंधक, टंक हरताल, २ टंक मैनसिल, ५ टंक बावची, २ टंक धमासा २ टंक सिंदूर, २ टंक दोनों हल्दी इन सबको गौके घीमें महीन पीसकर लेप करो और दो प्रहर पर्यंत धूपमें बिठलाकर स्नान कराओ तो कंडू, दद्रु; कृमि और सब कुष्ठमात्र ३ दिनमें नष्ट होंगे (धूपमें शक्ति देखके बैठाना)

तथा ३--२५ टके भर पलासकी जड़के सूखे बक्कलोंको जला कर इनकी राखको दृढ कोरी (नवीन) हंडीमें भर दो और उस राखके बीचमें २५ उत्तम तवकिया हरताल दबाकर हंडीका मुँह सराइसे ढाक दो तदनंतर इसे कपड़मिट्टीसे बंद करके सुखा लो, इस सूखी हंडीको चूल्हेपर चढाकर ११ ग्यारह प्रहरपर्यंत आंच दो और स्वांगशीतल होजानेपर हरतालसहित राखको पीसकर कपड़छान करके इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा १ मासे कच्चे (बिन सेंके) जीरेके चूर्णके साथ पानमें रखकर खिलाओ और ऊपरसे शीतल जल पिलाकर पवन और धूपमें बचावसे चनेकी अलोनी रोटी खिलाओ तो १ मंडल (४० दिनका मण्डल) पर्यंत सेवन करनेसे १८ प्रकारके कुष्ठमात्र, व्रण मात्र, वातरक्त, पिडिका और वातव्याधि ये सब रोग दूर होंगे ।

तथा ४–१ टंक नीलाथोथा, १ टंक सुहागा और ५ टंक बावचीको जलभंगरेके रसका ७ पुट देकर लेप करो तो कुष्ठमात्र दूर हों, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं ।

तथा ५--५टंक पारा, शंखका खार, आधेझारेका खार तिलखार, सांठीका खार, हर्रका खार, अडूसेका खार, पटोलका खार, अरंडका खार, जवाखार, सज्जी, सुहागा, नौसादर आंवलासार गंधक, पांचो

नोन, कूट, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, डांसरेकी जड़, काणगचकी जड़, कलिहारीकी जड़, हल्दी, जमीकंद, गोरखमुंडीका खार, काहूका खार, पिप्पलीका खार, राई, सरसों, सिंदूर, शिलाजीत, पापडखार, कपोल, लोध, थूहर की जड़, आककी जड़, नीलाथोथा, चित्रका और अर्कपंचांगखार इन सबको एक एक टके भर लेके गोमूत्रके साथ पीस लो, तदनंतर यह औषधी मिश्रण महिषीमूत्र, अश्वमूत्र, अजामूत्र, हस्तीमूत्र, उष्ट्रमूत्र, नींबूका रस, बिजौरेका रस, नारंगीका रस, चनाखार, मुंगनेका रस और राईके संयोगकी बनी हुई सात धान्यकी कांजी ये सब एक ताम्रपात्रमें एकत्र कर उसका मुख बन्द कर दो और २१ दिन रक्खो,रखनेके पश्चात् इसका लेप करो तो समस्त कुष्ठमात्र, गंडमाला, विसर्प, अर्श और वातरोग ये सब १ मासके लेपसे दूर होंगे, यह कुष्ठ-महालेप रससंग्रहमें लिखा है।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डेकुष्ठादियत्ननिरूपणं
नाम चतुस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३४ ॥

अथ शीतपित्त, उदर्द कोढ़, उत्कोढ़, अम्लपित्त, विसर्प

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ।
बाणरामतरंगेऽस्मिंल्लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

इस ३५ पैंतीसवें तरंगमें शीतपित्त, उदर्द कोढ़, उत्कोढ़ अम्लपित्त और विसर्प रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं।

शीतपित्त उदर्द उत्कोढ यत्न १–रोगीको वमन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द दूर होंगे।

तथा २–पटोल, निम्बकी छाल, अडूसा, त्रिफला, गूगल और पिप्पलीका क्वाथ पिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे।

तथा ३–विरेचन (जुलाब) दो तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे।

तथा ४–मिश्रीके योगसे कुटकीका विरेचन दो तो शीतपित्त और उदर्द जावेंगे।

तथा ५–शरीरमें कडुवे तेलका मर्दन कर उष्ण जलसे स्नान करो तो शीतपित्त और उदर्द दूर होंगे।

तथा ६-मधुके साथ त्रिफलाका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे।

तथा ७-गुड़के साथ आंवलेका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर हो।

तथा ८-अदरखके रसके साथ पुराने गुड़का सेवन कराओ तो शीत पित्त, उदर्द दूर होंगे।

तथा ९-सोंठ, अजवायन, कालीमिर्च, पिप्पली और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ ७ दिन पर्यंत सेवन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द रोग दूर होंगे।

तथा १०—५ टंक अजमोद और ५ टंक गुड़ दोनोंको इकट्ठे खरल करके सात दिन पर्यंत नित्य खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे।

तथा ११-सरसों, हलदी और पवाँरके बीज तीनोंको कडुवे तेलमें महीन पीसकर लेप करो तो शीतपित्त और उदर्द दूर हों।

तथा १२-बकायनकी शाखाकी ५ टंक छालको पीसकर गोघृतमें लो तो पूर्व रोग दूर हों।

तथा १३-रक्तमोचन (फस्त) कराओ तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे।

तथा १४-आंवले और नीमके पत्ते घीमें तलकर उस घीमेंसे १ टके भर नित्य १५ दिन पर्यंत खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द, फोड़े रक्तपित्त, कृमि, कण्डुरोग तथा रक्तदोषके रोग भी नष्ट होंगे।

तथा १५-सेर भर छिले हुए अदरखके बारीक टुकड़े आधा सेर गोघृत में मिलाकर दो सेर गोदुग्धमें डाल दो, तदनन्तर इस दूधका खोवा बनाकर सेरभर मिश्रीकी पतली चासनीमें डाल दो और पीपलामूल, मिर्च, सोंठ, चित्रक, वायविडंग, नागरमोथा, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची, कचूर ये सब एक एक टके भर छानकर चूर्ण बना लो, फिर यह चूर्ण उपर्युक्त चासनीमें डालकर एकजीव कर दो जो इसमेंसे एक टके भर नित्य सायंकालके समय खिलाओ तो शीत पित्त, उदर्द, कोढ, उत्कोढ, राजरोग, रक्तपित्त, श्वास, कास, अरुचि, वात, गुल्म, उदावर्त, शोथ, खुजली, कृमि और उदररोग ये सब दूर

होकर बल वीर्य और पुष्टता प्राप्त होगी. इसे आर्द्रकखंडावलेह कहते हैं। ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

पित्ति यत्न १६--सेंधानोन घीमें पीसकर शरीरमें मर्दन करो और लाल कम्बल उढाओ तो (शीतपित्तादि) उपद्रव पित्तिनाम एक प्रसिद्ध रोग नष्ट होवेगा।

तथा १७--गोघृत, गेरू, सेन्धानोन और कुसुम्भपुष्पोंको खरल करके शरीरमें उबटन करो तो पित्ति शमन हो।

तथा १८--चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचंदन और नीमकी छालका क्वाथ सेवन कराओ तो पित्ति, पित्तरोग, फोडे, दाह, ज्वर, मुखशोष, तृषा, और वमन ये सब दूर होंगे।

तथा १९--जंगली कंडा (छेना, उपली, गोवरी) की राख (भस्म) शरीरमें मर्दन करो तो पित्ति दूर हो।

तथा २०--नागरबेलके पानके रसमें फिटकरीको महीन पीसकर जो मर्दन करो तो पित्ति मिट जावे।

तथा २१--१ टके भर लहसन खिलाओ या ५ टंक त्रिफलाका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पित्ति मिट जावेगी।

तथा २२--१ टके भर मेंथीदाने १ टक भर काली मिर्च, १ टके भर हल्दी इन तीनोंको महीन पीसकर अदरखके रसकी ४ पुट दो और २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो पित्तिके समस्त विकार दूर होंगे। ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

अम्लपित्त यत्न १--पटोल, नीमकी छाल, और अडूसा इनका क्वाथ पिलाकर वमन कराओ तो अम्लापित्त शांत हो।

तथा २--मैनफल और सेन्धानोन मधुके साथ चटाकर वमन कराओ तो अम्ल पित्त दब जावेगा।

तथा ३--विरेचन देनेसे भी अम्लपित्त दबजाता है।

तथा ४--निसोत और आंवला मधुके साथ चटाकर विरेचन कराओ तो अम्लपित्त शान्त हो जावेगा

तथा ५--ऊर्ध्वभागी अम्लपित्त वमनसे और अधोभागी अम्लपित्त विरेचनसे दूर होगा।

तथा ६–यव, गेहूँ, या चावलका सत्तू मिश्रीके साथ खिलाओ तो अम्लपित्त शान्त होगा।

तथा ७--जौ (यव), अडूसा, आंवला, तज, पत्रज, और इलायचीका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो।

तथा ८--गुर्च, निंबछाल, पटोलका क्काथ मधुके संयोगसे पिलाओ तो अम्लपित्त दूर होगा।

तथा ९–अडूसा, गुर्च, पित्तपापडा, चिरायता नीमकी छाल, जलभंगरा, त्रिफला और कुलथीके क्काथमें मधु डालकर पिलाओ तो अम्ल पित्त दूर हो। इसे दशांगक्काथ कहते हैं।

तथा १०--भोजनके पश्चात् आंवलेका रस पिलाओ तो अम्लपित्त, वमन, अरुचि, दाह, तिमिर मोह और मूत्रदोष ये सब रोग दूर होकर वृद्ध भी तरुण जावेगा।

तथा ११–पक्के पेठेकी छाल और बीज नीकालकर कूटके १०० टके भर रस निकालो, यह रस १०० टकेभर गोदुग्ध, ८ टकेभर आंवलेका चूर्ण, आठ टके भर मिश्री और ८ टके भर गोघृतके साथ मिट्टीके बर्त्तनमें डालकर मंद मंद आँचसे पकाओ और औटते औटते अवलेहकी चासनी सदृश हो जानेपर उतार कर ५ टंकभर या १ टकेभर नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो।

तथा १२--नारियलका खोपरा छीलकर खरलमें महीन पीसो और गौके दूधमें डालकर खोवा बनाओ और खोपरेसे चौगुने बिनोलेके रसमें शक्करकी चासनी बनाकर उक्त खोवेमें मिलादो, तदनंतर धनियां। पीपलामूल, तज, पत्रज नागकेशर और इलायची ये सब एक एक टंक महीन पीसकर इनका चूर्ण भी चासनीमें डालदो और सबको भली भांति मिश्रित कर ५ टंक या एक टके प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त, रक्तपित्त और शूल ये सब दूर होंगे, इसे नारिकेलखण्ड कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १३–१ भाग द्राक्षा (धोकर बीजे निकाल दो) का गूदा, १ भाग बडी हर्रकी छालका चूर्ण और २ भाग मिश्री इन तीनोंको खरलकर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और १ गोली नित्य

खिलाओ तो अम्लपित्त, हृदय तथा कण्ठकी दाह, तृषा, मूर्च्छा, चक्कर, मंदाग्नि और आमवात ये सब रोग दूर होंगे । इसे द्राक्षादिगुटिका कहते हैं ।

तथा १४–सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, त्रिफला, इलायची, नागरमोथा, वायविडंग और पत्रज ये सब तुल्य भाग, इन सबके समान लौंग, इन सबके दूनी निसोत तथा इन समस्त औषधोंके समान मिश्री लेकर सबका कपड़छान चूर्ण करडालो, जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अम्लपित्त दूर हो, इसे अविपित्तक चूर्ण कहते हैं ।

विसर्परोगयत्न १—वमन, विरेचन, रक्तमोचन और औषधोंका लेप, औषधियोंका तेल लगाना ये प्रत्येक कार्य विसर्परोगको नष्ट करनेवाले हैं ।

वातजविसर्परोगयत्न २–रास्ना, कमलगट्टा, देवदारु, खरैंडी, रक्त चन्दन, महुआ इन सबको दूध या घृतमें महीन पीसकर लेप करो तो वातजविसर्प दूर हो ।

पित्तजविसर्प यत्न ३–किशोरे, सिंघाडे, कमलगट्टे, जलका सेवार (काई) और रक्तचन्दन इन सबको धोये हुए गोघृतमें खरल करके या शीतल जलमें महीन पीसकर लेप करो तो पित्तजविसर्प, दूर हो ।

कफजविसर्प यत्न ४–त्रिफला, कमल गट्टे, खश, लजनी (लजालू) जवासा, कनेरमूल और नरसलकी जड़को जलमें महीन पीसकर लेप करो तो कफका विसर्प दूर हो ।

विसर्पमात्रयत्न ५–सिरसकी जड़, मुलहटी, रक्तचन्दन, इलायची' अडूस, तगर, तीनों हल्दी और नेत्रवाला इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विसर्पमात्र दूर हो ।

तथा ६–चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचन्दन और नीमकी छाल इनके २ टंक चूर्णका क्वाथ पिलाओ तो विसर्प, दाह, ज्वर, शोध, खाज, फोड़े और वमन इन सबका शमन होगा ।

तथा ७–सतान्यूके बक्कल, कणगच, कलहारीकी जड़, थूहरका दूध, आकका दूध, चित्रक, जलभंगरा, हल्दी, सिंगीमुहरा ये सब टके टके

भर लेकर अधकुचले करो और २ सेर पानी २ सेर गोमूत्र, सेरभर तिल्लीके तेलके साथ एकत्र कर मंद मंद आंचसे पकाओ तदनंतर रसादिक जलकर तेलमात्र रहजानेपर छानके शरीरमें मर्दन करो तो विसर्प, फोड़े और व्योंची भी दूर होगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा ८–बड़की जटा (परे), नागरमोथा, केलेका मध्यगर्भ (गाभा) इन तीनोंको धोये हुए घीमें खरल करके लेप करो तो विसर्प और ग्रंथि भी दूर होगी ।

तथा ९–शिरसकी छालको १०० बारके धोये हुए घृतमें खरल करके लेप करो तो विसर्पमात्र दूर हों ।

तथा १०–जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो तो विसर्प, कोढ़ और शीतला ये सब रोग दूर होवेंगे, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे शीतपित्तोदर्दकुष्ठाम्लपित्तविसर्परोगाणां यत्ननिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

अथ स्नायुक–विस्फोटक–मसूरिका–फिरंगवात चिकित्सा लिख्यते स्नायुकविस्फोटमसूरिका-फिरङ्गवातरोगाणां भंगे रसधनंजये ॥ १ ॥

इस ३६ छत्तीसवें तरंगमें स्नायुक, विस्फोटक, मसूरिका और फिरङ्गवात रोगोंकी चिकित्सा क्रमानुसार लिखते हैं ।

स्नायुकरोग यत्न १–५ टंक हिंग शीतल जलके साथ ३ दिन पर्यंत नित्य सेवन कराओ तो स्नायुक दूर होकर फिर कदापि न होगा ।

तथा २–ऽ। पावभर घृत नित्य पान कराओ तो स्नायुकरोग दूर होगा ।

तथा ३–तीन चार पैसे भर निर्गुण्डीका रस नित्य पिलाओ तो तीनही दिनके सेवनसे स्नायुक (नहरुआ) मिट जावेगा ।

तथा ४–कलौंजीको शीतल जलके साथ ७ दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो स्नायुक रोग दूर होगा ।

तथा ५--अरंडमूलका रस गोघृतके साथ ७ दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो स्नायुक रोग मिट जावेगा।

तथा ६--अतीस, नागरमोथा, भारंगी, सोंठ, पिप्पली और बहेड़की छालका ७ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो स्नायुक रोग दूर हो।

तथा ७--सहिंजनेकी जड़ और पानको कांजीमें पीसकर सेंधानोनके साथ स्नायुकपर बांधो तो स्नायुक (नहरुआ) दूर होगा।

तथा ८--कटियालीकी जडको जलमें पीसकर बांधो तो स्नायुक (वाला) निश्चय दूर हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ९--कूट, सोंठ, सहिजनेकी जड़ इन तीनोंको जलमेंमहीन पीसकर लेप करो या पिलाओ तो स्नायुक रोग दूर हो।

तथा १०--धतूरेके पत्तोंमें तेल लगाकर नहरुआ पर बांधो तो नहरुआ अच्छा हो जावेगा।

तथा ११--बब्बूलके बीजोंको कांजीमें पकाकर बांधो तो नहरुआ अच्छा होगा।

तथा १२--निम्नलिखित मन्त्रसे गुडको सातवारमंत्रित करके रोगीको खिलाओ तो उसका नहरुआ अच्छा होगा।

" ॐ द्विरूपनाथ वामनके पूत सूतकाटि किये बहुत पाके फूटे पीड़ा करे तो विरूपनाथकी आज्ञा फुरै "

इति स्नायुकनाशकमन्त्रः

तथा १३--मधुके साथ पारावत (कबूतर) कीविष्ठाकी गोली बनाकर १ गोलीनित्य सातदिन पर्यन्त निगलवा दो तो नहरुआ कभी न निकलेगा, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १४--सज्जीको मधुके साथ पीसकर लेप करो तो स्नायुक दूर हो।

वातविस्फोटक यत्न १--रास्ना, दारुहल्दी, खश, कटियाली गुरुच, धनियां और नागरमोथा इनका क्वाथ पिलाओ तो वातका विस्फोटक दूर होगा।

पित्तविस्फोटक यत्न २-दाख, कुम्भेर, पटोल, खारक, नीमकी छाल, अडूसा, कुटकी, जवाखार और चावलोंकी लाही इन सबका क्वाथ बनाकर पिलाओतो पित्तविस्फोटक दूर हो ।

कफविस्फोटक यत्न ३-चिरायता, बच, अडूसा, त्रिफला, इन्द्रयव, कूडेकी छाल और पटोल इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो कफका विस्फोटक दूर हो ।

विस्फोटकमात्र यत्न ४-लंघन, वमन, विरेचन और पथ्य भोजन, पुराने चावल, यव, गेहूँ, मसूर और हर्रसेवन, ये सब कार्य विस्फोटक (शीतला) ग्रसित रोगीको लाभकारी हैं ।

तथा ५-दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो विस्फोटक शमन हो ।

तथा ६-चिरायता, कुटकी, नीमकी छाल. नागरमोथा, मुलहटी, पटोल, पित्तपापडा, खश, त्रिफला, और कूडेकी छाल, इनका क्वाथ पिलाओ तो सब प्रकारका विस्फोटक दूर हो ।

तथा ७-चावल और कूडेकी छालको जलमें पीसकर विस्फोटकके व्रणपर (फफोलों) पर लेप करो तो विस्फोटक दूर हो ।

तथा ८-गुर्च, पटोल, चिरायता, अडूसा, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा खैरसार इन सबका क्वाथ पिलाओ तो विस्फोटक रोगजन्य ज्वर दूर होगा ।

तथा ९-चंदन, नागकेशर, गौरीसर, चौलाईकी जड़, शिरसका बक्कल, और चमेलीके पत्ते इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा ।

तथा १०-कमगट्टा, रक्तचन्दन, लोध खश और गौरीसर इनको जलके साथ महीन पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा ।

तथा ११-जियापोतेकी मींगीको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक, कक्षा, गलगंड, कर्णग्रंथि, फोड़े, फुन्सीमात्र दूर होंगे ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा १२-किशोर गूगल और दशांगका लेप भी विस्फोटक नाशक है ।

विशेषतः-यदि विस्फोटक पक जावे तो जंगली कंडोंकी राख रोगीकी शय्यापर बिछारकर सुलाओ नीमकी डाली (झौंर) से मक्खियां उडाओ, इसके ज्वरमें शीतल जल पिलाओ, पवित्र होकर शीतलादेवीपर शीतल जलकी पवित्रधारा छोडो तथा शीतलादेवीकी पूजा करो, विशेष यत्न मत करो यदि करना भी हो तो ये यत्न करो।

शीतलाका यत्न १-हल्दीको शीसल जलमें घोलकर पिलाओ तो शीतलाके व्रण बहुत थोड़े निकलेंगे।

तथा २-श्वेत चन्दनको केलेके रसमें या महुयेको अडूसके रस किंवा मधुमें पीसकर पिलाओ तो शीतला (विस्फोटक) के व्रण बहुत थोड़े निकलेंगे तथा दैवकृपासे नहीं भी निकलें, ये दोनों उपाय शीतलाका पूर्वरूप होते ही करना चाहिए।

वर्तमान शीतला यत्न=जिस घरमें शीतलावाला बालक रहे उस घरके सम्मुख नीमके बन्दनवारे बांधो, विस्फोटकजन्य ज्वर दूर करने के लिये चन्दन, अडूसा, गुर्च और दाखका क्वाथ पिलाओ, श्रद्धाभक्ति समेत जप, हवन, दान, ब्राह्मण-भोजन शिव अभिषेक आदि कराओ, तथा निम्नलिखित शीतलाष्टकका पाठ कराओ तो उस बालकी रक्षा होकर शीतलादेवीकी कृपा पूर्वक विस्फोटक रोगसे छुटकारा होगा।

अथ शीतलाष्टकम् ॥ स्कन्द उवाच ॥

"भगवन् देवदेवेश शीतलायाः स्तवं शुभम्। वक्तुमर्हस्यशेषेण विस्फोटकभयापहम् ॥ १ ॥ ईश्वर उवाच॥ वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम्। यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः। विस्फोटकभयं घोरं छिप्रं तस्य विनश्यति ॥ ३ ॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा सम्पूजयेन्नरः। विस्फोटकभयं घोरं कुले तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शीतले तनुजान रोगान् नृणां हर सुदुस्तरान्। विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ५ ॥ गलगंडग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा

१ पूर्वामृतसागरमें शीतलाका नाम मात्र तथा चिकित्सानिदान विस्फोटकसे पृथक भी लिखा है परन्तु वैद्यकशास्त्रमें विस्फोटके रोगपर शीतलादेवीके आराधन लिखे हैं। इसलिये हमने शीतलाकी निदान चिकित्सा विस्फोटकसे जुदी नहीं लिखी।

नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यांति संक्षयम् ॥ ६ ॥ न मंत्र नौषधं किंचित् पापरोगस्य विद्यते । त्वमेका शीतले त्राहि नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ७ ॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां विचिंतयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ८ ॥ श्रोतव्यं पठितव्यं वै नरैर्भक्तिसमन्वितैः । उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ९ ॥ शीतलाष्टकमेतच्च न देयं यस्य कस्यचित् । किन्तु तस्मै प्रदातव्यं भक्तिश्रद्धान्विताय च ॥ १० ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे शीतलाष्टकं संपूर्णम् ॥ " इति विस्फोटकयत्न ॥

मसूरिकायत्न १-मसूरिका निकालनेके आरंभमें ही श्वेतचन्दनको भिगोकर घिसके सात दिनपर्यन्त पिलाओ तो बहुत थोड़ी मसूरिका निकलेगी ।

वातजमसूरिकायत्न १-दशमूल, रास्ना, आंवला, खश, धामसा, गुर्च, धनियां, और नागरमोथा इनका क्वाथ पिलाओ तो बादीकी मसूरिका दूर हो ।

तथा २-मंजीठ, बड़के अंकुर, सिरसके बक्कल, गुलाबकी छाल इनको घीके साथ खरल करके या इन सबका घी बनाके लगाओ तो बादीकी मसूरिका अच्छी होगी ।

तथा ३-गुर्च, महुआ, दाख, मूर्वा और अनारके बक्कल इनका क्वाथ गुडके साथ पिलाओ तो बादीकी मसूरिका दूर होगी ।

पित्तजमसूरिका यत्न १ पटोलकी जड़का क्वाथ या महुएका रस पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी होगी ।

तथा २-नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, पाठ, पटोल, खश, दोनों चन्दन' कुटकी, आंवला, अडूसा और जवासेका क्वाथ मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी हो ।

कफजमसूरिका यत्न १-अडूसा, चिरायता, त्रिफला, जवासा, पटोल, नीमकी छाल इनका क्वाथ मधुके संयोगसे पिलाओ तो कफकी मसूरिका दूर हो ।

रक्तजमसूरिका यत्न १-रक्तमोचन कराओ तो रक्तजमसूरिका अच्छी हो ।

मसूरिकामात्र यत्न १–पाठ, पटोल, कुटकी, दोनों चन्दन, खश, आंवला, अडूसा और जवाखार इनका क्वाथ मिश्रीके योगसे पिलाओ तो मसूरिकामात्र दूर हो।

मसूरिकाजन्यकंठस्थव्रण यत्न १–आंवला और महुएके क्वाथमें मधु डालकर इस रसके साथ कुल्ले कराओ तो मसूरिका और गलेमें व्रण हो सो अच्छा हो।

मसूरिकाजन्यनेत्ररुद्ध यत्न १–महुएके पानीमें अरंड औटाकर इस जलसे मसूरिकामें चिपकी हुई आंखें धोवो तो आँखें खुल जावेंगी।

मसूरिकाजन्यनेत्रव्रण यत्न १ महुआ, त्रिफला, दारुहल्दी, खश, मूर्वा, कमलगट्टा, लोध, मंजीठ इन सबको जलमें पीसकर लगाओ तो मसूरिकासे उत्पन्न हुए आंखोंके फोड़े अच्छे हों और वहां पुनः न होंगे।

तथा २–बड़, पिप्पली और गूलर इन तीनोंके बक्कलोंको पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो नेत्र अच्छे होजावेंगे।

तथा ३–जंगली कंडोंकी राख लगाओ तो मसूरिकामात्र अच्छी हो।

विशेषतः–मसूरिकाके रोगोंको षष्टितंडुल, मूंग, मसूर और मिश्री मनमानी दो परंतु नोनका विशेष बचाव रक्खो। यदि खिलाना चाहो तो थोड़ा बहुत सेंधानोन खिलाओ और सब आहार विहार मर्यादापूर्वक रक्खोगे तो मसूरिकासे तुरंत आरोग्य होवेगा, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

फिरंगवात यत्न १–४ रत्ती शुद्ध रसकपूरको गेहूँके मसले हुए आटेकी गोलीके बीचमें दाबके वह गोली लौंगके महीन चूर्णसे लपेट दो और वह गोली दांतोंका स्पर्श बचाकर निगलवा दो तदनन्तर नागरवेलके पत्ते (कत्था चूना रहित) खिलाओ, रोगीको तेल खटाई और नोनसे पथ्य कराके श्रम और धूपका बचाव रक्खो तो (इस विधिपूर्वक रसकपूर सेवन करनेसे) दो चार दिनमेंही फिरंगवात दूर होगा।

तथा २–१ टंक शुद्ध पारा, २ टंक खैरसार, २ टंक अकरकरा और ३ टंक मधु इन सबको इकट्ठे खरल करके ७ गोलियां बनालो

और १ गोली नित्य प्रातःकाल शीतल जलके साथ सेवन कराके नोन खटाईका बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर हो इसे सम्प्रसारिणी गुटिका कहते हैं।

तथा ३-२ टंक पारा, २ टंक आंवलासारगन्धक और २ टंक चावल इनको खरल करके ७ पुडियां बनालो और प्रतिदिन १ पुडियाकी धूनी इंद्रियमें दो तो फिरंगवात ७ दिनमें दूर हो।

तथा ४ पीले फूलवाली खरैंटीके पत्तोंका १ टंक रस और एक टंक पारा दोनों रोगीके हाथोंमें (पारा लोप होजाने तक) मलवाते जाओ और वह पारा-मिश्रित खरैंटीका रस, हाथोंमें पूर्णरूपसे भिद-जानेपर (कुछ कुछ पसीना निकलनेतक) हाथोंको आंचसे तपाओ और नोन खटाईका बचाव रक्खो तो ७ दिनके प्रयत्नसे फिरंगवात दूर होगा।

तथा ५-८ टंक नींबूके पत्ते, ७ टंक हर्रकी छाल, ७ टंक आंवला, १ टंक हल्दी, और १ टंक पारा इन सबको खरल करके प्रतिदिन ४ मासे शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो ७ दिनमें बाहिरी और भीतरी दोनों ओरका फिरंगवात दूर हो।

तथा ६-बावचीका ४ मासे चूर्ण मधुके साथ १५ दिनपर्यन्त चटाकर नोन खटाईका बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर हो।

तथा ७-१ टंक पारा, कठसेला (खटसेरुवा) के रसमें खरल करके अकरकरा, गूगल और गोघृत ये प्रत्येक ५ पांच टंक पिलाओ, और इसमेंसे १ टंक चूर्ण ९ टंक त्रिफलाका चूर्ण और पांच टंक मधुके संयोगसे २१ दिनपर्यंत मर्दन करके चटाकर नोन और खटा-ईका बचाव रक्खो तो फिरंगवात दूर होगा, ये सब यत्न भावप्रका-शमें लिखे हैं।

तथा ८-विरेचन और रक्तमोचनसे भी फिरंगवात दूर होगा।

तथा ९-पारा, हिंगुल, नीलाथोथा, हीराकसीस और आंवलासार-गंधक इन सबको प्रथम शुद्ध करके खरल करो और इस बुकनीको सूखीही फिरंगवात पर मलो, या जलके साथ लेप करो तो फिरंगवात दूर हो, इसे सूतकादि लेप कहते हैं।

तथा १०--१००बार धोया हुआ गोघृत लेप करो तो फिरंग वात दूर हो।

तथा ११-१ टकेभर कटु तैल, ५ टंक मोम, अधेलेभर बेरजा, अधेलेभर कपेला, २ टंक सिंदूर; २ टंक शोरा और २ टंक मुरदासिंगीको महीन पीसके पीतलके पात्रमें मन्द मन्द आंचसे पकाओ तदनंतर शीतल होनेपर हाथसे मलके काच या चीनीके पात्र तथा काष्ठके डब्बेमें रखलो जो इसकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो फिरंग जन्य व्रण, उपदंश और घाव ये सब अच्छे होवेंगे, इसे मलहर मलहम कहते हैं।

तथा १२-आधापाव सिंदूर और सेरभर गोघृत दोनोंको भलीभाँति मथकर शरीरपर लेप करो और ऊपरसे पत्ते लेपटकर केवल क्षीर (खीर) मात्र खिलाओ तो व्रण, विस्फोटक और फिरंगजन्य फोड़े ये सब अच्छे हों।

तथा १३-पारा और सीसेकी कजली गेहूँके तुस (भूस्सा), इमलीके बीज (चीये,) निम्बकेपत्ते और घरका धुवांस (धौंसा) इन सबको नीबूके रसमें खरल करके २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और शरीरको वस्त्रसे ढांककर १ गोलीकी धूनी ७ दिन पर्यन्त दो, और ऊपरसे खीरके व्यतिरिक्त और कुछ न खिलाओ तो सब फिरंगवात दूर हो।

तथा १४-त्रिफला, खैरसार और जायपत्रीको जलमें औटाकर इस जलसे मुख धुलाओ (कुल्ले कराओ) और धुवां (भाफ) दो तो फिरंगवात दूर हो।

तथा १५-३ टंक कालाजीरा, ३ टंक कूट और १८ टंक पुराना गुड़ इन सबको खरल करके १५ गोली बनाओ और इनमेंसे १ गोली प्रभात और एक संध्याके समय खिलाकर घृतयुक्त गेहूँकी रोटी खानेको दो तो फिरंगवात दूर हो, इसे फिरंगगजकेसरीरस कहते हैं।

तथा १६-६ मासे हिंगुल, १० मासे सुहागा, १० मासे अकरकरा और १० मासे मोम इन सबको खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ और बुई वृक्षके कोयलेकी आग कर नित्य १ गोलीकी धूनी दो तो फिरंगवात दूर हो।

तथा १७-मुञ्जना, बड़, झाऊ, नीम, जलभांगरा, कटियाली और कचनार इन सबके बक्कलका काथ ७ दिनतक पिलाओ तो फिरंगवात दूर हो ।

तथा १८-हिंगुल और मैनशिलकी २ मासे बुकनी बेरीके कोयलोंककी आगपर धूनी देकर निर्वातस्थानमें कपड़ेसे ढांकदो तो फिरंगवात दूर हो ।

रसकर्पूरशांति १-यदि रसकर्पूरके सेवनसे मुखके मसूढ़े फूल कर मुँह आजावे तो पीपल, गूलर, छोटी जातिका बड़, बड़ी जातिका बड़ और वेत इन सबके बक्कलका काथ बनाकर कुल्ले कराओ तो मसूढे मिटकर मुखशोथ और पीडा आदि दूर होगी ।

तथा २-५ टंक जीरा और खैरसार इन सबको जलमें पीसकर मुखके छालोंपर लगाओ तो रसकर्पूरजन्य मुखपाक शांत होगा ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डेस्नायुकविस्फोटक--मसूरिका—
फिरगवातरोगयत्ननिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

अथ क्षुद्ररोग

अजगल्लिकाक्षुद्राणामामयानां यथाक्रमम् ।
मुनिरामतरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

इस ३७ सैंतीसवें तरंगमें अजगल्लिका प्रभृति क्षुद्ररोगों (छोटे रोगों) की चिकित्सा वर्णन की जावेगी ।

अजगल्लिकादि क्षुद्ररोगयत्न १--अजगल्लिकादि फुंसियोंका रक्तमोचन करानेसे वे सब अच्छी हो जावेंगी ।

तथा २-पक्वव्रण यत्नों (पहिले कहे गये हैं) से भी अजगल्लिकादि फुन्सियां शमन होवेंगी ।

तथा ३-फिटकरी और सौंफका खार जलमें पीसके लेप कराओ तो अजगल्लिकादि फुन्सियां अच्छी होजावेंगी ।

तथा ४-मैनसिल कूट और देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो वे फुन्सियां पकजावेंगी तब शस्त्रसे चीरकर पीव निकालके मलहमकी पट्टी लगा दो तो अजगल्लिका फुंसियां निश्चय अच्छी हो जावेंगी ।

विदारिका यत्न १-सहिंजना और देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो विदारिका अच्छी होगी ।

इरिवल्लिका यत्न १-पित्तज विसर्पके यत्न इसके भी नाशकारी होंगे ।

पनसिका यत्न १--प्रथम नीमके पत्तोंको बांधकर इसे पकाओ तदनन्तर मैनसिल, कूट, हल्दी और तिल्लीका लेप कर पूर्णरूपसे पकाओ तब शस्त्रसे चीरकर पीब निकलवाकर ऊपरसे मलहमकी पट्टी चढाओ तो पनसिका अच्छी हो जावेगी ।

पाषाणगर्दभ यत्न १--प्रथम जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो या उष्ण लेप करो तदनन्तर व्रणके समान यत्न करो तो पाषाणगर्दभ अच्छी होगी ।

वल्मीक यत्न १--प्रथम पकनेपर चीरकर नोन चित्रकका लेप करो और सर्वथा पीब निकल जानेपर अर्बुदरोगके यत्न करो तो वल्मीक अच्छी होगी ।

तथा २--जोंकसे रक्तमोचन कराओ तो वल्मीक अच्छी होगी ।

तथा ३--कुलथीकी जड, गुरच, किरमालेकी जड, नोन, दात्यूणी और निसोतको जलके साथ पीसकर उष्ण करो और थोडा घी मिलाकर लेप करो, तब पक जानेपर चीरकर निर्जीव (मुर्दार) मांस निकाल डालो और व्रणके मलहम पट्टी आदि उपाय करो तो वल्मीक अच्छी होगी ।

तथा ४--मैनसिल, इलायची, रक्तचन्दन, अगर, कूट, भिलावां, नीमके पत्ते, चमेलीके पत्ते इन सबको तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो शोथयुक्त वल्मीक फुन्सी भी अच्छी हो जावेगी, कक्षा तथा अग्निरोहिणी यत्न १--उत्पन्न होते ही रक्तमोचन कराओ तो दोनों अच्छी होंगी ।

तथा २--पित्तविसर्पके यत्न करो तो दोनों अच्छी होंगी ।

तथा ३--देवदारु, मैनसिल और कूट, इनको जलमें पीसके उष्ण करके लेप करो तो बगलबिलाई (कांखोलाई) और अग्निरोहिणी दोनों अच्छी हों ।

तथा ४--देवदारु, मैनसिल और कूट इनको पीसकर उष्ण करो और सहती सहती बांधो तो बगलबिलाई और अग्निरोहिणी अच्छी होंगी।

अवपाटिका यत्न १-चिकनी वस्तुका सहता २ सेंक करो तो अवपाटिका अच्छी हो।

निरुद्धप्रकाश यत्न—चूकेके रसमें तेल पकाकर इस तेलको लगाओ तो निरुद्धप्रकाश अच्छा हो।

तथा २—शूकरकी मेद (चर्बी) का सेंक करो तो निरुद्धप्रकाश दूर हो

सन्निरुद्धगुद यत्न—वातध्वंसक या साधारण तेलका सहता सहता सेंक करो तो सन्निरुद्धगुद अच्छा हो।

वृषणकच्छु यत्न १—राल, कूट, सेंधानोन और सरसोंको जलमें महीन पीसकर उबटन कराओ तो वृषणकच्छु रोग दूर होगा।

गुदभ्रंश यत्न१गोघृत आदि चिकने पदार्थोंका सहता सहता सेंक करो तो गुदभ्रंश दूर हो।

तथा २--कमलनीके पत्तोंको सुखाकर चूर्ण कर डालो और इसमेंसे २ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ नित्य खिलाओ तो गुदभ्रंश अच्छा हो।

तथा ३—चूहेका मांसका घी (चर्बी) निकली हुई कांचपर लेप करो तो कांच निकलना (गुदभ्रंश) अच्छा हो।

तथा ४--डांसरे, चित्रक, लूणरुया, बेलका गूदा, पाठ और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण गौकी छांछके साथ सेवन कराओ तो गुदभ्रंश अच्छा हो।

तथा ५—चूहेका मांस दशमूलके क्वाथमें तेलमें पकाकर इस तेलका लेप करो तो गुदभ्रंश और गूदशूल, भगन्दर ये सब दूर हों। इसे मूषकतेल कहते हैं।

तथा ६-जैसीमूषकतेलकी क्रिया है उसी तरह छछूँदरका तेल बनाकर लेप करो तो गुदभ्रंश दूर हो।

तथा ७-सँभालूका रस, बेरकी जड़का रस, दही, छांछ, सोंठ, जवाखार और घी इन सबको एकत्र कर पकाओ और सब रसादिक

जलकर घृतमात्र रहजानेपर छानकर इसमेंसे ४ टंक घी नित्यसेवन कराओ तो गुदभ्रंश दूर हो। इसे वागेशघृत कहते हैं।

शूकरदंष्ट्र यत्न १-जड़भंगरेकीजड़ और हल्दीको जलमें पीस कर सुअरके काटे हुए घावपर लगाओ तो सुअरकी डाढ़जन्य पीडा दूर हो।

अलस यत्न १-पटोल, मैनसिल, निम्बू,गोरोचन, काली मिर्च,तिल्ली, कटियालीका रस और कांजीमें कडुवा तेल पकाकर इसका मर्दन करो तो अलस (खारुआ) रोग दूर हो,

तथा २-कणगचके बीज, हल्दी, हीराकसीस, महुआ, गोरोचन, और हरताल इन सबको मधुके साथ महीन पीसकर लेप करो तो अलस रोग दूर हो।

पाददारिकारोगयत्न १-तेलको तपाकर सहता सहता सेंक करो तो ब्याऊँ (बिवाई) अच्छी हो।

तथा २-मोम और जवाखार घीमें मिलाकर ताते ताते बिवाईमें भरो तो अच्छी हो।

तथा ३-राल, सेंधानोन, मधु और घृतको तेलमें मथके ब्याऊँमें भरो तो ब्याऊँ अच्छी हो।

तथा ४-मधु, मोम, गेरू, घृत, गुड़, गूगल और रालको महीन पीसकर ब्याऊँमें भरो तो अच्छी होजावेगी।

तथा ५-धतूरेके बीज और जवाखार इनको कडुवे तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो बिवाइ अच्छी होगी।

कदररोग यत्न १-उष्ण तेलसे सेंको या दूधमें गुड़ मिलाकर बांधो तो पावमें कांटा या कंकर लगनेसे उत्पन्न हुई गांठ (टांका या टीपन) अच्छी होजावेगी।

तिलयत्न १-तिलको किसी वस्तुसे रगडकर सरसों, सज्जी, हल्दी, और केशरके जलके साथ महीन पीसके इसका उस रगडे हुए स्थानपर उबटन करो तो मिट जावेगा।

माष यत्न १-सज्जी, चूना और साबुनको जलके साथ पीसकर मसेपर लगाओ तो मसा दूर हो।

उग्रगंधा (लहसन) यत्न १-लहसनके मण्डलको धुरेसे रगड़के सरसों, हल्दी, कूट, सज्जी, जवाखार और केशरको जलके साथ खरल करके उबटन करो तो उग्रगंधा (लहसन लांछन) मिट जावेगा।

तथा २-अधेले भर हिंगुल, अधेलेभर सेंकाहुआ नीलाथोथा, १ टंक सिन्दूर और ७ टंक राल इन सबको ६ टके भर गोघृतके साथ कासेके पात्रमें ताम्रदंड या लोहदंडसे तीन दिनपर्यंत रगड़कर काजलसदृश होजानेपर लेप करो तो लहसन, मसे, तिल, फोडे और खुजाल आदि सब दूर होवेंगे।

तथा ३--२ टंक कालाजीरा, ५ टंक नौसादर, ७ टंक सीपका चूर्ण और २ टंक नीलाथोथाके चूर्ण अरणीके रसकी ७ पुट फिर जलभंगरेके रसकी ३ पुटदेकर धूपमें सुखाओ और बछडी (बछिया) के मूत्रमें गोली बनाकर बछड़ेके मूत्रमें घिसकर लेप करो तो लहसन, मसे और तिल ये सब विकार दूर होवेंगे।

चिप्परोगयत्न १--जोंक आदि द्वारा रक्तमोचन कराओ तो चिप्प दूर हो।

तथा २--सुपारीकी भस्म, कत्था, कषेला, मुर्दासिंगी, नीलाथोथा इन सबका भुर्का (चूर्ण) करके लगाओ तो चिप्प रोग अच्छा होगा।

तथा ३--हर्रको हल्दीके रसके साथ लोहपात्रमें पीसकर उष्ण करके लगाओ तो चिप्परोग अच्छा हो।

कुनखरोग यत्न १--एक मासे सार (कांतिसार) मधुके साथ सेवन कराओ; या कुटकीका साधन कराओ तो कुनख रोग दूर हो।

कंडू यत्न १--१ भाग आंवलासारगन्धक, २ भाग पारा और तीन भाग नीलाथोथा इन तीनोंको गोघृतके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे घोटकर लेप करो तो शरीरकी खुजालमात्र दूर होगी।

पलितरोगयत्न १--२ टंक लोहेका चूर्ण, २ टंक आमकी गुठली २ टंक आंवला, २ टंक बडी हर्रकाचूर्ण, १ टंक बहेड़ेका चूर्ण इन सबका चूर्ण लोहपात्रमें जलभंगरेके रसके साथ २ दिन पर्यंत भिगोकर बालोंमें लेप करो तो श्वेत बाल काले हो जावेंगे।

तथा २--केतकीकी जड़, या केवड़ेकी जड़, मुंगनेके फूल, कुम्भेरकी जड़, लोहचूर, जलभंगरा और त्रिफला इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलको लोहपात्रमें भर दो और १ मास पर्यंत भूमिमें गड़ा रहने दो; फिर निकालकर श्वेत बालोंमें लगाओ तो श्याम होजावेंगे ।

तथा ३--त्रिफला, निम्बपत्र, लोहचूर और जलभंगरेका रस इन सबको भेड़ीके मूत्रके साथ पीसकर बालोंपर लेप करो तो श्याम हो जावेंगे ।

तथा ४--१ मासे पापड खार, १ मासे सिंदूर, १ मासे मुरदासिंगी और ८ मासे चूना इन सबको पानीके साथ पत्थर पर ३ घड़ी तक रगड़के (नखपर लगानेसे श्याम होनेपर) बालोंमें लगाओ तो श्याम होजावेंगे ।

तथा ५--बड़ बड़ नये माजूफल भभूंदरमें निर्दाग सेंकते सेंकते फट जानेपर निकाल लो; तदनंतर १ माजूफल, २ मासे शंखजीरा, ४ रत्ती नीलाथोथा, ३ रत्ती नौसादर, २ रत्ती लौंग, २ रत्ती फिटकरी और १ मासे लोहसार इन सबको आंवलेके रसके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे १ प्रहरपर्यंत घोटकर (नखपर लगानेसे काला होनेपर) श्वेत बालोंको प्रथम आंवलेके रससे धोओ और इसका लेप लगाकर ऊपरसे १ प्रहरपर्यंत अरंडके पत्ते बांधके पुनः आवलोंके जलसे ही धो डालो तो श्वेत केश श्याम हो जावेंगे ।

तथा ६--खानेका चूना, या लुहारकी भट्टीकी राख, या कौड़ीकी भस्म इनमेंसे किसी एकको सीसेसे रगड़कर कुछ गोपीचन्दन और १ मासे मुरदासिंगी मिलाओ तदनंतर पुनः रगड़कर (नखपर लगानेसे काला हो जानेपर) श्वेत बालोंपर लगाकर ऊपरसे अरंडके पत्ते बांध दो तो श्वेत बाल श्याम हो जावेंगे ।

उदरी यत्न १--पटोलके पत्तोंके रसमें कुटकी पीसकर लेप करो तो गये हुए बाल पुनः जम (ऊग) आवेंगे ।

तथा २--हाथी दांतकी राखको बकरीके दूधमें मिलाकर लगाओ तो गये हुए बाल पुनः आवेंगे ।

तथा ३--कमलनाल, द्राक्षा, तेल, घी और दूध इन सबको इकट्ठे खरल करके लगाओ तो बाल पुनः जम आवेंगे ।

तथा ४-चमेलीके पत्ते, कणगचकी जड़, कनेरमूल (जड़) और चित्रकको तेलमें पकाकर उस तेलका लेप (या मर्दन) करो तो बाल ऊग आवेंगे ।

चांई यत्न-अधजली चिरोंजीको जलसे पीसकर लेप करो तो चांई दूर होवेगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे अजगल्लिकादिक्षुद्ररोगाणां यत्ननिरूपणं नाम सप्तत्रिंशस्तरंगः ॥ ३७ ॥

अथ शिरोरोग, नेत्ररोग

शिरोरुजां नेत्ररुजां चिकित्सा च यथाक्रमम् ।
वसुवैश्वानरे ह्यत्र तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस ३८ अड़तीसवें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंकी चिकित्सा यथापूर्वक लिखते हैं ।

वातशिरोरोग यत्न १-वातहारी तैल या साधारण तैलके मर्दन और वातहारिणी औषधोंके भक्षणसे बादीका शिर दुखना शांत होगा।
तथा २-खारकुठार रसका नास (सुंघनी) दो तो शिरकी नाना प्रकारकी पीड़ा शान्त होगी ।

तथा ३-उर्दके आटेकी रोटी बनाकर १ प्रहर पर्यंत शिरपर बांधो तो शिरकी वातसम्बन्धी पीडा दूर होगी ।

तथा ४-उर्दके सनेहुए आटेसे सिरपर ८ या १६ अंगुलकी ऊंची बाड़ी (पार दिवार) बांधकर उसमें उष्ण तेल भरदो और ४ घडी या १ प्रहर रखकर निकाल डालो तो वातजशिरोरोग, कर्णरोग, ग्रीवारोग और दाढ़के रोग भी पांच सात दिनके सेवनसे शमन हो जावेंगे इसे शिरोबस्ति कहते हैं ।

पित्तजशिरोरोग यत्न १-चन्दन और कमलगट्टे शीत जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग शान्त होगा ।

तथा २-१०० वार धोए घृतको मस्तकपर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग शान्त होगा ।

तथा ३--खार कुठाररस, कपूर, केशर, मिश्री और चन्दनको बकरीके दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग दूर हो।

कफजशिरोरोग यत्न १-लंघन (भूँख) या कफनाशक औषधियोंके उष्ण लेपसे कफका शिरोरोग शान्त होगा।

सन्निपातजशिरोरोग यत्न-१-सन्निपातनाशक औषधोंके लेप और भक्षणसे सन्निपातका शिरोरोग शान्त होगा।

रक्तजशिरोरोग यत्न १-पूर्व लिखित पित्तज शिरोरोगके यत्न कराओ या शिरका रक्तमोचनकराओ तो रक्तका शिरोरोग दूर होगा।

क्षयजशिरोरोग यत्न १-क्षीणतानाशक और बलबर्द्धक औषधोंके सेवन और यत्नोंसे क्षीणताका शिरोरोग शान्त होगा।

कृमिजशिरोरोग यत्न १-सोंठ, मिर्च, पिप्पली, किरमालेकी जड़ और सहिंजनके बीजोंको बकरीके दूधमें महीन पीसकर नास दो तो मस्तकके कृमि नष्ट होकर पीड़ा शांत होगी।

तथा २—एरंडकी जड़, तगर, सौंफ, सेंधानोन, जीवंती, रास्ना जलभंगरा, वायविडंग, मुलहठी, सोंठ इन सबसे चौगुना जल, भंगरेका रस, चौगुना बकरीका दूध और अठगुना तेल इन सबको कड़ाहीमें मन्द मन्द आंचसे पकाकर रसादिक जलके तेल मात्र रह जानेपर छानलो और इसमेंसे ६ बूंद तेल रोगीके नाकमें टपकाकर नास (सूँघवा) दो तो शिरोरोग मात्र दूर होकर दंत रोग और नेत्ररोग भी दूर होवेंगे, इसे षड्बिन्दु तैल कहते हैं।

तथा ३--सोंठ, गुड़ जलमें पीसकर नास दो तो सब शिरोरोग नष्ट होंगे।

सूर्यावर्तशिरोग यत्न १--दूध और घी मिलाकर नास दो तो सूर्यावर्त शिरोरोग (आधाशीशी) शांत हो।

तथा २--गुड़के योगसे घीमें सेंके हुए अपूप (मालपुआ या क्षीर खिलाओ तथा तिल्लीसे सेंक करो तो सूर्यावर्त दूर हो।

तथा ३-जलभङ्गरेका रस और बकरीका दूध धूपमें उष्ण करके नास दो तो सूर्यावर्त दूर हो।

तथा ४–सिंगीमुहरा, अहिफेन (आफू अफीम), अर्कमूल, धतूरेका मूल, सोंठ, कूट, लहसन और हींगको गोमूत्रमें पीसके तपाकर लेप करो तो सूर्यावर्त शांत हो।

तथा ५–बिरेचन दो, या उष्ण उष्ण स्निग्ध भोजन कराओ या मिश्री दूधके योगसे कच्चे नारियलका जल पिलाओ तो सूर्यावर्त दूर हो।

तथा ६–वायविडंग और काले तिल पीसकर लेप करो तो सूर्यावर्त शान्त हो।

अनन्तवातशिरोरोग यत्न १–सूर्यावर्तके उपर्युक्त सब यत्न अनन्त-वातको लाभ देते हैं।

तथा २–मधुके योगसे घाम, सेंके मालपुए खिलाओ, या माथेकी नसोंका रक्तमोचन कराओ तो अनन्तवात शांत हो।

तथा ३–हर्रकी छाल, बहेडा, आंवला, हल्दी, चिरायता, गुरच, नीमकी छाल और गुड इनका क्काथ पिलाओ या नास दो तो अनन्त-वात, नेत्र पीडा, कनपटी, आधे शिरकी (आधा शीशी) दूर हो इसे पथ्यादि क्वाथ कहते हैं।

कृपालकृमि यत्न १–कडुवेककोड़े (कटहर सदृश छोटासा फल जिसके अङ्गपर गोखरूकेसे कांटे होते हैं) के पत्तोंका नास दो तो कपालके कीडे नष्ट हो जावेंगे ये सब यत्न वैद्यवल्लभमें लिखे हैं।

शंखकशिरोरोग यत्न १–दारुहल्दी, मंजीठ, गौरीशर, खश, हल्दी, कमलगट्टा इन सबको शीतल जलके साथ महीन पीसकर कनपटीपर लेप करो तो शंखक (कनपटी) की पीडा शान्त हो।

तथा २–शीतल जलके साथ शीतल औषधोंका लेप करो तो शंखक दूर हो।

तथा ३–१ भाग सिंगीमुहरा, २ भाग मुलहटी और २ भाग उर्द इन तीनोंको पीसकर १ सरसों प्रमाण सुंघाओ तो शंखादिक सब शिरो रोग दूर हों।

शिरोरोग मात्र यत्न १–आंवला, सीपका चूना और नौसादरको हथेली (करतल) पर मसलकर सुंघाओ तो सब शिरोरोग दूर होंगे।

तथा २–सोंठ, पिप्पली, पोहकरमूल, हल्दी, रास्ना, देवदारु और असगन्धका क्वाथ पिलाओतो सब शिरोरोग दूर होंगे।

तथा ३--मिश्री और अनारकी कलीको पीसकर सुंघाओ, या मुचुकुन्दके पुष्पोंको पीसकर लेप करो तो सब शिरोरोग दूर होंगे ।

तथा ४-कूट और अरंडमूलको कांजीमें पीसकर लेप या देवदारु, तगर, कूट, खश, सोंठ और तिलोंको कांजीमें पीसकर लेप करो तो मस्तककी समस्त पीडा मात्र दूर होगी ।

अर्द्धावभेद शिरोरोग मात्र यत्न १--मिश्री और केशरको घीमें तलकर नास दो तो अर्द्धावभेद (आधाशीशी), कनपटी, भौंह, नेत्र और कानकी पीडा दूर होगी, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा २-मिश्री और मैनफलको गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो आधाशीशी दूर हो ।

तथा ३ -खरहा (शशा खरगोश) का मांसरस मिर्चीके साथ भोजनके पहले ७ दिन पर्यन्त पिलाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग नष्ट हो जावेंगे, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं ।

तथा ४—चन्दन, नोन और सोंठको जलमें पीसकर लेप करो तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होंगे।

तथा ५—आमकी छालको जलके साथ;जलभंगरा और कूटको घृतके साथ पीसकर लेप करो तो आधाशीशी दूर हो ।

तथा ६—पीपल, मिर्च, लोधकी सूखी या लवंग, मिर्च, और हींगको जलके साथ पीसकर नास दो तो आधाशीशी दूर हो ।

तथा ७--पीपल, आंवला, आधाझाडा, सरसों और आंकडेके बीजोंको शीतल जलमें पीसकरलेप लगाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होंगे ।

तथा ८—अर्धावभेद, शिरोरोगनाशक सिद्धमन्त्र--

“ ॐ नमो कालिकादेवी किलकिलेवासी मृधोभ्यासे हनुमंत वीर हांकमारे आधाशीशी अधकपाली नासे, जाजारी पापिनी जाजारी हत्यारी, न जावे तो तेरे गुरुकी आज्ञा, हनुमन्त वीरकी गरुड़ पंखकी आज्ञा, मेरी भक्ति गुरुकी शक्ती फुरो मन्त्र ईश्वरोवाच ” इस मन्त्रका कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन शक्त्यनुसार जाप करो तो सदा सिद्ध रहेगा। इस मन्त्रसे मस्तकको २१ बार मंत्रित

कर शनैः शनैः फूक देते जाओ तो आधीशीशी निश्चय अच्छी हो जावेगी।

तथा ९--"ॐ नमो आधाशीशी हूंहूंकारी पहरपछारी मुखमूँद पाटले मारी अमुकारे शीशरहे मुख महेश्वरकी आज्ञा फुरे ओं ठं ठं स्वाहा" यह दूसरा मंत्र भी २१ बार पढकर मस्तकपर अंगुली फेरते जाओ तो आधाशीशी दूर हो जावेगी।

केशवृद्धि १-छड़, छड़ीला, कूट, कालीतिल्ली, गौरीसर, कमलगट्टे, मधु और दूध इन सबको इकट्ठे खरल करके शिरपर लेपकरो तो बाल बहुत बढेंगे।

तथा २--गुञ्जा (चिरम), जलभंगराका रस, इलायची, छड़ और कूट इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो तो शिरके बाल बहुत बढ़ेंगे।

तथा ३--छड़ खरैंटी, आंवले, कूट और मोरछलीकी छाल, इनको जलके साथ महीन पीसकर लेप करो तो बाल बढेंगे।

नेत्ररोग यत्न १--लंघन, लेप, स्वेदकर्म, शिरका रक्तमोचन करना और आश्चोतन कर्म इत्यादि यत्नोंसे नेत्रोंके सब विकार दूर होंगे।

तथा २--पठानीलोधका चूर्ण घीमें सेंककर उसको जलसे ताव (सिक ताव) दो तो नेत्रोंका वातरोग दूर हो।

तथा ३--अरण्डीकी जड़ पत्र और छालका क्वाथ बकरीके दूधमें औटाकर रस जलकर दूधमात्र रह जानेपर १०० तक गिनने पर्यन्त उस तप्त दूधकी सहती सहती धारें नेत्रोंपर मारो तो वातजनेत्ररोग दूर होगा।

तथा ४--पानीके संयोगसे नींबूकेपत्तोंका रस निकालकर उसमें लोध पीसो और उष्ण करके लेप करो तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर हो।

---

१ आंख खोलकर औषधके रसकी ८ बूंदें टपका दो, शीतकालमें उष्ण तथा उष्णकालमें शीतल औषधियोंका प्रयोग करो, जो वातजन्य हो तो तीखी और कफजन्य हो तो तीखी या खारा उष्ण औषध डालो, यह कर्म रात्रिको नहीं वरन् दिनको योग्य है। इसे आश्चोतन कर्म कहते हैं।

२ इसे तर्पण कहते हैं १ सेंक २ आश्च्योतन ३ पीड ३ बिडालकर्म ५ तर्पण ६ पुटपाट ७ अञ्जन और ८ शस्त्रक्रिया ये आठों काम बड़ी सावधानीसे करना चाहिये।

तथा ५--नेत्रोंमें स्त्रीके दूध आश्चोतन (८ बूँद डालना) कर्म कराओ तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर होगा ।

तथा ६-वातप्रकोपसे नेत्रोंमें खुजाल चलके बहुत यत्नोंसे भी अच्छी न हो तो ललाटका रक्तमोचन कराओ या भौंह ऊपर दाग दो तो नेत्रोंकी खुजाल बंद हो जावेगी ।

तथा ७-सहँजना या नीमके पत्तोंकी पीड (लुग्दी) बांधो तो कफकी खुजाल बंद होगी ।

तथा ८--पठानीलोध और मुलहटीका चूर्ण घीमें सेंककर बकरीके दूधमें पकाओ और इस दूधमें नेत्रोंको तर्पण (धारा मारना) कराओ तो उष्णका और रक्तका नेत्ररोग दूर होगा ।

तथा ९--त्रिफला, लोध, मुलहटी, मिश्री और नागरमोथा इनको शीतल जलमें पीसकर इससे तर्पण कराओ तो रक्तज नेत्ररोग दूर होगा ।

तथा १०--बकायन या आंवलोंके पत्तोंकी पीड (लुग्दी) बांधो तो उष्णताकी खुजाल दूर होगी ।

तथा ११- त्रिफला और लोधको कांजीके जलमें पीसकर घीमें सेंक-कर और इसकी पीड आंखोंपर बांधो तो उष्णता और कफकी खुजाल दूर होगी ।

तथा १२--सोंठ, नीमके पत्ते और सेंधानोन पीसकर नेत्रोंपर पीड बांधो तो नेत्रोंकी खुजाल और शोथ दूर होगा ।

तथा १३--नेत्रोंकी गुहाँजनी (गोहरी, आंखकी फुड़िया) को शस्त्रसे चीरकर घीसे सेंको, तदनंतर ऊपरसे मैनसिल, हरताल, तगर और मधुको पीसकर लेप चढ़ाओ तो गुहाँजनी मिट जावेगी ।

तथा १४--कमलगट्टा, सहँजनके बीज और नागकेशर इनको पीस-कर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी ।

तथा १५--काली मिर्चको मधु या घोड़ेकी लारके साथ पीसकर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी ।

तथा १६- मूंगा, काली मिर्च, कुटकी, वच और सेंधानोनको बछि-याके मूत्रमें घिसकर अंजन करो तो तंद्रा (झपकी) दूर होगी ।

तथा १७--जमालगोटेकी बीजीको नींबूके रसकी ३१ पुट देकर गोली बनाओ और मनुष्यकी लारमें घिसकर अंजन करो तो सर्पादिका विष भी दूर होकर मृतमनुष्यका भी जीवित होना सम्भव है।

तथा १८--अत्तारकी दवा और बड़ी हर्रोंको पानीमें घिसकर लेप करो तो वात पित्त, कफ तीनोंका नेत्राभिष्यंद (आंखें आना) दूर होगा।

तथा १९--निर्मलीके फल मधुमें घिसकर कपूरके संयोगसे अंजन करो तो नेत्र निर्मल (स्वच्छ) हो जावेंगे।

तथा २०--निर्मलीके फलोंको जलमें घिसकर अंजन दो तो नेत्रस्राव (बहता हुआ जल) दूर होगा।

तथा २१--बोल (बमूलनी, पागबमूल, कटबमूल) के पत्तोंके गाढ़े क्वाथमें मधु मिलाकर अंजन करो तो नेत्रस्राव दूर होगा।

तथा २२--सांठीकी जड़को स्त्रीके दूधमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खाज दूर हो, इसी प्रकार मधुके साथ आंजनेसे नेत्रस्राव, घृतके साथ आंजनेसे फूली, तेलके साथ आंजनेसे तिमिर और कांजीके साथ घिसकर आंजो तो रतौंधी भी दूर होगी।

तथा २३--२ टंक गिलोयका रस, १ मासे सोंठ और १ मासे सेंधा-नोनको महीन पीसकर अंजन करो तो मोतियाबिंद, तिमिर, धुंध और नेत्रकाच आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे।

तथा २४--रार, चमेलीके फूल, मैनसिल, समुद्रफेन, सेंधानोन काली मिर्च और गेरूको मधुके साथ महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खुजाल दूर होकर झड़े हुए रोम जम आवेंगे।

तथा २५—चीनियां कपूरको बडके दूधमें पीसकर अञ्जन करो तो २ मासमें फूली कट जावेगी।

तथा २६—नीलाथोथा, सोनामक्खी, सेंधानोन, मिश्री, शंखकी नाभि गेरू, कालीमिर्च और समुद्रफेनको मधुके साथ पीसकर अंजन करो तो तिमिर, नेत्रकांच और फूली दूर होगी।

तथा २७—आंवलेकी बीजी, बहेडे की बीजी, और हर्रकी बीजी-महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंका बहाव और वातरक्त दूर होगा।

तथा २८-रसौंत, दोनों हल्दी, चमेलीके पत्ते (या फूल) और नीम के पत्तोंको गोबरके रससे पीसकर लेप करो तो रतौंधी दूर हो ।

तथा २९--८० तिल पुष्प, ६० पिप्पलीके बीज; ५० जवेली (मारवाडमें प्रसिद्ध) पुष्प और १६ मिर्चको पीसकर गोली बनाओ और जलमें घिसकर अंजन करो तो तिमिर, अर्जुनफूली और मांस वृद्धि ये समस्त दूर होंगे, इसे रोपणीगुटिका कहते हैं ।

तथा ३०--शूकरदन्त, गोदन्त, गर्दभदन्त, शंखकी नाभि, निर्वेधा (बिंधेविना) मोती और समुद्रफेनको महीन पीसकर अंजन करो तो फूली आदि समस्त नेत्र रोग दूर होवेंगे, इसे दन्तवर्ती कहते हैं ।

तथा ३१--कणगचके बीजोंके चूर्णको टेसूके रसकी बहुतसी पुटें देकर गोलियां बना लो और जलमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो फूली आदि समस्त नेत्रविकार दूर होंगे, इसे लेपनी गुटिका कहते हैं ।

तथा ३२--शंखकी नाभि, बहेडेकी बीजी, हर्रकी बीजी, मैनसिल, पीपल, मिर्च, कूट और वचको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो फूली, मांसवृद्धि, नेत्राभिष्यंद, पटल, रतौंधी और सब नेत्ररोग दूर होंगे, इसे चन्द्रोदय गुटिका कहते हैं ।

तथा ३३--नेत्ररोगीको निर्वातस्थानमें पीठके बल (चित्त) सुलाकर उसके नेत्रोंमें आसपास उर्दके मलसे हुए आटेकी १ अङ्गुल ऊँची दीवारसी बनादो और कुछ कुछ तपा हुआ या १०० बारका धोया हुआ घृत तथा दूध इस दीवारके मध्य (आंखोंमें) करके १०० गिननेके समय पर्यंत भरा रहने दो तो नेत्रवक्रता, पक्ष्म (बरौनीका) झड़ाव, अनिमिष (पलक न लगना), तिमिर फूली, खुजाल और शिरोरोग ये सब विकार दूर होंगे ।

तथा ३४-१ मासे पठानी लोध, १ मासे फिटकरी, १ मासे रसौंत, १ मासे मुलहठीको ग्वारपाठेके रस या पोस्तेके रस या जलमें पीसकर पोटली बना ओ और नेत्रोंपर वारम्वार फेरो तो नेत्र अच्छे हो जावेंगे ।

---

१ यह प्रयोग बादल, उष्णकाल, चिंता और श्रमदशामें कदापि मत करो ।

तथा ३५—मुलहठी, गेरू, सेंधानोन, दारुहल्दी और रसौंतको जल में पीसकर लेप करो तो सब नेत्ररोग दूर होंगे।

तथा ३६–१ मासे अफीम, १ मासे फूली हुई फिटकरी और १ मासे लोधको नींबूके रसके साथ लोहेकी कडाहीमें घोटके कुछ गरमकर नेत्रों पर लेप करो तो नेत्ररोग तत्काल अच्छा होगा।

तथा ३७-लोहेकी कडाहीमें नींबूका रस घोटकर लेप करो तो नेत्राभिष्यन्द रोग अच्छा हो जायेगा।

तथा ३८—हर्रकी छाल, सेंधानोन और सोनागेरूको रसौंतके जलमें पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो सब नेत्ररोग दूर होंगे।

तथा ३९-काले सांपकी बसा (चर्बी) में शंखकी नाभि और निर्मलीको पीसकर अंजन दो तो मोतियाबिन्दु और काच दूर होंगे।

तथा ४०—मुर्गीके अण्डोंके खोखला (छिलका), मैनसिल, काच, शंखकी नाभी, चन्दन और सेंधानोन पीसकर अंजन करो तो मोतिया बिन्दु और फूलि आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे।

तथा ४१—काली मिर्च, समुद्रफेन, पिप्पली, सेंधानोन और सुर्मा ये सब दो दो मासे लेकर अति महीन पीसो और चित्रा नक्षत्रके दिन आंखमें अंजन दो तो फूली, खाज, काच आदि सब रोग दूर हो जावेंगे।

तथा ४२—खपरियाको पीसकर जलमें डुबो दो और उसके उपरका पानी छानकर नीचेका गाढा भाग सुखालो। इस सूखी हुई पपड़ीको त्रिफलेके रसकी तीन पुट देकर इससे (१/१०) दशमांश कपूर मिलाओ, तदनन्तर दोनोंको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रके समस्त रोग दूर हो जावेंगे।

तथा ४३—सुरमाको तपातपाकर ७ बार त्रिफलाके रसमें ७ बार स्त्रीके दूधमें ७ बार गोमूत्रमें और ५ बार पुनःस्त्रीके दूधमें डुबाकर पीसकर अंजन करो तो सब नेत्रविकार दूर होवेंगे।

तथा ४४—शुद्ध शीशा, जलपारा, सुरमा, और इन सबसे दश मांस (१/१०) भीमसेनी कपूर इन सबको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्ररोग दूर होंगे। इसे नयनामृतांजन कहते हैं।

तथा ४५-सीसा गलागलाकर १०० बार त्रिफलाके रसमें ५० बार जलभंगराके रसमें, २५ बार सोंठके रसमें और ५० बार घृतमें, २५ बार गोमूत्रमें, २५ बार मधुमें और २५ बार बकरीके दूधमें डुबा डुबाकर अन्तमें उसकी शलाका (सलाई, सींक) बनाओ। ओ शलाका सूखी ही नेत्रोंमें प्रतिदिन फेरे तो नेत्रोंके समस्त विकार दूर हो जावेंगे।

विशेषतः--नेत्राभिष्यंद (नेत्र दुखमे आये हों) तो ३ दिनतक कच्चे नेत्रोंका यत्न मत करो, पश्चात् पक जानेपर चौथे दिन अंजनादि औषध करो तो अच्छे हो जावेंगे। हेमन्त और शिशिर ऋतुमें मध्याह्न समय, ग्रीष्म और शरदमें मध्याह्नके पहिले, वर्षामें आकाश स्वच्छ (निर्मेघ) होनेके समय और वसंत ऋतुमें हर समय अंजन भर सकते हैं अंजन लगानेके लिये प्रथम बाईं पश्चात् दाहिनी आंखमें अंजन भरो उपर्युक्त प्रथासे अंजन भरो तो शीघ्र ही आरोग्य होजावेंगे।

वर्जित कर्म-नेत्रके रोगीको सुरमा धारण, विशेष घी, कसैली वस्तु, खट्टे पदार्थ और गरिष्ठान्न भक्षण, स्नान और ताम्बूलआदि उष्ण वस्तुओंका सेवन कदापि न करने दो।

वाग्भट्टके मतसे मोतियाबिन्दुरोगयत्न-कच्चे मोतियाबिन्दुका जाला शलाकासे निकलवाना वर्जित है परन्तु पक जानेपर जाला निकलवानेसे कुछ हानि नहीं बरन् लाभ ही है।

वर्जित रोगी-पीनस, कास, अजीर्ण, शिरोरोग, कर्णरोग और शूल-पीडासे पीडित, भयातुर और वमन किया हुआ इनमेंसे किसी भी दशामें रोगी हो उसका जाला मत निकालो।

जालानिष्कासनविधि-श्रवण कार्तिक और चैत्रसे व्यतिरिक्त मासोंमें नेत्रोंका जाला निकालो, किन्तु इन तीनों महीनोंमें मत निकालो। मध्याह्न समयसे पहिले ही जाला निकालो, मध्याह्नके पश्चात् मत निकालो। जाला निकलते समय निर्वात स्थानका उपयोग करो, जिसमें रोगी पवनसे सुरक्षित रहे। जाला निकालनेके पूर्व रोगीको विरेचन (जुलाब) देकर शरीर शुद्ध कर लो, तदनंतर सुन्दरहलका भोजन देकर शरीर निरालस्य हो

जाने दो तब रोगीको आसन (पलथी) मारकर बैठाओ और उसके पीछे एक चतुर मनुष्यको बैठाकर रोगीको थँभवाओ जिसमें वह हिलने न पावे, इस प्रकार बैठनेपर अपने मुखकी भापसे नेत्रोंको फूँककर स्वेदित कर दो और अँगूठेसे नेत्रोंको मलकर नेत्रोंका मल इकट्ठा कर लो, तदनंतर सधे हुए हाथसे बड़ी युक्ति चतुराई पूर्वक शलाकासे नेत्रका प्रान्त भाग (गार) का जाला विदीर्ण करके समस्त जाला इकट्ठा करनेपर बाहर निकालको, यहांतक कि, जब पुतली-परके मोतिया बिंदुकी डीक (टिकडी, बूँद, पटल) निकालकर रोगीको समस्त यथार्थ दीख पड़ें तब नेत्रोंपर घीके फोहे (रुई) बांधकर चित्त (सीधा) सुला दो।

उपर्युक्त क्रिया होनेपर उस रोगीको कांचके प्रतिबिम्बसे बचाओ, औंधा सोना, शरीर या शिर हिलाना, छींक, खांसी, डकार, थूकना, दन्तधावन, स्नान, श्रम और जलपान इन कार्योंकी विशेषता न होने दो, यदि दैववशात् होंगे तो बड़ी सावधानी और स्वल्पतापूर्वक होने दो, घृतादि गारिष्ठान्नका परित्याग कर हलका भोजन खिलाओ, इस पथ्यको सात दिन पर्यंत निबाहते जाओ तदनंतर कुछ घी डालकर हलके अन्नका लपटा (पतली दलिया) खिलाकर वातनाशक मिश्री आदि पदार्थ खिलाओ, वायु, तेज (प्रकाश) तथा महीन वस्तु मत देखने दो नेत्रोंको शीतलतादायक हरित वस्तुओंपर दृष्टि विशेष पडने दो और कुपथ्यसे बचाओ, यह कृत्य १ मंडल (४०) दिन पर्यंत करो।

यह सब हो चुकनेपर मोतिया बिन्दु सम्बंधी शीतल उपनेत्र (चश्मा, ऐनक) सदैव लगाते रहो तो उपर्युक्त विधिवत् क्रिया होनेपर पुनः मोतियाबिन्दु कदापि न होगा यह सब विधान बाग्भटमें लिखा है।

नेत्रप्रकाशक अंजन १-हींगको दडघलके पत्तोंके रसमें घिसकर अंजन करो तो पांडुरोग (पीलिया) तथा कामला भी दूर होगा, यह यत्न पांडुरोगमें लिखना योग्य था परन्तु नेत्रसंबंधसे यहाँ लिख दिया है।

तथा २-बेल और तुलसी दोनोंके पत्तोंका रस तथा इन दोनोंके समान स्त्रीका दूध इन तीनोंको कांसेकी थालीमें गजबेलि (उत्तम लोह) के घोटेसे दो प्रहर और ताम्बेके घोटेसे दो प्रहर घोटकर अंजन लगाओ तो नेत्रशूल और नेत्रपाक दोनों दूर होवेंगे, इसे नारायणाञ्जन कहते हैं।

तथा २-सोंठ, हर्रकी छाल, कुलथी, खपरिया, फिटकारी, खैरसार और माजूफल ये सब एक एक भाग तथा भीमसेनी कपूर, कस्तूरी और अविद्धमोती ये सब आधे आधे भाग लेकर इन सबको महीन पीसो और नींबूके रसमें ९ दिन खरल करके गोलियां बनालो, जो इसकी गोलीको जलमें घिसकर अञ्जन करो तो नेत्रोंका तिमिर, स्त्रीके दूधमें घिसकर अञ्जनकरो तो फूली और पटल, मधुमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रस्राव, गोमूत्रमें घिसकर लगाओ तो रतौंधी और जायपत्रीके रसमें घिसकर अञ्जन लगाओ तो नेत्रोंकी मांसवृद्धि दूर होगी, इसे नयनामृत गुटिका कहते हैं ।

तथा ४-अपामार्ग (आधेझाड़े) के पत्तोंको गोमूत्रमें पीसकर आधे भाग खपरियाके साथ खरल करो और इस खरल कियेहुये पदार्थको जस्तेके टुकड़ोंके ऊपर छाप (लपेट) कर ऊपरसे कपड़मिट्टी लपेट दो, तदनंतर सूख जानेपर जंगली कंडोंकी आँचसे गजपुटमें फूँक दो, स्वाँग शीतल हो चुकनेपर पीसकर नेत्रोंमें अञ्जन करो तो झडे हुए पलक (बरौनी) पुनः जम आवेंगे ।

तथा ५ गधेकी डाढ़ घिसकर अञ्जन करो तो शीतलामें पडी हुई कटकर नेत्र स्वच्छ हो जावेंगे ।

तथा ६-आंवले और गंधकसे मारे हुए तांबेको महीन पीसकर अजंन करो तो सबलवात और पटल आदि सब नेत्र रोग दूर होंगे, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं ।

तथा ७-५ टंक शुद्ध नीलाथोथा और ९ टंक फूली हुई फिटकरी, ५ टंक पिप्पलीके (जलमें भिगोकर निकाली हुई) बीज और ५ मासे मिश्रीको महीन पीसकर अंजन करो तो फूली, नेत्रस्राव और धुंध ये सब विकार दूर होंगे ।

तथा ८-शंखकी नाभि, बहेड़ेकी बीजी, हर्रकी छाल, मैनसिल; पिप्पली, काली मिर्च, कूठ और वचको बकरीके दूधमें खरलकरके गोली बनाओ और सूखनेपर जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, पटल; कांच, रतौंधी, फूला और मांसवृद्धि ये सब विकार हीन हो जावेंगे, इसे चन्द्रोदयगुटिका कहते हैं ।

तथा ९-हल्दी, नीमके पत्ते, पिप्पली, मिर्च, वायविडंग, नागरमोथा और हर्रकी छालको बकरीके मूत्रमें ३ दिन पर्यंत खरल करके गोलियां

बनालो और छायामें सूखनेके अनंतर गोमूत्रके साथ घिसकर अंजन करो तो नेत्रकी कांच, जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, मधुमें घिसकरके लगाओ तो पटल और स्त्रीके दूधमें घिसकरके लगाओ तो फूली दूर होजावेगी, इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं ।

तथा १०-१ भाग हर्रकी छाल, २ भाग बहेड़ेकी छाल, ४ भाग आँवलेकी छाल, २ टकेभर शतावरी, १ टकेभर लोहसार, २ टंक मुलहटी, २ टंक तज, ५ टंक सेंधानोन, ५ टंक पिप्पली और इन सबके समान मिश्रीका २ टंक चूर्ण मधु और घृतके संयोगसे ४९ दिन पर्यंत खिलाओ तो तिमिर, पटल, नेत्रकांच, रतौंधी, फूली, नेत्रस्राव और सबलवात आदि सब नेत्रविकार दूर होजावेंगे, इसे द्वादशामृतहरीतकी कहते हैं ।

तथा ११-सेरभर त्रिफलाका रस, सेरभर गुरचका रस, सेरभर आंवलेका रस, सेरभर जलभंगरेका रस, सेरभर अडूसेका रस, सेरभर शतावरीका रस, सेर भर बकरीका दूध और अधासेर (कमलगट्टा, त्रिफला, मुलहटी, पिप्पली, दाख, मिश्री और कटियालीका) क्वाथ, सेरभर गोघृत और २ सेर गोदुग्ध इन सबको पकाकर रसादिक जलके घृतमात्र रहजानेपर छानलो और इस घृतमेंसे नित्य २ टके भर खिलाओ तो तिमिर, कांच, फूली आदि नेत्ररोग तथा सब वायुजन्य रोग दूर होंगे, इसे महात्रिफलादि कहते हैं ।

तथा १२-१० मासे शुद्ध सफेदा महीन पीसकर भली भाँति धोओ तदनंतर तीन वार धोचुकनेपर सुखाकर पीसलो और लड़कीवाली स्त्रीके दूधकी ५ पुटें देकर शुद्ध करलो, पश्चात् इसीमें ३ मासे अत्तारकी औषध, १ मासे कबीला; ४ रत्ती भीमसेनी कपूर, १ मासा श्वेत गोंद इन सबको गुलाबजलसे खरल करके बेरके समान गोलियाँ बनालो और सूखनेपर गुलाबजल या सामान्य जलके साथ घिसकर अजंन करो या लेप लगाओ तो उष्णताजन्य नेत्रविकार सर्वथा नष्ट होजावें ।

तथा १३-अब हम अन्तको समस्त मनुष्योंके सुगमता तथा निष्परिश्रमपूर्वक प्राप्त होने योग्य एकसाधारण उपाय लिखते हैं--श्लोक-

भुक्त्वा पाणितलं घृष्ट्वा चक्षुषोर्यदि दीयते ।

जातरोगा विनश्यंति तिमिराणि तथैव च ॥ इत्युक्तं शार्ङ्गधरे ॥

शार्ङ्गधरमें कहा है कि, भोजन करके आचमन करनेके पश्चात् उन गीले हाथोंकी हथेली (करतल) परस्पर घिसकर अपने नेत्रोंपर नित्य फेरा करो तो तिमिरादि सब नेत्र विकार दूर ही भागते रहेंगे ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे शिरोरोगनेत्ररोगयत्न-
निरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३८ ॥

कर्णरोग, नासारोग

मयात्र कर्णरोगस्य तथा नासामयस्य च ।
तरंगे नन्दरामे हि कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

अब हम इस ३९ उन्तालीसवें तरंगमें कान और नाकके रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं ।

कर्णरोग यत्न १–अकाव (आंकड़ा) के पत्तोंको खटाईसे पीसकर रस निकालो, इस रसमें तेल और नोन मिलाकर थूहरकी लकडीमें भर दो, तदनन्तर इस लकड़ीको कपडमिट्टी करके पुटपाककी रीतिसे उसका रस निकाल लो, जो वह रस उष्ण कर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा ।

तथा २–आंकड़ेके पत्ते घी लगाकर अग्निसे तपाओ और उसका रस निकाल कर कुछ उष्ण सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा ।

तथा ३–बकरीके मूत्रमें सेंधानोन औटाकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा ।

तथा ४–अरलू (कलाम्बु) के रसमें तेल पकाकर यह तेल सहता हुआ कानमें डालो तो त्रिदोषज कर्णशूल भी शान्त होगा ।

तथा ५–बेलकी जडका रस, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, आधे झाडेका खार, जवाखार, कूट, और गोमूत्रको तेलमें मन्द मन्द आंच-से पकाकर रस जलके तेलमात्र रह जानेपर छान लो और इसे कानमें

डालो तो बाधिर्य (बहरापन) कर्णनाद और कर्णस्राव आदि कानके सम्पूर्ण रोग अच्छे हो जावेंगे। इसे बिल्वतैल कहते हैं।

तथा ६--कच्चे बिल्वफलके रसमें सज्जीका चूर्ण डालकर पिलाओ तो कानकी पीडा, बहरापन, कानकी जलन आदि कर्णरोग अच्छे हो जावेंगे।

तथा ७--मूलीकी जडका रस, मधु और तेलको तपाकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका बहरापन अच्छा होगा।

तथा ८--आंवले, जामुन, महुआ और चमेलीके पत्ते तथा बडके जड की छाल इन सबका रस तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानमें पीबका बहाव बन्द हो जावेगा।

तथा ९--स्त्रीके दूधमें रसौंत घिसकर कुछ मधुके संयोगसे कानमें डालो तो कानसे पीबका बहाव रुक जावेगा।

तथा १०--कूट, हींग, दारुहल्दी, सौंफ, सोंठ, सेंधानोन इनका चूर्ण बकरेके मूत्रके साथ तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानसे पीबका बहाव रुक जावेगा।

तथा ११--समुद्रफेन, सुपारीकी राख, और कत्थाको पीसकर कानमें डालो तो कानसे पीबका बहाव बन्द हो जावेगा।

तथा १२--बड़ी सीपका चूर्ण तेलमें पकाकर उस तेलको कानमें डालो तो कानका व्रण (फोडा) अच्छा हो जावेगा।

तथा १३--एक एक टके भर आंवलासार गन्धक, मैनसिल, हल्दी और धतूरेके पत्तोंका रस इन सबको महीन पीसकर ८ टके भर तेलके साथ पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानका व्रण अच्छा होगा।

तथा १४--बैंगनकी जड़का रस और सरसोंका तेल मिलाकर कानमे धूनी दो तो कानके कृमि गिर जायेंगे, तथा उपर्युक्त बारहों यत्न भी कृमि कर्णरोगके निवृत्त्यर्थ उपयोगी होते हैं।

विशेषतः--कर्णशोथ, कर्णार्श और कर्णार्बुद रोगोंको चिकित्सा, शोथ, अर्श और अर्बुद रोगमें कथित यत्नोंसे ही करो ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १५--सोंठ, पिप्पली, सेंधानोन, कूट, हींग, वच लहसुन और आकके पक्के पत्तोंका रस ये सब तिल्लीके तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानकीपीड़ा दूर होगी।

तथा १६--बड़ी मोटी सीप, पद्मकाष्ठ, हींग, तुम्बरू, सेंधानोन, कूट और बिनौलोंके चूर्णके क्काथमें ७ टंक भर कडुवा तेल और इन सबके समान हुलहुलका रस डालकर मन्द आंचसे पकाओ और सब रसादि जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर कानमें डालो तो कर्णव्रण, कर्णस्राव, बाधिर्य और कर्णनादादि संपूर्ण कर्णरोग अच्छे हो जावेंगे।

तथा १७--ऽ। पाव भर कूकरभंगरेका रस, हरफारेवड़ी (आंवले जैसे होती हैं) का रस, चार पैसे भर लहसुनका रस, सौंफ, वच, कूट, सोंठ, मिर्च और लवंग दो दो टंक, ऽ॥ सेर बकरीका दूध और ५ टके भर कडुवा तेल इन सबको एकत्र कर मन्द आंचसे औटाओ, रसादिक जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर कानमें डालो तो बहिरापन, पीबका बहाव आदि कर्णरोगमात्र अच्छे होजावेंगे। ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १८--शतावरी, असगंध, अरंडकेबीज और दूधको तिल्लीके तेलमें मन्द आंचसे पकाओ और तेलमात्र रह जानेपर छानकर कानकी लोलक (लौंडी) में लगाओ तो लोलका पकाव तथा पीड़ा आदि सब विकार दूर होकर लोलकका छिद्र बढ़ जावेगा।

तथा १९–अष्टवर्गमें तैल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो पारिपोटिका नाम कर्णरोग अच्छा हो जावेगा।

तथा २० -जोंक लगाकर रक्तमोचन करा दो तो कर्णोत्पात रोग अच्छा हो जावेगा।

तथा २१–सुरमा, काकलहरी, बावची और काकपक्षी (मारवाड़में प्रसिद्ध) का मांस ये सब तेलमें पकाकर कानकी लोलकपर लगाओ तो उन्मन्थरोग अच्छा हो जावेगा।

तथा २२–आम, जामुन और बडके पत्तोंका क्वाथ तेलमें पकाकर यह तेल मर्दन करो तो दुःखवर्द्धक रोग अच्छा हो।

तथा २३--गौके गोबरके अधजले कंडे (छेना, गोबरी, उपली) की आंचसे सेंको, या कपूरको दूध तथा गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो कानकी लोलक अच्छी हो जायगी। ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

नासारोग यत्न १--काली मिर्च, गुड़ और दहीको मिश्रित करके खिलाओ तो पीनस नाम नासारोग अच्छा होगा।

तथा २--कायफल, पोहकरमूल, सोंठ, काकडासिंगी, पिप्पली, कालीमिर्च और कलौंजी इनका २ टंक चूर्ण अदरखके रसके साथ खिलाओ या इसका क्वाथ पिलाओ तो पीनस, स्वरभंग, कफ, श्वास, सन्निपात ये सब रोग अच्छे होवेंगे।

तथा ३--कायफल, हींग, मिर्च, लाख, इंद्रयव, कूट, वच, वायविडंग और सहँजनेकी जड़का क्वाथ पिलाओ तो पीनस दूर होगा।

तथा ४--सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, चित्रक, तालीसपत्र, डासरिया, अमलवेत, चव्य, जीरा, इलायची, तज और पत्रजका चूर्ण इन सबके समान पुराने गुड़में मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो। जो इसमेंसे १ गोली नित्य १० दिन पर्यंत खिलाओ तो पीनस, कास और अरुचि ये सब रोग दूर होंगे। इसे व्योषादिगुटिका कहते हैं।

तथा ५--कटियाली, दात्यूणी वच, सहँजनेकी छाल, तुलसीपत्र, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधानोन इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास (सुँघनी) दो तो पीनस दूर होगा, इसे व्याघ्री तेल कहते हैं।

तथा ६--मुँगनेकी छाल, कटियाली, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानोन और बिल्वपत्रका रस इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास दो तो पीनस अच्छा होगा, इसे शिग्रु तैल कहते हैं।

तथा ७--वायविडंग, सेंधानोन, हींग, गूगल, वच और मैनसिलके चूर्णका नास दो तो पीनस रोग अच्छा होगा।

तथा ८--भंगके पत्तोंका रस और सेंधानोन तेलमें पकाकर इस तेलका नास दो तो पीनस अच्छा होगा।

तथा ९–जीरेका चूर्ण घी और शक्करके साथ नित्य खिलाओ तो पीनस दूर होगा ।

तथा १०–रात्रिको सोनेके समय ओटाया हुआ अर्द्धावशेष जल नित्य पिलाओ तो पीनस अच्छा हो जावेगा ।

तथा ११–घी, गूगल और मोमका मिश्रणकर नाकके सन्मुख धूनी दो तो विशेष छींके आना बन्द हो जावेगा ।

तथा १२–सोंठ,, कूट, पिप्पली, बेलका गूदा और दाखके काथमें तेल पकाकर इसका नास दो तो अधिक छींके आना बन्द हो जावेगा ।

तथा १३–धमासा, पिप्पली, दारुहल्दी, आधेझारेके बीज, जवाखार, किरमालेकी गिरी (न हो तो बक्कल) और सेंधानोंन इनका चूर्ण तेलमें पकाकर नाकमें लगाओ तो नासार्श दूर होगा ।

विशेषतः–नासार्बुद, नासशोष, नासार्श, नासापाकादि शेष नासारोगोंके यत्न अर्बुद, शोष, अर्श, पाकादि रोगोंमें वर्णित चिकित्सासे ही करो ।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखंडे कर्णरोगयत्ननिरूपणं
नामैकोनचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ३९ ॥

अथ मुखरोग

मयात्राननरोगाणां सुविचार्य यथाक्रमम् ।
तरंगेऽब्रसमुद्र वै कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

४० चालीसवें तरंगमें मुखके रोगोंकी चिकित्सा भलीभांति विचारपूर्वक यथाक्रम लिखी जाती है ।

ओष्ठरोग यत्न १–जोंके लगाकर या शीर छुड़ाकर ओष्ठका रक्तमोचन कराओ तो ओष्ठरोग दूर हों ।

तथा २–घृतमें शुद्ध मोम तपाकर इससे सेंक करो तो ओष्ठरोग दूर हो ।

तथा ३–तेल, घृत मोम और मेद (चर्बी) आदि स्नेह पदार्थोंमें मोम तपाकर इससे सेंक करो तो ओष्ठरोग दूर हो ।

तथा ४–शीतल औषधोंका लेप करो तो ओष्टरोग दूर हो ।

तथा ५–प्रियंगुपुष्प, त्रिफला और लोधको स्नेहमें तपाकर सेंको या मधुके साथ खिलाओ तो ओष्ठोंका रोग दूर हो ।

तथा ६–ओष्ठोंमें व्रण पड आवे तो उनके यत्न पूर्वोक्त व्रण लिखित यत्नोंके समान ही करो ।

विशेषतः–ओष्ठोंमें चूर्ण अवलेह आदि औषध अंगुलीसे लगाना चाहिये, इस क्रियाको प्रतिसारण कहते हैं ।

दंतमूलरोग यत्न १–मुखका रक्तमोचन करके सोंठ, सरसों और त्रिफलाके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो दंतमूल (मसूढे) अच्छे हो जावेंगे ।

तथा २—हीराकसीस, पठानीलोध, प्रियंगुपुष्प, मैनसिल और तेजबल इनको मधुके साथ पीसकर लगाओ तो मसूढे अच्छे हो जावेंगे ।

तथा ३–किंवा घीके कुल्ले कराओ तो मसूढे अच्छे होजावेंगे ।

तथा ४–मुखका रक्तमोचन कराके पंचनोन, जवाखार और मधुके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो दंतपुप्पुट नाम मसूढोंका रोग अच्छा होगा ।

तथा ५–चिकने पदार्थ खिलाओ और तेलके कुल्ले कराओ तो दंतवेष्ट नाम मसूढोंका विकार दूर होगा ।

तथा ६–लोध, पतंग, महुआ, लाख और मौरसिरीके बक्कलका चूर्ण मुँहमें मलो तो चलदंत नाम मसूढोंका रोग अच्छा होगा ।

तथा ७–नागरमोथा, हर्रकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्तोंके चूर्णकी गोली गोमूत्रके साथ बनाकर छायामें सुखा लो औरसोते समय १ गोली मुँहमें रक्खो तो चलदंतरोग दूर होकर दन्त दृढ हो जावेंगे, इसे भद्रमुस्तादि गुटिका कहते हैं ।

तथा ८–नीले फूलका कटसेला (खटसेरुआ), धमासा, खैरसार, जामुनकी छाल, आमकी छाल, मुलहटी और कमलगट्टा ये सब टके २ भर चूर्ण कर १६ सेर जलमें औटाओ और चतुर्थांश रहजानेपर बकरीके दूध या तेलमें पकाओ तदनंतर रस जलकर स्नेहमात्र रहजा-

नेपर इसका कुल्ला दो घडीपर्यंत मुँहमें रक्खो तो दांत दृढ हो जावेंगे, इसे सहचराद्यतैल कहते हैं।

तथा ९--मुँहका रक्तमोचन करके लोध, नागरमोथा और रसोंतका चूर्ण मधुके साथ मसूढोंपर लगाओ और उत्तम दूधके कुल्ले कराओ तो सौषिर नाम मसूढोंका रोग अच्छा हो।

तथा १०--मसूढोंका रक्तमोचन करके सोंठ और त्रिफलाके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो परिदर और उपकुश नाम मसूढोंके दोनों रोग दूर होवेंगे।

तथा ११--रक्तमोचन कराके गूलरके पत्ते, मधु, नोन, सोंठ, मिर्च और पीपलके क्वाथसे कुल्ले कराओ और ऊपरसे लवण तथा कोई अन्य क्षार लगादो तो मसूढोंके व्रण अच्छे होकर उनके कृमि नष्ट होजायँगे।

तथा १२--प्रथम मसूढोंका मांस कटाकर मधुके कुल्ले कराओ तद-नंतर वच, तेजबल, पाठा, सज्जी, जवाखार और पिप्पलीका चूर्ण उनपर लगाओ तो खल्लिवर्द्धन नाम दंतमूलरोग नष्ट होगा।

तथा १३--शस्त्रसे मसूढोंका मांस कटाकर पटोल, नीमके पत्ते और त्रिफलाके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो पंच नाडीव्रण नाम मसूढोंके रोग अच्छे हो जावेंगे।

तथा१४--चमेलीके पत्ते, कटियाली, धतूरके पत्ते, मंजीठ, गोखरूका पंचांग, लोध, खैरसार और मुलहटीके क्वाथमें तेल पकाकर इसके कुल्ले कराओ तो व्रणादि मसूढोंके समस्त रोग दूर होवेंगे।

दंतरोगयत्न १--लोध, कायफल, मंजीठ, कमलगट्टा, कमलकेशर, रक्तचंदन और मुलहटी ये सब टके टके भर लेकर क्वाथ बनाओ, तदनंतर इस क्वाथमें सेर भर लाखका रस, पावभर तिल्लीका तेल और पावभर गोदुग्ध डालकर मन्द मन्द आंचसे औटाओ और रसादिक जलकर जलमात्र रह जानेपर एकघड़ी पर्यंत इसका कुल्ला मुँहमें रखाओ तो दांतोंके आठों रोग दूर होकर दांत दृढ़ हो जावेंगे। इसे लक्षादि तैल कहते हैं।

तथा २--वातहारी तेलके कुल्ले कराओ तो दांत दृढ़ हो जावेंगे।

तथा ३--हींगको उष्ण करके दांतोंके बीचमें दबाये रक्खो तो दांतोंके कृमि मर जायेंगे।

तथा ४--काकलहरी, नीलकी जड़ और पटोलकी जड़ इनके चूर्णसे दांतोंका मंजन कराओ तो दांतोंके कीड़े मर जावेंगे।

तथा ५--सांभरनोन, नरकचूर, सोंठ, और अकरकरा इनका चूर्ण दांतोमें रगड़ो तो खट्टे हुए (आंबे) दात अच्छे हो जावेंगे।

तथा ६--पञ्चनोन, नीला थोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकसीस, पीपलामूल, माजूफल, और वायविडंग इनके चूर्णसे दांत मंजन कराओ तो सम्पूर्ण दंतरोग अच्छे हो जावेंगे।

तथा ७--हीराकसीस, माजूफल, सोनामक्खी, लोहचूर, मंजीठ, त्रिफला, और फूली हुई फिटकरी इनके १ मासे महीन चूर्णसे सात दिन पर्यंत दंत मंजन कराओ तो सब दांतोंके रोग दूर होकर दांत दृढ़ हो जावेंगे।

तथा ८--सेंकी फिटकरी, नीलाथोथा, तेजबल, पपड़ियाकत्था, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकसीस, आंवला, माजूफल, मंजीठ, रूमीमस्तंगी, सेंधानोन, चिकनी सुपारी, मौरसिरीका बक्कल और पीपलकी कच्ची लाख इनके चूर्णको मौरसिरीके रसकी २१ पुट और निर्गुंडीके रसकी २१ पुट देकर घाममें सुखालो और कुछ सेंधानोन संयोगसे दंतमंजन करो तो दंत रोग दूर होगा।

तथा ९--कूट, सोंठ, मिर्च, पीपल, तीन्नअजवायन, हर्रकी छाल और कत्था इनके चूर्ण से दंतमंजन करो तो दंत रोग दूर होगा।

तथा १०--अन्तर्वेदी (गंगापारकी) तमाकू, अकरकरा, कायफल, मिर्च, सोंठ, पीपल, नोन और वायविडंग इनके चूर्णसे दन्तमंजन करो तो दांतोंकी सब वेदना दूर होगी।

तथा ११--पीपल, सेंधानोन, जीरा, हर्रकी छाल और मोचरस इनके चूर्णसे दन्तमंजन करो तो दांत दृढ़ होकर सब पीडा दूर होगी।

तथा १२--नागरमोथा, हर्रकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग, और नीमके पत्ते इनका चूर्ण गोमूत्रके साथ ३ पुट देकर गोली

बनाओ और छायामें सुखाकर १ गोली रात्रिको सोते समय मुँहमें धरदो और प्रातःकाल थूककर कुल्ले कराओ तो सब दंतरोग दूर होंगे।

तथा १३--फिटकरी, नीलाथोथा, खैरसार, पपडियाकत्था, तेजबल, कच्ची लाख, वंशलोचन, मिर्च, आंवला, रूमीमस्तंगी, मंजीठ, मौरसिरीका बक्कल, सेन्धानोन, माजूफल और चिकनी सुपारी इनके चूर्णको निर्गुंडीके रसकी, चमेलीके रसकी और कुछ मौलसिरीके रसकी बहुतसी पुट देकर सुखालो, तदनन्तर उसका महीन चूर्णकर दंतमंजन करो तो सब दंतरोग दूर होकर दांत दृढ हो जावेंगे।

तथा १४--सेन्धानोन, खैरसार, कूट, धना, सोंठ और सेंके जीरेका चूर्ण कर दंतमंजन करो तो दांतोंसे निकलता हुआ रक्त बन्द हो जावेगा।

जिह्वारोगयत्न १--जीभका रक्तमोचन कराओ तो जिह्वारोग दूर होगा।

तथा २-गुर्च, पिप्पली, नीमकी छाल और कुटकी इनके काथसे कुल्ले कराओ तो जीभके सब रोग दूर होंगे।

तथा ३-ओष्ठरोगलिखित चिकित्सासे भी जिह्वारोग दूर होगा।

तथा ४--सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और हर्रका चूर्ण जीभपर लगाओ तो जिह्वारोग दूर हो, या इसको तेलमें पकाकर कुल्ले कराओ तो उपजिह्वारोग दूर होगा।

तथा ५--कचनारकी छालके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो जीभके सम्पूर्ण रोग दूर हो जावेंगे।

तालुरोग यत्न १--गलशुंडीको चतुराई पूर्वक शस्त्र या धिषसे काटदो तो गलशुंडी नाम तालुरोग नष्ट होगा।

तथा २--कूट, मिर्च, सेंधानोन, पाठा और नागरमोथा इनका चूर्ण गलशुंडीपर मलो तो अच्छी होजावेगी।

तथा ३-पीपल, अतीस, कूट, वच, सोंठ, काली मिर्च और सेंधानोन इनका चूर्ण मधुके साथ लगाओ तो गलशुंडी अच्छी होगी।

तथा ४- पीपल,अतीस,कूट, वच, रास्ना, कुटकी और नीमकी छाल इनका क्वाथ पिलाओ तो गलशुंडी और तुंडकेशरी आदि समस्त तालुरोग दूर होवेंगे ।

कंठरोग यत्न १--जोंक लगाकर गलेका रक्तमोचन कराओ तो रोहिणी नाम कंठरोग दूर होगा ।

तथा २--वमन, धूम्रपान, औषधोंके कुल्ले कराना; शीर छुड़ाना लवणका सेंक देना और स्नेहके कुल्ले कराना, ये सब कार्य कंठरोगपर अति लाभकारी हैं ।

तथा ३- मिश्री, मधु और प्रियंगुपुष्प इनका क्वाथ पिलाओ तो पित्तका कंठ दूर होगा ।

तथा ४--कुटकी और धौंसेका[1] क्वाथ दो तो कफका कंठरोग दूर होगा ।

तथा ५--कुटकी,सोंठ, पिप्पली, मिर्च,वायविडंग; दात्यूणी और सेंधानोन इनका क्वाथ तेलमें पकाकर उसका नास दो तो कफका कंठरोग अच्छा होगा ।

तथा ६--विष्णुकांताका क्वाथ पिलाओ तो रोहिणी कंठरोग अच्छा होगा ।

तथा ७--विष्णुक्रांता और शंखाहोलीको जलमें पीसकर पिलाओ तो कंठशालूक, तुण्डकेशरी, उपजिह्वक, अधिजिह्वक, वृंदगिलायु और एकवृंद आदि समस्त कंठरोग दूर होंगे ।

तथा ८ -शस्त्रक्रियासे कंठका रक्तमोचन कराओ तो गलविद्रधि आदि सब कंठरोग अच्छे हो जावेंगे ।

तथा ९--रक्तमोचन कराओ या नास दो तो सब कंठरोग दूर होंगे ।

तथा १०--दारुहल्दी, नीमकी छाल, इन्द्रयव, हर्रकी छाल और तज इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो सब कंठरोग अच्छे हो जावेंगे ।

तथा ११--कुटकी, अतीस दारुहल्दी, नागरमोथा और इन्द्रयव इनके क्वाथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सब कण्ठरोग दूर होंगे ।

---

१ धौंसा-धमासा-रसोईके घरका जाला आदि छतका कचड़ा जो अँधेरमें छाया रहता है ।

तथा १२--हर्रकी छालका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो सब कण्ठरोग दूर होवेंगे।

तथा १३--द्राक्षा, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दी, तज, त्रिफला नागरमोथा, पाठा, रसोत, मूर्वा, तेजबल और हल्दी इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ या इसी क्वाथके कुल्ले कराओ या इन्हीं औषधोंके चूर्णको मधुके साथ गोलियां बनाकर १ गोली मुँहमें धराओ तो सब कंठरोग दूर होवेंगे।

तथा १४-तेजबल, पाठ, रसोत, दारुहल्दी और पीपल इनका चूर्ण कर मधुके साथ गोलियां बनाकर १ गोली मुँहमें धराओ तो सब कंठरोग दूर होवेंगे।

सम्पूर्ण मुखरोग यत्न १--लवण और फिटकरीके जलसे कुल्ले कराओ तो वातको छाले अच्छे होंगे।

तथा २--वातहारी तैलके कुल्ले कराओ तो वातके छाले दूर होंगे।

तथा ३--मुलहटी और खैरसार इनका क्वाथ बनाकर मधुके साथ कुल्ले कराओ तो पित्तसे आये हुए छाले अच्छे होजावेंगे।

तथा ४--उष्ण दूधमें घी और मधु मिलाकर कुल्ले कराओ तो पित्तका मुखरोग अच्छा होगा।

तथा ५--नीलाथोथा और फिटकरीका चूर्ण छालोंपर लगाकर मुँहकी लार बहाते जाओ तो कफके छाले दूर होवेंगे।

तथा ६--मुखके नसोंकी शीर छुड़ाओ तो सन्निपातके छाले अच्छे होंगे।

तथा ७--चमेलीकी पत्ते, गिलोय, त्रिफला, जवाखार दाख दारुहल्दी इनके क्वाथमें मधु मिलाकरकुल्ले कराओतो त्रिदोषके छाले अच्छे हो जावेंगे।

तथा ८--कालाजीरा, कूट और इन्द्रयव इनकाचूर्ण दांतोंकनीचे दबाकर रस थूकते जाओ तो त्रिदोषके छाले अच्छे होंगे।

तथा ९--पटोलपत्र, आमलकपत्र और चमेलीपत्र इनके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा।

तथा १०–पटोलपत्र, त्रिफला और दारुहल्दी इनके क्वाथमें मधु मिलाकर कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा।

तथा ११–खश, पटोल, नागरमोथा, हर्रकी छाल, कूठ, मुलहटी, किरमालेकी छाल और रक्तचंदन इनके क्वाथके साथ कुल्ले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा।

तथा १२–तिलवृक्ष, कमलनाल, घृत, मिश्री, दूध और मधु इन सबको द्रव कर इसके क्वाथके कुल्ले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा।

तथा १३–हल्दी, निम्बपत्र, मुलहटी और कमलनाल इनको तेलमें पकाकर इस तेलसे कुल्ले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १४–चमेलीके पत्ते चबाओ तो मुखके छाले मिटजावेंगे।

तथा १५–खैरसार, जायफल, भीमसेनी कपूर, नागकेशर, तज, पत्रज, चिकनी (चोल) सुपारी, इलायची और कस्तूरी, चूर्ण खैरसारके क्वाथमें सानकर चने प्रमाणकी गोलियां बनाओ, तो रोगीके मुखमें १ गोली दबाये रक्खो तो जीभ, ओंठ, दाँत, कंठ, तालु और समस्त मुखके रोगमात्र नष्ट हो जावेंगे।

तथा १६–जवाखार, कस्तूरी, भीमसेनी कपूर, सुपारी, और इन सबके समान खैरसार इनको महीन पीसकर गोलियाँ बनाओ और १ गोली मुखमें रखवाओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग नष्ट होंगे।

तथा १७–दारुहल्दी, गिलोय, चमेलीके पत्ते, दाख, अजवायन और त्रिफलाके क्वाथसे कुल्ले कराओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग दूर हो जावेंगे, ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं।

तथा १८–लोध, धना, वच, गोरोचन और मिर्चको जलके साथ पीस कर मुखमण्डलपर लेप करो तो मुखपरकी छाया (श्यामता) मिट जावेगी।

तथा १९–सरसों, बच, लोध और सेंधानोनको जलमें पीसकर मुखपर लेप करो तो मुखकी छाया दूर होगी।

तथा २०–रक्तचन्दन, मंजीठ, कूट, लोध, बडके अंकुर और प्रियंगुको जलमें पीसकर लेप करो तो छाया दूर होगी।

तथा २१–जायफलको जलमें घिसकर लेप करो तो छाया दूर होगी।

तथा २२–हल्दीको अकावके दूधमें मथकर मुँहपर लेप करो तो छाया मिट जावेगी।

तथा २३–मसूरको दूधमें पीसकर घृतके संयोगसे लेप करो तो छाया मिटकर मुखकी कांति बढ़ेगी।

तथा २४–केशर, कमलनाल, रक्तचंदन लोध दाख, मंजीठ, मुलहठी, पत्रज, कूट, गोरोचन, दोनों हल्दी, लाख, नागकेशर, दोनो टेसूके फूल, प्रियंगु, बड़के अंकुर, चमेलीके पत्ते, बच और सरसोंके क्वाथमें तेल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो मुखकी छाया, कील, तिल, मसे आदि मुखके सम्पूर्ण विकार दूर होवेंगे, इसे कुकुंमाद्य तैल कहते हैं, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे मुखरोगयत्ननिरूपणं
नाम चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४० ॥

अथ स्त्रीरोग

योषामयानां हि मया कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया भूदेवराजसिंधौ च तरंगेऽत्र यथाक्रमम् ॥ १ ॥

अब हम इस ४१ इकतालीसवें तरंगमें क्रमानुसार स्त्रीरोगकी चिकित्सा कथन करते हैं।

प्रदररोग यत्न १–सोंचरनोन, जीरा, मुलहटी और कमलगट्टे इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो बादीका प्रदररोग (पैर) अच्छा होगा।

तथा २–१ टंक मुलहटी और २ टंक मिश्री इनका चूर्ण तण्डुलजलके साथ दो तो पित्तका प्रदररोग अच्छा होगा।

तथा ३–२ टंक रसोत और २ टंक चौलाईकी जड़ इनको पीस मधुके साथ सात दिन पिलाओ तो प्रदर अच्छे होंगे।

तथा ४–आसापालेकी छालका क्वाथ दूधके साथ पिलाओ तो असाध्य प्रदररोग भी दूर होगा।

तथा ५–डाभकी जड तण्डुलजलमें पीसकर तीन दिन पर्यंत पिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा ।

तथा ६–कवीटकी छालका रस तण्डुलजलमें मधु या मिश्री मिलाकर पिलाओ तो सब प्रदररोग अच्छे होंगे ।

तथा ७–दारुहल्दी, रसौंत, चिरायता, अडूसा, नागरमोथा, रक्त-चन्दन और अकावके फूलोंका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो लाल, श्वेत, पीत आदि सब प्रकारका प्रदर दूर होगा ।

तथा ८–गूलरके सूखे फलोंका चूर्ण मिश्री और मधुमें सानकर १ टके भरकी गोलियां बनालो । १ गोली प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा ।

तथा ९–आंवलेकी ५ टंक बीजी जलमें पीसकर मधु और मिश्रीके १९ दिनपर्यंत चटाओ तो श्वेतप्रदर नष्ट हो जावेगा ।

तथा १०–१ टंक मूषककी लेंडी और १ टंक मिश्रीका चूर्ण दूधके संयोगसे पिलाओ तो सब प्रदर दूर होंगे ।

तथा ११–धावडेके फूल, बीजाबोल, मूषककी लेंडी और मिश्रका २ टंक चूर्ण जलके साथ दो तो प्रदररोग नष्ट हो ।

तथा १२–कुम्हारके चाककी मिट्टी, गेरू, चमेली, मँजीठ, रसौंत, धावडेके फूल और राल इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ दो तो स्त्रीके प्रदर आदि समस्त रोग नष्ट हो जावेंगे ।

सोमरोगयत्न १–मिश्रीके साथ पक्के केले (कदली फल) खिलाओ तो सोमरोग दूर होगा ।

तथा २–मधुके साथ आंवलेका रस पिलाओ तो सोमरोग दूर होगा ।

तथा ३–उडदका आटा, मुलहठी (या बिदारीकंद) और इन दोनोंके समान मिश्री, इनका १ टके भर चर्ण दूधके साथ १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो सोमरोग दूर होगा ।

मूत्रातिसार यत्न १–ताडकी जड़, खारक, मुलहटी, और बिदारीकंदका १ टके भर चूर्ण मधु और मिश्रीके साथ खिलाओ तो मूत्रातिसार दूर होगा ।

तथा २--पवाड (चिरोटचा) की जड़ तण्डुलजलके साथ पिलाओ तो मूत्रातिसार नष्ट होगा।

तथा ३--श्वेत मूसली, ताडकी जड़, खारक और पक्के केलोंको दूधके साथ सेवन कराओ तो मूत्रातिसार दूर होगा।

वन्ध्यारोगयत्न १--स्त्रीको नित्य मछलीका मांस, कांजी, या तिलया उडद, या दही खिलाओ तो रजोधर्म प्राप्त होकर वन्ध्या (बांझ) दोष निवृत्त होजावेगा।

तथा २--इक्षु (सांठे) के बीज, कडुई तूंबी, दात्यूणी, पीपल, गुड़, मनसिल, जवाखार, दारुका जावा (मद्यका वेसवार अर्थात् मसाला) और थूहरके दूधकी बत्ती बनाकर यह बत्ती योनिमें धरो तो तत्काल रज प्राप्त होकर वन्ध्यादोष दूर होगा।

तथा ३- खरैंटी, गंगेरनकी छाल, बड़के अंकुर, महुआ और नागकेशरका ५ टंक चूर्ण, गोदुग्ध और मधुके साथ १५ दिन पर्यंत सेवन कराओ तो निश्चय है कि बांझ स्त्रीके पुत्रोत्पन्न हो।

तथा ४--मालकांगनी, राई, विजयसार और वचको जलमें पीसकर ६ दिनपर्यंत पिलाओ तो स्त्रीधर्म होकर वन्ध्यारोग दूर होगा।

तथा ५--काले तिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, भारंगी और गुडके १ टंक चूर्णका क्वाथ १४ दिनपर्यंत पिलाओ तो रजोधर्म होकर रुधिरगुल्म और वन्ध्यादोष होगा।

तथा ६--असगन्धका काथ गोदुग्ध और गोघृतके साथ ऋतुप्राप्त कालमें ५ दिनपर्यन्त नित्य प्रातःकाल पिलाओ तो गर्भधारण होगा।

तथा ७--पुष्य नक्षत्रके तीन दिनमें उखाडी हुई श्वेत कटियालीकी जड़का २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें ३ दिनपर्यन्त पिलाओ तो निश्चय गर्भधारण होगा।

तथा ८- कठसेला (खटसेरुआ) की जड़, धावड़ेके फूल, वडके अंकुर और कमलगट्टे इनका ढाई (२॥) टंक चूर्ण ऋतुकालमें जलके साथ दो तो निश्चय गर्भधारण होगा।

तथा ९--पार्श्व पीपलकी जड़, या बीज, श्वेत जीरा और सरपुंखाका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें पिलाओ तो निश्चय गर्भधारण होकर पुत्रोत्पत्ति होगी।

तथा १०--बाराहीकंद, कवीठ और शिवालिंगका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालके समय पिलाओ तो निश्चय पुत्र उत्पन्न होगा।

तथा ११--गर्भिणी स्त्रीको प्रतिदिन पलाशका १ पत्र गोदुग्धके साथ पिलाओ तो अति पराक्रमी पुत्र हो, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा १२ -गोदुग्धमें बिजौरेके बीज सिझा (उबाल चुड़ो) कर तुल्य घी और तुल्य नागकेशर मिलाओ, तदनंतर उसका इसका ५ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ ऋतुकालमें सात दिन पर्यन्त खिलाओ तो स्त्रीको गर्भ धारण होगा।

तथा १३--एरंडीकी बीज और बिजौरेके बीजोंको घृतमें पीसकर ऋतुकालमें दूधके साथ ३ दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो स्त्रीको गर्भ-धारण होगा।

तथा १४--सोंठ, मिर्च, पीपल और नागकेशरका चूर्ण घृतके साथ ऋतुकालमें ३ दिन पर्यन्त पिलाओ तो स्त्रीको गर्भधारण होगा ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं।

गर्भनिवारणयत्न--१ पीपली, वायविड़ंग और सुहागेका चूर्ण जलके साथ ऋतुकालमें ५ दिनपर्यन्त पिलाओ तो स्त्रीको कदापि गर्भधारण नहीं होगा।

तथा २ -१ टके भर पुराना गुड़ जलमें औटाकर १७ दिन पिलाओ तो उस स्त्रीको कदापि गर्भ धारण न होगा।

तथा ३--नीमके (निबौलीमेंसे निकाले) तेलमें रुई भिगोकर ५ दिन-पर्यन्त योनिमें धरो तो वह स्त्री कदापि गर्भ धारण न करेगी ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

योनिरोगयत्न--१ सेन्धानोन, तगर, कटियाली और देवदारु इनके क्वाथमें तेल पकाकर इस तेलका फुहा (भीगी हुई रुई) योनिमें धरो तो विप्लुता नाम योनिरोग अच्छा होगा।

तथा २--पाटलके पत्ते या छालको सिझाकर उस जलसे योनिको पसीना दो या धोओ तो वातजन्य योनिरोग दूर होगा।

तथा ३--तिल्लीके तेलमें निबोली (नीमके बीज) तल (चुडो) कर इस तेलसे योनिको सेंको तो पित्तका योनिरोग अच्छा होगा ।

तथा ४--पित्त नाशक औषधोंको घीसे सेंको तो पित्तजयोनि रोग दूर होगा ।

तथा ५--आंवलेके रसमें मिश्री डालकर १० दिनपर्यन्त पिलाओ तो योनिका दाह दूर होकर योनि शीतल होजायगी ।

तथा ६--कूकर भँगरेका रस और तंडुलजलमें मिश्री मिलाकर पिलाओ तो योनिसे पीबका बहाव बन्द होगा ।

तथा ७ -नीमके पत्ते, किरमालेके पत्ते अडूसेके पत्ते, पटोलके पत्ते और वच इसके क्वाथसे योनिको धोवो तो योनिकी दुर्गन्ध दूर होगी ।

तथा ८- पीपल, मिर्च, उर्द, सौंफ, कूट और सेंधानोनके क्काथसे योनिको धोओ तो योनिके सम्पूर्ण कफजन्य रोग दूर होंगे ।

योनिसंकोचन यत्न १--मूँगके फूल, खैरसार, हर्र, जायफल माजूफल और सुपारीका महीन चूर्ण योनिमें धरो तो स्त्रीकी योनि संकीर्ण हो जावेगी ।

तथा २--योनिके केवांच (कांचकुडी) के क्वाथसे धोवो तो योनि संकीर्ण होजावेगी ।

तथा ३--मोचरस या भंगके चूर्णकी पोटली बांधकर योनिमें धरो तो योनि संकीर्ण (गाढी) होजावेगी ।

तथा ४--आंवलेकी जड़ बबूलनी (बो, बाबराबमूर), टेसू, बेरकी जड़ अडूसेकी जड और माजूफल इसके क्वाथसे योनि धोओ तो योनि गाढी हो जावेगी ।

तथा ५--दहीसे योनिको धोवो तो योनि गाढ़ी होजावेगी ।

तथा ६--फूली हुई फिटकरी, धावड़ेके फूल और माजूफलके चूर्णकी पोटली योनिमें धरो तो भग संकीर्ण हो जावेगा ।

निकन्दरोगयत्न १--गेरू, वायविडंग, हलदी और कायफलका चूर्ण त्रिफलाके क्वाथ और मधुमें सानकर योनिमें धरो तो निकंदनाम योनिका रोग अच्छा होगा ।

गर्भस्तंभयत्न १--झाऊकी जड़, अतीस, नागरमोथा, मोचरस और इन्द्रयव इनका क्वाथ पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा।

तथा २--कमलनाल, कमलपुष्प और मुलहठीको दूधमें औटा कर गर्भिणी स्त्रीको पिलाओ तो गर्भस्राव थमकर दाह, प्यास, छर्दि और अरुचि ये समस्त विकार दूर हो जावेंगे।

तथा ३--गोखरू, मुलहटी, कटियाली और मदनबाणके फूलों को गोदुग्धमें औटाकर पिलाओ तो गर्भपात ठहरकर स्त्रीके शरीरकी संपूर्ण वेदना दूर होगी।

तथा ४--भौंरीके घरकी मिट्टी, मँजीठ, लजनी, किशोरा और कमलनालको गोदुग्धमें औटाकर पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा।

तथा ५--मुलहटी, सालवृक्षके बीज, क्षीरकाकोली, देवदारु, काले तिल; लुणख्या, रामपीपल, शतावरी, कमलनाल, जवासा, गौरीसर, रास्ना, कटियाली, सिंघाड़ा, किशोरा, दाख और मिश्री को औटाकर ७ मासका गर्भ हो जानेतक प्रतिमास ७ दिन पिलाओ तो सब प्रकारके उपद्रव शांत होकर गर्भपातका भय न रहेगा।

तथा ६--कैथ, कटियाली, बेल, पटोल और सांठी इन सबकी जडें दूधमें पकाकर ८ आठवें मासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट होकर पतन भय न होगा।

तथा ८--अधेले अधेले भर मुलहटी, जवासा, क्षीरकाकोली और गौरीसर इनको दूधमें औटाकर नवम मासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट हो पतनभय न होगा।

तथा ८--सोंठ और क्षीरकाकोलीको दूधमें औटाकर दशम मासमें पिलाओ तो गर्भ गिर जानेका भय न रहेगा।

तथा ९--सोंठ, मुलहठी, देवदारु, क्षीरकाकोली, कमलगट्टा और मँजीठ इनका क्वाथ दूधमें औटाकर दूध रह जानेपर १०० दशवें मासमें पिलाओ तो सर्वोपद्रव शांत होकर गर्भ पुष्ट और आरोग्य रहेगा।

तथा १० दूध, मांसरस और पौष्टिक औषधोंका सेवन कराओ तो वातनाश होकर वातसे सूखा हुआ गर्भ पुष्ट हो जावेगा।

गर्भिणीरोग यत्न १--मुलहटी, रक्तचंदन, गौरीसर, खश और कमलगट्टे इनका क्वाथ मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो गर्भणीका ज्वर दूर होगा।

तथा २--रक्तचंदन, दाख, गौरीसर, खश मुलहटी, धना, महुआ, नेत्रवाला और मिश्री इनका क्वाथ ७ दिन पिलाओ तो गर्भवतीका ज्वर दूर होगा।

तथा ३--चावलका सत्तु, आम और जामुनकी छाल, इनको क्वाथके साथ दो तो गर्भवती स्त्रीका संग्रहणी रोग दूर होगा।

तथा ४--झाऊकी छाल, अरलूकी छाल, रक्तचन्दन, खिरैंटी, धना, कूडेकी छाल, नागरमोथा, जवासा, पित्तपापड़ा और अतीस इनका क्वाथ पिलाओ तो गर्भिणी स्त्रीका अतिसार, ज्वर संग्रहणी तीनों रोग शमन होजावेंगे।

तथा ५--डाभ, काश, अरंड और गोखरू इन चारोंकी जड़े, दूधमें औटाकर पिलाओ तो गर्भिणीके हृदयका शूल शांत होगा।

तथा ६-डाभकी जड़, दूबकी जड़ वच, रसोंत, हींग और सोंचरनोन इनको दूधमें औटाकर पिलाओ तो गर्भवतीका अफरा उतर जावेगा।

तथा ७-डाभ, दूब, काश, तीनोंकी जड़े दूधमें औटाकर पिलाओ तो स्त्रीका रुका हुआ मूत्र सुखपूर्वक उतरने लगेगा।

तथा ८-मँजीठ, मुलहटी, कूट, त्रिफला, मिश्री, पाषाणभेद, असगंध, अजमोद, दोनों हल्दी, प्रियंगुपुष्प, कुटकी, कमलगट्टा, रक्तचंदन और दाख ये सब अधेले २ भर लेकर चूर्ण करो और १ सेर गोघृतके साथ चार सेर शतावरीके रसमें मन्द मन्द आँचसे पकाकर रसादि जलके घृतमात्र रह जानेपर छान लो। जो इसमेंसे टके भर घी प्रदिदिन सेवन कराओ तो समस्त योनिरोग दूर हों और पुरुषको खिलाओ तो नपुसंक भी महाकामी हो जावे। तथा दोनोंके संसर्गसे बड़ा पराक्रमी दीर्घायुर्बलधारी और चतुर पुत्र उत्पन्न होगा।

प्रसूत यत्न १-साँपकी कांचली और मरुवाकी धूनी दो तोस्त्रीको बालक सुखपूर्वक तत्काल उत्पन्न होगा।

तथा २--स्त्रीके हाथपावमें काकलहरीकी जड़ बांधो तो सुखपूर्वक तत्काल बालक होगा।

तथा ३--स्त्रीको हाथपांवमें कूकरभंगा और पाठकी जड़ बांधो तो सुखपूर्वक तत्काल बालक होगा।

तथा ४--उपर्युक्त जड़ोंके क्वाथमें तेल मिलाकर गर्भमें लेप करो तो सुखसे उत्पत्ति होगी।

तथा ५--पीपल और वचको जलमें पीसकर भगपर लेप करो तो सुखसे उत्पत्ति होगी।

तथा ६--स्त्रीकी नाभिपर एरंडका तेल लगाओ तो सुखपूर्वक उत्पत्ति होगी।

तथा ७--विजौरेकी जड़ और महुएको जलमें पीसकर पिलाओ तो तो सुखसे बालक होगा।

तथा ८--स्त्रीकी कटिमें सांठीकी जड़ बांधो तो सुखसे बालक उत्पन्न होगा, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ९-- अंधाहूली और तलिहारी दोनोंकी जड़ स्त्रीकी कटिमें बांधो तो सुखसे बालक होगा, यह योगचिंतामणिमें लिखा है।

तथा १०--"मुक्ता या सा विमुक्ताश्च मुक्ताः सुर्येण रश्मयः। युक्तः सर्वभयाद्गर्भो देहि माचिर माचिर स्वाहा" इस मन्त्रसे जलको ७ बार मंत्रित कर स्त्रीको पिलाओ तो सुखपूर्वक तत्काल बालक उत्पन्न होगा।

तथा ११-- स्त्री को यह यन्त्र धोकर पिलाओ तो सुखपूर्वक तुरंत बालक उत्पन्न हो जावेगा।

१३	६	८
२	१०	१८
११	१४	४

मूढगर्भ यत्न १--यदि स्त्रीके[1] गर्भाशयमें भगके समीप प्रसव कुभांतिसे टेढा मेढा आकर अटका हो तो हाथोंमें घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक भगमे हाथ प्रवेश करो तदनन्तर प्रथम बालकको भीतरही सीधाकरके तत्काल जीवित ही बाहर निकाल लो तो प्रसव और माता दोनोंका प्राणसंरक्षणहो सकेगा।

मृतगर्भ यत्न-१ स्त्रीके गर्भाशयमें ही प्रसव मृत्युको प्राप्तहो गया हो तो हाथमें घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक एक

१ स्त्रीचिकित्सा विशेषकर ऐसे प्रसंगोंपर पुरुष नही वरन् स्त्रीवैद्यो (दाई) की योजना की जाती है, क्योंकि स्त्रीकी ऐसी लज्जास्पद दशामें प्राणान्त होनेपर भी वे अपनीचिकित्सा पुरुष वैद्यसे नहीं करावेंगी।

छोटा और तीक्ष्ण छुरा योनि मार्गसे प्रवेश करो और उदरमें ही उस मृत बालकोंके अंगोंको खण्ड कर शनैः शनैः बाहर निकाल लो, तदनन्तर भगको सहते हुए उष्ण जलसे धोकर उष्ण घृत या जलसे सेंक दो और निम्नलिखित उपाय करो तो सब उपद्रव शांत होकर माताका प्राण संरक्षण हो जावेगा ।

तथा २–कड़ुई तूँबीके पत्ते और पठानीलोधको जलके साथ पीसकर भगपर लेप करो तो भग ज्यों का त्यों हो जावेगा।

तथा ३–पलाशपापडा और गूलरके पके फल तिल्लीके तेलमें पीसकर २१ दिन पर्यन्त लेप करो तो छिन्न (चिरी हुई) भग गाढी हो जावेगी ।

तथा ४–सांपकी कांचली, कुटकी और सरसोंको कडुवे तेलमें पीसकर भगको धुनी दो तो पूर्ववत् होकर सब पीडा शांत होगी ।

तथा ५–कलिहारीकी जड़के क्वाथसे हाथ पांव धुलाओ तो मृतगर्भजन्य भग पीडा शांत होजायेगी ।

मक्कलरोगयत्न १–जवाखारको उष्णजलमें पीस करके पिलाओ तो मक्कलरोग दूर होगा ।

तथा २–पिप्पली, गजपीपल, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च, सँभालू, इलायची, अजमोद, सरसों, पाठ, सेंकी हींग, भारंगी, बकायन, इन्द्रयव, जीरा, मूर्वा, अतीस, कुटकी और बायविडंग इनका दो टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो या क्वाथ बनाकर सेंधानोनके साथ दो तो मक्कल, गुल्मशूल, आम और वात–कफके समस्त रोग दूर होकर क्षुधाकी विशेष वृद्धि होगी ।

तथा–सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची और धान इनका २ टंक चूर्ण पुराने गुड़के साथ दो तो मक्कल रोग दूर हो जावेगा ।

वर्जित कर्म–प्रसूता स्त्रीको खेद, मैथुन, क्रोध, शीतमें निवास और मिथ्या आहार मत करने दो.

सूतिकारोग यत्न १–वातनाशक समस्त औषधी विशेषकर सूतिका रोग नाश कारिणी हैं.

तथा २-दशमूलका काथ पिलाओ तो सूतिका रोग दूर होगा.

तथा ३-गुर्च, सोंठ, सहिंजना, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और नेत्रवालाका काथ मधुके साथ दो तो सूतिकारोग दूर होगा.

तथा ४-देवदारु, कूट, वच, पीपली, सोंठ, चिरायता, कायफल, नागरमोथा, हर्रकी छाल, गजपीपली, धमासा, गोखरू, यवासा; कटियाली, गिलोय और कालाजीरा इनका काथ हींग और सेंधानोनके संयोगसे दो तो सूतिकाके शूल, कास, ज्वर, मूर्छा, शिरोरोग, तंद्रा, तृषा, प्रलाप, अतिसार और वमन ये सब विकार दूर होंगे. इसे देवदार्व्वादि काथ कहते हैं.

तथा ५-दोनों जीरे, सौंफ, अजवायन, अजमोद, धना, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, कूट, झाऊकी जड़, बेरकी बीजी और कपेला ये सब टक टके भर लेकर चूर्ण करे और इस चूर्णको सेरभर गोघृतमें तलकर ४ सेर गोदुग्धमें औटाओ तदनंतर कडा खोवा बनाकर १०० टके भर शक्करकी चासनीमें डाल दो और १ टके भरकी गोलियां बनाकर प्रतिदिन १ गोली प्रसूता स्त्रीको दो तो प्रसूतरोग, ज्वर, क्षय, श्वास, कास, पांडु, क्षीणता और वातके समस्त रोग दूर होजावेंगे.

तथा ६-आधा सेर सेतुआ, सोंठका चूर्ण, आधसेर गोघृतमें तलकर ५ सेर गोदुग्धमें डालो और कडा खोवा बनाकर ५ सेर शक्करकी चासनीमें मिला दो, तदनंतर इसीमें टकेभर वायविडंग, धना, सौंफ, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर और नागमोथा इनका चूर्ण डालो, पांच पांच टंक अभ्रक और कांतिसार डालो तथा इच्छानुसार खारक बदामादि पौष्टिक फल डालकर १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो. जो इनमेंसे प्रतिदिन १ गोली खिलाओ तो प्रसूत, प्यास, छर्दि, ज्वर, दाह, कास, श्वास, पांडुरोग और मन्दाग्नि ये समस्त रोग नष्ट हो जावेंगे इसे सौभाग्यशुंठिपाक कहते हैं.

तथा ७-अजमोद, जीरा, वंशलोचन, खैरसार, बिजौरा, सौंफ, धना, और मोचरस इन सबके २ टंक चूर्णका काथ १० दिनपर्यंत पिलाओ तो सूतिका ज्वर दूर होगा.

स्तनरोगयत्न १-विद्रधिरोग लिखित यत्न करो, २ स्तनपर गांठ हो तो पित्त नाशक शीतल यत्न करो, ३ स्तनपर जोंक लगाकर रक्तमोचन

कराओ, ४ इन्द्रायणकी जड जलमें पीसकर लेप करो, हल्दी और धतूरेकी जड जल ५ पीसकर लेप करो. ६ बांझकाकोलीकी जड जलमें घिसकर लेप करो, ७ तप्तलोहा जलमें बुझाकर वह जल स्त्रीको पिलाओ तो इन सातों उपायोंमेंसे प्रत्येक यत्न स्तनरोग नष्ट करनेके लिये समर्थ है.

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे स्त्रीरोगयत्ननिरूपणं नामैकचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४१ ॥

अथ बालरोग

चिकित्सा बालरोगाणां तथा मंथज्वरस्य च ।
नेत्रसिंधौ तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि मयाक्रमात् ॥१॥

अब हम इस ४२ बयालीसवें तरंगमें बालरोग और मंथज्वरकी चिकित्सा क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

ज्वरयत्न १–बालककी माता या धात्री (धाय)को पथ्यपूर्वक हलका भोजन देकर निम्नलिखित यत्न करो तो बालकका ज्वर दूर होगा ।

तथा २–नागरमोथा, हर्रकी छाल और पटोल इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो बालकका सब प्रकारका ज्वर दूर हो जावेगा, इसे भद्रमुस्तादिक्वाथ कहते हैं ।

तथा ३–एक एक मासे नागरमोथा, हर्रकी छाल, पटोल और मुलहटी इनका क्वाथ ७ दिन पर्यन्त पिलाओ तो बालकका ज्वर दूर होगा ।

तथा ४–चावलोंकी लाही, मुलहटीकी छाल और महुएका चूर्ण मधुके साथ दो तो बालकका ज्वर दूर होगा ।

तथा ५–लाक्षादितैल मर्दनसे भी बालकका ज्वर उतर जाता है ।

अतिसार यत्न १–अतीस, बेलकी गिरी, धावड़ेके फूल इन्द्रयव,

१ यदि बालककी माताके दूध न हो तो धात्रीके दूध और धात्रीके भी दूधकी अभावदशामें बकरीका दूध पिलाना योग्य है ।

लोध, धना, नेत्रवालाका २ मासे चूर्ण इनका क्वाथ दो तो ज्वरातिसार दूर होगा।

तथा २–नागरमोथा, पीपल, अतीस और काकड़ासिंगी इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो ज्वरातिसार, खांसी और वमन भी दूर होंगे, इसे चातुर्भद्रादि चूर्ण कहते हैं।

तथा ३–बेलका गूदा, धावड़ेके फूल, नेत्रवाला, गजपिप्पली और लोध इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो अतिसार नष्ट होगा।

तथा ४–मँजीठ, धावड़ेके फूल, लोध और गौरीसरका क्वाथ मधुके साथ दो तो भयंकर अतिसार भी दूर होगा, इसे मंजिष्ठादि क्वाथ कहते हैं।

तथा ५–वायविडंग, अजमोद और पिप्पलीका चूर्ण तण्डुलजलके साथ दो तो आमातिसार दूर होगा. इसे विडंगादि क्वाथ कहते हैं।

तथा ६–मोचरस, मँजीठ, धावड़ेके फूल और कमलकेशरका चूर्ण षष्टितण्डुलजलके साथ दो तो रक्तातिसार दूर होगा।

तथा ७–सोंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला और इन्द्रयवका क्वाथ दो तो सब प्रकारका अतिसार दूर होगा।

तथा ८–चावलोंकी लाही, मुलहटी, महुआ और मिश्रीका चूर्ण मधुके साथ दो तो मुर्रा अतिसार (मोडानिवाही) दूर होगा।

संग्रहणी यत्न १–हल्दी, चव्य, देवदारु, कटियाली, गजपिप्पली, सौंफ और पृष्ठपर्णीका चूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो संग्रहणी, पांडुरोग और ज्वरातिसार अच्छे होकर भूँख बढे इसे रजन्यादिचूर्ण कहते हैं।

कासयत्न १–नागरमोथा, अतीस, अडूसा, पीपली और काकड़ासिंगीका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पांचों प्रकारकी खांसी दूर होगी, इसे मुस्तादिचूर्ण कहते हैं।

तथा २–कटियाली, केशर मधुके साथ चटाओ तो खांसी दूर होगी।

श्वासयत्न १–दाख, अडूसा, हर्रकी छाल और पिप्पलीचूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो श्वास, कास दोनों दूर होंगे, इसे द्राक्षादिचूर्ण कहते हैं।

हिक्का यत्न १–कुटकी चूर्ण मधुके साथ दो तो हिचकी और उलटी भी दूर होवेगी।

छर्दियत्न १-इमलीकी बीजी, चावलकी लाही और सेंधानोनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालकका दूध डालना बन्द होगा।

तथा २-कटियालीके फलोंका रस, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, और सोंठ इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालक दूध डालनेसे रुक जावेगा।

आध्मान यत्न १-सेंधानोन, सोंठ, इलायची, सेकी हींग और भारंगीका चूर्ण मधुके साथ दो तो अफरा, शूल, दोनों उदररोग दूर होंगे।

मूत्रावरोध यत्न-पीपल, मिर्च, इलायची सेन्धानोन और मिश्री इन्हींका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालकका रुका हुआ मूत्र उतरने लगेगा

लालाप्रवाह यत्न १-गौरीसर, तिल और लोध इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो बालकका लार बहना बन्द हो जावेगा।

मुखपाकयत्न १-पीपलकी छाल और पत्ते पीसकर मधुके साथ चटाओ तो बालकके मुखके छाले अच्छे हो जावेंगे।

नाभिशोथ यत्न १--पीली मिट्टीको अग्निसे तपाकर दूध डालके इस मिट्टीसे नाभिको सैंकोतो नाभीकी सूजन अच्छी होगी।

नाभिपाक यत्न १-तप्त घृतसे सहता हुआ सेक करो तो नाभि (शुण्डि टूंडी) का पकाव अच्छा होगा।

गुदापाक यत्न १-रसौंतको जलमें घिसकर लेप करो तो गुदाका पकाव अच्छा होगा।

तथा २--शंख, मुलहटी और रसोंत इनको जलमें पीसकर लेप करो तो गुदाका पकाव अच्छा होगा।

दंतरोगयत्न १-धावड़ेके फूल और पीपलको आंवलेके रसमें पीसकर दांत निकलनेके प्रथम ही मसूढोंपर लेप करो तो खिड बिंग (दुहरे) उगते हुए दांत उत्तम सरल पंक्तिमें उगेंगे।

कृमिरोगयत्न १-पलाशपापड़ा, नीमकी छाल। सहँजनेकी जड़, नागरमोथा, देवदारु और वायबिडंग इनके १ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो बालकके पेटके कृमि नष्ट होकर ज्वर शांत हो जावेगा।

विशेषतः--मनुष्योंके लिये जिस रोगपर जो यत्न कहे हैं, बालकोंके लिये भी उन रोगोंपर वे ही यत्न उपयोगी हो सकते हैं और भी स्मरण रक्खो कि बालकको एक वर्षकी अवस्थातक औषध एक एक रत्तीके बढावसे और दूसरे वर्षसे एक मासेके प्रमाणसे देना चाहिये ।

ग्रहदोषयत्न १--गोरखमंडी और खशके क्वाथसे बालकको स्नान कराओ या हल्दी और कूटको चन्दनसे घिसकर लेप करो तो सब ग्रहदोष दूर होंगे ।

तथा २--सांपकी कांचुली, लहसुन, सरसों, नीमके पत्ते, बिल्लीकी विष्ठा, बकरेके बाल मेंढासिंगी और वचको मधुमें पीसकर धूनी दो तो बालकके सब ग्रहदोष दूर होवेंगे ।

स्कंदग्रह यत्न १--सरसों, सांपकी कांचुली, वच, काकलहारी, ऊंटके बाल और बकरेके बाल इनके चूर्णको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कंद ग्रहका दोष छूट जावेगा ।

स्कन्दापस्मार यत्न १--बेलकी जड़, सिरसकी जड़, श्वेत दूब सरसों, पाढ़. मरुआ, श्वेत बावची, कायफल, कुसुम्भ, वायविडंग, सँभालू, गूलर, खिरैंटी, चिरपोटणी, काली तुलसी, बकायन और भारंगीके क्वाथसे स्नान कराओ तो स्कन्दापस्मार ग्रहदोष छूट जावेगा ।

तथा २--गाय, भैंस, भेडी, बकरी, घोडा, गधा और ऊँटके मूत्रमें तेल पकाकर मर्दन करो तो स्कन्दापस्मार दूर होगा ।

तथा ३--शिरके बाल, हाथीके नख और बैलके रोमोंको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कन्दापस्मार दोष छूट जावेगा ।

तथा ४--जवासा, मैनसिल, कस्तूरी और केवांचकी जड़ इनके चूर्णकी धूनी दो या बालकके गलेमें बांधो तो स्कन्दापस्मार दोष दूर होगा ।

तथा ५--बालकको चौहटे (चौमार्ग) में स्नान कराओ तो स्कन्दापस्मार और विशाखा दोनों दोष दूर होंगे ।

शकुनीयत्न १--बेतकी लकड़ी, आमकी जड़ और कैथकी जड़ इनसे बालकको स्नान कराओ तो शकुनीग्रहका दोष दूर होगा ।

तथा २--झाऊकी जड़, महुआ, खश, गौरीसर, कमलनाल, पद्मकाष्ठ, लोध, प्रियंगुपुष्प, मँजीठ और गेरूको जलमें पीसकर उबटन कराओ तो शकुनिग्रह दोषसे बालक छूट जावेगा ।

तथा ३–शतावरी या इन्द्रायणकी जड़ या नागदवाणी या कटियाली या सहदेईकी पूजाकर गलेमें बांधो तो शकुनीग्रह दोष मिट जावेगा।

तथा ४–ग्रहको तिल, चावल, माला,हरताल और मनसिलका विधिवत् बलिदान दो तो शकुनी ग्रहदोष छूट जावेगा।

तथा ५–स्कंदापस्मारलिखित यत्न भी शकुनीग्रहदोषको शांत कर सकते हैं।

रेवती यत्न--१ असगंध, मेंढासिंगी, गौरीसर, सांठीकी जड़, सेवतीके फूल और विदारीकंद इनके क्वाथसे स्नान कराओ तो रेवतीग्रहके दोषसे बालक अच्छा हो जावेगा।

तथा २–तेलका मर्दन करो, या कूट, रार, गूगल, खश, हल्दी इनके चूर्णकी धूनी दो तो रेवतीग्रहदोष दूर होगा।

तथा ३–सुगंधित श्वेत पुष्प, लाही, दूध, दही और रंधी साल (चुडा हुआ पोहा) बालकके ऊपर उतारकर स्नान कराओ और इन्हीं पदार्थोंसे गोशालामें धूनी दो तो रेवतीदोष दूर होगा।

पूतनाग्रहयत्न १--नीमकी छाल, विष्णुक्रांता और वणि (रुईक झाड़) की छाल इनके क्काथसे बालकको स्नान कराओ तो पूतना ग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा।

तथा २–विदारीकंद, श्वेत दाल, हरताल, मैनसिल, राल और कूटके क्काथमें तेल या घृत पकाकर बालकके मर्दन करो तो पूतना दोष दूर होगा।

गंधपूतना यत्न १--नीम, पटोल, कटियाली, गिलोय और अडूसेके पत्तोंके क्काथसे स्नान कराओ तो गन्धपूतना दोष छूट जावेगा।

तथा २–पीपल, पीपलामूल और दोनों कटियालीके क्काथमें गोघृत पकाकर मर्दन करो तो बालक गन्धपूतना दोषसे मुक्त हो जावेगा।

तथा ३--केशर कपूर, कस्तूरी और चन्दन इनको महीन पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो गन्धपूतनाका दोष छूट जावेगा।

तथा ४–कुत्तेकीविष्ठा, बालकके बाल, लहसनकी छाल और घी बालकपरसे उतारकर चौकपर डाल दो तो गंधपूतनादोष दूर होगा।

शीतपूतना यत्न १-गोमूत्र, अजा (बकरी) मूत्र, देवदारु, नागरमोथा और चंदनादि सुगंधित पदार्थोंमें तेल पकाकर मर्दन करो तो शीतपूतना ग्रहका दोष दूर होगा.

तथा २-कुटकी, नीमकी छाल,खैरसार,पलाशकी छाल और काहूकी छालमें घृत पकाकर बालकको खिलाओ या मर्दन करो तो शीतपूतना ग्रहका दोष छूट जावेगा.

तथा ३-नीमके पत्तोंकी धूनी दो, चिरमकी माला पहिनाओ तो शीतपूतना दोष दूर होगा.

तथा ४-नदीके किनारे शीतपूतनाके नामसे मूँग और चावल अर्पण करो तो शीतपूतनादोष दूर होगा.

मुखमंडिकाग्रह यत्न १-कैथ, बेल, अरण्या (अग्निमन्थ), अडूसा, श्वेत अरंड और कूट इनके क्वाथमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा.

तथा २-भंगरेका रस और वच, तेलमें पकाकर मर्दन करो तो मुखमंडिका दूर होगी.

तथा ३-रार और कूट इनके क्वाथमें घृत पककार मर्दन करो तो मुखमंडिका दोष दूर होगा.

तथा ४-गोशालामें बलि देकर "अलंकृता कामवती सुभगा कामरूपिणी । गोष्ठमध्यालयरता पातु त्वां मुखमंडिका ॥" इस मंत्रसे अभिमंत्रित जलमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाका दोष दूर होगा.

नैगमेयग्रहयत्न १-बेलकी जड़का बक्कल, अरण्याकी जड़ और कणगचकी जड़ इनके क्वाथमें बालकको स्नान कराओ तो नैगमेयका दोष निवृत्त होगा.

तथा २-प्रियंगुपुष्प, जवासा, सौंफ और चित्रककी छाल इनका क्वाथ गोमूत्र, दही और कांजी ये सब तेलमें पकाकर बालकके मर्दन करो तो नैगमेयग्रहका दोष दूर होगा.

तथा ३-तिल, चावल, फूलकी माला और मोदक, मिठाई आदि "अजाननश्चलाक्षिभ्रूः कामरूपी महायशाः । बालातपलायितो देवो नगमेयोऽभिरक्षतु" इस मंत्रसे बालकपर ७ वार उतारकर वृक्षकी पीठ-

पर डालो तो बालक नैगमेयग्रहके दोषसे अच्छा हो जावेगा. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

नंदामातृकायत्न १–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, चावल, ७ श्वेत फूल, ७ ध्वजा, ७ दीपक, गुलगुली (गुलगुला), पान, गन्ध, धूप, मांस और मद्य ये एक कोरी सराईमें धरके "ॐ नमो भगवते रावणाय हन हन मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतार करके मध्याह्न समय पूर्व दिशाके चौमार्गपर बलि दो और पीपलका पत्ता बालकके शिरपर धरके स्नान करानेके अनंतर सरसों, मेढासिंगी, नीमके पत्ते और शिवनिर्माल्यकी धूनी दो तो इसी भांतिचारदिन करनेसे नन्दामातृका दोष निवारण होगा.

सुनंदामातृका यत्न २–सवासेर चावल, दही, मद्य, तिल और मछलीका मांस ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ॐ नमो रावणाय हन हन मुंच मुंच फट् फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालक पर उतार करके संध्या समय पश्चिमके चौमार्गपर बलि दो और शीतल जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, खश, बिल्लीके रोम, घृत वा दूबकी धूनी दो. इसी प्रकार तीन दिन बलि देकर ४ दिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराओ तो सुनंदामातृका दोष मुक्त होगा.

पूतनामातृकायत्न ३–नदीके दोनों तटोंकी मिट्टीका पुतला, पान, लालपुष्प, रक्तचन्दन, ७ ध्वजा, दीपक, भात, मांस, मद्य ये सब कोरी सराईमें धरकर "ॐनमो रावणाय नमःहन हन मुञ्च मुञ्च त्रासय त्रासय स्वाहा स्वाहा" इस मन्त्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर दक्षिण दिशाके चौमार्गपर बलि दो और शिवनिर्माल्य, गूगल, सरसों, नीमके पत्ते और मेढासिंगीकी धूनी दो इसी प्रकारका ३ दिन-करके अनन्तर चौथेदिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करा दो तो बालक पूतनामातृकाके दोषसे छूट जावेगा ।

मुखमंडिकामातृका यत्न ४–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला कमलपुष्प, गन्ध, तांबूल, श्वेतपुष्प, ४ दिये, १२ मालपुए, मछलीका मांस, मद्य और छांछ ये सब वस्तुयें कोरी सराईमें धरकर "ॐनमो, रावणाय हन हन मंथ मंथ स्वाहा" इस मन्त्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर उत्तर दिशाके चौमार्गपर बलि दो, इसी प्रकार ३ दिन

करनेके अनन्तर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करा दो तो मुखमंडिकादोषग्रसित बालक कुशल होगा।

पूतनामातृकायत्न ५–कुम्हारके चाककी मिट्टीका पुतला, गन्ध, तांबूल, चावल, श्वेतपुष्प, ध्वजा, ५ दिये और ५ बड़े (बड़े खानेके) ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ॐनमो रावणाय चूर्णय चूर्णय स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके ईशान दिशामें बलि दो और शांति (ग्रहशांति) के जलसे स्नान करके शिवनिर्माल्य, सांपकी कांचली, घी और नीमके पत्तोंकी धूनी दो इसी प्रकार तीन दिन करनेके अंनतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करादो तो बालक पूतनादोषसे अच्छा होगा।

शकुनीमातृकायत्न ६–गेहूँकी आटेका पुतला, श्वेत पुष्प, लालपुष्प, पीतपुष्प, मद्य, मांस, १० दिये, १० ध्वजा, १० बडे और दूध ये सब "ॐ नमो रावणाय चूर्णय चूर्णय हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके मध्याह्न समय आग्नेय दिशामें बलि दो और शीतल जलसे स्नान करके शिवनिर्माल्य, घृत, लहसन, गूगल, सरसों, सांपकी कांचली; और नीमके पत्तोंकी धूनी दो तो शकुनीमातृकादोष शान्तहो जावेगा।

शुष्करेवतीमातृका यत्न ७–नदीके तलकी मिट्टीका पुतला, लाल फूल, मद्य, ताम्बूल, लाल चावलकी खिचड़ी, १० दिये, १३ ध्वजा, ये सब "ॐ नमो रावणाय तत्तेजसे हन हन मुंच मुंच स्वाहा" इस मन्त्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर पश्चिम दिशामें बलि दो और स्नान करके शिवनिर्माल्य, सरसों, मेढेका सींग, खश और घृतकी धूनी दो इसी प्रकार तीन दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करादो तो शुष्करेवतीका दोष शांत हो जावेगा।

नानामातृका यत्न ८–लाल फूल, पीली ध्वजा, रक्तचंदन क्षीर, मांस और सुराको "ॐ नमो रावणाय त्रैलोक्यविद्रावणाय चतुर्दशज्वरमोक्षणाय हन हन ॐ फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके प्रभात समय बलि दो तो नानामातृकादोष दूर होगा।

सूतिकामातृका यत्न ९–नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, श्वेत वस्त्र, गंध, ताम्बूल, १३दिये और१३ध्वजा, ये सब "ॐ नमो रावणाय

हन हन स्वाहा " इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके उत्तर दिशामें गांवके बाहर बलिदान और शीतल जलसे स्नान कराके गूगल,नीमके पत्ते, गौका सींग, सरसों और घृतकी धूनी दो इसी प्रकार ३ दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराओ तो सूतिका दोष दूर होगा ।

क्रियामातृका यत्न १० नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, मद्य, ताम्बूल, लालफूल, रक्तचन्दन, ५ ध्वजा, ५ दिये, मालपुआ और मांस ये सब पदार्थ "ॐ नमो रावणाय चूर्णितहस्ताय मुँच मुँच स्वाहा " इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके वायव्य कोणमें बलि दो और काकविष्ठा, गौका सींग, निम्बपत्र, घृत और बिल्लीके रोमकी धूनी दो तो क्रियामात्रका दोष छूट जावेगा ।

पिपीलिकामातृकायत्न ११--गेहूँके आटेका पुतला, दूध रक्तचंदन, पीतपुष्प, गंध, ताम्बूल, ७ दिये, बड़े मालपुआ, मांस और मद्यको "ॐ नमो रावणाय मुंच मुंच स्वाहा " इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके पूर्व दिशामें बलि दो, तदनन्तर शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, गौका सींग, सांपकी कांचली और घृतकी धूनी दो। तीन दिन इसी प्रकार करके चौथे दिन ब्राह्मण भोजन कराओ तो बालक पिपीलिकामातृकादोषसे मुक्त होगा ।

कामुकामातृका यत्न १२--गेहूँके आटेका पुतला, ताम्बूल, गंध, श्वेतपुष्प, ७ ध्वजा और ७ मालपुआ "ॐ नमो रावणाय मुंच मुंच हन हन स्वाहा " इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके बलि दो और शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, सरसों, और घृतकी धूनी दो तो कामुकामातृकाके दोषसे बालक मुक्त हो जावेगा। यह रावणकृत कुमारतंत्र चक्रदत्तमें लिखा है ।

मंथज्वरयत्न १--यह रोग सबरोगोंका राजा है इसलिये इसके सब प्रयत्न बड़ी पवित्रतापूर्वक करना चाहिये । रोगीको पवित्र स्थानमें रक्खो, पवित्र वस्त्र पहिनाओ, पवित्र मनुष्यको परिचर्यामें रक्खो, दृष्टिमें अपवित्र-वस्तुयें न आने दो, स्त्री आदिकी छाया न पड़ने दो, लाल कम्बल या पीताम्बरकी ओट (पर्दा) बाँधो, सुगंध, धूप, चन्दन, कर्पूरादिसे गृहको सुगंधित रक्खो, दरख्तोंके कूंड या हरियाली और मोती आदि रत्न लटकाओ और स्वधर्मके

मनोहर इतिहासादि सुनाओ तो मोतीज्वर शांत होकर रोगीकी पीड़ा शान्त होगी।

तथा २-चिरायता, सोंठ घिसकर पिलाओ, काला अगर घिसकर पिलाओ। तुलसीका रस, गोबरका रस, जीरे और सोनामक्खी भस्म घिसकर पिलाओ, सांबरका सींग, चंदन, जीरा, नेत्रवाला, नागरमोथा, चिरायता, कूडा, काला जीरा, गिलोय, इलायची और कमलगट्टेको घिसकर पिलाओ तो मोतीज्वर शांत होगा।

तथा ३-श्वेतचन्दन, लालचंदन, नेत्रवाला, पित्तपापड़ा नागरमोथा, सोंठ, चिरायता और खशका क्वाथ पिलाओ तो दाहग्लानि, प्रलाप, विकलता, तिमिर और पित्त ये सब उपद्रव शान्त होंगे।

तथा ४-लघुशिवणी, दाख, नेत्रवाला, चन्दन, नागरमोथा, खश, पित्तपापड़ा और मुलहटी इनका अष्टावेष क्वाथ मधुके साथ दो तो पित्तज्वर, भ्रम, दाह और छर्दिका अतिकोप भी शांत होगा।

तथा ५-रक्तचंदन, धना, कालावाला, पित्तपापड़ा नागरमोथ और सोंठ इनका क्वाथ दो, बड़के पत्ते और बाजरेके आटेक क्वाथ दो पोदीना, वनतुलसी और श्याम तुलसीके रसमें मिश्री डालकर तीन या सात दिन पिलाओ, नागरमोथा, कपूरकाचरी, वनतुलसी, पित्तपापड़ा और सोंठ इतका क्वाथ दो तो मोतीज्वर शांत होगा।

तथा ६--"ॐनमो अंजनीपुत्र ब्रह्मचारीवाचा अविचल स्वामिन् उकार्य सारिखा क्षांक्षः मगधदेशराय बड़ेस्थानके तहाँ मूसलीकंद ब्राह्मणने मधुरा उत्पन्न किया पृथ्वीमें मोकल्यो हनुमन्त वाचा बलीपड़ा हनुमंतजी दृष्टि पड़ो हनुमन्तनामेन गच्छ गच्छ स्वाहा" इस मन्त्रको शुद्ध होकर १०८ बार जपो और चन्दन, अगर, धूप, श्वेतपुष्पको रखके मिट्टीके पात्रमें धरके रोगीके माथेपरसे उतार शुद्ध जलमें डाल दो तो मन्थज्वर शांत होकर रोगी समस्त पीड़ासे विमुक्त होगा।

इति अमृतसागरे चिकित्साखण्डे बालरोगमंथज्वरयत्ननिरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरंगः॥ ४२॥

अथ क्लीबरोग

चिकित्सा क्लीबरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य वै।
वह्निवेदतरंगेऽत्र कथ्यते च यथाक्रमम् ॥ १ ॥

अब हम इस ४३ तेंतालीसवें तरंगमें मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करनेवाले क्लीबरोगकी चिकित्साका वर्णन क्रमानुसार करते हैं।

क्लीबरोग यत्न १–अतिसुन्दर स्त्रीकी मनोहर वाणी सुनाओ ताम्बूल, आसव, दूध, मिश्री, दधि, शिखरन, आमरस, उड़द, भीमसेनी कपूर, कस्तूरी, मृगांक, चन्द्रोदय तथा अन्य पौष्टिक, स्वादिष्ठ, मनोहर पदार्थ सेवन कराओ, सुन्दर उपवनमें भ्रमण कराओ इत्यादि उपभोगोंके विधिवत् सेवनसे नपुंसकता दूर होगी।

तथा २–गोखरू, तालमखाना; असगंध, शताबरी, केवाँचबीज श्वेत मूसली, मुलहटी, खरैंटी और गंगेरनकी छालका ५ टंक चूर्ण दूध मिश्रीके संयोगसे खिलाकर पथ्यसे रक्खो तो नपुंसकपना दूर होगा, इसे गोक्षुरादि चूर्ण कहते है।

तथा ३–आधसेर चोल सुपारी ४ दिन जलमें भिगोकर टुकड़े कर सुखाके चूर्ण करलो, इस चूर्णको आधासेर गोघृतमें मिलाकर ४ सेर दूधके संयोगसे खोवा बनालो इस खोवेको ४ सेर मिश्रीकी चासनीमें डालकर टके टके भर इलायची, लौंग, गंगेरनकी छाल, खरैंटी, जायफल, पीपल, दाख, जायपत्री, पत्रज, सोंठ, शतावरी, मूसली, कौंचबीज, विदारीकंद, जीरा, सालममिश्री, सिंघाडे, गोखरू, छड, वंशलोचन, असगंध, कस्तूरी, केशर, कपूर चन्दन, भीमसेनीकपूर और अगरका चूर्ण भी उसीमें डालदो, तदनंतर मृगांक, चंद्रोदय, अभ्रक, वंग, कांतिसार, पौष्टिक फल (मेवे) तथा अन्य सुगंधित द्रव्य मिश्रित करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो इसमेंसे १ मोदक प्रतिदिन देकर पथ्यसे रक्खो तो निश्चय है कि, नपुंसकत्व निकल जावेगा, इसे वल्लभपूगपाक कहते हैं।

तथा ४–पक्के मीठे आमका १६सेर रस, सेर मिश्री, और १सेर घीको मृत्तिकाके पात्रमें पकाकर गाढा होनेपर चांदीके पात्रमें डालो, तदनंतर आठ टके भर सोंठ, ८ टके भर मिर्च, २ टके भर पीपल, २ टके धमासा, चार मासे कस्तूरी, १ टंक भीमसेनीकपूर, सेरभर मधु १ टंक भर जीरा

चित्रक, पत्रज, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, इलायची, जायफल और केशर इन सबका चूर्ण उपर्युक्त चासनीमें एकजीव करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो इसमेंसे १ गोली नित्य खिलाओ तो नपुंसकत्व संग्रहणी, क्षय, श्वास, अरुचि, रक्तपित्त, अम्लपित्त, और पांडु ये सब रोग दूर होकर मैथुनमें विशेष शक्ति प्राप्त होगी, इसे आम्रपाक कहते हैं।

तथा ५-पांच टके भर गोखरूका चूर्ण, ५ टके मधु बकरीके दूधके साथ २ मासपर्यन्त नित्य चटाओ तो हस्तक्रियासे हुआ नपुंसकत्व दूर होगा।

तथा ६-चार चार मासे रक्तचन्दन, पतंग; अगर, देवदारु, चीड, पद्मकाष्ठ, कपूर, केशर, कस्तूरी, जायफल, जायपत्री, लौंग, इलायची, बड़ी इलायची, कंकोल, दालचीनी, नागकेशर, नेत्रवाला, खश, छड, दारुहल्दी, मूर्वा, कपूर, शिलाजीत, नागरमोथा, प्रियंगुपुष्प, सँभालू, लोहबान, गूगल, खश, नख, धावडेके फूल, पीपलामूल, मँजीठ, तगर और मोम इनका क्वाथ चतुरावशेष रखके क्वाथमें सेर भर मीठा तेल पकाकर मर्दन करो तो शरीरके सम्पूर्ण रोग दूर होकर वृद्ध मनुष्य भी तरुण समान होजावेगा, इसे चन्दनादि तैल कहते हैं।

तथा ७ सेर भर केवांचबीज, सेर भर गोदुग्धमें पकाकर छिलके छीललो, इन बीजोंका चूर्ण गोदुग्धमें मसलकर १० टंक प्रमाणकी टिकियें, (कुचियें) बनालो, इन बडोंको गोघृतमें तलकर दो सेर मिश्रीकी चासनीमें पाग दो तदनन्तर इन्हें मधुमें डालकर प्रतिदिन १ टिकिया २ मासपर्यंत खिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर विशेष काल-पर्यन्त वीर्यस्तंभन होगा इसे वानरीगुटिका कहते हैं।

तथा ८-अधेले अधेले भर अकरकरा, सोंठ, लवंग, केशर, पीपल, श्वेत चन्दन, जायफल, जायपत्री, और १ टके भर अहिफेन (अफीम) इनका चूर्ण मधुमें मिलाकर उड़द प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो १ गोली नित्य रात्रिकालमें खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्यका बहुत कालतक पात नहीं होगा ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं।

तथा ९-तिलोंको मुर्गीके अंडेके पानीमें ११ वार भिगोकर सुखाओ और प्रतिदिन ५ टंक खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर स्त्रीप्रसंगमें शक्ति बढ़ेगी।

तथा १०–सूखे विदारीकंदको उसीके रसकी २१ पुटें देकर सुखाते जाओ तदनन्तर मिश्री मधु और घृतके साथ प्रतिदिन २ टंक खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्ध भी तरुणसमान होजावेगा, यह वृन्दमें लिखा है।

तथा ११–सूखे आंवलोंके चूर्णको गीले आंवलेके रसकी २१ पुटें देकर सुखाते जाओ और मिश्री मधु और घृतक साथ २ टंक प्रतिदिन खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्ध भी तरुण समान होजावेगा, यह चक्रदत्तमें लिखा है।

तथा १२–सोंठ, मिर्च, पीपलके चार भाग, १ भाग पारा, २ भाग वंग, ८ भाग शतावरी और दो दो भाग तज, पत्रज, नागकेशर, इलायची, जायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, लौंग और जायपत्री इन सबका महीन चूर्ण मिश्री, मधु और घृतमें मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो, इसकी एक गोली प्रतिदिन खिलाके ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्ध भी तरुणसमान हो सकेगा, यह मदनमंजरीगुटिका योगतरंगिणीमें लिखी है।

तथा १३–अफीम और पारेको धतूरेके बीजोंके तेलमें ३ दिन पर्यन्त खरल करके समान मिश्री और भंग मिला दो जो प्रतिदिन १ रत्ती खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य दृढ हो जावेगा। यह सारसंग्रहमें लिखा है।

तथा १४–जायफल, अकरका, लौंग, सोंठ, केशर, पीपल, कस्तूरी, भीमसेनीकपूर, अभ्रक, और इन सबके समान अफी-मको खरल करके मूंग प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो इनकी १ या दो गोलियां खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वीर्य महादृढ हो जावेगा।

तथा १५–चीनियांकपूर, सुहागा और पारेको अगस्त्यके रस और मधुके साथ १ दिन पर्यन्त खरल करके लिंगपर लेप करो और १ प्रहर रखकर धो डालो तदनंतर स्त्रीप्रसंग करो तो वीर्य विशेष बिलम्बसे स्खलित होगा, इसे नागार्जुनी लेप कहते है।

तथा १६–श्वेत कनेरकी जड़का बक्कल, अकरका, अजमोद, काले धतूरेके बीज और जायफलोंको जलमें पीसकर उर्द प्रमाणकी गोलियां बनाओ, जो इसमेंसे १ गोली मनुष्यके मूत्रमें घिसकर लिंगपर लेप करो तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य स्तंभित होगा।

तथा १७–शूकरकी मेद और घीसो खरल करके लिंगपर लेप करो तो सब विकार दूर होकर पौरुष प्राप्त होगा।

तथा १८–श्वेतकनेरकी जड़की छाल दूधमें डालकर दूधको जमादो इस दहीको विलोडकर घी निकाललो और घृतमें मोहरा, जायफल, अफीम और शुद्ध जमालगोटे का चूर्ण मिलाकर लिंग पर लेप करो तदनन्तर ऊपरसे पान (तांबूल) बांधकर ब्रह्मचर्य रक्खो तो प्रतिदिन ऐसा करनेसे नपुंसकत्व दूर होगा।

विशेषद्रष्टव्य--अब आगे धातुओंको दग्धकर उनकी भस्मसे रस बनानेमें अति क्लिष्टता है इसके निर्माणमें बड़ी सावधानीसे क्रिया करनी चाहिये इसका विशेष ध्यान रक्खो कि, इस विषयमें जिन जिन धातु उपधातु तथा वत्सनाग प्रभृति विषयोंका उपयोग करो वे सब विचारखण्डलिखित विधानसे शुद्ध करके योजित करो और पारेको जितना शुद्ध करसको उतनाही अच्छा होगा। इनमेंसे किसी भी धातुके शोधनसंस्कारमें क्वचित् न्यूनता भी रही हो तो वह रस यथेष्ट गुणको प्राप्त नहीं होगा।

मृगांकनिर्माणविधि १–स्वर्णके पतले पत्तोंको दूने पारेके साथ खटाईके संयोगसे खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आंवला सार गंधकका चूर्ण गोलेसे ऊपर नीचे शरावसम्पुटमें धरकर कपड मिट्टीसे लपेट दो और इसी भांति ३ पुट देकर ३ वार गजपुटमें फूक दो तो उत्तम मृगांक बन जावेगा।

तथा २--स्वर्णपत्र और सोलहवें भाग सीसेको खटाईके साथ खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आवलासारगंधककाचूर्ण गोलेके ऊपर नीचे शरावसम्पुटमें धरकर कपड मिट्टीसे लपेटके गजपुटमें फूंकदो इसी भांति ७ बार पुट देदेकर फूंकदेनेसे उत्तममृगांक बन जावेगा।

तथा ३--स्वर्णपत्र और समान पारेको खटाईके साथ खरल करके कचनारके रसकी १ पुट अग्निझालके रसकी ३ पुंटे और कलिहरीकी जड़के रसकी १ पुट दो तदनन्तर स्वर्णपत्रसे चतुर्थांश मोती मिलाकर पुनः खरल करो और तब इन सबके समान गन्धकके साथ २ दिन पर्य्यंत खरल करके गोला बनाओ इस गोलेको शरावसम्पुटमें धरके कपडमिट्टीके गजपुटमें फूंक दो तो मृगांक बन जावेगा।

मृगांकभक्षणविधि १–१रत्ती मृगांक, रत्ती पिप्पलीका चूर्ण और २ टंक मधुके साथ देकर खटाई आदिके पथ्यसे रखो तो श्वास, कास, क्षयी और अरुचि आदि समस्त रोग दूर होकर २ मास सेवनसे शरी पुष्ट हो जावेगा।

रूपरसनिर्माण विधि १–३ भाग चांदीको और १ भाग हरतालको खटाईसे खरल करके गोला बनाओ और गोलेको शरावसम्पुटमें धर-कर गजपुटमें फूँकदो इस प्रकार १३ वार पुट देकर फूकनेसे अत्युत्तम रूपरस बन जावेगा।

तथा २–चांदीके समान रूपामक्खीके चूर्णको चांदीके पत्तोंके ऊपर नीचे रखकर शरावसम्पुटमें धरदो और कपड़मिट्टी करके गजपुटमें फूँक दो तो उत्तम रूपरस बन जावेगा।

रूपरसभक्षणविधि १–१ रत्ती रूपरसको नित्य सेवन कराओ तो वह मनुष्य सबरोगरहित और पूर्ण बलवीर्ययुक्त हो जावेगा।

तांबेश्वरनिर्माण विधि १–१ ताम्रपात्रके समान रूपामक्खीका चूर्ण उनके ऊपर नीचे संपुटमें धरकर गजपुटमें फूंकदो तो तांबेश्वर बन जावेगा।

तांबेश्वरभक्षणविधि १–१ रत्ती भर तांबेश्वर नित्य १ मास पर्यंत सेवन कराओ तो श्वास, आदि सब रोग दूर होकर बल बढ़ेगा।

नागेश्वरनिर्माणविधि १–सीसेको कडाहीमें चूल्हेपर चढ़ाकर गलाओ इससे चतुर्थांश पीपलकी छालका चूर्ण और इमलीकी छालका चूर्ण पिघलते हुए सीसेमें थोड़ा २ डालकर लोहेकी करछुलीसे १ दिनभर चलाते जाओ, तदनन्तर जँभीरीके रसमें खरल करके गजपुटमें फूँकदो इसी प्रकार जँभीरीके रसकी १० पुटें देकर फूँको, नागरबेलके पानके रसकी भी भी १० पुट देकर फूँको और इसी सीसेके समान मैनसि-लके साथ कांजीमें खरल करके टिकियां बनाओ इन टिकियोंको सुखा, कर सम्पुटसे गजपुटमें फूँक दो जो इसी विधिसे इसे ६० आँच दो तो उत्तम नागेश्वर बन जावेगा।

तथा २–सीसेको कड़ाहीमें पिघलाकर १ दिनभर केवड़ेके सोटेसे घोटते हुए नीचेसे आंच देते जाओ तो लालभस्मका नागेश्वर बन जावेगा।

नागेश्वरभक्षणविधि १–१ या १॥ डेढ़ रत्तीकी मात्रा २१ दिनपर्यंत दो तो समस्त रोग दूर होकर बलवृद्धि हो जावेगी।

वंगेश्वरनिर्माण विधि १--रांगेको कड़ाहीमें चढ़ाकर नीचेसे आंच देते जाओ और इसपर चौथाई पीपलकी छाल और चौथाई इमलीकी छालका चूर्ण डालते हुए दो प्रहर पर्यंत करछुलीसे हिलाते जाओ पश्चात् इसको समान हरतालके साथ खटाईसे खरल करके गजपुटमें फूँक दो तो शुद्ध वंगेश्वर बन जावेगा।

तथा २- पावभर रांगेको गलाकर गलनेपर उसमे पावभर पारा मिलादो और ढालकर पत्र बनालो तदनंतर एक कंडे (गोबरी) पर कसैलाका चूर्ण तथा चूर्णपर वे रांगके टुकड़े उनपर पुनः चूर्ण और चूर्णपर दूसरा कंडा जमाकर निर्वात स्थानमें गजपुटमें फूँक दो तो वे रांगेके टुकडे श्वेत भस्म होकर फूल जावेंगे, इसीको वंगेश्वर रस कहते हैं (वजन पूरा उतरना चाहिये)।

वंगश्वरभक्षण विधि १--१रत्ती वंगेश्वरकी मात्रा खिलाओ तो वीर्यको अतिदृढता और शरीरको पराक्रम प्राप्त होगा।

कांतिसारनिर्माणविधि १--गजवेली लोहचूरको आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, त्रिफलाके रसकी ७ और अनार पत्रके रसकी ७ पुट देकर प्रति पुटपर भस्म करते जाओ तदनंतर खरल करके जलपर तराओ तो उत्तम कांतिसार बन जावेगा।

तथा २ गजवेली लोह चूर्णको नौसादर और नींबूके रसकी २१ पुटें दे देकर प्रति पुटपर गजपुटमें फूंकते जाओ तो उत्तम कांतिसार बन जावेगा।

कांतिसारभक्षणविधि १--जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो श्वास, कास, क्षयी आदि सब रोग दूर करके कांति बढ़ावेगा।

सोनामक्खीभस्मविधि १--सोनामक्खीको कुलथीके क्वाथ या तेल या छाँछ या बकरीके दूध (इनमेंसे किसी एक) में खरल करके गजपुटमें फूंक दो तो सोनामक्खीकी शुद्धभस्म हो जावेगी।

सोनामक्खीभक्षणविधि १--जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो प्रमेहादिक विकार भी दूर हो जावेंगे।

अभ्रकनिर्माणविधि १--श्याम अभ्रकके पत्र महीन पीसकर सुखादो और कम्बलके टुकडोंपर डालकर तण्डुलके साथ मसल मसलके पानी निकालते जाओ, तदनन्तर आकके दूधमें खरल कर टिकियाको सुखालो और आकके पत्तोंमें लपेटकर कपड़मिट्टी करके फूंक दो इसी प्रकार आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, ग्वार-

पाठेके रसकी ७ पुटें दो तदनन्तर चौलाईके रस या नागरमोथाके क्वाथ या काँजी या चित्रकके क्वाथ या जंभीरके रस या त्रिफलाके रस या गोमूत्रकी ७ पुटें देकर पश्चात् बड़की जटाके क्वाथकी ७ और मजीठके क्वाथकी ७ पुटें दो, इसी विधिसे प्रति पुटपर फूकते जाओ तो अभ्रक उत्तम बन जावेगा।

तथा २–श्वेत अभ्रकके पत्रोंपर समान गुड़ पानीमें गलाकर गाढासा लगादो और इसके साथही अभ्रकसे आधे शोरेका चूर्ण उन पत्रोंपर भुरकाके एकपर एक ऐसी घड़ीसी बनालो, तदनन्तर इस घड़ीको जंगली कंडोंकी आंचमें फूकके निश्चंद्र (चमकरहित) होनेतक फूकते जाओ अभ्रकभस्म बन जावेगी।

अभ्रकभक्षणविधि १–एक या दो रत्ती अभ्रक दो मासपर्यंत सेवन कराओ तो प्रमेहादि अनेक रोग दूर होकर शरीर पुष्ट और नपुंसकताका नाश हो जावेगा, उन दोनों विधियोंमें प्रथम श्रेष्ठ और द्वितीय उससे कुछ न्यून रहेगा।

हरतालभस्मनिर्माणविधि १–पीली हरतालको दूधीके रसमें दो दिन और खरैंटीके रसमें खरल करके गोला बनालो इसे छायामें सुखाकर पलशकी बीच हंडीमें दबादो उस हंडीको चूल्हेपर चढ़ाकर प्रथम मध्यम तदनंतर विशेष आंच दो, आंच देते समय उसमेंसे धुआं न निकलने पावे, जो निकले तो भी छिवला (पलश = खांकर की राखसे मूँदते जाना चाहिये, इसी प्रकार ३ दिन पर्यंत आँच देकर स्वांगशीतल होजानेपर निकाललो तो निर्धूम श्वेतवर्ण और बोझमें पूर्ववत् होकर शुद्ध हरताल भस्म हो जावेगी।

तथा २–पीली हरतालको ग्वारपाठेके रसमें ३ दिन खरल करके टिकियां बनाकर छायामें सुखालो और छिवलेकी राखके मध्य हंडीमें दबाकर ४ प्रहरकी आँच दो और स्वांगशीतल होनेपर निकाल लो तो श्वेत निर्धूम तथा बोझमें पूरी होकर उत्तम हरतालभस्म बन जावेगी।

तथा ३–पीली हरतालको दशमांश सुहागेके साथ चोघड़ी कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर जँभीरीके कांजीमें; पेठेके रसमें, त्रिफलाके रसमें, दोलायंत्रसे प्रतिरसमें दो दो प्रहर पर्यंत आँच दो तदनंतर खटाईसे धोकर पलाशके रसके साथ दो दिन पर्यंत खरल करो और गोला बनाकर धूपमें सुखालो,इस गोलेको शरावसम्पुटमें गजपुटमें फूँकके स्वांगशीतल होनेपर निकाललो पुनः बकरी दूधमें १दिन खरल करके गोला बनाओ और धूप सुखाकर ४ सेर पलासकी राखके मध्य हंडीमें बादके

इस हंडीको चूल्हेपर चढ़ाकर ३२ प्रहरकी आँच दो आँच देते समय धुएँको पलासकी राखसे मूदते जाओ, और स्वांगशीतल होजानेपर निकालो तो श्वेत निर्धूम और बोझमें पूरी उत्तम हरतालभस्म बन जायगी।

हरतालभस्मभक्षणविधि १--हरतालकी भस्मको १ रत्ती मात्रा पानके साथ दो तो कुष्ट आदि समस्त रोग दूर होकर अतिशय बल प्राप्त होगाः इस भस्मपर मोंठ और चनेकी अलोनी रोटी पथ्य है।

चन्द्रोदयनिर्माणविधि १--१ टकें भर स्वर्णपत्र, ८ टके भर पारा और १६ टके भर गंधकको नन्दनन्दवन (कपास) कें फूलोंके रसमें ३ दिन और ग्वारपाठे रसमें ३ दिन खरल करके सुखालो और इसे आतशी (दृढ़) शीशीमें भरके कपड़मिट्टीकी सात पुटें देके सुखा लो तदनन्तर शीशीका मुख बन्द करके वालुकायंत्रसे ३२ प्रहर आँच दो, स्वांगशीतल होजानेपर निकाललो तो हिंगुलसदृश लालवर्णका चंद्रोदय बन जावेगा।

चंद्रोदयभक्षणविधि १-१ रत्ती चंद्रोदयकी मात्रा जायफल, भीमसेनी कपूर, समुद्रशोष, लौंग और कस्तूरीके चूर्णके साथ देके ऊपरसे मिश्रीयुक्त औटा दूध पिलाओ तो नपुंसकता दूर होकर विशेष मैथुनशक्ति प्राप्त होगी, इसका भक्षण प्रभात या रात्रिको तथा सेवन पर्यन्त पौष्टिक पदार्थोंका ग्रहण खटाई आदि कुपथ्यका त्याग रखना चाहिये।

रससिंदूरनिर्माणविधि १-५ टंक पारा, ५ गंन्धक, २ टंक नौसादर और ३ टंक फिटकरीको ३ दिन खरलकरके आतसी (दृढ़ शीशीमें भरो और कपड़मिट्टीकी सातपुटें देकर बालुकायंत्रसे ३२ प्रकारकी आँच दो तदनंतर शीतलहोजानेपर शीशीमेंसे निकाललो यह रससिंदूर बनजावेगा, इसे हरगौरी रस भी कहते हैं।

तथा २--पारे और गंधकको बड़की जटाके रसमें १ दिन खरल करके दृढ़ शीशीमें भरदो इस शीशीको सात कपडमिट्टीमें लपेटकर बालुकायंत्रसे २१ प्रकारकी आंच दो हिंगुलके सदृश लालवर्णका रससिंदूर बनजावेगा।

रससिंदूरभक्षणविधि १- १ रत्ती रससिन्दूरकी मात्रा पानके साथ खिलाओ तो सब रोग दूर होकर अतिपुष्टता प्राप्त होगी।

पारदभस्मनिर्माणविधि १--पारेको गूलरके दूधमें १ प्रहर खरल करके गोली बनाओ तदनंतर हींगको गूलरके दूधमें पीसकर १ मूषा (घरिया)

बनाओ इन दोनों मूषाओंके भीतर गोली रखकर बंद करदो और सुखाकर एक सेर कण्डोंकी भभूदर (आग) में फूंकदो, तदनंतर स्वांगशीतल होनेपर निकाललो सुन्दर पारदभस्म बन जावेगी।

तथा २-पारेको गूलरके दूधमें खरल कर गोली बनाओ और आधे झारके बीजोंके चूर्णकी २ मूषें बनाकर इन दोनोंमें दडघलपुष्प, वाय-विडंग और खैरके मध्य पारेकी गोली धर दो तदनंतर मूषाको भली भांति बंद करके कोयलोंकी आंचमें भाथी (धमन) से धौंक दो फिर इस मूषापर कपडमिट्टी देकर गजपुटमें फूंकदो तो श्वेत शुद्ध और तौलमें पूर्ववत् उत्तम पारदभस्म बना जावेगी।

पारदभस्मभक्षणविधि १- यह पारदभस्म जुदे जुदे अनुपानोंसे समस्त रोगोंको निवृत्त करती है इस सर्वोत्तम रसके सेवनसे बल, वीर्य और तेज बढ़कर दिव्य देह हो जाता है।

वसन्तमालतीरसनिमाणविधि १--१ मासे स्वर्णपत्र, २ मासे मोती, ३ मासे हिंगुल, ४ मासे मिर्च, ८ मासे सुरती खपरा और ८ मासे चांदी लेकर खपरेको गोमूत्रमें दोलायन्त्रसे १६ प्रहर पकाओ और सब पदार्थ मक्खनके साथ खरल करके माखन सूखके चिकनाहट दूर हो जानेपर टिकिया बनाओ यह वसंतमालती रस बन जावेगा।

वसंतमालतीभक्षणविधि १-१ रत्ती वसन्तमालतीकी मात्रा २ पीपली और मधुके साथ नित्य दो तो विषमज्वरादि समस्त रोग दूर होकर शरीर पुष्ट होजावेगा।

हिंगुलभस्मनिर्माणविधि १-४ पैसेभर हिंगुलको छोटी कड़ाहीमें रखकर आंच देते हुए २ सेर नींबूका रस और ३ सेर कांदे- (प्याज) का रस डालकर शनैः शनैः सुखा दो तदनन्तर इस डलीको १ सेर-भर कांदेकी लुगदी मध्य कड़ाहीमें रखकर पकाओ फिर १ सेर कुचला, १ सेर राई, १ सेर मालकांगनी, १ सेर कांदा, १ सेर घी और १ सेर मधु इनको कूट पीसकर लुगदी बनाओ इस लुगदीमें वह हिंगुलकी गोली रखकर ८ प्रहर आँच दो तो लाल वर्ण, निर्धूम और बोझमें पूरी हिंगुलभस्म होगी।

हिंगुलभस्मभक्षणविधि १-एक या आधी रत्ती हिंगुलभस्म पानके साथ दो तो सब रोग दूर होकर भूँख और पुंस्त्वशक्तिकी विशेषता होगी।

दशमूलासवनिर्माणविधि १-शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दोनों कटियाली, गोखरू, बेल, अरुणी, अरलू पैसेभर; कुंभेर और पाडलीकी जड़ें पचीस २ टकेभर, चित्रक, पोहकरमूल, बीस बीस टकेभर; लोध और गिलोय १६ टके भर; आँवला १२ टकेभर, धमासा, खैरसार, विजयसार और हर्रकी छाल ८६ टकेभर; कूट दो टकेभर; मँजीठ, देवदारु, वायविडंग, भारंगी, कैथ, बेहेड़ेकीछाल, सांठीकी जड़, छड़, पद्मकाष्ठ, नागकेशर, नागरमोथा, प्रियंगुपुष्प, चव्य, कालाजीरा, गौरीसर, निसोत, सँभालू, रास्ना, पीपल, सुपारी, कपूर, सौंफ, हल्दी, इन्द्रयव, काकडासिंगी, विषममद, महामेद, क्षीरकाकोली, काकोली ऋद्धि और वृद्धि दो दो टके भर, दाख ३२ टकेभर, मधु पांच सेर, धावडेके फूल, बेरकी झडी और बेलकी छाल इन सब पदार्थोंको ८ गुणे जलमें औटाकर चतुर्थांश रखलो या सबको कूटकर जलके साथ १ बडे मटुकेमें डालदो और इसीमें पक्का मनभर गुड़ डालकर मुँह भलीभाँति बन्द करदो, तदनन्तर इस मटुकेको खातकी धरतीमें गाडकर २१ दिन पश्चात् दो दो टके भर खश, चन्दन, जायफल, लौंग, दालचनी, इलायची, पत्रज, केशर पीपल, और ४ मासे कस्तूरीके चूर्णकी पोटली मद्य उतारनेके यंत्रकी नलीके मुखपर धरके उसी यंत्रमें उस मटुकेका पदार्थ भी डाल दो, तदनन्तर मद्य उतारनेकी विधिसे इसका आसव उतारकर शुद्धपात्रमें धरलो।

आसवभक्षणविधि १-जो पुराना आसव मदात्यय प्रकरणमें लिखी हुई विधिसे सेवन कराओ तो क्षयी, छर्दि, पाण्डुरोग, शूल, अरुचि, संग्रहणी, कास, श्वास, भगंदर, कुष्ठ, अर्श, प्रमेह, अश्मरी, मंदाग्नि, मूत्रकृच्छ्र, नपुंसकत्व, उदररोग और सब वातरोग नष्ट होकरक्षुधा, वीर्यपुष्टता और बलकी विशेष वृद्धि होगी।

मूसलीपाकनिर्माणभक्षणविधि १-पावभर श्वेत मूसली, दो दो टकेभर केवांचबीज, विदारीकन्द, गोखरू, शतावरी, एक एक टकेभर सोंठ, तज, गंगेरनकी छाल और खरैंटीके बीज इन सबका चूर्ण ३२ टकेभर घीमें तलकर १० सेर दूधके साथ औटाओ तदनंतर इस चूर्णसहित दूधका खोवा बनाकर ७ सेर शक्करकी चासनीमें डालदो और इसीके साथ दो दो टकेभर मिर्च, पीपल, सोंठ, दालचीनी, पत्रज, नागकेशर, जायफल और जायपत्री

एक एक टकेभर, लौंग, इलायची और वंशलोचन ४ मासे' कस्तूरी तथा थोड़े थोड़े वंगेश्वर, अभ्रक, मृगांक हरगौरीआदि रस और इच्छापूर्वक खरक, बादामादि पौष्टिकफल (मेवा) भी इसमें मिलादो पश्चात् इन सबको भलीभाँति एकजीव करके टके प्रमाणकी गोलियां बांधलो, इसमेंसे १ गोली प्रभात और १ संध्यासमय प्रतिदिन खिलाओ तो प्रमेहादिक सब रोग दूर होकर शरीर पुष्ट होवेगा।

यवक्षारनिर्माणविधि १–गर्भ (गवोट) पर आये हुए जौ (यव) काटकर सुखालो, उन्हें जलाकर सजीव राखको २ दिनपर्यंत पात्रमें रक्खो तदनंतर उस जलको वस्त्रसे छानकर औटाओ जब आँच देते देते सब जल उडकर तलीमें नोनके समान क्षार जम जावे तो उसे निकललो यही यवक्षार (जवाखार) बन गया।

चणकक्षारनिर्माणविधि १–माघ मासमें तीन घडी पिछली रात्रि रहे तब चनेके खेतपर महीन वस्त्र चतुराईसे फेरो,जिसमें वह चनेके वृक्षोंपर पड़ी हुई क्षारयुक्त ओससे भीग जावे तदनंतर उस वस्त्रको सुखाकर इसी भांति १५ दिनपर्यंत भिगाते सुखाते जाओ अंतको पानीमें मलकर छान लो और औटकर गाढा करलो तो अतिखट्टा उत्तम चनाखार बन जावेगा।

विशेषतःउपर्युक्त विधियोंसे और भी भस्म, आसव; पाक और क्षार आदि पदार्थ निर्माण कर सकोगे।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे क्लीबरोगयत्ननिरूपणं नाम त्रिचत्वारिंशस्तरंगः॥ ४३॥

अथ विषरोग

द्विविधस्य विषस्यात्र स्थावरस्यास्थिरस्य च ।
चिकित्सा सिन्धुवेदेऽस्मिन् तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥

अब हम इस अंतके ४४ चवालीसवें तरंगमें स्थावर और जंगम प्रकारके विषोंकी चिकित्सा वर्णन करते हैं ।

स्थावरविषयरोगयत्न १–स्थावरविष खानेवालेको वमन कराओ, या घृत मधुके साथ शीतल यत्न करो या साठी चावल, कोदों और सेंधानोन खिलाओ और खट्टे तीक्ष्ण पदार्थोंका बचाव रक्खो तो विष उतर जावेगा ।

तथा २–प्रियंगुपुष्प, कांगनीका पंचांग और सिरसका पचांग गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो विष उतर जावेगा ।

तथा ३–पीपल छड, लोध, इलायची, काली मिर्च, नेत्रवाला और सोनागेरूको जलमें पीसकर लेप करो तो दूषीविष उतर जावेगा ।

तथा ४–चौलाईकी जड़को तण्डुलजलमें पीसकर पिलाओ तो स्थावर विष उतर जायगा । ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं ।

तथा ५--हल्दीको दूधमें पीसकर मिश्रीके साथ पिलाओ तो कनेरका विष उतर जावेगा ।

तथा ६- चौलाईकी जड़ या कपासका पंचांग या गिलोयको जलमें पीसकर पिलाओ तो धतूरेका विष उतर जावेगा ।

तथा ७--तिल और दूधको बकरीके पीसकर लेप करो तो अकावका विष उतर जावेगा ।

तथा ८--घृतका मर्दन करो तो कैंवाचकी खुजाल मिट जावेगी ।

तथा ९–१००० वार धोये हुये घृतका मर्दन करो तथा चिरौंजी या नारियलकी गिरी पीसकर मर्दन करो तो भिलावाका विष उतर जावेगा ।

जंगमविष यत्न १--हर्रकी छाल, गोरोचन, अर्कपुष्प, कमलनाल, नरसलकी जड़ वेतकी जड़, तुलसी, इन्द्रयव, मजीठ, जवासा, शतावरी, और सिंघाड़ेके क्वाथमें गोघृत पकाकर समान मधुके साथ शरीरमें मर्दन करो या खिलाओ या नास दो तो (सर्प्पादि) विषमात्र उतर जावेंगे, यह मृत्युपाशच्छेदि घृत भावप्रकाशमें लिखा है ।

तथा २--घृत, मधु, मक्खन पिप्पली, अदरख, मिर्च और सेन्धानोन जलमें पीसकर पिलाओ तो काले सर्पका विष भी उतर जावेगा ।

तथा ३ सहँजनके बीजोंको सिरसके फूलोंके रसकी ७ पुटें देकर अंजन दो तो सर्पदंश शांत हो जावेगा ।

तथा ४--पुष्यार्क (पुष्य नक्षत्रसे सम्बंधित सूर्य) के दिन लाई हुई श्वेत सांठीकी जड़ तण्डुलजलमें पीसकर पिलाओ तो सर्पका काटा हुआ विष उतर जावेगा ।

तथा ५--जमालगोटेके बीजोंको नींबूके रसकी ७ पुटें और लाखके रसकी १ पुट देकर धूपमें सुखालो तदनंतर पीसकर अंजन करो तो सर्पका विष उतर जावेगा ।

तथा ६--जमालगोटा पानीके साथ या नौसादर और हरताल पानीके साथ या पलाशपापड़ा अकावके दूध या बकरीके दूधके साथ घिसकर बिच्छूके डंक (घाव) पर लगाओ तो विष उतर जावेगा ।

तथा ७--"ॐ आदित्यरथवेगेन विष्णोर्बाहुबलेन च । सुपर्णपक्षपातेन भूम्यां गच्छ महाविष ॥ कोपक्षयोगपदाज्ञा श्रीशिवोत्तमप्रभुपदाज्ञा भूम्यां गच्छ महाविष" इससे डंकपर २१ वार झाड़दो तो बिच्छूका विष उतर जावेगा ।

तथा ८--केशर, तगर और सोंठ जलमें पीसकर लेप करो तो मक्खीका विष उतर जावेगा ।

तथा ९--सों, कबूतरकी विष्ठा, हरताल और सेन्धानोन बिजौरेके रसमें पीसकर लेप करो तो मधुमक्खीका विष उतर जावेगा ।

तथा १०--धमासा, मँजीठ, हलदी और सेन्धानोनको जलमें पीसकर लेप करो तो मूषक (चूहे) का विष उतर जावेगा ।

तथा ११--थूहरके दूधमें सिरसके बीज पीसकर लेप करो तो मेंढक (मंडूक) का विष उतर जावेगा।

तथा १२–जलते हुए दीपकके तेलका लेप करो तो कनखला (कनखजूरा) विष उतर जावेगा।

तथा १३--दंशित व्रणका रक्तमोचन कराओ या उस व्रणको तप्त लोहेसे दग्ध करदो तो बावले कुत्ते या स्यारका विष उतर जावेगा।

तथा १४--टके भर धतूरेका रस, १ टके भर अकावका रस और १ टके भर घृत इन तीनोंको खरल करके लेप करो तो उन्मत्त श्वानका विष उतर जावेगा।

तथा १५–धतूरेके फल चौलाईकी जड़के रसमें या गोभी या मधुके साथ पीसकर लेप करो तो बावले कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा १६–मक्खन, अकावका दूध, तेल, गुड़ और चाख्याका चूर्ण कर १ टके भरकी गोलीयां बनाओ और सात दिन पर्यंत १ गोली नित्य खिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा १७--चौ मार्ग या नदीके तीरपर चौकेमें पवित्रतापूर्वक बैठकर "अलकाधिपते यक्ष सारमेयगणाधिप। अलर्कजुष्टमेतं मे निर्विषं कुरु माचिरात् स्वाहा" इस मन्त्रसे १०८ वार आहुति देकर रोगीको डाभसे झाड़ दो तो बावले कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा १८--गुड तेलको अकावके दूधमें मिश्रित कर लेप करो तो कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा १९--मुर्गेकी विष्ठाका लेप करो या ग्वारपाठेकी गिरी और सेंधानोन ५ दिनतक व्रणपर बांधो तो कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा २०–चौलाईकी जड़, तुलसीकी जड़ और वचको तंडुल, जलके साथ पीसकर सात दिन पिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा २१–चौलाईकी जड़ और चोखको घृतमें पीसकर ७ दिन पर्यंत पिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा।

तथा २२–चार टंक कडवी तुम्बीकी जड़, चार टंक सोंठ ४ टंक नीमके फल, ८ टंक शुद्ध जमालगोटा, ७ टंक निसोत और ४ टंक मिर्चका चूर्ण गुड़में मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और १ गोली नित्य खिलाओ तो ७ या १४ दिनमें श्वानविष उतर जावेगा।

तथा २३–कडवी तुम्बीकी जड़, हिंगुल, शुद्ध जमालगोटा, मिर्च और फूले हुए सुहागेको चौलाईके रसमें खरल कर २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो। जो १ गोली मूत्रसे घिसकर दंशव्रणपर लगाओ और १ गोली जलके साथ खिलाओ तो ७ दिनमेंही मूत्रके साथ कृमि गिर-कर उन्मत्त श्वानका विष उतर जावेगा।

इति श्रीअमृतसागरे चिकित्साखण्डे विषरोगयत्ननिरूपणं
नाम चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४४ ॥

मुन्यब्धिनन्दचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षेसितेदले।
पञ्चम्यां विधुवारे च ग्रन्थः पूर्तिमगादयम् ॥ १ ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः

---

१ यह सब चिकित्सा बावरे कुत्ते (उन्मत्त श्वान) के काटनेपर है, सामान्य कुत्ते के काटनेसे विष नहीं चढ़ता।

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्याबाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)

खेमराज श्रीकृष्णदास
खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन
बम्बई - ४